



रामसनेही सम्प्रदाय



डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी



# रामसनेही सम्प्रदाय

डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी

आनन्द प्रकाशन, फैजाबाद

प्रकाशक  
आनन्द प्रकाशन  
दोवानी मिसिल  
फैजाबाद

●  
प्रथम संस्करण  
१९७३

●  
C राधिकाप्रसाद त्रिपाठी

●  
मुद्रक  
फाइन प्रिण्ट  
१०६ थहराराबाग  
इलाहाबाद-६

मूल्य २८ ००

भारतीय मनोषा के प्रतीक  
प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व ँय साहित्य के  
अनुसधित्सुओं के प्रेरणा-पुरुष  
पूज्य गुरुवर  
डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह  
को



चित्त चोखा ओखा नही ,  
पोखा ज्ञान भगत्त ।  
मन सोखा दोखा तज्या ,  
वे रामसनेही सत्त ।

—रामचरण

हरिया निर्गुण मूल है ,  
सगुण जु शाखा पान ।  
भक्ति बीज फल मुक्ति है ,  
और धर्म सब आन ।

—हरिरामदास

सकल ग्रथ का अर्थ है ,  
सकल बात की बात ।  
दरिया सुमिरन राम का ,  
कर लीजै दिन रात ।

—दरिया साहब



## निवेदन

प्रस्तुत प्रबंध सन् १९६१ में गोरखपुर विश्वविद्यालय की पी एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ था। परिस्थितिवशात् इसका प्रकाशन पूरे १२ वर्षों के बाद सम्भव हुआ। इस बीच कितना पानी बह गया इस पर विचार करने से कोई लाभ नहीं है। इस बीच अन्तराल में सत साहित्य का अध्ययन अनुशीलन करते हुए मैंने प्रबंध को यत्किञ्चित् सशोधित-परिवर्द्धित भी किया है।

सन् १९५६ में जब मैंने रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य पर शोध कार्य प्रारम्भ किया तब मेरे सम्मुख पूज्य गुरुवर डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह के निजी सग्रहालय से प्राप्त 'नान समुद्र' नामक हस्तलिखित ग्रंथ ही था। उसके आधार पर आलोचनात्मक सामग्री की छानबीन करने पर जात हुआ कि सत साहित्य पर लिखी अधिकांश विवेचनात्मक कृतियों में अनुसंधेय विषय के सम्बन्ध में जो विचार व्यक्त किये गये हैं वे परिचयात्मक विवरण मात्र हैं। रामसनेही सतों की साधना-पद्धति तथा दार्शनिक विचारधारा पर उनसे कोई महत्त्वपूर्ण प्रकाश नहीं पड़ता। ऐसी स्थिति में यदि आचार्य प० परशुराम चतुर्वेदी तथा प्रसिद्ध धर्मोपदेशक रामसनेही महात्मा श्री राम सुखदास जी की सहायता न मिली होती तो इस प्रयत्न का परिणाम मैं किम् रूप में प्रस्तुत कर पाता नहीं कह सकता। महात्मा रामसुखदास जी के सुभाव पर नवम्बर सन् १९५६ में मैं बीकानेर गया। वहाँ जान पर सिंहयल क पीठाचार्य श्री भगवदास शास्त्री और खैदापा पीठाधीश्वर स्वर्गीय श्री हरिदास शास्त्री का स्नेह-भाजन बनने का सुयोग मिला। इन दोनों महानुभावों की उदारता एवं वत्सलता का सबल पाकर मैंने उत्साह के साथ सामग्री सकलित की। लौटते समय दरिया साहब की साधना-भूमि देखा गया। वहाँ के पीठाचार्य श्री क्षमाराम जी से मिला किन्तु सामग्री प्राप्त करने में यथेष्ट सफलता नहीं मिल सकी। दरिया साहब के देहावसान के पश्चात् बहुत समय तक देखा का रामद्वारा सूना पड़ गया था जिससे वहाँ का अधिकांश बागी साहित्य नष्ट हो गया। इसके अनन्तर मार्च सन् ६० और फरवरी सन् ६१ में एक-एक महीने की दो शोध यात्राएँ और की गई। इस प्रकार शाहपुरा, सिंहयल खैदापा एवं देखा—तीनों शाखाओं की विखरी हुई सामग्री सकलित हुई। शाहपुरा शाखा के पीठाचार्य श्री रामकिशोर जी महाराज के सौजन्य से दुलभ हस्तलेखों को देखने तथा साम्प्रदायिक साधना के गूढ़ रहस्यों को जानने का सुअवसर मिला। इन महानुभावों के प्रति लक्षक अपना विनम्र आभार व्यक्त करता हूँ।

इस प्रबंध के लिए उपयोगी सामग्री एकत्र करने में अन्य बहुत से विद्वानों, साधकों एवं सस्याओं ने यथेष्ट सहयोग प्रदान करके मुझे अनुशुद्धित किया है। उनके प्रति इतना प्रकट करना मैं अपना परम कर्तव्य समझता हूँ। ये हैं—

- २ गोरखपुर विश्वविद्यालय, पुस्तकालय, गोरखपुर ।
- ३ श्री दयालु पुस्तकालय, खैडापा धाम (जोधपुर) ।
- ४ परमहंस श्री अमयराम जी का बाणो संग्रह, सूरसागर, जोधपुर ।
- ५ श्री कीमतराम जी, देवादास का रामद्वारा, जोधपुर ।
- ६ श्री रामधाम शाहपुरा का बाणो पुस्तकालय, शाहपुरा (मेवाड़) ।
- ७ श्री क्षमाराम जी पीठाचाय, रेण (नागौर) ।
- ८ बाई का रामद्वारा, नागौर का हस्तलेख-संग्रह ।
- ९ श्री मनोरथराम शास्त्री, बूचापातीराम दिल्ली ।
- १० पोहकरदास का रामद्वारा, पहाडपुर का बाणो-संग्रह, दिल्ली ।
- ११ श्री आन दराम का निजी संग्रहालय, गुलाब सागर, जोधपुर ।
- १२ श्री रामलगन जी, आनदराम का रामद्वारा, आमेट (मेवाड़) ।
- १३ आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ।
- १४ हिंदू विश्वविद्यालय पुस्तकालय, काशी ।
- १५ केन्द्रीय सचिवालय पुस्तकालय, दिल्ली ।
- १६ श्री विश्वनाथ पुस्तकालय, काशी ।

अपनी पान-गंगा की विमल धारा से मुझ अनगड शिला खड को फाट-छाँटकर व प्रदान करने वाले पूज्य गुणवर डा० भगवतीप्रसाद सिंह (रीडर, हिंदी-ग, गोरखपुर विश्वविद्यालय) के प्रति औपचारिकता का शब्द निवेदित करने में सहज असमर्थता का अनुभव हो रहा है। वस्तुतः प्रबंध निर्देशक के रूप में डॉ० ने मुझे चिंतन की भूमि दी है, कल्पना का आकाश दिया है और सबके ऊपर सौहाद की घनी छाया दी है जो सुखपूर्वक एक जीवन जीने के लिए पर्याप्त है। आचार्य श्री का मैं पुनः पुनः वन्दन करता हूँ।

गोरखपुर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के आचार्य और अध्यक्ष अख्ये डॉ० नाथ तिवारी के प्रति मैं श्रद्धावन्त हूँ जिनके आशीर्वादस्वरूप मेरा कटककीर्ण सदैव निरापन्न होना रहा है। हिंदी विभाग के रीडर डा० रामचन्द्र तिवारी तथा देवर्षि सनाढ्य न बड़ी आत्मीयता से मेरा उत्साह-वर्द्धन करते हुए अपने मित्रों से मुझे लाभान्वित किया है। एतदर्थ मैं इन गुरुजनों का जीवनपर्यन्त ऋणी हूँ। इस ग्रंथ के प्रणयन में अन्याय बहुत से मित्रों और विद्वानों का भी प्रत्यक्ष योगदान रहा है। उनके प्रति मैं अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

विषम पारिवारिक परिस्थिति में भी अपने महाविद्यालय के प्राचार्य माननीय रमाशंकर तिवारी अग्रज डॉ० राजनारायण मिश्र, त्रिय भाई श्री रामशङ्कर त्रिपाठी प्रियवर श्री रामचन्द्रराव होशिंग, श्री जनादन उपाध्याय, सुश्री सरोज राणा

अप्रवाल और श्री कृष्णकौल त्रिपाठी की सत्प्रेरणा एवं सहयोग से एक मास के भीतर इस ग्रन्थ के प्रकाशन की योजना बनी और पदे-पदे दृष्टिगत व्यवधान आने पर भी कार्यान्वित हो गयी। मैं इन सब के प्रति यथायोग्य प्रणामाशीर्वाद ज्ञापित करता हूँ।

शीघ्रता के कारण ग्रन्थ में यत्र-तत्र मुद्रण सम्बन्धी अशुद्धियाँ रह गयी हैं। आशा है सुधी पाठक उन्हें सुधार कर पढ़ लेंगे।

दीपावली

वि० सं० २०३०

छायातप

दीवानी मिसिल

फैजाबाद

राधिकाप्रसाद त्रिपाठी

रामसनेही सम्प्रदाय की स्थापना, सम्प्रदाय की तीन शाखायें, तीनों शाखाओं में समान तत्व, सगुण भक्ति का प्रभाव, जैन धर्म का प्रभाव, रामसनेही शब्द की व्याख्या, रामसनेही सत के लक्षण, नैतिक विधान, वस्त्र, तिलक—रामान दी तिलक का स्वरूप, रामसनेही सम्प्रदाय के तिलक—तिगल तिलक, श्री तिलक, रामनाथी तिलक, तिलक का विवरण, माला, दिनचर्या, पर्व—फूल डोल, नामकरण प्रसार-क्षेत्र, पीठा-चाय की निर्वाचन पद्धति—शाहपुरा और रेणु की पद्धति, सिंहयल खेडापा की पद्धति साम्प्रदायिक परम्परा ।

तीसरा अध्याय साम्प्रदायिक साहित्य और साहित्यकार

८५-१८६

(क) साम्प्रदायिक साहित्य का स्वरूप—अगबद्ध वाली, पद, ग्रंथ—मौलिक ग्रंथ, अनूदित ग्रंथ । समय के भिन्न भिन्न अर्थों पर आधारित ग्रंथ, भक्तमाल, गुरुमहिमा, परची सख्यावद्ध कृतियाँ, ककहरा, गोष्ठी, प्रश्नोत्तरी, बोध चैतानो, निसाणी निरूपण और विलास ग्रंथ,, अनूदित ग्रंथ, गद्य ।

(ख) साहित्यकार —

शाहपुरा शाखा के साहित्यकार—१ रामचरण, २ रामजन ३, दूल्हेराम, ४ सूरतराम, ५ भगवानदास ६ रामप्रतान, ७ देवादास, ८ रामवल्लभ, ९ मुरलीराम, १० पोहकरदास, ११ रामनिबाम और इच्छाराम १२ जगन्नाथ, १३ नवलराम १४ हरिदास, १५ हिम्मतराम १६ मुक्तराम, १७ सग्रामदास, १८ स्वरूपाबाई, १९ मनोरथराम ।

सिंहयल खेडापा शाखा के साहित्यकार—१ हरिरामदान २ रामदास ३ दयालुदास, ४ पशुराम, ५ पीथोगाम ६ हरिदेवदास, ७ पूरणदास ८ मनोराम ९ अर्जुनदाम, १० हरलालदास, ११ लालदास, १२ मनोहरदास, १३ बनोराम, १४ सबकराम, १५ निर्मलदान १६ भावनादास, १७ खेताराम, १८ ५० उत्साहराम ।

रेणु शास्त्रा के साहित्यकार—१ दरिया साहब, २ पूरणदास, ३ किसनदास, ४ नानकदास ५ चतुरदास ६ मनसाराम ७ टेमदास ८ सुखरामदास, ९ हरखाराम, १० मदाराम, ११ सहजराम १२ आभावाई ।

अन्य साहित्यकार—१ तुलसीदास, २ काहडदास, ३ चेतनदास, ४ उमावाई ५ चन्द्रदास, ६ नारायणदास, ७ दिलशुद्धराम, ८ धर्मदास, ९ दयाराम, १० नेशवराम, ११ जगरामदास, १२ निमपराम, १३ लालदास, १४ आदवराम, १५ सुखधाम, १६ रामनिवास, १७ मनोत्पराम १८ विहारीदास, १९ नारायणदास, २० राघोदास, २१ जाझूराम, २२ सद्गामदास, २३ गोविन्दराम, २४ सहजराम, २५ दौलतराम, २६ बालकदास, २७ काहडदास, २८ मोतीराम, २९ धीरमदास, ३० गुप्तराम, ३१ शालिग्राम, ३२ दिगम्बरानन्द, ३३ मल्लूकदास, ३४ लक्ष्यराम, ३५ प्रेमदास, ३६ बुधाराम, ३७ सुखराम, ३८ सुखसारण, ३९ श्रीराम, ४० रामस्वरूप ।

### चौथा अध्याय—दार्शनिक विचार

१८७-२२४

सत साहित्य के दार्शनिक अनुशीलन की समस्या, रामसनेही सम्प्रदाय का ब्रह्म विचार, साकार अथवा निराकार, निगुण, शब्द रूप, सगुण, परात्पर, एकेश्वरत्व, जीव का स्वरूप, मोक्ष, मुक्तावस्था—जीव-मुक्ति, विदेहमुक्ति । माया बाल, जगत् निर्गुण मार्गों सन्तो की सृष्टि विकास विषयक मायता रामसनेही सम्प्रदाय का सृष्टि विकास सम्बन्धी मत, जगत् का स्वरूप ।

### पाँचवाँ अध्याय—साधना और धर्म

भारतीय साधना पद्धतियाँ और उनका लक्ष्य साधना और रामसनेही सम्प्रदाय, कर्म साधना और रामसनेही सम्प्रदाय, भक्ति-साधना और रामसनेही सम्प्रदाय योग साधना और रामसनेही सम्प्रदाय सुरति-शब्द योग और राम सनेही सम्प्रदाय, सूफी प्रेम साधना और रामसनेही सम्प्रदाय ।

रामसनेही सम्प्रदाय की धार्मिक भावनाएँ, विश्वास नग—श्रवतारवाद में आस्था, सद्गुरु के व्यक्तित्व की अलीकृष्टता, ग्रंथ पूजा, अगम देश में विश्वास, मध्यम मार्ग का अनुसरण, पिंड और ब्रह्मांड की एकता आचार-रथ (i) ध्वस्तारक रूप पुस्तक ज्ञान की असारता, मूर्ति पूजा का खण्डन, वण-व्यवस्था का विरोध, बहुदेवोपासना की भस्मना, जीवहिता का विरोध बाह्याचार खण्डन (ii) सृजनारम्भ रूप—सत्संग, सत्य, समता भाव, सतोप, सहनशीलता, सार प्राहिता अहिंसा और दया बचनी करनी की एकता, उपासना प्रणाली ।

#### छठा अध्याय—साहित्यिक मूल्यांकन

३०६-३४६

मात्राविक साहित्य के काव्यरव का प्रश्न भावानुमूर्ति रमानुमूर्ति का प्रश्न प्रकृति-वणन, समाज वणन बला-रस—अलकार-विधान प्रतीक-पोरना, उलटवानी हृष्टिभूट, रामसनेही सतो द्वारा प्रमुक्त भाव में—सकृत्, हिंदी रात्रस्थानी, गुजरानी और रसता, लोकोक्ति मुहावर, छं विधान ।

#### सातवाँ अध्याय—उपसंहार

३५०-३५२

रामसनेही सम्प्रदाय क उद्भव और विकास का विहायलोचन, उत्तरमध्ययुगोन गमात्र की रामसनेही सम्प्रदाय की देन मात्राविक साधना और साहित्य की वर्तमान स्थिति ।

परिच्छिष्ट १—सहायक ग्रंथ

३५३

परिच्छिष्ट २—नामानुद्धमणिरा

३६३

## विषय-प्रवेश

रामसोहा सम्प्रदाय निगुण पथ की एक अन्य प्रसिद्ध किन्तु अत्यन्त समृद्ध शाखा है। हिन्दी के निगुण पथ का अनुशीलन करते हुए विद्वानों ने समय-समय पर इसका साहित्य और साधना को प्रकाश में लाने का प्रयत्न किया किन्तु अध्यापन का प्रगति अत्यन्त मन्द रही। इसके दो कारण थे—पहला जोर सत्रस प्रधान या हिन्दी के सीमांत प्रदेशों एवं अहिन्दी भाषा-भाषी प्रांतों में इसका उद्भव विकास तथा दूसरा या दुर्गम ग्रामीण क्षेत्रों में इसके अधिकांश पीढ़ी-जोर साधना स्थलों का स्थित होना। इन कठिनाइयों को पार कर साम्प्रदायिक केंद्रों से सामग्री ढूँढ निकालना साधारण कार्य नहीं था। अतः इच्छा रखते हुए भी अनुसन्धि-सु साम्प्रदायिक साहित्य एवम् साधना के सम्बन्ध में विवेचन का साहम न कर सका। राजस्थानी साहित्य के अन्वेषकों ने भी इस ओर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया। एसा स्थिति में जयपुर का ध्यान यदि इस ओर गया तो अर्पित सामग्री का अभाव में उनका अनुशीलन सामान्य परिचय से आगे न बढ़ सका।

बालोच्च सम्प्रदाय का प्रायः सम्पूर्ण साहित्य अभी तक हस्तलिखित रूप में राजस्थान, मध्य प्रदेश और गुजरात के विभिन्न भागों में स्थापित साम्प्रदायिक पीढ़ी में बिलंबता हुआ है। इस सम्प्रदाय में महात्मा वाणी जी गुरु का अवतार मानते हैं और उसकी पूजा करते हैं। उन अपनी पूजनीय वस्तु का सर्वसामान्य के लिए सुलभ करने में उन्हें इस बात का डर रहता है कि कहीं यह किसी ऐसे व्यक्ति के हाथ में न पड़ जाय जो उसका उचित सम्मान न कर सके। यही कारण है कि वे वाणी प्रकाशन के सर्वथा विरोधी हैं। प्रसिद्ध है कि पहले-पहल जब सम्प्रदाय के कुछ उस्ताही एवम् साहित्य प्रेमी महात्माओं ने "राधचरण जी की अणुमेवाणी" और "श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश" का प्रकाशित कराने की योजना बनाई तो पुराने पाठी के मुन्ना ने इसका घोर विरोध किया था। ऐसी स्थिति में वाणी-प्रकाशन की एक क्षीण पराम्परा तो पत्नी किन्तु प्रकाशित ग्रन्थ सामान्य रूप से बाजारों में उपलब्ध नहीं हो सका। उन ग्रन्थों का मुख्य प्रायः "प्रेमपाठ" होता था और सम्प्रदाय वाले उन्हें कबल ऐम व्यक्तियों को भेंट करते थे जिनकी सुपात्रता पर उन्हें पूर्ण विश्वास हो जाता था। इसी का परिणाम है कि सम्प्रदाय का प्रायः सम्पूर्ण साहित्य साम्प्रदायिक केंद्रों पर कपड़े की सात सात, आठ आठ तथा न बँधा हुआ आज तक पड़ा रह गया।

साम्प्रदायिक साहित्य के प्रकाश में न जाने का अर्थ कारण था प्रतिबल साहित्यिक वातावरण में इसका निर्माण। जिस काल में इसकी रचना आरम्भ हुई, साहित्य और समाज दोनों में भक्ति के स्थान पर शृङ्गारी प्रवृत्ति पूर्णतया प्रतिष्ठित हो चुकी थी। ऐसी स्थिति में भौतिक जीवन के समस्त पर पैल कर प्रवाहित होने वाली रसमय काव्य-धारा के सामने आध्यात्मिक तत्त्वों से पूर्ण इस निगुण स्रोत की ओर लोगों का ध्यान न जाना आश्चर्यजनक नहीं कहा जा सकता।

इस सम्बन्ध में इतना अवश्य कहना है कि जहाँ उपर्युक्त कतिपय कारणों से यह विशाल साहित्य-राशि अब तक प्रकाश में न आ सकी, वहीं सत्ता के सकुचित दृष्टिकोण और उनकी अतृप्त वृत्ति के कारण ही यह अब तक सुरक्षित भी रह सकी, अथवा बहुत सी प्राचीन साहित्यिक निधियों की भाँति इसका भी अधिकांश नष्ट हो गया होता। इस सामग्री को राष्ट्रभाषा की इस जागरण बेला तक सम्हाल कर रखने के लिए हिंदी-जगत् सम्प्रदाय के महात्माओं का चिर ऋणी रहेगा।

इस विषय पर कार्य करते हुये इन पक्तियों के लेखक न सम्प्रदाय की मूलभूमि राजस्थान की तीन यात्रायें की हैं और उसके प्रतिष्ठित पीठाचार्यों तथा माधकों से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके यथाशक्ति अद्यावधि अज्ञान सत्ता तथा उनकी वृत्तियाँ के सम्बन्ध में प्रामाणिक तथ्य संप्रहीत करने का प्रयत्न किया है। जहाँ कहीं दार्शनिक पद्धति तथा साधना-प्रणाली के विषय में शंका हुई, आलोच्य सम्प्रदाय की तीनों भाषाभाषा के अधिकारी विद्वानों से विचार विमर्श करने के अनन्तर ही तद्विषयक मत स्थिर किये गये हैं। इसके बावजूद लेखक का विश्वास है कि साम्प्रदायिक साहित्य एवम् साधना के अनेक तत्त्वों पर अभी यथेष्ट प्रकाश नहीं डाला जा सका है। सम्प्रति जो सामग्री उपलब्ध हो सकी उसी की विवचना में संतोष करना पडा है। यह उन्मुखनीय है कि प्रस्तुत विषय पर स्वतंत्र रूप से अब तक कोई ग्रन्थ अथवा शोध-ग्रन्थ प्रस्तुत नहीं किया गया है। हिंदी-भक्ति काव्य के निगुणधारा विषयक ग्रन्था, सर्वोत्तम तथा साम्प्रदायिक पीठा से प्रकाशित परिचयामक पुस्तका में इसका प्रवर्तकी, अनुयायियों उनका वृत्तियाँ और सिद्धांतों पर यत्र-तत्र जो सामग्री उपलब्ध है वह महत्त्वपूर्ण होने हुए भी साम्प्रदायिक साधना का यथार्थ बोध कराने में अक्षम है। नीचे इस प्रकार की यथोपलब्ध समस्त सामग्री का एक आलोचनात्मक परिचय दिया जाता है। इससे प्रस्तुत अध्ययन की उपादेयता एवम् मौलिकता स्वतंत्र स्पष्ट हो जायगी।

## १ जर्नल आफ् दी रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ् बंगाल

रामसनेही सम्प्रदाय के विषय में प्रथम बार लेखना उठाने का श्रेय कैप्टन जी० ई० बेस्काट को है। बेस्काट महोदय ने 'सम एकाउंट आफ् ए सेवट आफ् हिन्दू सिग्नाटिवस इन बम्बेन इंडिया कालिंग दममन्स रामसनेही आर प्रोसेस आफ् गाड शीर्षक के अंतर्गत सगभग बीस पृष्ठा का सारा लिखकर रायल एशियाटिक

सोसाइटी, बंगाल क फरवरी १८३५ के मुख पत्र मे प्रकाशित करवाया था । इस लेख में शाहपुरा शाखा के पाँच सन्त कवियो—रामचरण<sup>१</sup>, रामजन<sup>२</sup>, दूल्हाराम<sup>३</sup>, चतुरदास<sup>४</sup> और नारायणदास<sup>५</sup> का सक्षिप्त परिचय दिया गया है । इसके साथ ही उनी सम्प्रदाय की उपासना-प्रणाली, धार्मिक स्थिति, आचार-विचार, रहन सहन, वेप भूषा तथा पवादि का भी विस्तृत विवेचन किया है । वेस्काट महादय शाहपुरा पीठ के पाँचवें पीठाध्य नारायणदास के समकालीन थे । उनी सामग्री का मूलन शाहपुरा जाकर किया था । अत इस लेख म सप्रहीत सूचनायें प्रामाणिक और हर प्रकार से विश्वसनीय है । आज भी शाहपुरा शाखा के सम्बन्ध म इस लेख स अधिक सामग्री किसी दूसरे इतिहास ग्रन्थ में नहीं मिलती ।

विद्वान् लेखक म विक्रम सम्बत् को ईस्वी सन् म परिवर्तित करते समय थोड़ी सी असावधानी हो गई है । रामचरण का जन्म सम्बत् १७७६ मे हुआ था । वेस्काट महोदय भी इसको मानन हैं । विक्रम सम्बत् को ईस्वी सन् म परिवर्तित करते समय विक्रम सम्बत् म से ५७ वष कम कर दिया जाता है । इनी नियम के अनुसार लेखक ने १७७६ मे से ५७ घटा कर रामचरण का जन्मकाल १७१९ ई० माना है । लगता है एसा करते समय विद्वान् लेखक का ध्यान इस बान की ओर नही गया कि रामचरण वि० सम्बत् १७७६ क माघ महीने की २९वीं तिथि को पैदा हुये थे और ईस्वी सन् प्राय मीगशीष, अथवा पीष के मध्य मे ही बदल जाता है । कहने का तात्पर्य यह कि उक्त काल निश्चित रूप स नये वष का जनवरा या फरवरी महीना रहा होगा । अत उनका आविर्भाव माघ शुक्ल १४ स० १७७६ तदनुसार सन् १७२० माना जाना चाहिय न कि सन् १७१९ ।

## २ इस्त्वार दला लितरात्पूर एन्दुई ऐ ऐन्दुस्तानी<sup>१</sup>

इम पुस्तक के लेखक फ्रेच विद्वान गार्मा द तासी है । इसका प्रकाशन सन् १८३९ म हुआ था । इसम रामसनेही सम्प्रदाय की शाहपुरा शाखा के सन्त साहित्यकारो—रामचरण<sup>२</sup>, रामजन, दूल्हाराम<sup>३</sup>, चतुरदास<sup>४</sup>, (चतुरदास) आदि का सक्षिप्त परिचय दिया गया है । तासी साहब को यह सूचना एशियाटिक सोसाइटी कलकत्ता क मुख पत्र के फरवरी १८३५ के अंक मे प्रकाशित कैप्टन वेस्काट के लेख मे

1 Journal of the Royal Asiatic Society of Bengal, p 65

2 Ibid p 66 3 Ibid p 66 4 Ibid, p 66 5 Ibid, p 66

६ इस ग्रन्थ का अनुवाद डा० लक्ष्मी सागर वाष्ण्ये ने 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' नाम से किया है जो सन् १९५३ मे प्रकाशित हुआ है ।

७ इस्त्वार द ला लितरात्पूर ऐन्दुई ऐ ऐन्दुस्तानी, पृ० २३५-३६ ।

८ वही, पृ० २३७ । ९ वही, पृ० ११७ । १० वही, पृ० ७५, ११ ।

मिली थी। जैसा कि हम पीछे कह आये हैं कि वेस्काट महोदय शाहपुरा आचार्य पीठ के महत्त नारायण दास के समकालीन थे और उन्होंने अपने निबंध में जितनी सामग्री दी है, उसका सकलन प्रामाणिक सूत्रों से किया था। अतः इस पुस्तक में दी गई सूचनाएँ विश्वसनीय मानी जा सकती हैं। यह ग्रंथ इसलिए जीर भी महत्त्वपूर्ण है कि कालांतर में फरवरी १८३५ का जनस अत्राप्य हो गया अतः परवर्ती इतिहासकारों का यही मुख्य आधार ग्रंथ हो गया। वेस्काट महोदय के लेख का जैसा उपयोग इस ग्रंथ में किया गया है वैसा अन्य किसी भी इतिहास ग्रंथ में नहीं।

### ३ सत्यार्थ प्रकाश

स्वामी दयानंद सरस्वती विरचित इस ग्रंथ का प्रथम संस्करण संस्कृत में निकला था। बाद में पाठकों की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए स्वामी जी ने हिंदी में रूपांतर करके संवत् १९३९ में इसे पुनः प्रकाशित करवाया। इसमें उन्होंने बहुत से प्रचलित धार्मिक मता की बहुत अलोचना की है। रामसनेही सम्प्रदाय के मतों की जाति, शिक्षा आदि पर उन्होंने जो विचार व्यक्त किये हैं वे विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। इस संबंध में उनके दो आक्षेप विचारणीय हैं—पहला है नामसाधना विषयक जीर दूसरा आचार विषयक।

रामसनेही सम्प्रदाय की नामसाधना की आलोचना करने हुए स्वामी जी ने कहा है कि “जैसा सबकर-सबकर कहने से मुख मीठा नहीं होता वैसा सब भाषणादि कम क्रिय बिना राम-राम कहने से कुछ भी नहीं होगा। और यदि राम राम कहना इनका राम नहीं सुनता तो राम भर कहने से भी नहीं सुनेगा और जो सुनता है तो दूसरी बार भी राम राम कहना बर्था है।”<sup>१</sup> कहना न होगा नाम साधना का प्रचार केवल निर्गुण पासक मतों में ही नहीं, सगुणोपासक मतों में भी है। देश में उपयुक्त दोनों कोटि के भक्तों और समयको की कमी नहीं रही है। उनमें से अनेक अच्छे विद्वान् भी हुए हैं। उन्होंने समय समय पर इस आक्षेप का तथ्यपूर्ण युक्तियों से प्रतिवाद किया है। अतः हमें यहाँ इस उलभन में पड़ने की आवश्यकता नहीं है, किंतु हम इनका अवश्य कहेंगे कि नाम साधना का खंडन करते हुए स्वामी जी ने जो उदाहरण प्रस्तुत किया है वह बहुत ही स्थूल और एकांगी है। सच्चिदानंद भगवान् के नाम स्मरण की तुलना ‘गुड शब्द के उच्चारण से करना किसी भी दृष्टि से जीवित्य की मीमांसा में नहीं आता।

स्वामी जी का दूसरा आक्षेप रामसनेहियों के आचार पर है। वे कहते हैं कि “इन लोगों ने अपना पेट भरने और दूसरों का अन्न नष्ट करने के लिए एक पाखंड खड़ा किया है सो यह बड़ा जाश्वन् हम सुनते हैं जीर देखते हैं कि नाम तो धरा

रामसनेही और काम करते हैं राठमनेही का। जहाँ देखो वहाँ राठ हा राठ सन्तों को घेर रही है।<sup>१</sup> स्वामी जी का यह आशेष बड़ा ही गम्भीर है और एक ऐसी सामाजिक समस्या को ओर खेन करता है जिसका समाधान युगो स नही प्राप्त हो सका है। सिद्धर के साथ ही जीवन के समस्त मुक्तो से वंचित होकर भगवान् की धरण लेने वाली विधवाओं तथा उन्हें धर्मोपदेश देने वाले महात्माओं को समाज सदैव से शत्रु की दृष्टि से देखता रहा है। इस समस्या के समाधान के लिए स्वामी जी ने विधवाश्रमा की स्थापना का समर्थन किया था किन्तु उनकी यह योजना भी व्यावहारिक स्तर पर उतरने के पश्चात् कन्व की कालिमा से वच न मकी। ऐसी स्थिति में सम्पूर्ण रामसनेही सम्प्रदाय पर इस प्रकार का व्यापक आरोप जायसगत नही प्रतीत होता।

सत्यार्थप्रकाश म स्वामी जी ने केवल उही धर्मों को आलोचना की है जो तत्कालीन समाज को प्रभावित कर रहे थे और जिनसे उनका वैचारिक मतभेद था। अतः रामसनेही सम्प्रदाय व विषय में जो कुछ उन्होंने लिखा है, उसमें यह सिद्ध होता है कि इस सम्प्रदाय का उस समय राजस्थान में काफी प्रचार था अथवा स्वामी जी को इस प्रकार आलोचना न करनी पडती।

## ४ माडर्न वर्निक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान

<sup>२</sup> सर जॉन प्रियसन का यह ग्रन्थ १८८८ ( स० १९४६ ) में रायल एशियाटिक सोसाइटी से प्रकाशित हुआ था। इस पुस्तक में केवल रामसनेही सन्त दुल्हेराम<sup>३</sup> का उल्लेख हुआ है। प्रियसन साहब ने साम्प्रदायिक साहित्य स्वयं न देखकर गार्गा द तापी क इतिहास से सामग्री सङ्कलित कर ली थी। किन्तु विद्वान् खलक ने उसका भी अवलोकन ध्यानपूर्वक नहीं किया अथवा कुछ और सत तथा उनकी कृतिमा इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ म स्थान पा जाती।

## ५ हिन्दू कास्ट्स एण्ड सेक्ट्स

श्री योगी द्वाय भट्टाचार्य का यह कृति कलकत्ता विश्वविद्यालय से सन् १८९६ में प्रकाशित हुई थी। प्रसंगवश इस ग्रन्थ म भी रामसनेही सम्प्रदाय का उल्लेख हुआ है। भट्टाचार्य जी ने रामसनेहिया का साधना और धर्म पर मुसलमानों का प्रभाव बताया है। उनकी धारणा है कि इस सम्प्रदाय के सन्त मुसलमानों की सति अपने छोटे में निराकार ब्रह्म की पाच बार उपासना करने हैं।<sup>३</sup> किम आधार पर उन्होंने ऐसा कहा

१ वही, पृ० २३६।

२ माडर्न वर्निक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान, अनु० डा० किशोरीलाल गुप्त पृ० १९।

३ Hindu castes and sects, p 447

समझ म नहीं आता । प्रस्तुत लेखक ने आलोच्य सम्प्रदाय का अध्ययन बहुत निष्ठ से किया है और रामसनेही महात्माभा के साहचर्य में कई मास व्यतीत किये हैं । उसका यह निश्चित मत है कि न तो रामसनेही महात्मा दिन में पाँच बार निराकार ईश्वर की उपासना करते हैं और न उनके जाचार विचार में ही मुस्लिम प्रभाव की रचनाय गद्य आती है ।

## ६ खोजरिपोर्ट

नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित खोज रिपोर्टों में रामसनेही सम्प्रदाय के नवलराम<sup>१</sup>, पूरणदास ( दयालुदास के शिष्य )<sup>२</sup>, रामचरण<sup>३</sup>, रामजन<sup>४</sup>, उमा<sup>५</sup>, जगन्नाथ<sup>६</sup>, भूरतराम (शाहपुरा शाखा)<sup>७</sup> की अनेक रचनाओं का विवरण समय समय पर प्रकाशित हो चुका है । इतनी सामग्री की सूचना प्राप्त होने के बावजूद इतिहास प्रयो में इस सम्प्रदाय को दो चार पक्किया से अधिक स्थान नहीं प्राप्त हो सका । यदि प्राप्त सामग्री के आधार पर विद्वानों ने सचेष्ट होकर इस दिशा में प्रयास किया होता तो बदायिन् अबतक रामसनेही सम्प्रदाय की यह विशाल साहित्य राशि और उसके निर्माता प्रकाश में आ गये होते, किन्तु दुर्भाग्य से ऐसा न हो सका और ये विवरण खोज रिपोर्टों में ही दबे पड़े रह गये ।

लेखकों के जीवन-वृत्त के सम्बन्ध में खोज रिपोर्ट प्रायः मौन ही है । लगता है कि वृत्तियों का विवरण लेते समय इस शाखा के सत्तों के जीवन-वृत्त की महत्ता को उपेक्षित कर दिया गया । यदि विवरण के साथ जीवन वृत्त भी दिये गये होते तो ये अनुमधित्त्वों के लिए बहुत बड़े आकर्षण के कारण बनते । यह स तोय का विषय है कि खोजरिपोर्ट के सक्षिप्त विवरणों में वृत्तियों का प्रायः अभाव है । रामसनेही सम्प्रदाय की पूरी सामग्री में केवल एक स्थान पर वृत्तिपूर्ण मत की स्थापना हुई है । चौदहवीं खोज रिपोर्ट ( १९२९-३१ ) में रामचरण विरचित 'अनुभवविलास' ग्रन्थ की पुष्पिका में एक दोहा उद्धृत किया गया है जो इस प्रकार है —

अठारह से पट वर्ष मास फागुन वदि साते ।

सत पधारे धाम सनीचरवार विख्याते<sup>८</sup> ॥

1 Annual Report of 1910 p 56 2 Ibid, p 57

३ म्यारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण, सख्या १४८ । बारहवा त्रैवार्षिक विवरण, सख्या ६१ ए० बी० सी० । चौदहवा त्रैवार्षिक विवरण, सख्या २८१ ८२ । पन्द्रहवा त्रैवार्षिक विवरण, सख्या १७५ । ४ सत्रहवा त्रैवार्षिक विवरण, सख्या ११८ । ५ वही, सख्या १५७ । ६ सोलहवा त्रैवार्षिक विवरण, सख्या ४३ । ७ वही, सख्या ६७ । ८ चौदहवा त्रैवार्षिक विवरण, सख्या २८१ ।

इस छंद के आधार पर रामचरण का जन्म काल वि० सं० १८०६ निर्धारित किया गया है जो सर्वथा निराधार है। वस्तुतः स्वामी जी का जन्म वि० सं० १७७६ में हुआ था जो कि समस्त ऐतिहासिक एवं सम्प्रदायिक सूत्रों से प्रमाणित है। उपयुक्त छन्द पर यदि थोड़ी भी गम्भीरता के साथ विचार किया गया होता तो यह भ्रम न उदात्त हुआ होता। 'धामपधारना' जन्म लेने के लिए नहीं बरन् परमधाम पधारने के अर्थ में प्रयुक्त होता है और 'सन्त' का तात्पर्य यहाँ रामचरण के दादागुरु तथा श्रृपा राम के गुरु सतदास स है। तात्पर्य यह कि उपयुक्त छंद में सतदास के परमधाम पधारने का बल्लन है न कि रामचरण के आविर्भाव काल का।

## ७ सम्प्रदाय

उर्दू भाषा में लिखित इस ग्रन्थ के लेखक त्रिचिचयन विद्वान् प्रो० वी० वी० राय हैं। इसका प्रकाशन सन् १९०६ में मिरान प्रेम लुधियाना से हुआ था। राय साहब ने इस ग्रन्थ में रामसनेही सम्प्रदाय के सम्बन्ध में १०-११ पृष्ठों में पर्याप्त सामग्री संकलित की है।<sup>१</sup> यह ग्रन्थ यद्यपि वैज्ञानिक ढंग से नहीं लिखा गया है फिर भी इसमें रामसनेहियों के आचार विचार, रहन सहन, खान-पान आदि के सम्बन्ध में विस्तृत सूचना प्राप्त होती है।

## ८ ऐन आउटलाइन आफ रिलिजस लिटरेचर आफ इण्डिया

भारत के धार्मिक साहित्य के अधिकारी विद्वान् जे० एन० फकुहर की यह कृति जावसरोड यूनिवर्सिटी प्रेस से सन् १९२० में प्रकाशित हुई थी। इसमें भी प्रसंगवशात् रामसनेही सम्प्रदाय का नाम आया है। फकुहर महोदय ने भी इस सम्प्रदाय का विवेचन मुस्लिम प्रभाव के अन्तर्गत किया है।<sup>२</sup> उन्होंने जो सूचनाएँ दी हैं वे उपर्युक्त पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रस्तुत ग्रंथों से ली गई हैं। इसलिए अनुसंधेय विषय पर इससे कोई नया प्रकाश नहीं पड़ता।

## ९ दी मिस्टिक्स, एसेटिक्स एण्ड सेण्ट्स आफ् इण्डिया

इस ग्रन्थ के लेखक जे० सी० ओमन हैं। इसमें भी रामसनेहियों की केवल शाहपुरा शाखा पर प्रकाश डाला गया है। ओमन महोदय ने सन्धि में रामसनेहियों के आचार विचारादि का जो परिचय दिया है वह बहुत ही महत्वपूर्ण है किन्तु साम्प्रदायिक उपासना प्रणाली के मुसलमानों से प्रभावित होने की उन्होंने जो चर्चा की है<sup>३</sup> वह युक्तिसंगत नहीं है।

१ सम्प्रदाय, पृ० ६३ १०३।

२ An Outline of Religious literature of India pp 245-46

३ The Mystics Ascetics and Saints of India, p 133

## १०. कबीर एण्ड हिज फालोअर्स

अप्रेज विद्वान् एम० ए० को द्वारा लिखित यह ग्रन्थ प्रथम बार सन् १९३१ ई० में प्रकाशित हुआ था। इसमें प्रसंगशाल् रामसनेही सम्प्रदाय का भी नाम आ गया है। लेखक ने रामसनेहिया की शाहपुरा शाखा के बारे में बहुत ही सामान्य ढंग से लिखा है। शेष दो शाखाओं के विषय में वह मौन है।

की महोदय ने रामचरण का जन्म सन् १७१८ में माना है<sup>१</sup> जो सर्वथा निराधार है। रामचरण वस्तुतः सन् १७२० में उत्पन्न हुये थे। इन पत्तियों के लेखक को सम्प्रदाय की मूलभूमि राजस्थान के विभिन्न भागों को शोध यात्रा करते हुए रामचरण जी की जन्मतिथि के सम्बन्ध में कहीं भी मतभेद नहीं दिखाई दिया। इस प्रकार आलोच्य सम्प्रदाय के अध्ययन में इस ग्रन्थ से कोई विशेष सहायता नहीं मिलती।

## ११ मिडिवल मिस्टीसिज्म आफ् इंडिया

यह ग्रन्थ भारत के प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य त्रितिमोहन सेन के 'मुखर्जी लकवस' का परिवर्धित रूप है। इसमें रामसनेही सम्प्रदाय की केवल शाहपुरा शाखा के विषय में कुछ पत्तियाँ लिखी गई हैं।<sup>२</sup> पत्रन स पत्र होता है कि लेखक की रामचरण के जावन-वृत्त विषयक जानकारी मुना मुनाई बातों पर आधारित थी। सेन महोदय की सम्मति में रामचरण ने अपने मत का प्रचार सन् १७४२ (स० १७९९) से आरम्भ कर दिया था। इस ग्रन्थ की अयथार्थता इसी से सिद्ध हो जाती है कि रामचरण का दीक्षा काल मात्र शुक्ल ७ गुरुवार स० १८०८ है।<sup>३</sup> दीक्षा के पूर्व ही सम्प्रदाय प्रवर्तन और मत प्रचार की बात मान्य नहीं हो सकती। आचार्य सेन ने दरिया साहब<sup>४</sup> का परिचय तो दिया है किन्तु वे रामसनेही सम्प्रदाय के थे, शायद इसकी सूचना उन्हें नहीं थी। सम्प्रदाय के दो अथ मुख्य पीठों—सिंहवल और खेडापा का उन्होंने कोई उल्लेख नहीं किया है।

## १२ निर्गुण स्कूल आफ् हिन्दी पौड्ट्री

सत साहित्य का प्रथम वैज्ञानिक एवं खोजपूर्ण विवेचन प्रस्तुत करने वाला यह अनुपम ग्रन्थ सन् १९३६ में प्रकाशित हुआ। इसके लेखक सत-साहित्य के मूढय

1 *Kabir and his followers*, p 165

2 *Medieval Mysticism of India*, p 158

3 समत अठारा सौ अरु आठा, ले वैराग गये तन काठा।

भादव मास दास पद पायो, रामचरण जी नाम कहायो ॥

ब्रह्मसमाधिलीन योग, छंद ३३-३४

4 *Medieval Mysticism of India*, p 136

विद्वान् डॉ० पीताम्बरदत्त बट्टवाल थे। इसका हिन्दी अनुवाद प० परशुराम चतुर्वेदी ने किया है। ग्रंथ के परिशिष्ट भाग में रामचरण<sup>१</sup> और राममनेहिया की शाहपुरा शाखा का बहुत ही सामान्य परिचय दिया गया है। इस सम्बन्ध में लेखक को सूचना के प्रधान स्रोत की महोदय का 'क्वीर एण्ड रिज फालोअम' नामक ग्रंथ था जो कि स्वयं इस सम्प्रदाय के सम्बन्ध में इतनी अल्प सामग्री देता है कि उसमें साम्प्रदायिक साधना, दशन आदि पर कोई विशेष प्रकाश नहीं पड़ता।

### १३ राजपूताने का इतिहास (प्रथम भाग)

राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता स्व० जगन्नीश मिह गहलोत ने इस ग्रंथ का प्रथम संस्करण सन् १९३७ में हिन्दी साहित्य मन्दिर जोधपुर से निकला था। लेखक ने शाहपुरा राज्य का परिचय दत्त हुए प्रमगवशास्त्र रामसनेही सम्प्रदाय की भी चर्चा की है। गहलोत जी ने भी रामचरण की जन्मतिथि माघ शुक्ल १४, म० १७७५ (२३ जनवरी सन् १७१९) माना है।<sup>२</sup> लगना है कि जिम आधार पर अग्नेज विद्वान् की महोदय, डा० ताराचन्द और डा० रामकुमार वर्मा ने इनका जन्म १७१८ में माना है उसी की गणना करके इन्होंने इनकी जन्म तिथि २३ जनवरी सन् १७१९ निश्चित की है। असावधानी से लेखक ने रामचरणदास लिख दिया है जब कि उनका पूरा नाम केवल रामचरण ही था। प्रस्तुत ग्रंथ में विद्वान् लेखक ने एक स्थान पर खेडापा शाखा के राममनेहिया का भी नाम लिया है।<sup>३</sup> रण के विषय में वह मौन है।

### १४ हिन्दुत्व

भारतीय धर्म नाधना का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत करने वाले इस महात् ग्रंथ के लेखक श्री रामदास गौड़ हैं। इसका प्रथम संस्करण सन् १९३८ में निकला था। इसमें राममनेही सम्प्रदाय की चर्चा करते हुए रामचरण और दूल्हेराम का नामोल्लेख किया गया है।<sup>४</sup> पूर्ववर्ती ग्रंथों की मिटी-पिट्टाई बातों का सग्रह मात्र होने के कारण इस ग्रंथ से भी रामसनेही सम्प्रदाय पर कोई नया प्रकाश नहीं पड़ता।

### १५ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास

यह डॉ० वर्मा द्वारा पी एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध है जिसका प्रथम संस्करण सन् १९३८ में निकला था। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध

- १ हिन्दी काव्य में त्रिगुण सम्प्रदाय, पृ० ५४१
- २ राजपूताने का इतिहास, भाग १, पृ० ७५४
- ३ राजपूताने का इतिहास, भाग १, पृ० ५६४
- ४ हिन्दुत्व, पृ० ७३६।

इतिहास में पहली बार आनोच्य सम्प्रदाय का परिचय इसी ग्रंथ में दिया गया है। विद्वान् लेखक ने रामसनेही सम्प्रदाय का शाहपुरा शाखा और उसके प्रवक्ता महात्मा रामचरण के विषय में जो चर्चा की है वह मरिपित्त होने हुए भी महत्त्वपूर्ण है। डा० वर्मा के अनुसार रामसनेहा मत मुगलमानी मत से बहुत कुछ मिलता जुलता है और इसमें नमाज का तरह पाँच बार निराकार ईश्वर की आराधना होती है।<sup>१</sup> योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य और जे सी० ओमन की भी यही धारणा है।

## १६ इफ्लुयेस आफ् इस्लाम आन इंडियन कल्चर

इस ग्रंथ की रचना डा० ताराचन्द ने आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से डी० फिल० उपाधि के लिए शोध प्रबंध रूप में की थी। सन १९५० में इसका प्रकाशन इंडियन प्रेस, इलाहाबाद से हुआ। ग्रंथ के अनुशीलन से विदित होता है कि लेखक ने उन तत्वों की ओर तो संकेत किया ही है जिन पर सचमुच इस्लाम का प्रभाव है साथ ही कहीं-कहीं पर हठात् भा मुस्लिम प्रभाव का आरोप किया गया है। रामसनेही सम्प्रदाय के धार्मिक कृत्यों पर मुसलमानों का प्रभाव दिखाना कुछ इसी प्रकार का प्रयत्न है।<sup>२</sup> अपनी इस धारणा के समर्थन में लेखक ने योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य की 'हिंदू फास्ट्स एण्ड सेक्ट्स' नामक पुस्तक का साक्ष्य दिया है। इस ग्रंथ में भी रामचरण जी की जन्मतिथि सन् १७१८ ही मानी गई है<sup>३</sup> जिसकी विवेचना पीछे की जा चुकी है।

## १७ कल्याण-सत्त अक, भक्तचरिताङ्क

कल्याण के सत्त अक का प्रकाशन वि० स० १९९४ में हुआ था। इसमें रामचरण<sup>४</sup>, हरिरामदास<sup>५</sup>, रामदास<sup>६</sup>, दयालुदास<sup>७</sup>, दरिया साहब<sup>८</sup> का जीवनवृत्त दिया गया है। धार्मिक प्रकाशन होने के कारण इसमें प्रेमी भक्तों को अधिकाधिक प्रभावित करने एवं सामान्य जनता की आध्यात्मिक वृत्तियाँ को जागृत करने के उद्देश्य से महात्माओं के चमत्कारिक कृत्या तथा उनकी सिद्धियाँ का ही विशेष ध्यान किया गया है। सत्ता के माहित्य तथा माधना का विवेचन इसका उद्देश्य ही नहीं है। अतः इसमें दी गई सामग्री का उपयोग केवल सत्तो का जीवनवृत्त प्रस्तुत करने में किया जा सकता है। इस ग्रंथ के द्वारा प्रस्तुत अधिकांश सामग्री, कतिपय सामान्य वृत्तियों के होने हुए भी प्रामाणिक एवं विश्वसनीय है।

१ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ४११

२ Influence of Islam on Indian Culture, P 205

३ Ibid, P 205। ४ कल्याण सत्त अक, पृ० ७४६-४५। ५ वही, पृ० ६२६। ६ वही, पृ० ६२७। ७ वही, पृ० ६२७। ८ वही, पृ० ६२१।

इस ग्रन्थ के अनुसार हरिरामदास का दीया बाल स० १७०० है । हरिरामदास का निधन स० १८३८ में हुआ था जो स १-शक द्वारा भी समर्थित है । दीया के समय इनका अवस्था बीम वर्ष से कम नहीं रही होगी क्योंकि दीया के पूर्व ही वे सकलशास्त्र निष्णात हो चुके थे । इस प्रकार उनका आयु ३० से भी अधिक ठहरती है जो कि सम्भव होने हुए भी आज के युग में विश्वमनोय नहीं प्रतीत होती । इस बात को यदि थोड़ी देर के लिए मान भी लिया जाय तो भी सगति नहीं बैठती क्योंकि इनके गुरु जेमलदास ने स्वयं स० १७६० में दीया ली थी । गुरु के दीक्षित होने के पूर्व ही शिष्य के दाक्षिण्य होने की बात समझ में नहीं आती ।

इसी प्रकार की एक अज्ञात दरिया साहब की जाति विषयक है । इसके अनुसार दरिया साहब का जन्म मुसलमान समाज की एक निम्न जाति में हुआ था । इनके पूर्वज निम्न जाति के हिन्दू थे जिन्होंने इस्लाम स्वीकार कर लिया । प्रस्तुत लेखक की दृष्टि में यह मत सर्वथा भ्रान्त है । हमारे भोजपुरा प्रदेश में एक लोकोक्ति है—“तुर्कों मूल त वेना । ताहय यह कि परम्परागत धर्म का त्याग कर अत्यन्त निम्न वर्ग का हिन्दू भी इस्लाम धर्म ग्रहण करत समझ धुनियाँ बनना नहीं स्वीकार कर सकता । अतः इस प्रकार का निराधार और मनगढ़त बातों को छोड़कर हमें दरिया साहब को धुनियाँ और परम्परा से मुसलमान ही मानना चाहिए ।

## १८ राजस्थानी भाषा और साहित्य

### राजस्थान का पिगल साहित्य

रामसनेही सम्प्रदाय के सम्बन्ध में विस्तृत एवं महत्त्वपूर्ण सूचना राजस्थानी साहित्य के मर्मज्ञ प० मोतीलाल मेनारिया ने प्रस्तुत की है । मेनारिया जी ने अपने उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों में उक्त सम्प्रदाय का परिचय देते हुए अनेक ग्रन्थों—रामचरण<sup>१</sup>, हरिरामदास<sup>२</sup>, रामदान<sup>३</sup>, दरिया साहब<sup>४</sup>, रामजन<sup>५</sup>, दयालुदाम<sup>६</sup>, कान्हडदास<sup>७</sup>, चतुरदास<sup>८</sup>, दूल्हेराम<sup>९</sup>, मेवकराम<sup>१०</sup>, जगन्नाथ<sup>११</sup>, पूरणदास<sup>१२</sup>, नारायणदास<sup>१३</sup>, बज्रुनदाम<sup>१४</sup>, और उनका वृत्तिशा का सम्बन्ध उल्लेख किया है । लेखक ने इस सूचना का आधार प्रधान रूप से ‘रामचरणजी’ की अणभै बाणी’ और ‘श्रीरामसनेहधर्मप्रकाश’ को बनाया है । ये दोनों ग्रन्थ सम्प्रदाय की ओर से प्रकाशित हैं, इसलिए सामग्री

१ श्री रामसनेहधर्मप्रकाश, पृ० ३९१ । २ राजस्थान का पिगल साहित्य, पृ० २०३ । ३ वही पृ० २०५ । ४ वही, पृ० २०६ । ५ वही, पृ० २०७ । ६ वही, पृ० २०४ । ७ वही, पृ० २०७ । ८ वही, पृ० १७७ । ९ वही, पृ० २१६ । १० वही, पृ० २१८ । ११ वही, पृ० २०४ । १२ वही, पृ० २१६ । १३ वही, पृ० १६ । १४ राजस्थान का पिगल साहित्य, पृ० २१७ । १५ वही, पृ० २१७ ।

इसी प्रकार भेनारिया जा न एक भूल और की है और वह है 'प्रह्लाद चरित' क लेखक जन गोपाल को रामचरण का शिष्य मानन की । रामसनेही सम्प्रदाय म जन गोपाल रचित 'प्रह्लाद चरित' का महत्त्वपूर्ण स्थान है, इसे हम मानत हैं । रामचरण के शिष्यो मे जनगोपाल नामक एक महात्मा थे इसे भी हम स्वीकार करते हैं । फिर भी यह स्मरणीय है कि 'प्रह्लाद चरित' का पाठ दादू पथ मे भी बड़ी श्रद्धा के साथ किया जाता है । दादूदयाल के २४ शिष्यों में जनगोपाल नाम के एक महात्मा थे यह भी सर्वविदित है । अत यह प्रश्न विवादग्रस्त हो जाता है कि ये जनगोपाल कौन थे—दादूदयाल के शिष्य अथवा रामचरण के ? प्रस्तुत लेखक ने इस सन्देह का निवारण करने क लिए शाहपुरा आचार्य रामकिशोर जी से परामश किया था । उन्होने यह स्वीकार किया कि 'प्रह्लाद चरित' के रचयिता जनगोपाल दादूदयाल के शिष्य थे । सम्प्रदाय के अय जानकार महात्माओ ने भी इसी तथ्य का समर्थन किया ।

## १६ उत्तरी भारत की सन्त परम्परा

### सन्तकाव्य

इन दोनो ग्रथो क लेखक स त साहित्य के प्रख्या विद्वान् प० परशुराम चतुर्वेदी है । इनका प्रकाशन क्रमश सम्बत् २००८ और सम्बत् २००६ में हुआ था । यद्यपि इन ग्रथा म चतुर्वेदी जी अपने पूर्ववर्ती इतिहास ग्रथो स अधिक सामग्री नहीं दे सके हैं फिर भी अव्ययन की दृष्टि से इनका विशेष महत्त्व है क्योंकि प्रात सामग्री का मुख्य वस्थित ढग से उपयोग करके साम्प्रदायिक सिद्धांतो का विवेचन सर्वप्रथम इही ग्रथो मे हुआ है ।

उपयुक्त दोनो ग्रथा म केवल रामचरण<sup>१</sup> और दरिया साहब<sup>२</sup> का ही जीवनवृत्त प्राप्त होता है । दोनो महात्माओ के जीवनवृत्त के सम्बन्ध म इन ग्रथो में हर प्रकार से प्रामाणिक सामग्री मिलती है । दरिया साहब क जन्म काल क सम्बन्ध म पहले चतुर्वेदी जी को भ्रम था । उन्होंने उनकी जन्मतिथि सम्बत् १७३२ मान ली थी<sup>३</sup> किन्तु बाद मे इन्होने अपन मत मे संशोधन करके उनको जन्म तिथि सम्बत् १७३३ निर्धारित की<sup>४</sup> ।

'उत्तरी भारत की सन्त परम्परा' के प्रथम संस्करण तक चतुर्वेदी जी को रामसनेही सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं के विषय में कोई सूचना नहीं प्राप्त थी । तब तक उन्हें केवल शाहपुरा शाखा के विषय म ज्ञात था । रेण की शाखा को इस ग्रथ में 'दरिया पथ' के नाम मे अभिहित किया गया है । 'सन्त काव्य' क प्रकाशन तक आने-आने तक

१ उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, पृ० ६१४-१५

२ वही, पृ० ५७८

३ हिन्दुस्ताना (१९३१) अंक १, भाग ४, पृ० ४८८

४ सन्तकाव्य, पृ० ४४४

को रामसनेहिया की तीनों शाखाओं की सूचना मिल चुका थी। सम्भवतः स्वाभाविक कारण इस ग्रन्थ में लेखक को उनके नामोन्लेख मात्र से सन्तोष कर लेना पड़ा। चतुर्वेदी जी ने 'सर्व काव्य' में दरिया साहब की परम्परा को रामसनेही सम्प्रदाय के अन्तर्गत मानने में शका व्यक्त की है जो कि बहुत ही स्वाभाविक है क्योंकि दरिया साहब के शिष्य नानकदास ने भी दरियासाहब के अनुयायियों को 'दरिया पंथ' कहा है।<sup>१</sup> लेकिन आज दरिया साहब के अनुयायी आज को रामसनेही मानते हैं तथा राजस्थान में इसी नाम से प्रसिद्ध भी हैं। अतः ग्रन्थोक्त प्रमाणों को अलग रखकर साम्प्रदायिक मायता के आधार पर दरियापंथियों को रामसनेही मानने में कोई बाधा नहीं दिखाई देती।

## २० आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका

### आधुनिक हिन्दी साहित्य

उपयुक्त दोनों ग्रन्थ प्रयाग विश्वविद्यालय से डी० एल०, और डी० लिट्० उपाधियों के लिए डॉ० लक्ष्मी सागर वाण्येय द्वारा प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ है जिनका प्रकाशन क्रमशः १९४८ ई० और १९५२ ई० में हुआ। इन ग्रन्थों में लेखक ने यथावसर रामसनेही सम्प्रदाय के विषय में भी अनेक विचार प्रकट किये हैं। सूचनाओं के अभाव में विद्वान् लेखक ने हरिरामदास, रामदास और दयालुदास को रामचरण का शिष्य मान लिया है।<sup>२</sup> लगता है कि उन्हें यह नहीं पता था कि रामसनेही नाम से राजस्थान में तीन सम्प्रदाय चल रहे हैं जिनकी अपनी-अपनी पृथक गढ़िया और भिन्न परम्परायें हैं। शायद उन्होंने यह समझा कि रामसनेही सम्प्रदाय की स्थापना रामचरण ने की थी और खेडापा, रण आदि में उनको शिष्य शाखा का विस्तार हुआ, अथवा वे हरिरामदास, रामदास और दयालुदास को रामचरण का शिष्य मानने को मजबूती न करते।

## २१ राजस्थान में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज (भाग ३ और ४)

इनका प्रकाशन साहित्य संस्थान उदयपुर से क्रमशः सन् १९५२ और १९५४ में हुआ था। अब तक के प्रकाशित ग्रन्थों में अनुसंधेय विषय पर सबसे अधिक सामग्री इन्हीं ग्रन्थों में संकलित है। किन्तु इन खोज विवरणों की सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि साहित्यकारों के सम्बन्ध में ये सर्वथा ग़लत हैं। ऐसी स्थिति में इनसे यह भी पता नहीं

१ दरिया पंथी काइया रामनाम सिर तास।

मुख्य साच सम्हालिया यू कहे नानकदास ॥

श्री रामसनेही सतवाणो, पृ० १४४

२ आधुनिक हि० साहित्य की भूमिका, पृ० २१९

बल पाता कि कौन सी रचना अनुसंधेय विषय से सम्बद्ध है और कौन सी नहीं। यदि साहित्यकारों का सति परिचय भी इनमें द दिया गया होता तो यह प्रयास हर प्रकार से श्वापनीय माना जाता और राजस्थानी साहित्य के अन्वेषकों के लिए बड़ा ही उपादेय सिद्ध होता।

## २२ राजस्थान की जातियाँ

बजरंग लाल लोहिया टूट इस ग्रंथ का प्रकाशन सन् १९५४ में हुआ था। प्रसंगवशात् इस ग्रंथ में भी रामस्नेही सम्प्रदाय के बारे में सति प्रकाश डाला गया है। लेखक ने रामस्नेहियों की शाहपुरा और खेडावा की शाखाओं के बारे में ही लिखा है। रण के विषय में वह पूर्णतः चुप है।

लोहिया जी ने रामदास को माझी जाति का बताया है।<sup>१</sup> रामदास की माझी जाति का बताने वाला आप पहले व्यक्ति हैं। इस कथन की पुष्टि न तो अत एवम् बहिस्तद्विषयो स होनी है और न किंवदंतियों के आधार पर ही की जा सकती है। प्रस्तुत लेखक का यह दृढ़ मत है कि रामदास माझी कुल में नहीं उत्पन्न हुए थे।

लोहिया जी ने मानदास नामक एक और महत्त्व का भी उल्लेख किया है।<sup>२</sup> कहना न होगा कि रामस्नेही सम्प्रदाय की सिंहवल खेडावा शाखा क्या, किसी भी शाखा में मानदास नाम का कोई महत्त्व अब तक नहीं हुआ है।

## २३ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय

इस ग्रंथ का प्रकाशन सन् १९५६ में वैद्य केवलराम नामक रामस्नेही साधु द्वारा हुआ था। यह एक सम्पादित ग्रंथ है जिसमें रामस्नेहियों की शाहपुरा शाखा के १८ बाणीकार सतों की रचनाएँ संकलित हैं। प्रारम्भ में लगभग डेढ़ सौ पृष्ठों की सुन्दर भूमिका के कारण इस ग्रंथ की महत्ता अत्यधिक बढ़ गई है। शाहपुरा शाखा के साहित्य के अनुशीलन में यह अत्यन्त उपादेय ग्रंथ है। प्रस्तुत अध्ययन में यत्र तत्र मूल सामग्री के अभाव में इस प्रधान सद्ग्रंथ के रूप में अपनाया गया है।

रामस्नेही सम्प्रदाय सम्बन्धी उपयुक्त आलोचनात्मक सामग्री की विवेचना में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि निगुण मत की यह शाखा अभी तक विद्वानों की दृष्टि से प्रायः ओझल ही रही है। साम्प्रदायिक इतिहास और साहित्य को प्रकाश में लाने का कोई सुनिश्चित प्रयास नहीं किया गया। परवर्ती अनुसंधित्सुओं की दृष्टि बंगाल की ऐशियाटिक सोसाइटी के जनरल से आगे न जा सकी और थोड़े हेर-फेर के साथ बेरकाट महोदय की मायताओं की ही पुनरावृत्ति होती रही। इधर प० मोती

१ राजस्थान की जातियाँ पृ० ६४।

२ वही, पृ० ९४

साल में तारिया ने अपनी कृति को म एतद्विषयक कुछ अधिक तथ्य प्रस्तुत किया किन्तु उनका प्रयत्न भी कतिपय स ता के नामों लेख तक ही सीमित रह गया। तात्पर्य यह कि इस विषय को लेकर ज तक कोई ऐसा सुयोजित कार्य भारतीय अथवा विदेशी विद्वानों ने नहीं किया जो प्रस्तुत लेखक का पूर्णरूपेण पर्यनिर्देश कर सके अथवा उसके द्वारा आदर्श रूप में ग्रहीत हो सके। इस दिशा में साम्प्रदायिक सत्यों की जीवनी, साहित्य तथा साधना के तिमिराच्छन्न पक्षों की विवचना में उस अधिकतर जगने ही सीमित साधनों पर निर्भर रहना पड़ा है। प्रबंध की निम्नांकित रूपरत्ना स यह स्वत स्पष्ट हो जायगा कि उसका कितना अश अपना कहा जा सकता है और कितना पूर्व-वर्ती विद्वानों का प्रमाद।

पहला अध्याय विषय प्रवेश का है। इसमें आलाच्य सम्प्रदाय के हस्तलिखित एवं मुद्रित साहित्य की स्थिति और तत्सम्बन्धी प्राप्त आलोचनात्मक सामग्री की विवचना करते हुए प्रबंध का मालिकता पर विचार किया गया है।

दूसरे अध्याय में रामसनेही सम्प्रदाय व उद्भव और विकास की सम्यक् विवेचना की गई है। पृच्छभूमि के रूप में परम्परागत वैष्णव धर्म में सतमतानुकूल सत्त्वा का अनुसंधान करते हुए सत मत के अम्युदय की सामाजिक पृच्छभूमि का परिचय दिया गया है। फिर परिस्थितियाँ व प्रसाद से सगुण भक्ति में निगुण तन्वों के समावेश तथा अठारवी शताब्दी की सामाजिक, राजनातिक और धार्मिक परिस्थितियों की प्रतिक्रिया स्वरूप सगुण राम-भक्ति में इस निगुण धारा के फूट निकलन की चर्चा का गई है। इसी जयाय में रामसनेही सम्प्रदाय का स्थापना, और विकास, रामसनेहियों के देश भूपा, भाला, तिलक, पर्वोत्सव, आचार्यों की निवाचन प्रणाली, साम्प्रदायिक परम्परा आदि का विस्तृत परिचय दिया गया है। प्रबंध का यह भाग ऐतिहासिक ग्रन्थों तथा सगुण मार्गी भक्ति साहित्य के गम्भीर अध्ययन पर आधारित होने के कारण अठारवी शताब्दी के भक्ति-आन्दोलन की आन्तरिक एवं बाह्य स्थितियों की नवीन और मौलिक व्याख्या प्रस्तुत करता है।

साहित्य और साहित्यकार शीघ्र ही तीसरा अध्याय दो खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में रामसनेही साहित्य के स्वरूप और उसके प्रतिपाद्य विषय पर विचार किया गया है। दूसरे खण्ड में रामसनेही साहित्यकारों के जीवनवृत्त तथा उनकी रचनाओं का परिचय है। साम्प्रदायिक साहित्य का अधिकांश अभी अप्रकाशित है, अतः कवियों के जीवन परिचय के साथ ही काव्य शैली के उदाहरण के रूप में उनकी रचनाओं के कुछ नमूने भी दे दिये गये हैं। जीवनवृत्त प्रस्तुत करते समय लेखक का ध्यान अन्त तक इस बात पर रटा है कि सत्यों के आत्मोन्मेष तथा 'परचो', 'भक्तमाल' एवं समाधि के शिलालेखादि अन्य सामग्री द्वारा पुष्ट तथ्य ही प्रस्तुत किये जायें। एने महारत्नाओं के जीवन-वृत्त निर्माण में विवश होकर विवदतियाँ का

सहारा लेना पडा है जिहने अपना सारा जीवन गगन वितान के तले आकाश वृत्ति सरहने हुए बिताया था और जो अपने अनुभव की अभय निधि बिना किसी को सँपि ही अकस्मात् चल बसे थे। किन्तु वहाँ भी अपनी दृष्टि चमत्कारा के घने जवकार से तथ्यो को ढूँढ निकालने की ओर हा रही है।

चौथे अध्याय मे रामसनेही सत्तो के दार्शनिक विचारा का निरूपण किया गया है। पहले सत् साहित्य क दार्शनिक अध्ययन की समस्या पर विचार किया गया है और फिर आलोच्य युग के सत्तो की ग्रहा, जीव, मुक्ति, माया, काल और जगत् सम्बन्धी मायताओं की विस्तृत व्याख्या का गई है। इसके साथ ही उम प्रभावित करने वाले पूर्ववर्ती भारतीय तथा सामी विचार धाराओं को ओर भी संवत कर दिया गया है।

पाचवें अध्याय के भी दो भाग हैं। प्रथम भाग मे रामसनेही सम्प्रदाय की साधना पर विचार किया गया है। इस सम्प्रदाय मे प्राप्त ज्ञान कर्म, भक्ति, योग और मूर्खी प्रेम साधना के सूत्रो पर यारक दृष्टि स प्रकाश डाला गया है। योग साधना के अंतगत हठयोग, मंत्रयोग, लययोग, राजयोग लौर सत्तो के 'सुरति शब्द-योग का भी सम्यक रूप मे परिचय दिया गया है। दूसरे खण्ड मे रामसनेहियो क धर्म का अनुशीलन करत हुए उनक विश्वास, आचार और उपासना प्रणाली का परिचय दिया गया है।

छठे अध्याय का प्रतिपाद्य विषय है साहित्यिक मूल्यांकन। इसमे रामसनेही सत्तो की बाणी के भावात्मक एवं कलात्मक महत्व पर विचार करत हुए रस, अलंकार, भाषा, लांकारिक, मुहावरे, छंद, सगीत, उलटवासी, दृष्टिकूट, प्रतीक-योजना प्रकृति वर्णन, समाज वर्णन आदि प्रमुख तथ्यों की विवेचना की गई है।

सातवाँ अध्याय अंतिम अध्याय उपसंहार का है। इसमे रामसनेही सम्प्रदाय के सगठन, परम्परा, साहित्य आदि का सिंहावलोकन करते हुए सम्प्रदाय को सामाजिक एवं साहित्यिक उपलब्धि तथा उसकी वर्तमान स्थिति पर दृष्टिपात किया गया है।

अध्ययन को सजीवता एवं रोचकता प्रदान करने के लिए ललक न यथाशक्ति उसे साम्प्रदायिक पीठो में ऐतिहासिक अवशेषो के रूप मे उपलब्ध उपकरणो स सुसज्जित करने का प्रयास किया है। सत्तो, उनकी समाधियो तथा हस्तलेखो के बिना इसी उद्देश्य से प्रस्तुत किये गये हैं। इस ग्रंथ मे जितने चित्र दिये गये हैं उन सबका सकलन प्रमुख साम्प्रदायिक कद्रो मे हुआ है। अतः उनकी प्रमाणिकता असंदिग्ध कही जा सकती है। सम्प्रदाय के प्रसार क्षेत्र का मानचित्र ललक ने जानकार महात्माओं के परामर्श से अपनी देख रस मे बनवाया है। इस सम्प्रदाय की व्यापकता तथा रामसनेहियो क प्रमुख कद्रो की भौगोलिक स्थिति का सही परिचय प्राप्त करने मे सुगमता होगी।

प्रस्तुत लेखक ने इन उद्देश्या की पूर्ति के लिए राजस्थान की तीन तीन शोध यात्राएँ कीं। नगरो से दूर स्थित गावा मत्रा जाकर वहाँ क स ता और रामद्वारो से सामग्री सकवित की। इम अध्ययन की अधिकाधिक पुष्ट और सवाङ्गपूण बनाने के लिये अपनी सीमिन आर्थिक, शारोरिक तथा मानसिक शक्तियों के उभयोग मे किसी प्रकार को कसर नहीं छोडी गई फिर भी प्रस्तुत लेखन यह दावा नहीं करता कि उसने आनोच्य सम्प्रदाय का जो अध्ययन प्रस्तुत किया है वह सर्वथा पूण है। प्रथ वे कलेवर तथा अपनी सीमाओं को देखते हुए बहुत से साहित्यकारो का परिचय और उनकी वृत्तिया का विवचन जानकारी रखते हुए भी छाड दना पडा। अवसर मिलने पर राजस्थान की इस लोकविश्रुत चिन्ताधारा पर अधिक व्यापक प्रकाश डालन का हम प्रयत्न करेगे।



## रामसनेही सम्प्रदाय का उद्भव और विकास

परम्परागत वैष्णव धर्म में सतमतानुकूल तत्त्व

सत मत का उदय महात्मा कबीर से माना जाता है।<sup>१</sup> कबीर के गुरु रामानन्द थे। रामानन्द का अविर्भाव वैष्णवाचार्य रामानुज की परम्परा में हुआ था। रामसनेही सम्प्रदाय के आदि गुरु जयमलदाम और सतदास भी रामानन्द की परम्परा में आते हैं। तात्पर्य यह कि सतमत वैष्णव धर्म को ही एक शाखा है जो दशकाल जय परिस्थितियों के प्रभाव से एक पृथक धारा के रूप में प्रवाहित होने लगी। यही कारण है कि कुछ उल्लेखनीय अंतर के बावजूद दोनों परम्पराओं में बहुत ही वैचारिक, समानता है। बहुत से लोगों को साकार के उपासक वैष्णव और निराकार के ध्याता सतो ने मत में अतिबिरोध दिखाई पड़ता है किंतु उनका यह धारणा सवधा भ्रान्त है। वस्तुतः सतमत के बीच वैष्णव धर्म में किसी न किसी रूप में बहुत पहले से वर्तमान थे जो परिस्थितियों के प्रसाद से अकृत्रिम और पल्लवित हुए। जब-तब अथ साधनाओं के छींटे भी इस पर पड़ने लगे जिगम्व कारण यह अपने मूल से किंचित भिन्न रूप में हमारे सामने आया। इस उपपत्ति की पुष्टि के लिए वैष्णव धर्म में प्राप्त सतमतानुकूल सामान्य तत्वों पर विचार कर लेना आवश्यक है।

### नामोपासना

निगुण सतो की साधना का मूल नामोपासना है। कबीर के अनुसार भव-गतरण के लिए 'राम-नाम' एक नौका है। जो इसका आश्रय लेता है वह न तो भव-जल से भीगता है और नर्पाप-पन से पकित होता है।<sup>२</sup> वस्तुतः कबीर ने राम नाम को ब्रह्म तत्त्वात् समझ कर मस्तक पर धारण कर रखा है।<sup>३</sup> वैष्णव धर्म में भी नाम

१ (क) हिन्दी काव्य में निगुण सम्प्रदाय (डा० बडधवाल), पृ० ३१

(ख) हिन्दी साहित्य का इतिहास (आचार्य शुक्ल), पृ० ७०

२ कबीर प्रयावली, पृ० ७९, १०

३ वही, पृ० ५, ३

साधना पर बल दिया जाना है। जध्या मरामायण' मे भगवान् शक' के मुत्र से, कहलवाया गया है कि नाम का उच्चारण करता हुआ वृत्तार्थ होकर, मैं हमेशा पार्वती के सहित काशी मे निवाम करता हूँ और यहा पर मरने वालो का मुक्ति के हेतु उनके काना मे राममन्त्र का उपदेश देता हूँ।<sup>१</sup> 'महाभारत' के अनुसार भगवान के नाम मे पापनाशिनी शक्ति का जितना बल है उतना शरीर से किये गये पापो का नही।<sup>२</sup> वैष्णव मत पर आगम साहित्य का भी प्वाप्न प्रभाव है। वैष्णव सम्प्रदायाचार्य यामुतमुनि आगम को पचम वेद मानने थे।<sup>३</sup> रामानुज<sup>४</sup> और वेदातदेशिक<sup>५</sup> ने भी अपने सिद्धान्ता के प्रतिपादन मे पाचरात्र सहिताओ की सहायता ली थी। कहना न होगा कि वैष्णव धम को प्रभावित करने वाले इस तालिक साहित्य मे भी नाम का महत्त्व बताया गया है। 'रुद्रयामल तत्र' म राम नाम को वेद यन जप, सब कुछ कहा गया है।<sup>६</sup> इसके अनुसार भक्तिपूर्वक राम-नाम का उच्चारण करने से ब्राह्मण, राक्षस, धार्मिक और पापी सबक त्रघन छूट जाते है।<sup>७</sup> 'नारद पाचरात्र' में कहा गया है कि रकार के उच्चारण से शरीर के पाप बाहर निकल जाते है और इसलिए कि कहीं वे फिर न प्रवेश कर जायें इस पर मकार रूपी कपाट लग जाता है।<sup>८</sup> इस प्रकार हम दखन है कि वैष्णव धम मे नामोनासना का बहुत पहले से प्रचलन रहा है।

१ अह भवनाम गृणन् वृतापी बसामि काश्याम निश भवाया ।

मुमूर्षमाणस्य विमुक्तयेऽह दिशामि मत्र तव राम नाम ॥

—अध्यात्म रामायण, युद्ध काण्ड, श्लोक ६२

२ नाम्नोति यावती शक्ति पाप निहरणे हरे ।

तावत् वचु न शाकनोति पातक पातकी नर ॥

—महाभारत—शांतिपर्व

३ इण्ड्रोडकशन द्रु दी पाचरात्र (श्रेडर), पृ १६

४ वही, पृ० १७

५ वही, पृ० १८

६ राम नाम परोवेदो, राम नाम सदा शुचि ।

राम नाम परो यज्ञी राम नाम नाम परोजप ॥

—रुद्रयामल तत्र म

७ द्विजो वा राक्षसो वाऽपि पानी वा धार्मिकस्तथा ।

राम रामेति योमन्त्रया सा मुक्तो भववधनाम् ॥

—वही

८ रेफोच्चारण मात्रेण बहिर्निर्गति पातकम् ।

पुन प्रवेश सदेहात् मकारश्च कपाटवन् ॥

—नारद पाचरात्र से

## रामसनेही सम्प्रदाय का उद्भव और विकास

परम्परागत वैष्णव धर्म में सतमतानुकूल तत्त्व

स त मत का उदय महात्मा क्यार से माना जाता है।<sup>१</sup> क्यार के गुह रामानन्द थे। रामानन्द का आविर्भाव वैष्णवाचार्य रामानुज की परम्परा में हुआ था। रामसनेही सम्प्रदाय के आदि गुरु जयमल्लान और सतदाम भी रामानन्द का परम्परा में आते हैं। तात्पर्य यह कि स तमत वैष्णव धर्म की ही एक शाखा है जो दशकाल जय परिस्थितियों के प्रभाव से एक पृथक् धारा के रूप में प्रवाहित होने लगी। यही कारण है कि कुछ उल्लेखनीय जतर के बावजूद दोनों परम्पराओं में बहुत ही वैचारिक, समानता है। बहुत से लोगों को साकार के उग्रभाव वैष्णवों और निराकार के ध्याता सता के मत में अन्तर्विरोध दिखाई पड़ता है किन्तु उनकी यह धारणा सधया भ्रांत है। वस्तुतः सतमत के बीच वैष्णव धर्म में किसी न किसी रूप में बहुत पहले से वर्तमान थे जो परिस्थितियों के प्रसाद से अकुरित और पलवित हुए। जब वे अथ साधनाओं के छीटे भी इस पर पन्ते रहें जिम्मे कारण यह अपने मूल से किंचित भिन्न रूप में हमारे सामने आया। इस उपपत्ति की पुष्टि के लिए वैष्णव धर्म में प्राप्त सतमतानुकूल सामान्य तत्त्वों पर विचार कर लेना आवश्यक है।

### नामोपासना

निगुण सतों की साधना का मूल नामोपासना है। कबीर के अनुसार भव सतरण के लिए 'राम-नाम' एक नौका है। जो इसका आश्रय लेता है वह न तो भव जल से भीगता है और नर्पाप पत्र से पकित होता है।<sup>२</sup> वस्तुतः कबीर ने राम नाम की ब्रह्म तत्त्वात् समझ कर मस्तक पर धारण कर रखा है।<sup>३</sup> वैष्णव धर्म में भी नाम

१ (क) हिंदी काव्य में निगुण सम्प्रदाय (डा० बडधवाल), पृ० ३१

(ख) हिंदी साहित्य का इतिहास (आचार्य शुक्ल), पृ० ७०

२ कबीर प्रथावली, पृ० ७९, १०

३ वही, पृ० ५, ३

साधना पर बल दिया जाता है। 'जध्या मरामायण' में भगवान् शक' के मुख से कहलवाया गया है कि नाम का उच्चारण करता हुआ वृत्ताथ होकर, मैं ह्रींमेशा पार्वती के सहित काशी मे निवास करता हूँ और यहा पर मरने वालो की मुक्ति के हेतु उनके काना मे राममन्त्र का उपदेश देता हूँ।<sup>१</sup> 'महाभारत' के अनुसार भगवान के नाम मे पापनाशिनी शक्ति का जितना बल है उतना शरीर स किये गये पापो का नही।<sup>२</sup> वैष्णव मत पर आगम साहित्य का भी प्वाण प्रभाव है। वैष्णव सम्प्रदायाचार्य यामुनमुनि आगम को पञ्च वेद मानते थे।<sup>३</sup> रामानुज<sup>४</sup> और वेदातदेशिक<sup>५</sup> ने भी अपने सिद्धान्ता के प्रतिपादन म पांचरात्र, सहिताओ की सहायता ली थी। कहना न होगा कि वैष्णव धम को प्रभावित करने वाले इस तालिक साहित्य म भी नाम का महत्त्व बताया गया है। 'हृदयामल तत्र' में राम नाम को वेद, यज्ञ, जप, सब कुछ कहा गया है।<sup>६</sup> इसके अनुसार भक्तिपूर्वक राम-नाम का उच्चारण करने से ब्राह्मण, राक्षस, धार्मिक और पापी सबके बधन छूट जाते है।<sup>७</sup> 'नारद पांचरात्र' मे कहा गया है कि रकार के उच्चारण से शरीर के पाप बाहर निकल जाने हैं और इसलिए कि कहीं वे फिर न प्रवेश कर जायें इस पर मकार रूपी कपाट लग जाता है।<sup>८</sup> इस प्रकार हम देखन हैं कि वैष्णव धम मे नामोपासना का बहुत पहले से प्रचलन रहा है।

१ अह भव नाम गृणन् वृतायी वसामि वाश्याम निश भवाया ।

शुभूर्पमाणस्थ विमुक्तयेऽह दिशामि मत्र तव राम नाम ॥

—अध्यात्म रामायण, मुद्रक काण्ड, श्लोक ६२

२ नाम्नोति यावती शक्ति पाप निहरणे हरे ।

तावद् वतु न शाकनोति पातक पातकी नर ॥

—महाभारत—शांतिपर्व

३ इन्द्रोऽव्ययं तु ही पांचरात्र (धेडर), पृ १६

४ वही, पृ० १७

५ वही, पृ० १८

६ राम नाम परोवेदो, राम नाम सदा शुचि ।

राम नाम परो यज्ञो राम नाम नाम परोजप ॥

—हृदयामल तत्र मे

७ द्विजो वा रामसो वाऽपि पानी वा धार्मिकस्तथा ।

राम रामेति योमस्तथा सा मुक्तो भवबधनात् ॥

—वही

८ रेफोन्वारण मात्रेण वह्निनिर्याति पातकम् ।

पुन प्रवेश संदेहात् मकारश्च कपाटवत् ॥

—नारद पांचरात्र से

## भक्तितत्त्व

वेमे तो भक्ति-तत्त्व का अनुमधान विभिन्न धर्म सम्प्रदायो के साहित्य में किया गया है किन्तु उसका त्रिक विकास एवं सुवद्धन मुख्य रूप से वैष्णव धर्म की छत्र छाया में हुआ। वस्तुतः भक्ति वैष्णव धर्म की आधारशिला है, उसका सर्वस्व है। भक्ति के स्वरूप का विश्लेषण करने वाले प्रमुख ग्रन्थ-शाब्दिक भक्ति सूत्र, 'नारद भक्ति सूत्र', 'श्रीभद्रभागवत', 'महाभारत', 'नारद पात्र रात्र', 'भक्ति रसामृत सिधु', 'भक्ति रसायन' आदि सभी वैष्णवों के आप ग्रन्थ हैं। सतमत प्रवक्त कबीर ने 'भगति नारदी मगन कबीरा' १ और 'भगति नारदी हृदय न आई काछि कूछि तन दीना' २ कहकर इस क्षेत्र में महर्षि नारद का ऋण स्वीकार किया है। अथवा उहोंने शुकदेव के प्रति अपनी थप्पा निवेदित करत हुए प्रकारांतर से 'श्रीभद्रभागवत' की भक्ति-प्रवृत्ति को स्वीकृति प्रदान की है। ३ कबीर की 'भाव भगति' ४ 'या प्रेम भगति' ५ जिसमें वे 'हरि मू' गंठजोरा करते हैं, वस्तुतः शिम्बाक सम्प्रदाय में विहित माधुय भाव या कावा भाष, नारदीय भक्ति में स्वीकृत 'कातासक्ति' चैतन्य महाप्रभु की 'दशधा भक्ति' रामानन्द की 'पराभक्ति' और वैष्णव धर्म में सामान्य रूप से माय 'प्रेमभक्षण भक्ति' में अभिन्न है।

सत कवि जब 'राम रसायन' ६ या 'हरि रस' ७ का पान करने की बात कहते हैं तब वे जाने अनजाने भक्ति को रस रूप में प्रतिष्ठित करने हैं। रूप गोस्वामी ने भक्ति रस के दो भेद बताये हैं—(१) मुख्य भक्ति रस (२) गौण भक्ति रस। पुन उहोंने मुख्य भक्ति रस के ५ भेद किये हैं—शांत, प्रीति (दास्य), प्रेम (सह्य), वत्सन और मधुर। कहने की आवश्यकता नहीं कि सतों की वाणी में उपयुक्त पाँचों मुख्य भक्ति रसों का विद्यत बहान प्राप्त होता है। वैष्णव भक्ति के अतगत स्वीकृत 'नवधा भक्ति' और भक्ति की एकादश आभक्तियाँ भी सत काव्य में किसी न किसी रूप में देखी जा सकती हैं।

## आराध्य का स्वरूप

सतों का आराध्य निगुण राम है जिसके लिये हरि, गोपाल, नरहरि, सारंगराणि जैसे वैष्णव नामाभिधाना का प्रयोग किया गया है। उसके स्वरूप का विश्लेषण करत हुए कबीर ने कहा है कि वह अविगत है। चार वेद, स्मृति, पुराण एवं व्याकरण उगक मर्म को जानने में अममर्य रू है ८ फिर भी तीन लोक का भार उखे

१ कबीर प्रयावनी पृ० ३२४ पद १०४। २ वहा, पृ० १८३, पद २७८  
३ वही, पृ० ५१, श्लो ११। ४ वही, पृ० २४५। ५ वही पृ० ८९, ५।  
६ वही, पृ० १६, श्लो २। ७ वही, पृ० १६, श्लो ४। ८ व० प्र०, पृ० १०४, पद ४६।

उपर है ।<sup>१</sup> वह सब मे रमण करता है<sup>२</sup> और मव का 'जियावन हारा भी है ।<sup>३</sup> इस प्रकार हम देखने है कि कबीर के राम, प्रकारांतर स सतो के आराध्य, निगुण और सगुण एक साथ है । यदि उन्होंने 'दशरथ मुन तिहूँ लोक बलाना, राम नाम को मरम है जाना',<sup>४</sup> जैसी बात कही तो केवल इसलिये कि वे समसामयिक परिस्थितियों को दृष्टि मे रखते हुए मूर्ति पूजा एव जवतार निष्ठा को अनावश्यक मानते थे । वस्तुत सतो ने, कबीर के शब्दो मे 'गुण मे निगुण निगुण में गुण, बाट छाडि बंयो बहिए'<sup>५</sup> कह कर निगुण और सगुण के ऋगडे का बडा ही सुन्दर समाधान प्रस्तुत किया था ।

स्मरण रखना चाहिये कि वैष्णव धर्म के सभी ग्रन्थो मे भगवान के निगुण-सगुण दोनो रूपो का बणन समान रूप म मिलता है । 'श्रीमद् भागवत' में कृष्ण सगुण और निगुण दोनो रूपो मे ग्रहण किये गय हैं क्योंकि वे अरूपी होकर भी रूपवान् हैं ब्रह्म होकर नी गतो का उदार करने क निमित्त भिन्न भिन्न रूप धारण करते हैं ।<sup>६</sup> 'पद्मपुराण' मे भगवान् श्रीकृष्ण ने शंकर जी स कहा है—'हे शंकर जी ! मेरे जिस अलौकिक रूप को आज आपने देखा है वह विशुद्ध प्रेम की धनमूर्ति और मच्चिदानन्द स्वरूप है । उपनिषत्समुदाय मेरे इसी रूप को निराकार, निगुण, सर्व यापी, निष्क्रिय और परापर ब्रह्म कहत हैं । मुझमे प्रकृतिजय गुणो की सत्ता को असिद्ध मानकर वे मुझको निगुण कहते हैं और अनन्त होने से मुझको ईश्वर बताते हैं ।'<sup>७</sup>

## योगतत्त्व

'योग माग के क्षेत्र मे भक्ति के बीज पडने से उत्पन्न मना की निगुण भक्ति'<sup>८</sup> की ही भाँति वैष्णव साधना भी योगमूलक है । विशिष्टाद्वैत सम्प्रदाय के आचार्यों के मतानुसार यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रसाहार, धारणा, ध्यान, समाधियुक्त अष्टांगयोग भक्तियोग का एक अंग है ।<sup>९</sup> 'महाभारत' मे शातिपर्व के ३१६वें अध्याय में योग का विस्तृत बणन किया गया है । अनुशामन पर्व के १४वें अध्याय में अणिमा, महिमा आदि योग की सिद्धिया का चर्चा है । गीता मे भी योग का विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है । 'गीता मे योग की व्यापकता का परिचय हम उग

१ वही, पृ० १२४, पद ११४ । २ वही, पृ० १०५, पद ५२ । ३ वही, पृ० १०२, पद ४३ । ४ वही, पृ० । ५ वही पृ० । ६ श्रीमद्भागवत, ३/२४/३१ । ७ वही, ३/९/११ । ८ पद्म पुराण, पृ० ८२/६६६७ । ९ मन्वन्तरीय धर्म साधना डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ० ६९ । १० कन्याण उपनिषद् अक, बप ४२ संख्या १ पृ० २८० ।

समय मिलता है जब हम पान<sup>१</sup> और भक्ति<sup>२</sup> को भी योग की सृष्टि से मुद्योमित पान हैं। यही नहीं, कितने विद्वान् तो गीता को योगशास्त्र भी कहते हैं जिसके प्रमाण में इसके प्रत्येक अध्याय के अन्त में आया हुये 'योगशास्त्रे' शब्द का उल्लेख करते हैं।<sup>३</sup> रामानन्द का प्रसिद्ध 'ग्यान लीला', 'ग्यान तिलक', 'योग चिन्मणि' आदि रचनाएँ भी योग प्रधान हैं। रामानन्द की शिष्य परम्परा में कृष्णदास परमहारी और कीलहदास की साधना भी योगाश्रित थी।

### वर्णव्यवस्था का विरोध

जहाँ तक जाति पाति के विरोध का प्रश्न है वैष्णव धर्म निगुण सत्तों की भांति वर्णव्यवस्था के विवृत रूप का विरोधी रहा है। 'महाभारत' में स्वभावानुसार शुभ कर्म करने वाले दूदो को द्विजों से श्रेष्ठ बताया गया है।<sup>४</sup> 'भागवत' में अमृत ब्राह्मण की अपणा भक्त चाडाल को उत्तम कहा गया है।<sup>५</sup> 'भविष्य पुराण' में चारों वर्णों को एक ही पिता की सतत मान कर जातियों का श्रेष्ठ प्रत्याख्यान किया गया है।<sup>६</sup>

१ मा च यो यभिचारेण भक्ति योगेन सेवते ।

—गीता १४।२६

२ पानयोगेन साह्याना कर्म योगेन योगिनाम् ।

—बही ३।३

३ इति श्री महाभारत सत महयया सहिताया वैयासिकया भीष्मदर्वाणि श्रीमद्भागवद्-  
गीता मुपनिषत्सु ब्रह्मविद्यया योगशास्त्रे श्री कृष्णार्जुन सम्वादे योगिनाम्  
अध्याय ।

४ स्वभाव कम च शुभ यत्र दूदोऽपि तिष्ठति ।

विशिष्ट सद्भिजातेषु विनये इति मे मति ॥

न यानिर्नापि सस्कारो न श्रुत न च सन्तति ।

कारणानि द्विजत्वस्य वृत्त मेव तुकारणाम् ॥

—महाभारत, अनुशासन पर्व, १४३।४९ ५०

५ विप्राद्विप गुण युतादर विदनाम-

पदारवि द विमुखाच्छयपच वरिष्ठम् ।

मये तर्पित मनो वचने हिताथ-

प्राण पुनीनि सकुल न तु भूरिमान् ॥

—श्री मद्भागवत ७।९।१०

६ चत्वार एकस्य पितु मुताश्च तेषा मुताना खलु जातिरेका ।

एव प्रजाना हिपिठैक एव पित्रैक आवान्तु जातिभेद ॥

—भविष्य पुराण

यही नहीं, वैष्णव भक्त व्यावहारिक जीवन में मां जाति पानि का भेद-भाव नहीं रखत थे। आनवारो में सर्व प्रसिद्ध रामानुवार ( गठकोपाचार्य ) 'गुणवशी थे।<sup>१</sup> तिरुमने आलवार भी जाति क हीन और प्रारम्भिक अवस्था में दस्यु वृत्ति से जीवन-यापन करते थे।<sup>२</sup> श्री रामनुजाचार्य ने जातिवाद के बंधनों को ढीला कर शूद्रों को अपने सम्प्रदाय में प्रवेश करने का स्वतंत्रता दी थी।<sup>३</sup> 'जाति-पानि पूछै नहि कोइ, हरि को भजे सो हरि का होई' का सिद्धांत प्रवर्तित करने वाले रामानुद क सम्बंध में कहना ही क्या ? उनके सौख्यश्रुत शिष्य कबीर, रैदास, घना और सेना नीच जाति में ही उत्पन्न हुये थे। इनकी सांगिया और पद ही सत मत में वेद वाक्य बन गये।

### बाह्याडंबर की निंदा

बाह्याडंबर की आलोचना निगुण भक्ता की प्रमुख विशेषता मानी जाती है। यह प्रवृत्ति वैष्णव भक्ति साधना के लिए कोई गन्तव्य नहीं थी। 'गङ्गा पुराण' में वेद, यज्ञ, आडंबर आदि में लित कर्मकांडियों को कटु आलोचना की गई है।<sup>४</sup> व्रत उपवास आदि के द्वारा काया को कष्ट देने वाले को मूढ कहा गया है।<sup>५</sup> और बाह्याचारा की तो इतनी कटु निंदा की गई है कि उसके ममत्त कबीर की आलोचना भी फीकी पड़ जाती है —

अटामाराजिनयुक्ता दम्भिका वेप धारिण ।  
 भ्रमति त पानि बल्लोके भ्रामयति जनाननि ॥  
 १ मसारज मुखामत्त ब्रह्मनोऽस्मीति वादिनम् ।  
 कम ग्रहो भय भ्रष्ट त त्यजदत्यज यथा ॥  
 गुणगणोदकहारा मतत वनवासिन ।  
 जम्बुका शु मृगाधारव तापसास्न भवति न किम् ॥

१ हिमस आफ दी आलवारम । १

—जे० यम० यम० हूर, पृ० १२

२ वही, पृ० १६ ।

३ Influence of Islam on Indian Culture, P 102

४ नाम मानेण मतुष्ठा कमकाड रता नरा ।

मत्रोच्चारण ही माये भ्रामिता व्रतु विस्तरे ॥

—गरुडपुराण उत्तर खंड, तृतीय धम खंड, ४९।६०

५ दह दग्ध मानेण का मुक्तिरविवेकिनाम् ।

बाल्मीक ताडना देव मृत किनुमहोरग ॥

—वही, ४९।६२ ।

आज म मरणात्तच गगादित्तिनी स्थित ।  
 महकमत्स्य प्रमुखा योगिनस्ते भवति किम् ॥  
 पारावता शिला हारा कदाचिदपि चानका ।  
 न पिबति महीतोय व्रतिनस्ते भवति किम् ॥<sup>१</sup>

## पुस्तक ज्ञान की असारता

वैष्णव सम्प्रदाय में सत मत की भाँति पुस्तक ज्ञान को असार माना गया है । 'गरुड पुराण' में कहा गया है कि परमार्थ तत्त्व को बिना जाने केवल वेदशास्त्रादि पढ़कर ज्ञान की बात करने वालों का बयन काकभाषित से अधिक सारगर्भित नहीं है । जिस प्रकार पुष्प के भार को सहन करने वाला शिर उसकी गंध को नहीं जान पाता और नासिका को उसकी अनुभूति हो जाती है उसी प्रकार केवल वेदशास्त्रादि का अध्ययन करने वाले को भाव का बोध नहीं होता । उसका सम्यक बोध अनुभवी व्यक्ति को ही होता है । यही नहीं बल्कि यहाँ तक कहा गया है कि जिस प्रकार बकर को बगल में टबाकर दुमति उसकी कुँएँ में खोज करता है उसी प्रकार हृदय में ही स्थित परमार्थ तत्त्व को न जानकर मूल शास्त्रों में हूँढते फिरते हैं ।<sup>२</sup>

## सहज

सत मत को सामान्यतया सभी विद्वानों ने 'सहज' तत्त्व के लिए सहजयानी बौद्ध सिद्धों और नाथ पंथी योगियों का ऋणी माना है । यह सच है कि सहज साधना की सर्वाधिक चर्चा सिद्धों और नाथ योगियों की रचनाओं में हुई है किन्तु यह कहना सर्वथा असत्य नहीं प्रतीत होता कि सतों का 'सहज' सीधे सिद्धों और योगियों से ही ग्रहीत है क्योंकि 'सहज' तत्त्व का प्रादुर्भाव वस्तुतः युग जीवन की महती आवश्यकता के फलस्वरूप हुआ था । जब विभिन्न मत पंथों में आचार विचारगत जटिलता के कारण साधना गौण और बाह्यआचार प्रमुख स्थान ग्रहण करता जा रहा था—तब—जब — मानस को सहज की आवश्यकता का अनुभव हुआ था । यही कारण है कि जीवन के

१ गरुडपुराण—उत्तर खंड, द्वितीय धम खंड, ४९।६३-६९ ।

२ वेणुसम पुराण परमार्थम् ने वक्तिम् ।  
 विष्णुसमस्य तस्यैव तत्सर्वम् काक भाषितम् ॥  
 सिद्धो वहतिपुष्पाणि गंध जानातिनासिका ।  
 पठति वद शास्त्राणि दुलभोभाव बोधक ॥  
 गौर कक्षा गत छागे रूप पश्यति दुमति ।  
 तरवमात्मस्यमनात्वा मूढ शास्त्रेषु मुह्यति ॥

—गरुड पुराण, उत्तर खंड, द्वितीय धम खंड, ४९/७३, ७६, ८०

विविध क्षेत्रों में इसका इतना व्यापक प्रचार हुआ कि महज भावना, सज्ज योग, सज्ज ममाधि, महज नान महज धुनि महज मुत्त, सज्ज गूय, सहज पद, महजावस्था में जो भाव, सहजशील जैम अनेक शब्द प्रचलित हो गये। कठना न होगा, सतमत के उदय से बहुत पहले वैष्णव धर्म में भी 'महज' का समावेश हो गया था। इसका समस्त बड़ा प्रमाण इना नाम से प्रचलित वैष्णव सहजिया सम्प्रदाय है जहाँ बौद्ध सहजिया लोगों के 'प्रना' और 'उपाय' के युगनद्ध की भाँति 'राधा' और 'वृष्ण' के निरव प्रेम की कल्पना की गयी है। विद्वानों ने निम्नलिखित सम्प्रदाय के अनुयायी जबदेव के 'गीत गोविन्द' में वर्णित राधा और वृष्ण की रहस्यमयी केलिया में भी सहज-यानियों के 'प्रना' और 'उपाय' की अद्वय दशा को देखा है।<sup>१</sup> वारकरी सम्प्रदाय के 'जमगों' में भी सहज तत्व को स्थापित किया जा सकता है। नामदेव की रचनाओं में प्राप्त सतमतानुद्धन सत्वों के आधार पर कतिपय विद्वान् उन्हें सतमत का प्रवर्तक मानने के पक्षधर हैं।<sup>२</sup> ध्यातव्य है कि कवीर आदि सत सत्वियों ने जय व और नामदेव के प्रति विशेष श्रद्धा निवेदित की है।<sup>३</sup> वैष्णवों का मातृवक रहना से भी 'सहज' तत्व ध्वनित होगा है जिसका प्रभाव सतो पर विशेष रूप से सिद्धाई पड़ता है।

### मध्यम मार्ग

सच्चा सत मध्य-मार्ग का पथिक होता है। वह जीवन के अतिवादा—  
 पक्षापक्षी—में ऊपर उठकर सत्या वेपण में रत रहता है। सता में मध्यम मार्ग के प्रति गहरी जागरूकता दिखाई पड़ता है। 'मधि कौ जग' उनकी अनुभववाणी का महत्त्वपूर्ण भाग है। इसके लिए भी विद्वानों ने सता को थोड़े और नाथ पथिया का ऋणी माना है। प्रस्तुत लेखक की धारणा है कि मध्यम मार्ग किसी न किसी रूप में वैष्णव धर्मागत स्वीकृत रहा है। वैष्णवों की भक्ति वस्तुतः मध्यम मार्ग है जिसके विषय में यह कहा जाता है कि विषयान्ति गूय रागी पुरपा के निये नान योग का, मकाम मनुष्यो व लिए कम योग का उपदेश दिया गया है और जो पुरप न तो अधिक वैराग्य-वान हैं और न अधिक विषयान्ति हैं उनके लिए भक्तियोग का विधान किया गया है—

निर्विण्णाना नातयोगो 'यसि' नामिह कममु  
 तेव् निर्विण्ण चित्ताना कमयोगरतु कामिनाम्

न निर्विण्णो नातिसत्तो भक्तियोगोस्य सिद्धिः<sup>४</sup>

१ उत्तरी भारत की सत परम्परा—प० परशुराम चतुर्वेदी पृ० ९७

२ द्रष्टव्य—हिंदी को मराठी सता की देन—डा० विनय मोहन शर्मा,  
 पृ० १२६—१२७

३ गुरु परसादी जयदेव नामा, भगति के प्रेम इतनी है जाना।

—क० पृ०, पृ० ३२८ पद २०८

४ श्रीमद्भागवत, एकादश स्कंध

'गीता' के तत्ववाद का विवेचन करते हुए आचार्य परमुराम चतुर्वेदी ने भी साकेतिक रूप से यह स्वीकार किया है कि गीता की रचना के समय दो प्रकार की साधनाएँ प्रधान रूप से प्रचलित थीं जिनमें एक ज्ञानरोग और दूसरा कर्मयोग था। इनमें स प्रथम का रूप मुख्यतः आत्मोपासना का था और दूसरे का कर्मोपासना का। ये दोनों साधनाएँ क्रमशः निवृत्ति माग और प्रवृत्तिमाग कहलाती थी। श्रीकृष्ण ने इन दोनों को मर्यादित कर भक्तिरोग के रूप में मध्य-माग को प्रशस्त किया।<sup>१</sup> वैष्णव भक्त तुलसीदास जब 'धर बन बीब ही' 'प्रेमपुर' छाने की बात कहते हैं तब वे भी मध्यम माग का वर्णन करते हैं।<sup>२</sup> यही नहीं लोक जीवन में 'न अति बोलव, न अति चूड। न अति वर्पा न अति घूप' की उक्ति प्रचलित है जिससे मध्यम माग की पुष्टि होती है।

## अन्तमुखी साधना

सन्त साधना पूणतः अन्तमुखी है। वैष्णवों की साधना अपने मूल रूप में वहिर्मुखी है, किन्तु परवर्ती वैष्णव मत के स्वहृदय विश्लेषण में यह विदित होता है कि मध्ययुगीन सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों के प्रभाव में यह धीरे धीरे अन्त-मुखी हो चली थी। रामानंद की मानसी भवा जिनम शास्त्र के शालिग्राम, तन के तुलसी, आत्मा के चन्दन, ज्ञान के जनेऊ, ध्यान की घोटी, शुचिता के अचला, कामा के कुम, प्रेम के पानी, दया आचार विवेक के चौका तथा इच्छा के पुण्ड्र की चर्चा की गयी है, अन्तमुखी साधना की स्पष्ट परिचायिका है।<sup>३</sup> रामानन्द का अस्व पुरुष त्रिकुटी के मन्दिर में विराजमान रहता है जिस पर हर समय पलकों की चिक पडा

१ देखिये उत्तरी भारत की सत परम्परा, पृ० २२

२ तुलसी प्रयावली, (२००४) (दोहावली, छ० २५६) पृ० १०५

३ शालिग्राम शास्त्र कर सेऊ तन तुलसी कर लीजै।

आत्म चन्दन घसि घसि चरचू इस विधि सेवा कीजै ॥

ज्ञान जनेऊ ध्यान घोवटी गूचिया अचला कीजै।

कामा कुम प्रेम का पानी हरि दरिया भरि लीजै ॥

दया आचार विवेक सुचौका सर अस्नान करीजै।

इच्छा पुण्ड्र चढाऊँ पूजा मानस सेवा कीजै।

रहती है।<sup>१</sup> इस मन्दिर में अन्हद का घण्टा बजा करता है।<sup>२</sup> साधक हृदय की पुस्तक के आधार पर अनुभव को कथा कहता रहता है<sup>३</sup> और अपने आराध्य को चित्त का चवरो<sup>४</sup> हूलाया करता है। उनका मत से बाहर की सभा चीजे भ्रम स्वरूप है। य तथ्य उनकी अतमुखा प्रवृत्ति के द्योतक है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वैष्णव धर्म और सान मत के सामान्य तत्त्व प्रायः एक ही हैं। दोनों में उल्लेखनीय अंतर यह है कि प्रथम अभावजार की उपायना का विधान करता है और दूसरा उसका शुलकर विरोध। एक वम-भाग का पथिक हूदमरा कम को वधन स्व-प बताकर उनमें दूर रहने की शिक्षा देता है। एक वर्णाश्रम धर्म का 'जमना' मानता है किन्तु दूसरा वमणा का हिमायती है। इन परस्पर विरोधी तत्त्वों के विकास मूला के अध्ययन में विदित होता है कि मूल द्योत की एकता हानि हुय भी निगुण एवं सगुण भक्ति का एक दूसरे का प्रतिस्पर्धी बनाने में सदिशा की सामाजिक व्यवस्था एवं तत्कालीन धार्मिक परिस्थिति ही उत्तरदायी थी।

### सन्तमत की सामाजिक पृष्ठभूमि

आचार्य शुक्ल की धारणा है कि मध्ययुगीन धार्मिक आन्दोलन का सूत्रपात मुसलमानों के आक्रमण और हिन्दू जाति की पराजय में उदासी से हुआ था।<sup>५</sup> यह बात असंयत हीत हुय भी गर्वाश में सत्य नहीं है क्योंकि मुसलमानों के आक्रमण एवम् उनके राज्य सत्ता अविद्वित कालों के बहुव पूर्व ही इस आन्दोलन की पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी थी। मुसलमानों का आना तो एक कारण मात्र बना। इसीलिए डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है कि अगर इस्लाम नहीं भी जाना होता तो भी इस साहित्य का वाह्य आना वैसा ही होता जैसा आज है।<sup>६</sup> चन्तुत मुसलमानों के आक्रमण का प्रभाव हिन्दू राजाओं महाराजाओं, सामन्तों और पंडितों के जीवन पर ही अधिक

१ त्रिकुटी मन्दिर बैठा साधो वहाँ जाय दशन काजे।

चरमा माहि चिग टलकाळें धोरज बैठा रोजे ॥

—वही, पृ० २८

२ अन्हद घण्टा भानर वाजे।

—वही, पृ० २८

३ हिरदा पुस्तक कीजे, अनुभव कथा कहूँ भाई।

—वही, पृ० ७२

४ चित्त की चवरो कोजे।

—वही, पृ० २८

५ द्रष्टव्य हिन्दा साहित्य का इतिहास, पृ० ६०

६ हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० ७

पडा था। ऐसा स्विति म सम्पूर्ण हिन्दू समाज के हृदय से गौरव, गर्व और उत्साह उठान का कोई प्रयत्न नहीं था। सामान्य जनता तो हृदय पर पापाए रखकर युगों से शोषण का चक्की म घिस रही थी। उसके हृदय में कहीं उत्साह था, कहीं गर्व था और कहीं थी गौरव की भावना कि जो मुसलमानों के आतंक में उठती ?

मुस्लिम आक्रमण के पूर्व भारत वर्ष में अपार सम्पत्ति थी। विदेशी इस सोने की चिड़िया कहते थे। शिष्य और व्यापार अत्यन्त समृद्ध था। कहा जाता है कि अश्वला रोम अपने यहाँ से हर साल ढाई लाख तोना मोता या साठे पाँच लाख सस्तस (पीन दो कराँ रुपये), काठ और दूसरी चीजा को खरीदने के लिये भारत भ्रमण करता था।<sup>१</sup> किन्तु इस रुपये को वैभव और विलासिता की वस्तुओं के लिए पानी का भौति बहाया जाता था। प्रजा की मिहनत की कमाई से उपार्जित ये महाधन वस्तुयें चार-पाँच दिनों में ही खत्म हो जाने वाली थी। इनके अतिरिक्त भी साम तो के भारा खर्च था—नये नये राजमहल, ब्रीछा उपवन, सिंहासन राजपलग, मोर छल, चमर और लाखों के हीरा, मोती, बहुमूल्य रत्नाभूषण, राममूली का सजावट, चित्र-कला, कौडामुग, सोने के पीजड में बंद शुक सारिका, सोहे के पीजड में बंद कसरा।<sup>२</sup>

गृपक और मजदूर शोषण की ज्वाला में जल रहे थे। उनका न तो कोई सम्मान था और न ही कोई उनके दुःख-मुख का साथी। 'स्वयभू और पुष्पदन्त के खेत अगोरन वागिया के माँ गने और द्रक्षालताओं को देखकर आप यह न समझने की गलती करें कि वह उड़ी अगोरनेवालिया के उभभाग के लिए थी।'<sup>३</sup> उन्हें तो रूखे-मूखे भोजन और कभी कभी पानी पर संतोष करना पड़ता था।

तत्कालीन समाज में बराबरी व्यवस्था का इतना भीषण रूप प्रचलित था कि शूद्रों के साथ पशुवत् व्यवहार किया जाता था। उन्हें रखदोत्र में जाकर देश के लिए मरने का भी अधिकार नहीं था। ग्राहणा की व्यवस्था दानी क्रूर हो गयी थी कि कहीं-कहीं शूद्रों का नगरा की सडका पर चलना भी वर्जित था। सडको पर चलते समय धूकने के लिए उन्हें अपने साथ पुरवा रखना पड़ता था। मंदिर में उन्हें नहीं जाने दिया जाता था। निम्न जात्योत्पन्न होने के कारण ही नामदव को मंदिर से बाहर निकाल दिया गया था।<sup>४</sup>

१ हिंदी काय धारा (राहुल साठ्यायन), भूमिका, पृ० १३-१४

२ हिंदी काय धारा—भूमिका, पृ० १५

३ वही, पृ० १८

४ हमत खेलत तेरे दुहरे आया, भक्ति करत नामा पकरिउठाया।

हीनशी जाति मोरी जातदम राइया छीपे को जनमि कहे को पाइया ॥

—हिंदी को मराठी सतो की दन (२००४) पृ० १०२स उद्धत

## मुसलमानों के कारण उत्पन्न सांस्कृतिक संकट

एसे ही समय में, देश से मुसलमानों का आगमन हुआ। एक हाथ में तलवार और दूसरे में कुरान लेकर ये यवन शीत्र ही देश में फैल गये। उनकी नीति से आतंकित होकर हिन्दू समाज ने आत्मरक्षा के लिए धार्मिक नियमों को बसना आरम्भ किया। परिणामस्वरूप जाति, प्रथा का और भी भाषण रूप हमारे सामने आया और सम्पूर्ण समाज छूत के भय और बहिष्कारता की आशंका से ग्रस्त हो गया। दूसरी ओर यवन समाज प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक जाति को अपने-अपने समान आदर देने की प्रतिज्ञा कर चुका था। इस्लाम में भेद-भाव नहीं था। वह राजा से रक और ब्राह्मण से चाण्डाल तक सबको धर्मोपदेशना का समान अधिकार देने को राजी था। समाज का दंडित व्यक्ति अब असह्य न था। इच्छा करते ही वह एक सुसंरक्षित समाज का सहारा पा सकता था।<sup>१</sup> इनो के परिणामस्वरूप वेद-वाह्य कहे जाने वाले अनेक धार्मिक सम्प्रदायों और बहुत से उपनिषद् सूत्रों ने इस्लाम की शरण ली। पूर्वी यगल के वेद-वाह्य सम्प्रदायों के ध्वसावशेष कई धार्मिक सम्प्रदाय ऐसे थे जिन्होंने मुसलमानों का अपना प्राणकर्ता समझा था। वे सामूहिक रूप से मुसलमान हो गये। पञ्जाब में भी नाथों, निरंजनियों और पाशुपतों की अनेक शाखायें मुसलमान हो गयीं।<sup>२</sup> इस प्रकार देश के सम्मुख एक अभूतपूर्व सांस्कृतिक समस्या आकर खड़ी हो गयी और अब आवश्यकतित होकर देखने रह गयी।

## रामानन्द का आविर्भाव और भक्ति-आन्दोलन में नव चेतना

इस विषम परिस्थिति से देश की मस्तिष्क को उबारने के लिए आवश्यक था कि धर्म की सकीणता से ऊपर उठाया जाय। जाति-भेद को समाप्त कर ऊँच नीच सबको समान सामाजिक, धार्मिक अधिकार प्रदान किया जाय और विविध धार्मिक सम्प्रदायों के समन्वय के आधार पर एक नया प्रकार का मानव धर्म की प्रतिष्ठा की जाय। समय की इसी भाँग ने स्वामी रामानन्द जैसे धार्मिक नेता का जन्म दिया। रामानन्द ने साम्प्रदायिक बाह्यचार और सकीण मनोवृत्ति का परित्याग करके एक नव सम्प्रदाय की स्थापना का तथा हिन्दू मुसलमान, ऊँच-नीच सबको समान स्थापन दिया। उन्होंने आचारमूलक उपासना के आधार पर सहज भाव से भगवद्भजन करने पर बल दिया। उनका शिष्या में उच्चतुल्योद्भव अननन्द और पीता-ब्राह्मण शिष्यों, के साथ ही बवार, देवास, धन्ना और मुना जैसे नीच कट्टी ब्राह्मण जातियों में उद्देश्य साधक भी थे।

१ मन्वकापीन धनसाधना, पृ० ११,

२ वही, पृ० १८

## निर्गुण और सगुण भक्ति की दो धारायें

रामानन्द की इस धार्मिक नीति का यदि सहज ढंग में विकास हुआ होता तो आज भक्ति आन्दोलन का एक दूसरा ही रूप हमारे सम्मुख होता जो इस निर्गुण-सगुण धारा में बहुत ही भिन्न होता। किंतु दुर्भाग्य से ऐसा न हो सका। प्रतित्रिपावाद न भक्ति आन्दोलन की शिक्षा ही बदल दी। कबीर आदि समाज के निचले स्तर से आय हुए सत्तो को, ज्यों ज्यों अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की स्वतंत्रता मिली, उनका सोया हुआ ज्वालामुखी जाग उठा, उनका विद्रोह मूलक भावनाओं, जो सामंती और धमाकियों के भय में भातर ही भीतर दबी हुई थी, बड़ वेग के साथ 'तू कन वामन हम कस सूद की चुनौती देन ह्य निर्गुण धारा के रूप में फूट निकली। उन्होंने पूजा अर्चा, मंदिर-मूर्ति, तार्थ व्रत माला तिलक सब पर कुठाराघात किया। उनकी धारों काय और स्वाभाविक तो थी किंतु इन उद्गारों के मूल में प्रतित्रिपादा का बहुत बड़ा योग था। उन रामानन्द के निम्नमुल्लोचन शिष्या की जाक्षेपमूलक और कटु वाणी का तीव्र तीव्रविरोध जिसके फलस्वरूप समाज के उच्च स्तर में जाये हुये महात्माओं को उनकी एक-एक बात का समुचित उत्तर देना पड़ा और एक पृथक सगठन स्थापित करना पड़ा। यही न भक्ति की दो धारायें बह चली। प्रथम ने समाज में प्रचलित समस्त धार्मिक जाचार विचार व्रत उरवास और ऊच-नाच की मयादा को छुड़ा लिया तथा दूसरे ने सब कुछ अपना लिया। ब्रह्म के निर्गुण-निराकार और सगुण साकार स्वरूपों में भी प्रथम ने निर्गुण-निराकार का जोर द्वितीय ने सगुण साकार को अपनाया। उससे पूर्व ब्रह्म के साकार और निराकार रूप को लेकर इस प्रकार का मतभेद कभी नहीं हुआ था।

## सगुणोपासक भक्तों का निर्गुण साधना की ओर झुकाव

ब्रह्म के सगुण-साकार और निर्गुण निराकार स्वरूप के आधार पर भक्ति की दो धारायें तो प्रबलमान हो गयीं और उनमें परस्पर घोर विरोध भी रहा किंतु युग की मांग का समझ कर सगुणोपासक भक्त निर्गुणिया सत्ता का विरोध करते हुये भी उनकी साधना के आवश्यक एवं उपयोगा तत्वों को समय-समय पर ग्रहण करते रहे। कर्म-कर्मों समाज पर प्रभाव स्थापित करने के मोह से भी कुछ तत्वों का समावेश हुआ। आगामी पृष्ठों में सगुण साकारोपासना पर सतमत के प्रभाव की सुनिश्चित विवेचना की जायगी।

## अनन्तानन्द

अनन्तानन्द रामानन्द के द्वात्रिंश शिष्यों में से थे। इनकी कोई रचना नहीं प्राप्त होती। अभी तक जो कुछ इनके सम्बन्ध में पात हो सका है उनका श्रेय भक्त मान साहित्य को है। दयालुनाथ वृत्त भक्तभाल में इनके सम्बन्ध में एक छन्द प्राप्त

है जिससे प्रकट होता है कि ये नानमार्गी साधक थे और इन्होंने नामोपासना के जल से कर्म मल को धोकर शब्द-ब्रह्म को प्राप्त किया था<sup>१</sup>। स्मरण रखना चाहिए कि नानाश्रित नामोपासना और शब्द-ब्रह्म की साधना सतमत का मव स्व है।

### श्री कृष्णदास पयहारी

कृष्णदास पयहारी अनन्तानन्द के सर्वश्रेष्ठ शिष्य और रामानन्द के प्रशिष्य थे। गलता में गद्दी स्थापित करके पयहारी जी ने उत्तरी भारत में राम-भक्ति का गढ़ स्थापित कर दिया। योगियो और रामानन्दी महात्माओं के समाज पर प्रभुत्व स्थापित करने की होड़ में, दृढयोगिया को परास्त करके, पयहारी जी ने गद्दी स्थापित करके जनता के हृदय में योग साधना और सिद्धि के प्रति जमी हुई आस्था पर विजय प्राप्त की और अपनी साधना में योग तत्त्व का समावेश कर लोक-मानस में निर्गुणाश्रित मगुण भक्ति की प्रतिष्ठा की।<sup>२</sup> अभी हाल ही में प्राप्त इनका 'राजयोग' नामक कृति से यह प्रमाणित हो गया है कि वे साख्ययाग प्रणाली के प्रचारक थे। 'राजयोग' की पुष्पिका में स्पष्ट शब्दों में लिखा गया है—

कृष्णदास कुल कील मत साख्य ध्यान सियराम।

श्री गुरु कामद राम निधि, राम बीज रट नाम ॥

यही नहीं बरन् इस ग्रन्थ में अप्रदास को उपदिष्ट साधना प्रणाली से भी श्रीवान का समर्थन होता है—

प्राणहि अपान दृढ गाथि डोरि, कु डलनि आव सम युक्ति जोरि।

तत्र चलत पवन जहें ब्रह्म रघ्न, तहें छोडि जाहि सब त्रिगुण बध ॥

उलटे सुइया विंगला नारि, मुपमना शुद्ध सीजे विचारि।

पहुँचै मु जावै अनहृद् गेह राजै मु एक हरि सो सनेह ॥<sup>३</sup>

- १ रामानन्द परसाद गुरु अनन्तानन्द आनन्द घन धारा ग्यान अपड अवन सिप उर हरिपाली ने पे भगत आर भोम पर ब्रह्म समाली राम नाम जल विमल जाल मुर करम बुहाया अनुभव उ<sup>३</sup> अदूर सबद ब्रह्म सरवर पाया जिग्यास पदम विगसत सदा भाव मुगध सरमाय मन रामानन्द परसाद गुरु अनन्तानन्द आनन्द घन ॥

—मत्तमान (दयालुमान), छंद २२३

- २ द्रष्टव्य भारतीय साहित्य, वर्ष ५, अंक २३, पृ० ३५-४३ पर मुद्रित डा० भगवतीप्रसाद सिंह का 'श्री कृष्णदास पयहारी' शीर्षक लेख।

- ३ राजयोग—श्रीकृष्णदास पयहारी, छंद ५-८।

कहने की आवश्यकता नहीं कि योगाश्रित साधना का यह स्वरूप निगुणिया स तो क बहुत अनुकूल है ।

### कीलहदास

पयहारी जी और उनके शिष्यों प्रशिष्या के सम्बन्ध में प्रचलित अनेक कथाओं में उनकी योग-साधना में असाधारण जास्या एवं गति का पता चलता है । रामोपासना के अतगत यह प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती गई । आगे चलकर उसने एक पृथक् साधना-प्रणाली का रूप धारण कर लिया और तपसी शाखा के नाम से अभिहित का जाने लगा । इसके प्रवतक थे पयहारी श्रीवृष्णदाम और साम्प्रदायिक संगठनकता थे उनका उत्तराधिकारी गलता गढ़ी के द्वितीय आचार्य कीलहदास ।<sup>१</sup> कीलहदास की कोई वृत्ति अभी तक नहीं प्राप्त हुई है । अतः इनके सिद्धांतों का निरूपण करने समय हमें उनका अनुयायिआ और नाभादास आदि द्वारा प्रस्तुत तथ्यों पर ही निर्भर रहना पता है । कीलहदास जी योग साधना में बहुत ही प्रवीण थे । कहते हैं कि एक बार इनकी योग सिद्धि की परीक्षा लेने के लिये तत्कालीन देशाधिपति ने मथुरा-प्रवास के समय इनका शिर पर लोह की कील ठुकावा दी थी फिर भी इनकी समाधि नहीं टूटी ।<sup>२</sup>

### अप्रदास

अप्रदास जी श्रीवृष्णदास पयहारी के शिष्य थे । यद्यपि वे सगुण साकार क उपासक थे, फिर भी इनकी साधना पर परमरागत योग साधना का पर्याप्त प्रभाव लक्षित होता है । उनकी 'ध्यानमञ्जरी' नामक रचना में 'राजयोग' में प्रतिपादित सिद्धांतों का सीधा सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है । अपने ध्यान योग को गुरु-अनुग्रह कहकर उन्होंने प्रकारांतर इसी बात की पुष्टि की है—

श्री गुरु सत अनुग्रह ते अम गोपुरवासी ।

रसिक जनन हित करत रहसि यह ताहि प्रकाशी ॥

१ भारतीय साहित्य—वप ५, अंक २-३, पृ० ३९ ( डा० भगवती प्रसाद सिंह का 'श्रीवृष्णदास पयहारी' शीपक लेख ।)

२ (अ) कील कील सिर दई नृपति तत्रहूँ नहि जागे ।

प्रबल समाधी रसिक रामसिय छवि अनुरागे ॥

—रसिक प्रकाश भक्तमाल, पृ० १४

(ब) एक सम सहज सुभाय मधुपुर्य आये यमुना सनीर हाइ बैठे सुचि तीर मे ।

श्यामल स्वरूप रघुनन्दन को हिय आयो अचल समाधि लागी सतन की भीर मे ॥

देश दुती पति पात्साह सुनि कौतुक ज्यों, पपन को आयो नहि जाने पर पीर मे ।

कील शिर दई कछु बेदना न भई रही अचल समाधि जैसी लगी रघुवीर मे ॥

—वही, पृ० १५

ध्यान मजरी नाम सुनत मन मोद वढावे ।

श्री रघुवर को ध्यान मुदित मन अग्र सो गावे ॥<sup>१</sup>

### सतदास

सतदास का प्रादुर्भाव अग्रदास की पाँचवी पीढ़ी में हुआ था । य रामचरण के दादा गुरु और दरिया साहब के प्रदादा गुरु थे । उनके वाणी साहित्य व अनुशीलन से विदित होता है कि इनकी साधना का स्वरूप ठीक वही है जो अन्य निगुणिया भक्तों की साधना का । इनकी वृत्तियों में अभियक्त मूर्ति-पूजा<sup>२</sup>, बाह्याचार<sup>३</sup>, अग्रम देश,<sup>४</sup> अवतारवाद और अलख पुरुष<sup>५</sup> सम्बन्धी विचारों के आधार पर हम जोरदार शर्कों में कह सकते हैं कि महात्मा सतदास विशुद्ध रूप से निगुणोपासक सत थे ।

१ ध्यान मजरी (अग्रदास), छन्द ७६-८०

२ बोहोता देख्या सतदास, अर्धा लोक अत्राण ।

सेवा करत नहिं साधु की पूजत है पापाण ॥

— अणभे वाणी (सतदास), पृ० ४४

३ (अ) कठी तिलक बणाइ कर भजे न राम अलेख ।

ताकू कहिए सन्तदास निपट कपट का भेख ॥—

वही, पृ० ४५

(ब) पहर्या जामा पागडी टाढ़ी मूछ मुडाय ।

जाणक बाबू सतदाम आये गगा राय ॥

—वही, पृ० ४६

४ अग्रम देश जहाँ अस्थाना जहाँ नहीं धरती अस्माना ।

जहें नहिं अद जर्त नहिं सुरा जहें इक पुरुष रहत है पूरा ॥

—वही, पृ० ६१

५ अवतारा के मिलण की कहिए भूठी आस ।

मुपने सपत पाय कर विसन किया विसान ॥

—वही, पृ० ४७

६ सतो सतगुरु भद वताया, ताते राम निकट ही पाया ।

तप तीरथ कवहूँ नहिं कीहा, पढ़्या न वेद पुराना ॥

जतसत दोऊ अजब कहत हैं सो मुपने नहिं जाणा ।

मूनी रह्या न द्वाधारी मकर मास नहिं हाया ॥

मूर सती सू एक राम बिन सो कवहूँ नहिं ध्याया ॥

काधी गया न करवत सोहा न गल्वा हिमाला माहीं ।

जत्र-मन्त्र अरु नाटक चेटक सो भी सीख्या माहीं ॥

सजम किया न रैण नहिं जाय्या करी न सेवा-पूजा ॥

ना बुध गाया न बुध बजाया नरम न जाय्या हुआ ॥

राम नाम का अखड ध्यान घर अतर प्रेम जगाया ।

सतदास चढ़ि सुय सिखर पर इस विधि असल लखाया ॥

—वही, पृ० ६:

## प्रेमदास

दरिशा साहब क गुरु प्रेमदास की जो कुछ साखियाँ और आरती के पद प्राप्त हैं उनमें उनकी निगुणोपासना पर पर्याप्त प्रकाश पड़ना है। आरती के एक पद में उन्होंने सुरत-शब्द क मिलन और सर्व-यारी निरञ्ज राम की घट के भीतर दखने की चचा की है—

एसी आरती कर मन मेरा, जन्म मरन के मूढ़ पेरा ।  
 सुरत शब्द मिल हृदय आया, रोम रोम सब ही चेताना ।  
 राम निरञ्जन चहुँ दिस देखा, अंतर माही साहब पला ।  
 जगम आरती बार न पारा, जन प्रेम दास भज निरञ्जनहारा ॥<sup>१</sup>

इनकी वाणी में खेचरी, भूचरी आदि हठयोग की पंच मुद्राया,<sup>२</sup> अनहृदनाद<sup>३</sup>, अष्ट कमलदल चक्र<sup>४</sup> और त्रिकुटी<sup>५</sup> का विस्तृत वर्णन किया गया है जिससे उनका योगाश्रित निगुण साधना और भी पुष्ट हो जाती है। निगुणिया मत्ता को आलोचना मक प्रवृत्ति का भी दशन इनकी साखियों में होता है।

जोगी जगम सेवदा शेष स यासी स्वाँग ।  
 समझे ब्योकर प्रेम जी कुँ पड़ गई भाग ॥

## जयमलदास

जयमलदास कोमदेवर (बीकानेर) निवासी रामानन्दी वैष्णव महत् चरणान्त के शिष्य और हरिरामदास के गुरु थे। कहते हैं ये पहले सगुणोपासक थे और बाद में पथिक रूप ब्रह्म राम के आदेश से निगुणोपासना की ओर प्रवृत्त हुये। अनहृद का तार बजाकर जिस राम का स्मरण करने का आदेश इन्होंने आनी वाणी में दिया है, वह निगुण सती के निरञ्जन राम से सर्वथा अभिन्न है—

१ रामस्नेही मत्तवाणी, पृ० १६४

२ खेचर भूचर चाचर उनमन अगोचर ज्ञान सुनावदा ।

पाचू मुद्रा आतम जानी पर बिन हस उडावन्दा ॥

—वही, पृ० ३४

३ परापरी अनहृद क आगे ररकार ठहरावदा ।

—वही पृ० ३४

४ अष्ट कमल दल चक्र फिरदा लिबलग जोग कमावादा ।

वही, पृ० ३३

५ त्रिकुटी छाजे अनहृद बाजे कर बिन ताल बजावन्दा ।

—वही, पृ० ३४

६ वही. प० ३७

राम भजन मे मन लावे स-तो जनहृद तार बजावे ॥टेर॥  
 आत्म माही आप विचारे शब्द सुणे अविनासी ॥  
 साचा नान ध्यान धरि हिरदै गगन मडन मठ छावे ।  
 निर्मन नूर नैन रह लागी बिन रसना गुण गावे ॥  
 जगम निगम गति जाय न जानी परखण हार न कोई ।  
 जैमलदास अतर जिन खोज्या देवे अचरज सोई ॥<sup>१</sup>

आमन लगाकर, निरत धारण करके और सुरति की धूय मे लीन करके इन्होंने सुहानी मुरली की ध्वनि सुनने की चर्चा की है । कहना न होगा कि यह ध्वनि निगुण स-तो के परम परिचित अनहृद नाद की ही व्यञ्जक है—

दसवें द्वार मभार मुरली बाजे सोहणी ।  
 सोहणी रे सुन माहि मुनिवर मोहणी ॥टेर॥  
 जघन पर कर धारि के बे सम आसण चित लाय ।  
 निरत धरे निज नासिका बे सुन में सुरत समाय ॥  
 स-त गुणे रुखा पणे बे छिनही बिसरे नाहि ।  
 सुर नर मुनि जन सीमिया बे लागि मगन घुन माहि ॥<sup>२</sup>

परम्परा के व-सगत आने वाले इन भक्तों के अतिरिक्त अ प मगुणोपासक भक्तों पर भी निगुण साधना का व्यापक प्रभाव पडा ।

## सूरदास

सूरदास वल्लभ सम्प्रदाय मे दीक्षित प्रसिद्ध मगुणोपसक वैष्णव थे कि तु उन्व साहित्य व उनुशीलन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनपर स-त मंत्र का बडा प्रभाव था । उ-टोंने कबीर की भाति योग, यग व्रत तीर्थ, स्नान, भस्म, जटा छूट पुराणों के अध्ययन तथा प्राणाराम आदि बाह्याचारमूलक क्रियाओं को निरर्थक बताते दृये ज्ञान की सार्थकता एव कयनी और करनी की एकता पर बल दिया है ।

जो लो मन कामना न छूटे ।  
 तो कहा योग यज्ञ व्रत की-हैं, बिनु वन तुमको बूटे ॥  
 कहा सनान किये तीरथ के अग भस्म जट छूटे ।  
 कहा पुराणन पढि षु अठारह, उर्ध्व घूम के छूटे ॥  
 करनी ओर कहै कछु ओरे मन दसहैं दिशि लूटे ।  
 सूरदास तबही तम नासै ज्ञान अग्नि भर पूटे ॥<sup>३</sup>

१ श्री राममनेहृधर्मप्रकाश, पृ० ४७-४८

२ वही, पृ० ४६-४८

३ सूरसागर, (ना० प्र० समा), पहला खंड, पृ० १२०

यही नहीं उहोंने निगुण सतो को भौति सहज समाधि का भी वण-  
क्रिया है—

- (१) चकई री चलि चरन सरोवर जहाँ न प्रेम वियोग ।  
जहा भ्रम निषा होति नहि कबहूँ सो सायर सुख जोग ॥  
जहाँ सनक से मोन हस शिव मुनि जन नव रवि प्रभा प्रकाश ।  
प्रफुलित कमल निमिप नहि शशि डर गुजर निगम सुवास ॥  
जिहि सर सुभग मुक्ति मुक्ताफल सुदृत अमृत रन पीत्रे ।  
सो सर छाडि कुबुद्धि विहगम इहा कहा रहि कोजे ॥  
लक्ष्मी सहित होत नित ब्रीजा शोभिन मूरजदास ।  
जब न सुहात विषय रन छोखर वा समुद्र का आस ॥<sup>१</sup>

- (२) चलि सखि तिहि सरोवर जाहि ।  
जिहि सरोवर कमल कमला रवि बिना विकशाहि ॥  
हस उजवल पक्ष निर्मल अक मलि मलि हाहि ।  
मुक्ति मुक्ता अम्बु के फल ति हैं चुनि-चुनि खाहि ॥<sup>२</sup>

इन पक्तियों की तुलना यदि कबीर के निम्नलिखित पदों से का जाय तो गाना  
साधका का विचार एव गौलीगत माम्य स्पष्ट हो जायगा ।

- (१) कबार मन मधुकर भया रघा निरतर वाम ।  
कँवलजु फूल्या जलह बिन, को देख निज दास<sup>३</sup> ॥  
(२) मन के मोहन बोहुना यह मन लागी तोहि रे ।  
चरा कवल मन मानिया और न भाव मोहि रे ॥  
त्रिवेणी मनाहि हनाइये सुरति मिलै जी हाथि रे ।  
तहाँ न फिरि मघ जोइये सनकादिक मिलि हैं साधि रे ॥  
गगन गरजि मघ जोइये तहाँ दोसै तार अनन्त रे ।  
बिजुरी चमक धन बरसि है तहा भोजत हैं सब सत रे ॥  
पोडस कवल जब चेतिया तब मिलि गये श्री बनवारि रे ।  
जगमरण भ्रम भाजिया पुनरपि जनम निवारि रे ॥

गुरु गमि त पाईये, भँखि मरै जिन कोइ रे ।  
तही कबीर रमि रह्या सहज समायो मोद रे<sup>४</sup> ॥

१ सूरसागर, पृ० १११-११२

२ वही, पृ० ११२

३ कबीर प्रयावली पृ० १३

४ क०प्र०, पृ० ८८, पं ४

## मीरावादी

मीरावादी गिरधर नागर का सावनी मूरत पर अपना सर्वस्व अर्पित करने वाली एक मगुणापामक भक्त थी। इनकी रचनाओं पर मतमत का पयात प्रभाव परिनिभिन हाना है। य जब सुरति निरति के दीपक म मनमा की बत्ती और प्रेम का तल तान कर उस अहर्निग जनान की बात करती है तथा पच रग चोली पहन कर अपन मा' म भुरमुट भेदन जाती है तब निगग मापना के अयधिक निकट जान प'ती है—

सखी रो म ता गिरधर क रग रानी ।  
 पचरग मरा चोला रग दे मैं भुरमुट खेलन जाती ॥  
 भुरमुट म मरा माइ मिलेगा बाल अडम्बर गाती ॥  
 चदा जायगा मूरज जायगा जायगा धरण अवासी ।  
 पवन पालो दाना ही जायेंग अटल रह अविनामी ॥  
 मुरन निरन का दिवला मजाले मनमा की करि बाती ।  
 प्रेम हटो को तन बना ल जगा करे दिन राती<sup>१</sup> ॥

उनका हानी-वर्णन ता पूणत कबीर क पद चिह्ना का अनुसरण करता है—

फागुन क दिन चार रे हारी खेल मना रे ॥ टक ।  
 विनि करतान पन्थाबज बापै अगाहद का भरणकार रे ॥  
 विनि मुर राग छतीसौं गान रोम रोम रग मार रे ।  
 गान मताय की कमर घानी प्रेम प्रीत पिचकार रे ।  
 उडत गुनान लान भया अबर बरमत रग अपार रे ।  
 घट के पट सब खान दिये ह नोक लाज मव डार रे ॥  
 हारो मनि पीव घर आय मोइ प्यारी प्रिय प्यार रे ।  
 मीरा क प्रभु गिरधर नागर चरण कवल बलिहार रे<sup>२</sup> ॥

कुछ विद्वाना न मीरा क मन्त मत म प्रभावित पदा की प्रामाणिकता पर सदेह प्रकट किया है। इस सम्बन्ध म विचारणीय यह है कि मीरावादी का वातावरण मगुणापामक भक्ता तथा निगुण पथी सन्ता-दोना द्वारा अनाधिक प्रभावित था और और उन दाना प्रकार क माधका के मत्पग का इह सुधवनर मित चुका था<sup>३</sup>। यही

१ मीरा पदावली (परगुराम चतुर्वेदी), पृ० १०७ =

२ म ग पदावली, पृ० २४६

३ मीरा स्मृति गद्य—इगीय हिन्दी परिपत्र, कनकना, पृ० २५२

नहीं, बदाचित् उहाने प्रसिद्ध सत रैदास को अपना गुरु भा बनाया था<sup>१</sup>। ऐसा स्थिति में उनकी सतमत में प्रभावित रचनाओं का एकदम अप्रामाणिक ठहराना मुक्ति सगत प्रतीत नहीं होता।

### गोस्वामी तुलसीदास

गोस्वामी तुलसीदास को भी हम निगुण साधना में प्रभाव में अछूता नहीं पाते। यद्यपि 'रामचरित मानस' में उन्होंने यत्र-तत्र कुछ ऐसे उद्गार अवश्य व्यक्त किये हैं जिनसे निगुणिया में प्रति उनका विराध सूचित होता है किन्तु ग्रन्थ में अतगत अनैक स्थला पर उहान सत स्वभाव, नाम महिमा और गुरु महिमा का वर्णन किया है तथा सगुण निगुण के सामजस्य पर विशेष बल दिया है। इसके अतिरिक्त कलियुग वर्णन में उहान अपने समकालीन समाज में प्रचलित पाण्ड की जैसी खरी आलाचना की है उससे उन पर इस युग तक प्रचलित मत मत के मिद्धाता की छाया स्पष्ट लक्षित होती है<sup>२</sup>। तीर्थों और मंदिरों में होने वाले अनाचारों<sup>३</sup> तथा बहुदवापासना<sup>४</sup> की भयकर बाढ़ का देखकर गोस्वामी जी के मुख से जो कुछ निकला वह कवीर या द निगुणिया की तोषी आलाचनाओं में कम तीखा नहीं था।

### रसिक भक्तों की नाम-साधना पर निगुण प्रभाव

स्वामी रामानन्द का मुख्य उपदेश रामनाम जप है या जिस आग चक्र पर गोस्वामी तुलसीदास ने निगुण एवं सगुण ब्रह्म की ज्ञान प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ माधन और दोना के बीच चतुर दुभाषी<sup>५</sup> घापित किया। कृष्णदास पयहारी भी रामा पासना की इस सम वधात्मक प्रवृत्ति में पापक थे। परवर्ती रामभक्त कवियों ने अपना रचनाओं में निगुण तत्त्व को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया। कृष्णदास जी के शिष्य न राम

१ रैदास मत मिल मोहि सतगुरु दीहा मुख सहदाना।

में मिली आय पाय पिय अपना सब मारी पीर बुझानो।

मीरा खाक खलक सिर चारी में अपना घर जानी।

—मीरा पदावली, पृ० २४६

२ उत्तरी भारत की सत परम्परा, पृ० ३८६

३ मुर सदननि तोरथ पुरिन, निपट कुचालि कुनाज।

मनहुं मवास भारि कलि राजत सहित समाज ॥

—तुलसी ग्रन्थावली पृ० १५५

४ पात-पात के सीचिबा, बरी-बरी के लोन।

तुलसी खाटे चतुरपन के ल डहके कहु को न ॥

—वही, पृ० १५०

भक्ति-शास्त्रा में इसी उभय (निगुण-सगुण) प्रवाचक ध्यान-योग का प्रचार किया। रामोपासना की प्रधान साम्प्रदायिक धारा आज भी इसी पथ पर प्रवृत्तमान है<sup>१</sup>।

कहने की आवश्यकता नहीं कि रसिका की साधना का श्रीगणेश भी नाम जप में होता है। रसिक भक्ता न उसके अतगत नामाभ्यास,<sup>२</sup> अजपाजप,<sup>३</sup> आरती ध्यान (मानसी आरती<sup>४</sup>) आदि का विधान किया है। उनकी धारणा है कि आराध्य युगल का नाम जप, रूप ध्यान, और गुण स्मरण में भाव की उत्पत्ति होती है। इसका प्राथमिक उद्रेक विरह के रूप में होता है। विरह की ज्वाला में प्रिय मिलन के बीज मन्निहित रहते हैं। विरह की आग एक बार जलकर तब तक नहीं बुझती जब तक प्रिय का दर्शन न हो जाय। उत्कंठापूर्ण विरह का इस स्थिति को लगन की सत्ता भी गर्द गई है<sup>५</sup>। इस प्रकार रसिक भक्तों का अजपाजप, मानसी आरती, नाम-जप, रूप ध्यान और गुण-स्मरणजय विरह-वृत्ता निगुणिया सत्ता के नाम-जप मानसी आरती और विरह-दशा से बहुत कुछ मिलती जुलती है। इस प्रसंग की तुलना मता का सुरनि-शब्द-याग से करन पर रसिक सम्प्रदाय पर पड़े हुए निगुण प्रभाव की बात और भी स्पष्ट हो जाती है।

इस प्रकार जब सगुण भक्ति द्वारा निगुण, साधना का तत्त्वा का धीर धीरे आत्ममातृ कर रही था, देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक परिस्थिति बदल गयी और सगुण-साधना के लिए उपयुक्त वातावरण नहीं रह गया। जिस परिस्थिति में रामसनेही सम्प्रदाय का विकास हुआ इसकी मक्षित विवेचना उपा-देय होगी।

## समसामयिक परिवेश

### राजनीतिक परिस्थिति

अठारहवीं शताब्दी का राजनीतिक इतिहास मुगल साम्राज्य के चरमालाप और पतन की एक करण कहानी है। सम्राट ग़ाज़नी (१६८६-१७१५) का शासन स्वर्ण-युग की भांति दिखा कर मुगल साम्राज्य का पतन के बग़ार पर छाड़

१ भारतीय साहित्य, वप ५, अंक २३, पृ० ४० ६१ श्री कृष्णाम पयहाग

शोधक लेख—डा० भगवती प्रसाद सिंह

२ रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ० २१०

३ वही, पृ० २११

४ वही, पृ० २१२

५ वही, पृ० २००

गया। उमके शासनकाल म मुगल राज्य-श्री बन ठन कर मयूर सिंहासन पर ममा गीन हुई और ताजमहन के दपण म अपने मौ-दय को निहार निहार कर मुग्ध हो रही थी। सिंध क लाहिरी ब-दरगाह से लेकर आमाम म मिलहट तक तथा अफगान प्रदश क विस्त क किले स लकर दक्षिण के औसा तक साम्राज्य का विस्तार हो चुका था। मुगल साम्राज्य का अखंड शक्ति, अपार धनराशि तथा कलाय विकाम की चरम सीमा पर पहुँच चुका थी। किन्तु उसक शासन क अन्तिम दिना म जहाँ-तहाँ अपकप क चिह्न भी दिपाई पडन लगे। अजेय मुगल वाहिनी का पश्चिमात्तर प्राता म तीन तीन बार पराजित होकर (म० १७०६, १७०६, १७१०) कंधार से हाथ धो देना पडा, जिनम साम्राज्य की प्रतिष्ठा को बहुत बडा आघात पहुँचा। दक्षिण क गाल कुत्ता और बीजापुर के राज्या म भी उपद्रव शुरू ह गये। इमारता के निर्माण, कला क विकाम धार युद्ध म अत्यधिक व्यय हो जाने क कारण राजकोष भी खाली हो गया। इम प्रकार विशाल मुगल साम्राज्य क वृथ को जट म विनाश क कीट प्रवेश कर गय और धीरे धीरे उम जजर बनान लगे।

सम्बत् १७११ म शाहजहाँ बीमार पडा। दश म यह शार हो गया कि सम्राट की मृत्यु हो गयी। मृत्यु का समाचार पाकर उमक पुत्रा—दारा शुजा, औरंगजेब, और मुराद म सिंहासन क लिये युद्ध आरम्भ हो गया। सम्राट का ज्येष्ठ पुत्र दारा शिकोह अपने चारित्रिक बल और सांस्कृतिक व्यक्तित्व क कारण सम्राट का भी नहीं बरन् राजा का भी श्रद्धा-पात्र था। वह सब कुछ था बवल कूटनीति नही था। दूसरी ओर राजकुमार औरंगजेब बहुत ही कठोर और दृढ़ व्यक्तित्व वाला था। कूटनीति और इतर धर्मों के प्रति अमहिष्णुता की भावना उमम कूट-कूट कर भरी हुई थी। समय का गति को भी वह भली भाँति पहचानता था। इन दोनों राजकुमारों का युद्ध मानो दश की माँ क एव तामपो वृत्तियों का द्वन्द्व था। मुराद और शुजा भी दिल्ली क सिंहासन पर अटन का स्वप्न देख रहे थे। राज्य लिप्ता म प्रेरित अपन पुत्रा का यह भयकर सघष सम्राट शाहजहाँ बीबीखान क भीतर से हृदय धामकर दखना रहा और अत म रक्त मे लथपथ दारा का शिर देख कर उमका हृत्थ विन्ती हो गया। औरंगजेब भाइया क रक्त म स्नान करके सिंहासनानीन हुआ। उमन मुराद को पट्ट बढावा दिया, फिर कूटनीति मे बन्ती बना कर उमे राजनतिक मच्च स मदद के लिए हटा दिया। शुजा बार बार हारता और भागता हुआ जीवन रक्षा क लिए अराकान जा पहुँचा, जहाँ उस माघ जाति क योगा ने मार डाला। सम्पूर्ण शाह इन निमम वृत्तियों को माचय, घणा और उदात्तानतापूर्ण नेत्रा म लक्ष्यता रह गया।

१ द्रष्टव्य, मुगल कालीन भारत, पृ० ३४१-३४७

२ द्रष्टव्य, मुगल कालीन भारत, पृ० ३४८-३५

औरगजेब ने लगभग अर्धशताब्दी (म० १७१५ से १७६४) तक राज्य किया।

उसका राज्य-काल अशांति और मधय में ही व्यतीत हुआ। वह धर्मांध था। धर्म किम लिए है? उसमें मनुष्य का क्या सम्बन्ध है? इस पर उसने कभी नहीं सोचा। जिसे धर्म समझ कर उमने आजीवन दुःख भगा, करोड़ा का दुःख पहुँचाया और कलक का टीका लगाकर इस नश्वर ससार से चला गया, उसके द्वारा उसे जीवन में सुख और शांति नहीं नसीब हो सकी। धर्म के नाम पर, स्वाय के वशीभूत हाकर उमने भाइया का बध किया, हिन्दुआ को सताया, गिया लोगो पर अत्याचार किया, हजारो मन्दिरा को ध्वस्त करवाया तथा पुस्तकालया को जलाकर कला और शिल्प का नाश किया। उसके इन दुष्कृत्यो का परिणाम बडा ही भायण हुआ। सम्पूर्ण देग में अम-तोप की आग सुलगने लगी। मथुरा में गोकुल के नेतृत्व में जाटान, अवध में अक्स राजपूता ने, इलाहाबाद में हरदो तथा अय बहुत म जागीरदारो ने शासन की अ-यायपूर्ण नाति के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। उसकी धर्मांधता ने राजस्थान के राजाओं और रईमा की स्वामिमक्ति को भी विचलित कर दिया। इन सब विद्रोहो को त वह ययासमय बुरी तरह में कुचनता रहा, किन्तु मरहठों के साथ युद्ध करने में उसने नात खटटे हो गय। उस दीघव्यापी संग्राम ने उमका सारा कोप और मैय-शक्ति को समाप्त कर दिया। केन्द्रीय शासन की दुबलता में राजनीतिक विशृंखलता के साथ ही भस्त्रुति, आर्थिक जीवना, सैनिक शक्ति और सामाजिक संगठन सब कुछ बडा तजी में सर्वनाश का आर बढन लग। दक्षिण भारत ना पूणतया बरबाद हो गया। सम कालान विदेशी दशक मनुची न लिखा है—“औरगजेब अहमद नगर का वापस ला गया और पीछे उन प्राता के खेता में वृषा और कमला का नामोनिगान भी नहीं रहा। उनसे बजाय सर्वत्र मनुष्या और पशुआ की हडिया के ढेर पड़े थे। हरियाल के स्थान पर सर्वत्र खानी जमीन घोरान पडी थी। उमकी सना में प्रति बप कु गिलाकर एक लाख मनुष्य मरत थे। प्रति बप भरन बान पशुआ, बारबरदारी के बेल, ऊट, हाधिया आदि का सख्या तो तोन लाख से भी ऊपर पहुँच जात थी। इस प्रकार औरगजेब अर्धशती का अक्त रजित और अराजकतापूण इतिहास उत्तराधिकारिया का मौन कर अपना अमफलता पर पश्चाताप करना हुआ इस ला में विना हो गया।

औरगजेब के उत्तराधिकारी बहुत ही रिनामी, निबल आर तजहीन सि हुए। उनका अधिकान समय अन्त पुर के भीतर बोगमों, मसखरा और चापसूसा

समाज म व्यतीत होता था<sup>१</sup> । जिस समय फरुखसियर न सन्नाट अबुलफतह मुहम्मद मुर्दजुद्दीन जहादरशाह पर आक्रमण किया उस समय वह किस प्रकार विलासिता में नित था श्रीधर कृत 'जगनामा' में उसका आवा देखा हाल वर्णित है ।<sup>१</sup>

इत मौजदी मगर मस्त अलस्त अमलै खाइव ।  
सिगरे कनावत हूँ अमीर भरे रह चित चाइव ॥  
आवै न आवै मननि म पूजे रहे इक भादक ।  
माही मरातिव अलम पजा ताग नीवति पाइके ॥  
दारु सु दारु भरत पोली अमल गाली रग की ।  
मिरदग डालक तोप औ सुरनाइ रीत तुफग की ॥  
प्याला पलीता सुमरिक्के तह जीति मौजे भग की ।  
दिन रात यह चरचा रहे ततवीर और न जग की ।  
सब कमल लोचन दुख माचन काम रूप अगोहरा ।  
अति चतुर नृत कलान म मधवान मजलिस नोहरा ॥  
अनुराग उपजत राग सुनि सुनि कवित रस क दोहरा ।  
मनु डर साचे नवल नाचे नटानट क छोहरा ॥  
कहु सभा मस्त कलावता कहु पातुरन की गाहकी ।  
कहु नचत हरखे हीजरा भर लगी ऊटि रु आहि की ॥  
कहु छोकरे बागे दरवार कुजरिन राह की ।  
यह मौजदी को मौज है गति और नाहि निवाह की<sup>२</sup> ॥

देश में एक घोर ता विलासिता का मग्न नृत्य हो रहा था और दूसरी ओर मिहामन के लिए रक्तपात की परम्परा अबाध गति से चल रही थी । औरगजेब की मृत्यु के १३ वर्ष के भीतर उत्तराधिवार के लिए सत युद्ध हुए जिसमें अपार जन जन की हानि हुई<sup>३</sup> । इस घोर अराजकता का परिणाम यह हुआ कि औरगजेब की मृत्यु

<sup>१</sup> Their intellect and spirits were dulled and they found diversions only in the society of the bawdy women buffoons and flatterers

Later Mughals, Vol II p 311

<sup>२</sup> जगनामा, पृ० २८

<sup>३</sup> In the thirteen years, following the death of Aurangzeb seven bloody battles of succession had been fought among his descendents in which large numbers of Princes nobles and the best soldiers had perished

Later Mughals Vol II, p 307

व २०-२५ वर्ष के भीतर ही मुगल साम्राज्य व अंग प्रत्यंग विच्छिन्न हो गया। हैदराबाद व आसफजाह ने, अकब म सम्राट्त्वा न, बगान म अलीवर्दी खा न और क़ैतबुद्द म रहैला न अपन स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिए। इही दुर्दिन के दिन म नादिरशाह न दिल्ली पर आक्रमण करके हजारो आत्मिया की जन, करोडो का मान, गहिनूर हीरा और तख्तताऊम लेकर अपनी चिर पिपामा शात की।

राजस्थान की दशा और भी ग़ाबनीय हो गयी थी। राजपूत अब भा पारस्परिक द्वेष की ज्वाला म जल रह थे। धन-जा, मान-सम्मान, यही तक कि बेटी लकर भी वे सुख शाति म नहीं रह सक। ग़ाहज़ही और औरंगजेब के ख़ूनी पज इन पर समय-समय पर पड़ते रह। धन-जन की क्षति हाती रही। मदिरा के स्थान पर मस्जिद का निर्माण होता रहा। एत समय मे भी राजपूत की फूट पूर्ववत् बनी रही। मरठो की बढ़ती हुई ताकत का देखकर भी य मगठिल न हो सके। दा-एक चार भरहूठा और मुगल के विरुद्ध संगठन के प्रयत्न भी हुए किंतु वे सब विफल रह। देशभिमानी और जातीय औरव पर मर मिटन वाली इम जाति का इतना पतन हा गया कि अधिकार के लिए पिता-पुत्र मे भी युद्ध हाना सामान्य हो बात हो गयी। यन्ि महामान व लिए औरंगजेब पिता का नारागार म डाल सकता था तो पिता की हत्या करके राज्य लन जाने अमरसिंह यहां भी मौजूद थे। चदानत और शक्तावत वशा के गृह-क्लह म मेवाड की स्थिति जज़र हा चुकी थी। मुसलमान बादशाहो का अधीनता म रहकर दरवार म चाटुकारिता करते-करते, राजपूत का नैतिक बल समाप्त हो चुका था। इम बीर जाति म अब बवल विलासिता नेप रह गयी था। बहुपत्नीक राजपूत राजाओ व रनित्रामा मे मुगल हूरमा की भाति आतरिक बलह और ईर्ष्या का नयन नृश्य हाना था। बंधाराल और प्रताप के वंशज अपन प्रतिपक्षी समकालीन मुगल बादशाहा की अपना सुरा और मुदरो व चरणो म सर्वस्व अर्पित करन म पीछे नहीं रह।

### सामाजिक परिस्थिति

तत्कालीन सामाजिक स्थिति का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करन के लिए आलाच्य युगोत समाज को हम सामान्य रूप मे तीन वर्गो मे विभाजित कर सकने हैं—

- १ राजपरिवार और राज्यालयी सामन्त अथवा उच्च वर्ग
- २ मध्यम वर्ग
- ३ श्रमिक एवं कृषक अथवा निम्न वर्ग।

मुगल परिवार और राज्यालय मे रहने वाले अपसरा तथा अमीरो का जीवन श्रमक और एश्वय की आभा से आनोक्त था। उनकी गान-शौकत का रक्षा म अणार

धन राशि व्यय होता था। मघाट गाहजनी के लिए हर गांव एक हजार बहुमूल्य वस्त्र तयार किये जाते थे जो वष के अंत तक दरबार के अमीरा का भेंट कर दिये जाते थे। दरबार में रत्ना प्राग मगया म जन्म वस्त्राभूषणा का व्यापक रूप से प्रयोग होता था। गाँवों वगैरह के पास इतनी अघिन रत्न राशि थी कि जिनके वगैरह का मुतकर लाग भोचको हा जात थे। गाहजनी के पास पाँच करोड निजा रत्न थे। इमक अनिरक्त जमन दा करोड रत्न गाही परिवार का भेंट कर लिये थे। वह रत्ना म विभूषित मयूर गिहामन पर बैठता था। गिहामन तज जान के लिए रत्ना म जगे हूँ तीन सादियाँ थी और उमके चारो ओर ग्यारह सौमटे, जिनक बोचाबीच एक कद्राय रत्न था १। सरदारों और अमीरा का जीवन भी तम कभवपूग नही था। उह बडा-बडी तनहवाह मिलती था। उनक नौकर चाकर तथा दाग-दासी अघिन रहत थे। य लाग उत्तम भोजन करत थे। बहुमूल्य वस्त्राभूषण धारण करत थे। घनावग पुत्र और पुत्रियो के ब्याह म, मकान, भवबरे एक मस्जिद मन्दिर बनवाने म तथा उदिया उदिया विनेगी वस्तुओ के खरीन्ने म अपन धन का अपध्यय करता था २। मुगल अमीरा का रहन-सहन का स्तर इतना ऊँचा हो गया था कि ईरान के गाह या मय्येया के मुलतान उसका स्वप्न भी नही देख सकत थे। उनक महता म विषय भाग चरम सोमा को पहुँच गया था। उनक हरम सदैम विभिन्न देगा तथा जातिया की स्त्रिया मे भरे रहत थे। अन्त पुरा म पारिचर्या के नियम हिजडे आर दामिया निपुक्त था। उहा को दख-रख म उनके पुत्रो और पुत्रिया का लालन-पालन हाता था। इनक समय मे वे प्राय वाल्यकाल से ही पुरुषाचित गुणो से रहित हो जात थे। विलासपूग जीवन के कारण उनका शरीर अत्यधिक कोमल हो जाता था। परिणामस्वरूप माहम के काय म उनको स्वाभाविक अरचि हो जाती थी। अनियमित व्यभिचार, मदिरापान और जुमालोरी के दुगुणो के साथ वे पुरुषा म अप्राकृतिक व्यभिचार की लत के भी शिकार हो जात थे ३। तलालीन विलासिता की एक क्षीण आकी पद्माकर के निम्नलिखित छन्द म देखी जा सकती है—

मुलमुली गिन म गनीचा है मुणीजन है,  
 चान्नी है चिब है चिरागन की माला है  
 कह पद्माकर त्वा गजब गिजा है मजी,  
 सेज है मुराही है मुरा है और प्याला है ।  
 शिशिर के पाला को न व्यापत कसाना तिह  
 जिनक अधीन एने उदित मशाला है

१ मुगलकालीन भारत, पृ० ५६८

२ वही, पृ० ५७१

३ औरजजेब—यदुनाथ सरकार, पृ० ५८६-८७

तान तुक ताना है विनोद को रमाना है,  
सुवालाला है दुशाला है विशाला चित्रशाला है ॥

दूसरी श्रेणी थी, मध्यम लोग की। इस श्रेणी में व्यवसायी बनाकर और राजकर्मचारी प्राप्त थे। व्यापारियों का दशा अच्छी थी। निपुण कारीगर खूब कामा लने थे। इस प्रकार यह वर्ग अपव्यय से बचकर अपने व्यवसायानुसार विषयगत क माय मुदर जावन व्यतीत कर रहा था।

श्रीतम श्रेणी था उन श्रमिका की जिनकी गाढी कमाई के पैस से दरवार का मजाबट, मिहासन, चित्रकला, वस्त्राभूषण, सुगन्धित द्रव्य तथा विदूषणा, चापलूमा और ममसरो का खर्च चल रहा था। उनमें काम आघक निया जाता था किंतु उमक अनुपात में बतन बहुत कम दिया जाता था। ऊपर में उह सरकारी अपमरा का धाम भा महती पडती थी २। दिन भर परिश्रम करने वाला व्याक्त एक वष भी ममय में वषा न होने पर दुभिम का गिकार हो जाता था। इस दगा में अपन बेट और स्त्रा को वच कर भी वह जीवन रक्षा में असफल होता था। इसी वग में शोपित धन में, गामक वग सुगा की सरिता बहाता, व्यभिचार का व्यवसाय बढाता और उमके वती-वटा का खरोद कर मुसलमान बनाता था ३।

### धार्मिक स्थिति

राजनीतिक और सामाजिक स्थिति की भांति हमारे अव्ययन युग का धार्मिक स्थिति भी अत्यन्त शोचनीय थी। तत्कालीन समाज निम्नांकित तीन वर्गों में विभक्त था —

- (१) पांडित्य और मौलविया का वर्ग
- (२) अधविश्वासी अशिक्षित जनसमुदाय
- (३) शास्त्रीय बटटरता और रुढिवादिता से दूर रहने वाला उदार मन्ता का वर्ग

प्रथम वर्ग में वे लोग आते थे जो धर्मशास्त्रों को ईश्वर की वाणी समझने थे। शास्त्रीय धर्म के नाम पर हिंदी प्रदेश में वैष्णव धर्म की ही विविध शाखाओं का

१ जगद्दिनाद, छंद ३६१

२ Their work was not voluntary, wages were low, food and houses poor and they were subject to the oppression of the imperial officers —An Advanced History of India, Dr R C Mazumdar, p 567

३ उत्तरमध्यकालीन भारत (अवधविहारी पाण्डेय), पृ० ४६८

प्रचार था। तत्पुगीन प्रवृत्तियों के अनुकूल पढ़ने के कारण, ब्रह्मण्य धर्म का कृष्ण भक्ति शाखा मन्वाधिक प्रचलित हुई। गोस्वामी विठ्ठलनाथ, हरिराम, गोकुलनाथ प्रभृति महात्माओं के समय तक तो ब्रह्मण्य भक्ति के स्वरूप में किसी प्रकार की विकृति नहीं आने पाई, किंतु इसका बाद मानवीय जीवन के प्रभाव में ब्रह्मण्य को कानों छाया इस सम्प्रदाय की ध्वल गरिमा का स्पष्ट चिह्न लगी। राजाओं और अमीरों में महात्माओं का सम्पर्क बढ़ने लगा। धन पान की लालच में, उन्हें दीक्षा देकर शिष्य बनाने में, इस काल के सत सम्प्रदाय का गौरव मानने लगे। परिणाम यह हुआ कि ब्रह्मण्य को छाया और विलासिता के विपाक्त वायुमंडल का आश्रय पाकर भक्ति का यह ऋक्ष अवस्थास्थ हो गया। इसकी गडों में पतन के कीड़े उग गये। 'राधिक' कहार्द के सुमिरन को बलाना' का आदेश स्थापित कर शृंगारी रचनाओं में हृदय को क्लुपित भावनाओं का प्रकट किया जान लगा। इस प्रकार कृष्ण भक्ति के स्नेहहीन दीपक के धुंध में सम्पूर्ण धार्मिक वातावरण दूषित हो गया। देखा देखा गया। प्रधान राम भक्ति में भी अष्टयाम पूजा विधि तथा कही-कही, बचक भक्ता का कृपा से, अश्लील भावनाओं का विकार हुआ। धर्म के गणितिक आधार के अभाव में एतकानोन जावन पूणत विशृंखल हो गया।

विजेता इस्लाम धर्म भी इस समय तक शक्ति खा चुका था। अत्यधिक बट-टरता के कारण इसमें रूढ़िवादिता आ गयी थी। मुसलमानों के राजनानिक पतन का भी प्रभाव उनको सामाजिक स्थिति पर पडा। शासक का धर्म होने के कारण इस बार-बार तलवार के बल से अथ धर्माविविधा पर लातन का प्रयत्न किया गया जिसके फलस्वरूप इसके प्रति विरोध की भावना निरंतर बढ़ती गई।

समाज में दूसरा वर्ग था अशिक्षित और अधविश्वामी लोग का। इन लोगों की गति धार्मिक बाह्याचारा तक थी। तीर्थ-अत, सत पीर जादू टोना, तन्त्र-मन्त्र गणना-साबीज तथा इसी प्रकार के अथ देवी देवताओं के प्रति इनके हृदय में अगाध विश्वास था। अधविश्वामी ने कतनी गहरी जड़ जमा ली थी कि बटटर और गजब ने भी पैगम्बर मुहम्मद के झूठ-मूठ चरण चिह्न और बानों (आसार इ-शारीफ) की परिश्रमा एसी श्रद्धा तथा आदर के साथ की थी माना वे ईश्वर के साक्षात् प्रताक ही हो। और गजब को इस भावना और पत्थर पर बने विष्णु के पत् चिह्न की हिंदुओं द्वारा पूजा में किसी प्रकार की भिन्नता नहीं दिखाई पडती।

इन दोनों के अतिरिक्त समाज में एक तीसरा वर्ग भी था जो परम उत्तर था और ब्राह्मण गूढ़ हिंदू-भूषणमान तथा कावा और वागी के भगड में ऊपर उठकर मरल सात्विक जीवन का उत्पन्न कर रहा था। उनका लिय हिंदू मुसलमान सब एक ही पिता की सतान थे, न कोई ऊँचा था न कोई नीचा। धार्मिक बाह्याचारों में इह

घणा थी। यह वग कशेर, नाचक, दादू आदि के पद चिह्न का अनुगमन करते हुए पञ्चम समाज का पथ प्रदर्शन कर रहा था। दादू पंथ, सतनामी सम्प्रदाय, बाबा लाली सम्प्रदाय, घरनीश्वर सम्प्रदाय आदि इस वग म आने वाले प्रमुख तिगुण पंथ थे।

मुगलमाना म भी इस प्रकार की एह उदार विचार धारा चल रही थी जिसे हम सूफी मत के नाम से पुकारते हैं। सूफियों की चिन्तना, निजामिया, नकशबंदिया, कालिंदिया, सत्तारिया गाबाए काको प्रसिद्ध हो चुका थी। इस पनन के युग म सता और सूफिया द्वारा देश और समाज को जो सेवा हो रही थी, वह अभिन दनाय है किन्तु इसे यथोचित नहीं कहा जा सकता क्योंकि ये सत भी साम्प्रदायिकता के संकुचित घेरे मे फँसे हुय थे।

### मुगल बादशाहो की धार्मिक नीति

मुस्लिम आक्रामक धन लूटने और राज्य स्थापित करने के साथ-साथ इस्लाम धर्म का प्रचार तथा इतर धर्मानुयायियों का विध्वंस करने म श्रारभ से ही सचेष्ट रहे हैं<sup>१</sup>। मुगल साम्राज्य की स्थापना करने वाले सम्राट बाबर की नीति हिंदू धर्म के प्रति बड़ी ही अनुदार थी। उसने चदेरी के मंदिरा को बहाया। इसके अनंतर उसी की आज्ञा से मीर बाकी ने अयोध्या मे राम जन्म भूमि पर स्थापित मंदिर को ध्वस्त कर उसी स्थान पर १५२८-२९ ई० मे एक विशाल मस्जिद बनवायी। उसके शासन-काल म कई अय हिंदू और जैन मंदिर भी गिराये गये<sup>२</sup>। बाबर के पुत्र हुमायूँ ने अपन पिता की नीति का अनुसरण किया किन्तु सारा जीवन सघर्षों मे बिताने से वह उन कार्यावत न कर सका। हुमायूँ का प्रसिद्ध प्रतिस्पर्धी अकफान शाहक शेरशाह दिल्ली क तख्त पर बैठने वाले पूर्ववर्ती बादशाहा से अधिक उदार था फिर भी वह भारत म इस्लामी भेडे को फहराने के लिये सतत् प्रयत्नशील रहा। उसने जोधपुर के प्रधान मंदिर को तोडकर उसे मस्जिद बना दिया जो प्रमाणस्वरूप आज भी खडी है। शेरशाह का अधिकारी इस्लामशाह तो मुस्लिम उलेमाओं के हाथ म कठपुतली की भांति नाचता था। उनकी धार्मिक नीति का मुख्य उद्देश्य हिंदू काफिरा को सताना था<sup>३</sup>। हुमायूँ के पुत्र सम्राट अकबर के समय में हिंदुओं का कुछ सुख और शांति नमीव हुई। उनम हिंदुओं के प्रति बड़ी ही महदयता का व्यवहार किया था। हिंदुओं

१, औरंगजेब पृ० ५८८

२ मुगलकालीन भारत, पृ० ५८२-८३

३ मुगलकालीन भारत, पृ० ५८३

पर से जजिया जैसे घण्टित कर का हटाना उसका सबसे बड़ा कार्य था<sup>१</sup>। इसने उपरांत उसने गैर मुसलमानों के धार्मिक उत्सवा पर लगाये गये प्रतिबन्ध को भी समाप्त कर दिया। यही नहीं उसने राजाना से गो-वध बन्द कर दिया और गोमांस का छूना तक हराम ठहराया<sup>२</sup>। वह हिंदुओं के त्योहारों को बड़े उत्साह से मनाता था। उसके राज्य-काल में 'रक्षा बधन' सर्व सामान्य द्वारा मनाया जाने लगा था<sup>३</sup>। जहाँगीर और शाहजहाँ इस उदार धार्मिक नीति का पालन न कर सके। उनका झुकाव इस्लाम की ओर विशेष रहा। अक्सर आने पर उनकी असहिष्णुता का भयकर परिचय भी मिल जाता था। जहाँगीर ने अपने रोजनामचे में कई जगह हिंदू राजाओं को काफिर, गलोज, गवार इत्यादि कहा है। उसने काशी में राजा मानसिंह कछवाहा का मंदिर तोड़वाया था<sup>४</sup>। मेवाड़ पर आक्रमण के समय उसने सैनिकों ने अनेक मंदिर धराशायी किये थे<sup>५</sup>। उसने सिक्खों के गुरु अजु नदेव के साथ जो दुर्व्यवहार किया था उसका मुख्य कारण धार्मिक विद्वेष ही था। गुजरात के शैनिकों के प्रति किया गया घोर अत्याचार भी इसी भाव से प्रेरित था<sup>६</sup>।

शाहजहाँ जहाँगीर से भी दो कदम आगे निकला। वह हिंदुओं के मंदिरों को तोड़ना पुण्य काय ममभ्रता था। उसका समय में तीर्थ-कर पुनः लगा दिया गया और उसने मुसलमानों की संख्या बढ़ाने के लिये भी हर सम्भव प्रयास किया<sup>७</sup>। औरंगजेब

१ The great achievement of Akbar in this field was the abolition of the hateful 'Jaziya

The Religious Policy of the Mughal emperors P 23

२ 'Beef was interdicted and to touch beef was considered defiling

The Ain I Akbari, p 202

३ The custom of Rakhi became quite common

Ibid, p 193

४ राजपूताने का इतिहास, पृ० ४०

५ When Mewar was invaded many temples were demolished by the invading mughal army

—The Religious Policy of the mughal emperors, p 73

६ मुगलकालीन भारत, पृ० ५८४ ८५

७ He revived the pilgrimage tax and took steps not only to check conversions of the muslims to other faiths but also to add their number

तब आते-आते मुगल बादशाहों की यह असहिष्णुता नृशसता में परिवर्तित हो गयी। औरंगजेब ने हिन्दुओं के साथ जो बर्ताव किया उसकी कल्पना कहानी सुनकर हृदय रो उठता है। वह बट्टर मुसलमान था। उसने हिन्दुओं को मुसलमान बनाने, मन्दिर एवं मूर्तियाँ तोड़वाने, हिन्दुओं के धर्मग्रन्थों को नष्ट करने तथा उनका पठन-पाठन रोकने के लिये एक मुहकमा खोल दिया था। सन् १७२६ में, उसने हजारों मूर्तियाँ व मन्दिर तोड़वाये, जिसमें बल्लभ सम्प्रदाय के गोसाईं पुजारी मथुरा से भाग कर मेवाड़ चले आये। औरंगजेब ने जब हिन्दुओं पर जजिया लगाया तो हिन्दुओं ने बहुत प्रार्थना की, किन्तु उसने एक न मानी और जब कुछ हिन्दू खुदा मस्जिद के सामने सम्राट से इस कर को हटा लेने के लिये प्रार्थना करने गये तो उसने हाथी छोड़कर उन्हें कुचलवा दिया<sup>१</sup>। इस पर मेवाड़ के राणा राजसिंह ने, ईश्वर और खुदा एवं मन्दिर और मस्जिद को एक बताते हुए, एक जोरदार पत्र द्वारा जजिया बन्द करने का निवेदन किया। राणा के पत्र को पढ़ कर औरंगजेब बहुत अस्वस्थ हुआ और सन् १७३७ में एक विशाल सेना भेज कर चित्तौड़, माडसगढ़, उदयपुर तथा अन्य बहुत से स्थानों के मन्दिरों को धराशायी करवाकर मूर्तियों को संहित करवाया<sup>२</sup>। 'लाल'कवि ने औरंगजेब की हिन्द-विरोधी नीति का आलोचना देखा वगैरह किया है—

जब त साह तखत पर बठे तब तैं हिन्दुन सों उर ऐंठे ।

महग कर तीरथनि सगाये वेद देवाले निदर दहाये ॥

घर घर बाधि जेजिया लीने अपने मन भाये सब कीने<sup>३</sup> ।

उम समय हिन्दुओं के तीर्थ-स्थान कितने अक्षत हो गये थे इसका परिचय तत्कालीन राम भक्त महारामा सूरकिशोर जी के निम्नलिखित छन्द से स्वतः मिल जायगा—

जह तीरथ तह जवन वास पुनि जीविका न लहिये ।

असन बसन जह मिलै तहा सतसग न पैय ॥

राह चोर बटपार कुटिल निरधन दुख देही ।

सहवासिन सन बैर दूर बहूँ मिलै सनेही ॥

१ देखिये राजपूताने का इतिहास, जगदीश सिंह गहलोत, पृ० २५२

२ This protest so enraged the emperor that in 1680 he sent an overwhelming army which destroyed many temples and idols in Chitore, Mandalgarh, Udaipur and other places

—Rajputana Gazeteer (The W R S Residency Bikaner Agency 1909), p 23

३ छत्रप्रकाश, पृ० ६८

कह 'सूर किशोर' मिले नही यथा जोग चाहो जहा ।

। ॥११॥ १०७० कलिकान् प्रसेड भति प्रवल हिय हाय राम रहिये कहा ॥

इस प्रकार राजनातिक, सामाजिक और धार्मिक सभी दृष्टियों से अठारहवीं शताब्दी भारतीय इतिहास में एक घोर पतन का युग था । विद्यार्थी शासका की स्वच्छा चारिता, विलासिता और धर्मापेक्षा से लोक-जीवन में एक विचित्र गिरावटा, रुढ़िवादिना और सडन पैदा हो गयी थी, जिसे दूर करने के लिये सामाजिक एवं धार्मिक मूल्यों का पुनरुत्थान आवश्यक था । सन्तपत इस शताब्दी में देग की स्थिति बहुत कुछ वैसी ही थी जिमम कबीर, दादू ऐसे युग प्रवतक महात्माओं का आविभाव हुआ था । इतिहास के इस पुनरावृत्ति काल में उनके द्वारा प्रवर्तित पथों ने ही जातीय गौरव की रक्षा की ।

### सगुण भक्ति में इन परिस्थितियों की प्रतिक्रिया

सगुणोपासका में इन विपम परिस्थितियों की प्रतिक्रिया तीन रूपों में अभिव्यक्त हुई —

(१) तीर्थों में रहकर साधना करने वाले कुछ भजनानदी महात्माओं ने नगरस्थ तीर्थों का छोड़कर चित्रकूट, मिथिला जैसे मुस्लिम प्रभाव से दूर तथा निजन तीर्थों का आश्रय लिया ।

(२) कुछ महात्माओं ने परिस्थितियों का डट कर सामना करने के लिए चारों सम्प्रदायों को सैनिक संगठन की रूप दिया जिसके अनुसार स्थान-स्थान पर द्वारा और अखाडों की स्थापना हुई त्यों वैरागियों के लिये सैनिक शिक्षा की व्यवस्था की गयी । उदहरण के लिए महा मां वानान इ (ज म सं १७१०)<sup>२</sup> की लश्करी शाखा का नाम लिया जा सकता है ।

(३) नित्य ध्वस्त किये जाने वाले मंदिरों और खंडित मूर्तियों को देखकर कुछ लोपा के हृदय में अर्चानतार के प्रति स्वैभाविक अनास्था उत्पन्न हुई जिसने उहे निगुणोपासना की ओर प्रेरित किया । हरिरामदास को निम्नलिखित पक्तियों में मूर्ति-पूजा की इस प्रतिक्रिया का स्पष्ट उल्लेख है —

देवल बहता देखिया देख न भया उदासि ।

जत हरिया उन मूढ को हृदो न खूने गास<sup>३</sup> ॥ ११

### रामसनेही सम्प्रदाय की स्थापना

रामसनेही सम्प्रदाय का प्रवर्तन इही विपम परिस्थितियों में हुआ । इसकी

१ मिथिला माहात्म्य छ द १ (राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ० ११७ से उद्धृत)

२ रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ० ३६६

३ श्री रामसनेहधर्मप्रकाश, पृ० ६५

तीना शाखाओं की स्थापना का अर्थ प्रतिक्रिया के उपयुक्त तीनों रूपों में से अतीत में को है। शाहपुरा शाखा के आद्याचार्य रामचरण पहले सगुणोपासक थे और बाद में परम्परागत धर्म को छोड़कर निगुणोपासक हो गये<sup>१</sup>। दरिया महिब के माता पिता शीघ्रत आदि में विश्वास करते थे<sup>२</sup> और दरियासहिब के भी दीक्षा के पूर्व शीघ्रत में विश्वास करने के शक्यत मिलते हैं।<sup>३</sup> सिंहवल खैड़ाया शाखा के आद्याचार्य जयमलदास के सम्बन्ध में भी कहा जाता है कि वे पहले सगुणोपासक थे और बाद में उन्होंने निगुण निराकार राम को अपना आराध्य बनाया। कहते हैं कि वे पहले सावतसर नामक किसी ग्राम में निवास करते थे और परम्परागत वैष्णव धर्म के अनुसार मूर्ति पूजा एवं सगुणोपासना में आस्था रखते थे। स० १७६० में 'चतुर्मुख' मनाते हुए एक दिन दोपहर के समय वे गीता प्रवचन कर रहे थे। उसी समय पब्लिक रूप में परब्रह्म राम वहाँ आये और इनसे पानी माँग कर पिया। जाते समय उन्होंने एकांत में इहे योग त्रिपा सहित मूल तारक मन्त्र का उपदेश दिया और कमबाल से दूर रहने के लिए कहकर अन्तर्धान हो गये<sup>४</sup>। इस घटना से इतना स्पष्ट प्रतीत होता है कि उन्होंने सगुणोपासना का परित्याग करके निगुणोपासना स्वीकार की थी।

### रामसनेही सम्प्रदाय की तीन शाखाएँ

१०

राजस्थान में रामसनेही सम्प्रदाय की तीन प्रधान शाखाएँ स्थापित हैं जिन्की

- १ The precise period nor the causes, which led him to abjure the religion of his fathers, do not appear but he steadily denounced idol worship and suffered on this account great persecution from the Brahmins

Journal of the Asiatic Society of Bengal P 65

- २ तब उर उपजा क्रोध पिता ने ताज घर बारा।  
मक्का मदीना जाय करौ पुनि तीरथ सारा।  
मना मनोरथ धार नाहि निज साथे लीही।  
चले द्वारिका धाम सुरत हरि चरणा दीहीं।

—अनुभवगिरा (जीवन चरित्र), पृ० ५०

- ३ अडसठ तीरथ याय करै पृथ्वी का दौरा।  
चहूँ फर फिर जाम गुरू विन रहता कोरा।  
कब मिलि है गुरुदेव सत्य समरथ गुह पाऊँ।  
कब द्विविधा मिट जाय साधु का शिष्य कहाऊँ।

—अनुभवगिरा (जीवन चरित्र), पृ० ५८

- ४ श्री रामसनेह धर्मप्रकाश, पृ० १२

अपनी अलग अलग परम्परायें हैं। तीनों के मूल केंद्र शाहपुरा, सिहयल और रेणु म हैं। सिहयल को एक शाखा सदासा मे है, जिसकी परम्परा स्वतंत्र रूप से चल रही है। अतः प्रस्तुत अध्ययन में सिहयल शाखा के अंतर्गत ही खंडापा गद्दी के साहित्य एवं आचार्य-परम्परा का अनुशीलन किया जायगा।

**सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं में समानता**

ये तीनों सम्प्रदाय कहने के लिए तीन हैं, किन्तु इनके आचार विचार प्रायः एक से हैं, अतः इनके दार्शनिक विचारों, साधना और धर्म का विवेचन सम्मिलित रूप से प्रस्तुत किया गया है।

**सगुण भक्ति का प्रभाव**

रामसनेही सम्प्रदाय की स्थापना सगुणोपासना से विरक्ति और मूर्तिपूजा के प्रति उत्पन्न अनास्था के परिणामस्वरूप हुई थी। इस सम्प्रदाय के सात कवियों ने एक ओर तो अनाथ निर्गुणिया सत्ता की भाँति अन्नारवाद, मूर्तिपूजा, तीर्थत्रय एवं कमकाठ की घोर निन्दा की है, और दूसरी ओर अपने व्यावहारिक जीवन में सगुण भक्ति के अनेक तत्त्वों को ग्रहण भी कर लिया है जिनमें गीता, भागवत आदि संस्कृत ग्रन्थों की स्त्रीकृति, अन्नारवाद की आशिक भाषना, माला तिलक आदि की गणना को जा सकती है। इन सत्ता का विरहानुभूतता की अभिव्यक्ति में गृह्यतः स्वरूप प्रतीक भी इस सम्प्रदाय के सत्ता पर पूर्ववर्ती सगुण भक्ति धारा का प्रभाव सूचित करते हैं।

**जैन-प्रभाव**

यों तो रामसनेही सम्प्रदाय की साधना पर बौद्ध, नाथपंथी, निरजनी और सूफी प्रेम साधना का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है, किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि इस सम्प्रदाय पर इन सब साधनाओं की छाया सतत के माध्यम से ही पड़ी है। साम्प्रदायिक आचार पर स्वतंत्र प्रभाव केवल जैन धर्म का पड़ा। इसका कारण था, सम्प्रदाय की मूल भूमि राजस्थान की शताब्दियों से जैन धर्म के केंद्र रूप में प्रतिष्ठा। इस हेतु वहाँ के लोक जीवन में जैन धर्म के तत्त्व अलक्षित रूप से जड़ जमा चुके थे। अतः इसके प्रवर्तक सत्ता की विचार धारा उनके पूर्व संस्कारों से प्रभावित रही। इस सम्बन्ध में दूसरा कारण यह है कि शाहपुरा शाखा के आचार्य रामचरण माहेश्वरी वैश्य थे। इस जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि खड्डे के खगल सेन राजा ने पुत्र प्राप्ति के लिए यज्ञ किया। यज्ञ कुंड से एक मुजान नामक लडका उत्पन्न हुआ। वह बाद में जैन धर्मावलम्बी हो गया और अपने साधियों को लेकर विष्णु मंदिर गिराने लगा। अतः मे ब्राह्मणों के शाप से वह अपने समस्त साधियों के साथ पाषाण हा गया। कुछ दिनों के उपरांत शिव-भावती के अनुग्रह से वे सब पुनः जीवित हो

गय । महेश की कृपा से जीवित होने के कारण वे माहेश्वरी कहलाये ।<sup>१</sup> इस जाति के आचार विचार आज भी जिनिया जैसे हैं । कहने की आवश्यकता नहीं कि रामसनेही सम्प्रदाय में माहेश्वरियों की सख्या आज भी आधे में अधिक है ।

आनाच्य सम्प्रदाय के निम्नलिखित आचार जैन-प्रभाव के छातव है —

- १ जल गान कर पीना ।
- २ रात में दीपक न जलाना ।
- ३ सूर्यास्त के बाद भोजन न करना ।
- ४ वर्षा ऋतु में घर में दूर न जाना और चौमामा एक ही स्थान पर व्यतीत करना ।

### रामसनेही शब्द की व्याख्या

रामसनेही शब्द 'राम' और 'सनेही' अथवा 'सनेही' शब्दों के योग से बना है । सनेही का शाब्दिक अर्थ होता है, स्नेह करने वाला अभिभावक या मित्र । इस प्रकार रामसनेही शब्द के अर्थ होते हैं—राम से स्नेह रखने वाला भक्त और भक्ता में स्नेह रखने वाले राम । भक्तों ने इस शब्द का प्रयोग अधिकतर भक्तों के सनेही राम के अर्थ में किया है । नामदेव,<sup>२</sup> कबीर,<sup>३</sup> गोस्वामी तुलसीदास<sup>४</sup> आदि की कृतियों में यह शब्द इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, किन्तु भक्ति-साहित्य में इस शब्द का प्रयोग यत्र-तत्र राम से स्नेह रखने वाले भक्ता के अर्थ

१ जाति भास्कर, पृ० २७६ ७७

२ मोक्ष मिलिउ राम सनेही ।

जिहि मिलिण दह सुदेही ॥

हिन्दी की मराठी सना की देन, पृ० २४४

३ (प्र) कब देखू मरे राम सनेही ।

जाबिन दुख पावै मेरी देही ॥

क० ग्र० प १६४

(ध) अरु मैं पायो राजाराम सनेही,

जाबिन दुख पावै मेरी देही ॥

वही' पृ० १८४

४ राम राम कहि राम सनेही ।

अपनी अलग अलग परम्परायें हैं। तीनों के मूल केन्द्र शाहपुरा, सिन्धुल और रेणु म हैं। सिन्धुल की एक शाखा खडारा में है जिसकी परम्परा स्वतंत्र रूप से चल रही है। अतः प्रस्तुत अध्ययन में सिन्धुल शाखा के अंतर्गत ही खडारा गद्दी के साहित्य एवं आचार्य-परम्परा का अनुशीलन किया जायगा।

**सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं में समानता :**

ये तीनों सम्प्रदाय कहने के लिए तीन हैं, किन्तु इनके आचार विचार प्रायः एक से हैं, अतः इनके दार्शनिक विचारों, साधना और धर्म का विवेचन सम्मिलित रूप से प्रस्तुत किया गया है।

**सगुण भक्ति का प्रभाव**

रामसनेही सम्प्रदाय को स्थापना सगुणोपासना से विरक्ति और मूर्तिपूजा के प्रति उत्पन्न अनास्था के परिणामस्वरूप हुई थी। इस सम्प्रदाय के अनेक कवियों ने एक ओर तो अनास्था निर्गुणियाँ सत्ता को भाँति अवनारवाद, मूर्तिपूजा, तीर्थजन एवं कमकाष्ठ की घोर निन्दा की है, और दूसरी ओर अपने व्यावहारिक जीवन में सगुण भक्ति के अनेक तत्त्वों को ग्रहण भी कर लिया है, जिनमें गीता, भागवत आदि संहृत ग्रन्थों की स्वीकृति, अवनारवाद की आंशिक मान्यता, माला तिलक आदि को गणना को जा सकती है। इन सत्ता का विरहानुभूतियों की अभिव्यक्ति में गृहात स्थूल प्रतीक भी इस सम्प्रदाय के अंतर्गत पर पूर्ववर्ती सगुण भक्ति धारा का प्रभाव सूचित करते हैं।

**जैन-प्रभाव**

या तो रामसनेही सम्प्रदाय की साधना पर बौद्धिक, बौद्ध, नाथपंथी, निरंजनी और सूफी प्रेम साधना का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है, किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि इस सम्प्रदाय पर इन सब साधनाओं की छाया अतमत् के माध्यम से ही पड़ी है। साम्प्रदायिक आचार पर स्वतंत्र प्रभाव केवल जैन धर्म का पड़ा। इसका कारण था सम्प्रदाय की मूल भूमि राजस्थान की शताब्दियों में जैन धर्म के केन्द्र रूप में प्रतिष्ठा। इस हेतु वहाँ के लोक-जीवन में जैन धर्म के तत्त्व अलक्षित रूप से जड़ जमा चुके थे। अतः इसके प्रवक्तव्यों की विचार धारा उनके पूर्व सस्कारों से प्रभावित रही। इस सम्बंध में दूसरा कारण यह है कि शाहपुरा शाखा के आचार्य रामचरण माहेश्वरी वैश्य थे। इस जाति की उत्पत्ति के सम्बंध में प्रसिद्ध है कि खडेने के खगल सेन राजा ने पुत्र प्राप्ति के लिए यज्ञ किया। यज्ञ कुछ समय बाद एक मुजान नामक लड़का उत्पन्न हुआ। वह बाद में जैन धर्मावलम्बी हो गया और अपने साधियों को लेकर विष्णु मंदिर गिराने लगा। अन्त में ब्राह्मणों ने शाप से वह अपने समस्त साधियों के साथ पापाएँ हो गया। कुछ दिनों के उपरांत शिव-यावती के अनुग्रह से वे सब पुनः जीवित हो

गय । महेश की कृपा से जोवित होन के कारण वे माहेश्वरी कहलाय ।<sup>१</sup> इस जाति के आचार विचार आज भी जैनिया जस हैं । कहने की आवश्यकता नही कि रामसनेही सम्प्रदाय म माहेश्वरियो की सख्या आज भी आधे म अधिक है ।

आलोच्य मम्प्रदाय के निम्नलिखित आचार जैन-प्रभाव के द्योतक है —

१ जल उान कर पीना ।

२ रात म दीपक न जलाना ।

३ सूयास्त के बाद भाजन न करना ।

४ बपा ऋतु म घर म दूर न जाना और चौमाना एक ही स्थान पर व्यतीत करना ।

### रामसनेही शब्द की व्याख्या

रामसनेही शब्द 'राम' और 'सनेही' अथवा 'स्नेही' शब्दों के याग से बना है । स्नेही का शाब्दिक अर्थ होता है, स्नेह करने वाला अभिभावक या मित्र । इस प्रकार रामसनेही शब्द के दो अर्थ होते हैं—राम से स्नेह रखन वाला भक्त और भक्ता म स्नेह रखने वाले राम । भक्तो ने इस शब्द का प्रयोग अधिकतर भक्ता के स्नेही राम के अर्थ म किया है । नामदेव,<sup>२</sup> कबीर,<sup>३</sup> गोस्वामी तुलसीदास<sup>४</sup> आदि की कृतियो म यह शब्द इसी अर्थ म प्रयुक्त हुआ है, किन्तु भक्ति-साहित्य म इस शब्द का प्रयोग यत्र-तत्र राम से स्नेह रखने वाले भक्ता के अर्थ

१ जाति भास्वर, पृ० २७६-७७

२ मोकड मित्रिउ राम सनेही ।

जिहि मिलिए रह सुदेही ॥

हिंदी को मराठी सत्ता की देन, पृ० २४४

३ (अ) कब देखू मेरे राम सनेही ।

जाबिन दुख पाव मेरी देही ॥

क० ग्र० प १६४

(ब) अत्र मैं पायो राजाराम सनेही,

जा बिन दुख पावै मेरी देही ॥

वही' पृ० १८४

४ राम राम कहि राम सनेही ।

म भी देखन को मिलता है<sup>१</sup> । राम सनेही सम्प्रदाय क साहित्य म यह शब्द राम स स्नेह राने वाले प्रेमी भक्ता का ही व्यञ्जक माना गया है ।

### रामसनेही सन्त के लक्षण

साम्प्रदायिक साहित्य म रामसनेहा साधु के अनेक लक्षण दिम गय हैं । स्वामी रामचरण ने रामसनेही सन्त की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई हैं —

- १ राम का स्मरण ।
- २ माया का त्याग ।
- ३ भिक्षा पर जीवन निर्वाह ।
- ४ अपने ही स्थान पर निवास करना ।
- ५ किसी से कुछ प्राप्ति की आशा न करना ।
- ६ एकमात्र राम का इष्ट ।
- ७ बहूदेवोपासना से विमुखता ।
- ८ नगे पैर रहना ।
- ९ गुरु-दशन ।
- १० दयालुता ।
- ११ विषय-त्याग ।
- १२ विष वचन-त्याग ।
- १३ हँसी-तमाशा का परित्याग ।
- १४ मादक द्रव्यों का त्याग ।
- १५ जुवा, चोरी, भूठ, कपट का त्याग ।
- १६ मास मदिरा का त्याग ।
- १७ पानी छान कर पीना ।
- १८ दख कर पृथ्वी पर पैर रखना ।

१ (अ) जाप मरे अजपा मरे अनहद हू मरिजाय ।

रामसनेही ना मरे कह कबीर समुभाय ॥

—कबीर, पृ० ३६२

(ब) कामणि कालो नागणी, तीयू लोक भकारि ।

रामसनेही ऊचरे, विषइ छाव भारि ॥

—क० ग्र०, पृ० ३६

(स) जगत सनेही जीव है, राम सनेही साध ।

तन मन धन तजि हरि भजै, जिनका मता अगाध ॥

—स० बा० रे स०, भाग १, पृ० १७७

- १६ अयाची होना ।
- २० अमग्रही होना ।
- २१ अडिग समाधि धारण करना ।
- २२ निश्चल मन ।
- २३ समय शील, सतोप तथा सत्यव्रत धारण करना ?

प्रायः इही लक्षणा की ओर मकन करते हुए महात्मा दयालुदास न भी कहा है —

मिलता पारख प्रसिद्ध विमल चित्त रामसनहीं  
उर कोमल मुख निमल प्रेम प्रवाह विदेही  
नरसण परसण भाव नेम नित श्रद्धा दासा  
साच वाच गुरु जान भक्ति प्रगुमत इक आसा

१ साधु सुमिरै राम काम माय से नाही ।

छान्न भोजन हेतु बमे नहि दुनिया माही ॥

(क) पर इच्छा की भीख पाय बरने निज देहा ।

अपणा निज घर छाटि करै नहि पर घर नेहा ॥

आशा वाष्या ना फिरै विचरै सहज सुभाय ।

रामचरण ऐमा जनी रामकृपा स पाय ॥

इष्ट राम रमतीत आन को पूठ दर्ई है ।

पग नगे गुरु दश दया को मूठ गही है ॥

विषय त्याग विष वचन हास खिलवत नहि जाणै ।

हानि वृद्धि की बार भरामा हरि को आणै ॥

जूवा चोरी पर लुघ भूठ कपटा नहि राखै ।

भांग तमाखू अमल अखज मदपान न चाख ॥

वे राम स्नही जाणिय जा वारज अपणे करै ।

अणुभेवाणी, पृ० १२०

(ख) रामस्नेही साथ सा एमो लक्ष ता माहि ।

मुख मू कछु भावै नही सग्रह परसा नाहि ॥

सग्रह हरसा नाहि राम बिन और न जान ।

आमण सुमरण अचल वचलता मन की भावै ॥

सजम शील सन्ताप सत दया धम उपजाहि ।

रामस्नेही साथ सो ऐसी लछता माहि ॥

देह गेह सम्पत्ति सकल हरि अरण पर मानिय  
 जन रामा मन वच कम रामस्नेही जानिये  
 खान पान पहिरान निमलो दशा सुहाई  
 सात्त्विक लेत अहार हिमा करिहै न कदाई  
 नीर छाण तन वरत दया जीवा पर राखै  
 बोलै नान विचार असत कबहूँ नहि भावै  
 साधू मगति व्रत सुदृढ नम प्रेम दासालिया  
 रामस्नेही रामदास तन मन धन लेखै किया  
 श्रद्धा मुमिरण राम मीन मन राम स्नेही  
 गुण प्राही गुणवन लाय लेखै हरिदेही  
 अमल तमाखू भाग तलै आमिप मद पानम्  
 जुआ छूत का कम नारि पर माता जानम्  
 साध शील क्षमा गहै राम राम मुमरण रता  
 रामा भक्ति भाव दृढ रामस्नेही य मता १ ॥

सत जगन्नाथ न राम रामसनहिया के ३२ लक्षण बताये है, जो उपयुक्त दोनों  
 महात्माओं द्वारा निर्दिष्ट सूची के अन्तगत आ जाते हैं—

रामस्नेही राम सो पाल बत्तीस लछि ।  
 सबै ठाम का ठाम सो आगे सुण लीजियो ॥२६६॥  
 गुरु दरसण परभात, वरै परित्रमा गुर की ।  
 सोत चरणापृत पाई तिलक भाषै श्री अरकी ॥  
 भजै राम दोइ अक सक बिन हरि जस गाव ।  
 जल गाढे पर छाण आस पूजै न पुजावै ॥  
 हरिप सोग सम भाई भरम पख्या न मान ।  
 भाग तमाखू अमल पान जरदो नहि चाख ॥  
 ऊचो सगति करै नीच क\* सग १ रापै ।  
 झूठ कपट पापड पार की बुरा न ताकै ॥  
 चचा ममा की गाल सुणै नहि मुख सू भाप ।  
 रामस्नेही चाल सुध ऐ लछण बत्तासै ॥  
 जगन्नाथ गाय कहै जाके सतगुर सोस २ ॥

१ दयालुदास की वाणी, प० स० ६८४ ६६६

२ गुरु सीता विलाम (जगन्नाथ), छन्द २६६ ३००

श्रीगणेशाय नमः श्रीगुरुभ्यो नमः आदिपुरदेव प्रह्लादगुरु  
 प्रह्लादगुरुदेवसदासहाय ॥ माधवाहास जगदीश्वरालदागल  
 माहात्म्यकी वाणी लिखते ॥ अनभवांगनगुदेतका ॥  
 अथप्रथमपुरदेवप्रह्लाद ॥ प्रह्लाद ॥ प्रह्लादपरापरब्रह्म ॥ सचा  
 दानंदनिमामिहासवैपरमप्रकाशी च ॥ रमतीतरामारम  
 क्तारगतनमवा ॥ रामदासगुरुदृष्टत ॥ सदाकालजयोजाप  
 त्रिबिधतापविनासन ॥ १ ॥ गुरुपरपरापरब्रह्म ॥ गुरुदीनद  
 यालता ॥ चदाभासरामदास ॥ द्यालवालनिमस्तत ॥ शिवा ॥  
 ॥ नमो रामगुरुदेवजी ॥ जनत्रिकालकेवद ॥ दिघनहरण  
 प्रगदकरणा ॥ रामदासश्चानदा ॥ ४ ॥ जेजेजेमलदासगुरु  
 नमोनमोहरणम ॥ रामदासपदकजरजा ॥ द्यालवालविष्णु

दयालुगस की वाणी ( श्री बडा रामद्वारा, मूरमागर, जोधपुर की प्रति ) के प्रथम  
 पत्र की छायाचित्र लिपि ।



देसणोक नामक स्थान पर निवास करने लग ।<sup>१</sup> रामदास के शिष्य महजराम के मुख से 'सतगुरु सबद' सुनकर ये प्रभावित हुए, और मन्वत् १८४४ में खैडापा जा कर दीक्षा ले ली ।<sup>२</sup> कुछ ही दिना में ये बहुत बड़े साधक के रूप में प्रसिद्ध हो गये । गुरु आना में इन्होंने धूम धूम कर घम प्रचार किया । इस सम्बन्ध में इहान अलवर, नोटा, उदयपुर, जयपुर, भरतपुर आदि स्थानों का भ्रमण किया था । भ्रम में जोधपुर में इन्होंने अपनी साधना-कुटी बना ली और मृत्युपर्यन्त वहीं रहे । यह स्थान जोधपुर नगर के सूरसागर मुहल्ले में स्थित है । आज भी वहाँ सम्प्रदाय का एक सुरभ्य राम द्वारा है, जहाँ अनेक सन्त महात्मा निवास करते हैं । परगुराम जो का देहावमान पीप कृष्ण २, सामवार मन्वत् १८६६ को हुआ ।<sup>३</sup>

रामसनेही सम्प्रदाय में विरक्त शाल्वा के ज्वनन का श्रेय इहीं को है । इन्होंने समय नियम पर विधि बल धर सम्प्रदाय में अनुमान स्थापित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया । इनकी समस्त रचनाएँ सूरसागर के रामद्वार में सुरक्षित हैं । इस गुरु के वतमान महत् परमहंस अभयराम जी ने बड़ी कृपा करके इन पत्तियों के लेख का सम्पूर्ण सामग्री दिया है । परगुराम जो को निम्नलिखित सात रचनाएँ हैं —

१ मिला प्रश्न सोरण	४ गुरु महिमा
२ गुरु-शिष्य सवाद	५ आनमवाध
३ गृहकूप का प्रसंग	६ अरथ सिद्धान्त

### ७ मजीवरण बोध

इनकी कान्यशला के कुछ नमून नाचे दिय जात हैं —

अबचल अपड अनाद है जिए का काहा पसान ।  
नाही है है परसराम अनभव करत बखान ॥

१ बीठनोक में जनसहि घरियो ।  
पीछे वास देसणोक करिया ॥

— वही ( वही, पृ० १३०० )

२ चमालीमा वरन में महावद पप जाय ।  
तव सतगुरु दिया लई मुन जो सत सकोय ॥

मेवजरामकृत परची ( वाणी गुप्ता, पृ० १३०१ )

३ (म) डेढ मास अर तीन दिन वरस बहीत्तर जान ।  
परस राम परगट इहा मिले ब्रह्म स्थान ॥  
वही ( वही, पृ० १३२१ )

+ + +

(घ) समाधि के गिता लेख से

पुष्ट प्रगट ताते भयो दिव्य भला सयुक्त ।  
याकी परवर बरह हूँ गुरगम म्यान उक्त ॥  
प्रगटत प्रगट भई पुरपते दीय की भयो सयोग ।  
यू जग उतपत परम राम देह इंद्री गुणभोग ॥<sup>१</sup>

जल तरंग जल म उठै जल मै रहै समाय ।  
तरंग सत्त न सत्त जल, याकी भेद बताय ॥  
याकी भेद बताय ताय मन नैसी भावै ।  
सत असत का भट बह्या मोहि निश्चै भावै ॥  
परसराम जन षहत है म्यान गुप्त कै माहि ।  
जल तरंग जल म उठै जल म रहै समाय ॥  
निराकार दरियाव है लहैर उठे आकार ।  
उलट सवावे तास म द्वैत रहै न निगार ॥  
द्वैत रहै न लिगार धारता को विसवासा ।  
श्रीर अस्त मब नान उपज फिर होत विनासा ॥  
परसराम सतगुर मिल्या इनजौ लहै विचार ।  
निराकार दरियाव है लहैर उठै आकार ॥<sup>२</sup>

### पीथोदास

पीथोदास रामदास के वाहन शिष्यो मे म थे ।<sup>३</sup> इनका जन्म मारवाड के अण्णावम नामक ग्राम मे कार्तिक अमावस्या ( दीपावली ) सम्बत् १७६६ को हुआ था । इनके पिता का नाम भावा जी और माता का नानुशार्ई था । कुछ समय के उपरांत इनके पिता जी सपरिवार मेलाणो ग्राम मे जाकर रहने लगे थे । एक बार मारवाड मे भयंकर अकाल पडा । उस समय ये मध्य प्रदेश के चारखेडे नामक स्थान पर चले गये । मुकाल आने पर फिर य मारवाड के रुदिये ग्राम म आकर बस गय ।

रुदिये मे इनका परिचय रामदास क शिष्य गगाराम से हुआ । गगाराम से रामदास की प्रशंसा सुनकर य अत्यंत प्रभावित हुए और खडापा जाकर उनसे दाशा ग्रहण की । दोक्षापरा त स० १८३२ तक इन्होंने रुदिये ग्राम मे ही रहकर साधना की । स० १८३३ म य मालवा चल गय और वहा जमुनिया नामक ग्राम मे अपना आसन जमाया । इसी स्थान पर ८२ वय की घोर तपस्या के उपरांत इनकी साधना

१ अरथ सिद्धांत ( बाणो गुटका, प० स० २५१ )

२ बाणो गुटका -मायाब्रह्म निरण को अंग, छ० १-३

३ श्री नाद वृष्ण

फलवती हुई। अपनी सिद्धि के लिये ये चारा और विख्यात हो गये। इनकी प्रसिद्धि सुनकर रतलाम नरेश परवत सिंह ने इन्हें अपने यहाँ आमंत्रित किया। तब य रतलाम में स्थायी रूप से रहने लगे और वहाँ पर रामद्वारे की स्थापना की। इसी स्थान पर पाल्गुन गुरन २, स० १८५१ का पंच भौतिक शरीर त्याग कर ये ब्रह्म लीन हो गये।

अभी तक पीयोदास की केवल तीन रचनाएँ प्राप्त हैं

१ बेहद बोध।

२ गुरुमहिमा

३ जुगुल ग्रन्थ।

साखी, किबत, सर्वैया, रेखता, पद आदि छंदों में लिखी गई इनका कुछ अगवद्ध वाणी भी मिलती है। इसके अतिरिक्त इन्होंने प्रचुर मात्रा में पद लिखे थे जो यत्र-तत्र भजन संग्रहों में प्रकाशित हैं। इनकी रचना के दो नमूने नीचे दिये जाते हैं -

तुम हरि मर मैं हूँ तरो मगल गाय बघाऊँ सबर ॥ टेक ॥

तुम बिन पन न सुहावै माऊँ विरद कसा द गाऊँ तोऊँ ।

बीन बजाऊँ शब्द सुनाऊँ मैं मेरे मंदिर ले जाऊँ ॥

बोजो बोज पकर क पाया साधु सवारण कर सुख आप्रा ।

पीयल क पति राम रमैया दुखित दुवल को दान देवैया ॥<sup>१</sup>

देख सहेली भाग हमारो आठ पट्टर रहा मग्न मतवारो ॥ टक ॥

अमृत पाता नहीं अघावे जा पाव तानी तूपार जावे ॥

राम बखावै मैं ले चाखूँ आप भखावै ज्यो भाखूँ ॥

अनुभव शब्द सदा गुड बोलूँ ग्राहक आने गाठ ही खोवूँ ॥ ।

सखी सयानी रामलडावो, पीयल पिया पिया गुन गावो ॥<sup>२</sup>

### हरिदेवदास

हरिदेवदास जी सिंहवल के आदि पाठाचार्य सत हरिरामदास के शिष्य और पौत्र थे। इनके पिता विहारादास का निधन युवावस्था में हो गया था जिसके कारण हरिदेवदास ने अपने पितामह श्री हरिरामदास से दीक्षा ली और मात्र १० वर्ष की अवस्था में वि० स० १८३५ में वैशाख कृष्ण ८ को सिंहवल का गढ़ा पर आसन हुए। इनके पीठासीन होने के तबल एक महीने बाद हरिरामदास का निधन हो गया।

१ श्री हरियग-मणि मञ्जूषा, पृ० ३६८

२ श्री हरियग-मणि मञ्जूषा प० ३६८

अतः हरिदेवदास, हरिरामदास के प्रिय गिष्य नारायणदास के संरक्षण में, अध्यात्म पथ पर समय पूर्वक अग्रसर हुए। थोड़े ही समय में इनके शास्त्रान्यास और तनोमय जीवन को देख कर लोग आश्चर्यचकित रह गये। मोतीराम कृत निम्नलिखित छंद में हरिदेवदास के व्यक्तित्व पर विनाद प्रकाश पड़ता है—

हरिराम के पाठ तपे हरिदेव जू हस दशा सब सतन प्यारो ।  
 शीरष दृष्टि रु वैन विशाल छु राग रु द्वेष दोऊ पस न्यारो ।  
 सोल सतोप मदा मन सोतरा गान रु ध्यान भगति को भारो ।  
 मोतियराम कहै कर जोर छु भेष का ठेक निभावन वारो ।  
 इनका देहावसान वि० सं० १८६४ में फाल्गुन कृष्ण ५ का हुआ ।

हरिदेवदास न गुरु महिमा, आत्म कृत, ग्यान विचार, नाम महिमा, आत्म विचार, ब्रह्म प्राप्ति जन विचार, सिवरण बोध और करुणा गिषान के अतिरिक्त प्रभूत मात्रा में आबद्ध वाणी और पदा की रचना की। इनकी वाणी में आत्म चिंतन और लोकानुभव का अद्भुत सामंजस्य हुआ है। इनकी रचना शैली में कुछ नमून निम्नोक्त हैं—

दीप मति भान होइ याथा अनक गान,  
 हूलसे लघुसान माहि महिमा विचार है,  
 मन स सत वग बाधे विचारे विहग सोद,  
 कछु इक पर भान पक्षा उडिय सरिधार है ।  
 यस्त्रादि बनाट सारे कमल कुचोल एवा,  
 ओडया तन सोय सरिहै दामर रत्न सार है  
 काह मति हाम मोहि हाव न कोय एमी,  
 तसा उर आप जमी वरणे निज भार है ॥<sup>१</sup>  
 अक्षर द्व सार अनपार गम अत न को,  
 पावन प्रकार ताको बाने विधि सार है  
 गावन गुण गान बाकी धार न सरकार जीहा,  
 नामह निकार एकी निहचे उरधार है ।  
 देवा निज देव ताहि सेवा अपार सोई  
 अथम उधारि वर बाने बिन तारि है  
 आधे हरिदेव भेव पाधे मलीन जीवा,  
 आपा विरद बाचि राम ताकू उधारि है ॥<sup>२</sup>

१ हरिदेवदास जा महाराज की वाणी, सम्पा० भगवदास शास्त्री, पृ० १०१

२ वही, पृ० ११३

## नैतिक विधान .

रामसनेही सम्प्रदाय की मिहृषल-नैतिका शाखा में 'नियम पचदशी' नाम स पद्रह नियम नैतिक विधान (Moral Code) के रूप में स्वीकार किये गये हैं ।<sup>१</sup>

१. त्रिगुण निराकार राम इष्ट रचना और उन्ही की परामर्श में उपासना करना ।
२. वेद, श्रुति, स्मृति, गुरुवाणी, शास्त्र, आय ग्रंथ, पुराण, आस वाक्या का मानना और सद्बिद्या का प्रचार करना ।
३. पाठ-पूजन, सध्या-वदनादि नित्य कर्मों का पालन करना और शरीर के मारे सुप्ता का छोड़कर निरंतर रामस्मरणपूर्वक यागाभ्यासो हाना ।
४. मद्गुरु और सत्ता की आना मानना, उनका ईश्वर-रूप जानना और सत्संग का परम लाभ समझना ।
५. अपने सब व्यवहारों को ईश्वराधीन जानना और सत्य धर्मयुक्त सात्विक उद्यमी होना ।
६. भोजनादि की चिन्ता न करना और न क्रिया में याचना करना । केवल सर्वशक्तिमान् एक ईश्वर का आस विश्वास रखना ।
७. ईश्वर को अपण क्रिया हुआ प्रमाद ग्रहण करना । अथ देवताओं का प्रसाद न स्वीकार करना ।
८. गोल, सतोप, त्याग, वैराग्य, क्षमा, सरलता, धृति आदि धारण करना और हित, मित्र तथा सत्यभाषी होना ।
९. काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, अभिमान, ईर्ष्या, निष्ठा आदि का त्याग कर अत करण गुद रखना, मयम-नियम से रहना और स्त्री मात्र को माता-वहिन ममझना ।
१०. जल छान कर पीना रात्रि में भोजन न करना, जीव रक्षार्थ देखकर पैर रखना, और चातुमास्य में विहार न करना अर्थात् एक स्थान पर रहना ।
११. दूसरों के सुख-दुःख हानि-लाभ को अपनी ही तरह समझना और सबको उन्नति में अपनी उन्नति मानना ।
१२. मानापमान रहित होकर तन मन-वचन में परोपकार करना और प्राणी मात्र को आत्मरूप से देखना ।
१३. भाग, तम्बाकू, मफीस, पोस्ता, गाजा, चरम, मुल्फ आदि नशा करने वाली वस्तुमा और माध, मदिरा, जुआ आदि दुष्यसना से दूर रहना तथा ब्यसनी एवं बुरे लोगों की संपर्क में न रहना ।
१४. बाह्याङ्गधर म रत न हो गुप्त धनवा सात्विक रत्न रक्षित बन्न धारण करना और हर समय ईश्वर की याद करते रहना ।

१ श्री रामसनेहधर्मप्रकाश, प्रथम भाग, पृ० ७८

१५ भ्रमात्मक भोहता म न फसकर सद्गुरु द्वारा प्राप्त वेदानुसूक्त सत्य का अनुसरण करना ।

इही सं मिलते जुलते, रामसनेही सम्प्रदाय की शाहपुरा शाखा<sup>१</sup> म ६ और रेण<sup>२</sup> म ११ नियमा का विधान किया गया है ।

वस्त्र

रामसनेही सम्प्रदाय की तीना शाखाओ मे वस्त्र सम्बन्धी भिन्नता है । शाहपुरा शाखा के मत हिरमिज न रये वस्त्रा का उपयोग करते हैं । अब ये हिरमज के बदल गुलाबी रङ्ग के वस्त्र धारण करने लगे हैं । इस शाखा के साधु कोपीन धारण करते हैं तथा चादर के दोनो किनारो को दोनो पार्श्वो से लाकर गदन पर बाध लेते हैं जिसे ब्रह्मचोला कहा जाता है । ऊपर से एक चादर भी लपेटी जाती है । साधु बैठते समय शरीर को चादर से इस प्रकार ढक कर बैठत हैं कि पैर की अंगुली भी नही दिखाइ पडती । इस शाखा के 'विदेही' महात्मा, निह अवधूत भी कहते हैं, केवल कोपीन धारण करते है, चादर का उपयोग नही करते । मौनव्रत की साधना करने वाले मीनी साधु जिन्हें 'मुनि' भी कहा जाता है केवल कालो चादर या चोगा धारण करते है । उनक परिधान का रङ्ग हिरमिज नही होता ।

सिंहवन खैडापा शाखा के रामसनेहिया की चार कोटिया हैं—प्रवृत्तिमार्गी, विरक्त, विदेह और परमहस । प्रवृत्तिमार्गी रामसनेही गृहस्थ की भाति वस्त्र धारण करत हैं और उनके सिर पर हिरमिज या गुलाबी रग का साफा होता है । विरक्त सत मिला हुआ वस्त्र नही पहनते । वे हिरमिज रग की सदरी, गाँती या ब्रह्मचोला धारण करते हैं । विदेह महात्मा काला कपडा पहनते है । वे हाथ के बने कपडे के छूते (ताप-टिया) धारण करते हैं और पैसा नहा छूत । परमहस महात्मा वस्त्र नहीं धारण करते किन्तु परमहस गद्दी सूरसागर (जोधपुर) के लोग नये न रह कर काला वस्त्र धारण करते हैं । इस शाखा म पीठाचार्यों के राजसी ब्रह्माभूषणो से सुमज्जित रहने का नियम ह, जिसको लेकर सम्प्रति कोई आग्रह नही दिखाई पडता । रेण शाखा के सतो का कोई निश्चित वस्त्र नही है । इस शाखा के कुछ मत शाहपुरा शाखा के सन्ता की भाति हिरमिज रङ्ग का ब्रह्म चोला' धारण करते हैं ।

तिलक

सगुणोपासना मे तिलक का बडा महत्व है । निगुणोपासक सत तिलक को वाह्याङ्ग्य के अन्तगत मानते हैं । कबीर दास ने स्पष्ट शब्दो में कहा है—

वैसनो भया ती का भया वृष्ठा नही बवेव ।

छापा तिलक बनाइ कर दगध्या लोक अनेक<sup>३</sup> ।

१ नित्य स्वाध्याय, श्री रामसनेही महामंडल, देहली, पृ० १३-१४

२ रामसनेही सतवाणी एव भजन सग्रह—प्रवेश भाग, पृ० ४-५

३ कबीर श्रियावली, पृ० ४६

रामसनेही सम्प्रदाय के महात्माओं ने भी तिलक की यथता पर अनेक प्रकार से प्रकाश डाला है, फिर भी इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि इस सम्प्रदाय में तिलक का व्यवहार सामान्य रूप से होता है। इसे रामन दी वैष्णव आचार का अवशेष माना जा सकता है।

### रामनन्दी तिलक का स्वरूप

श्री वैष्णव दर्शन पर आधारित होने के कारण रामानन्द सम्प्रदाय के पंच-संस्कार भी वैष्णव शास्त्रानुमोदित हैं। तिलक पंच संस्कारों का ही एक अंग है। रामानुजाचार्य के देहावसान के अनंतर श्री वैष्णव सम्प्रदाय दो शाखाओं में विभक्त हो गया—एक रट्गवले नाम से प्रसिद्ध हुआ और दूसरा बडकले च्चहलाया। इन दोनों शाखाओं में दो प्रकार के तिलक प्रचलित हुये, जिन्हें क्रमशः तिगल और बडगल कहा जाता है। बडगल तिलक सिंहासन रहित होता है, और तिगल सिंहासन सहित। रामानन्द सम्प्रदाय में इन दोनों प्रकार के तिलकों का प्रचलन है।<sup>१</sup> कालांतर में सम्प्रदाय की वृद्धि के साथ तिलकों के अनेक भेद प्रचलित हो गये। सगुणोपासना में विश्वास न करत हुये भी सतों को यह संस्कार पूजाचार्य परम्परा से रिक्त रूप में प्राप्त हुआ।

### रामसनेही सम्प्रदाय के तिलक

रामसनेही सम्प्रदाय में कुल मिला कर तीन प्रकार के तिलक प्रचलित हैं—

(१) वैष्णवों का तिगल तिलक, (२) श्री तिलक, (३) रामनामी तिलक।

तिगल तिलक इस तिलक के तीन अंग होने हैं। पहला सिंहासन जो भृकुटि के समीप म्यल के नीचे और तामिका के मूल पर रहता है। दूसरा अंग ऊर्ध्व पुण्ड्र है, जिनमें सिंहासन में मिली हुई मस्तक के दाहिनी और बाई ओर, बीच में थोड़ा अवकाश छोड़कर, दो रेखाएँ लगायी जाती हैं। और तीसरा अंग है श्री विदु या श्री रखा जो ऊर्ध्व पुण्ड्र की दोनों रेखाओं के बीच में मस्तक पर धारण की जाती है। यह तिलक रामसनेही सम्प्रदाय की केवल मिहयल खैडाया शाखा में प्रचलित है, किंतु धार-घोरे अब इसका प्रचार समाप्त हो चला है।

श्री तिलक श्री तिलक वैष्णव तिलक का एक अंग है। इसमें गायीचन्दन की केवल एक श्री रेखा का प्रयोग होता है। यही तिलक रामसनेही सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं का सर्वाधिक प्रसिद्ध तिलक है। शाहपुरा शाखा के सत तो आवश्यक रूप से इसी तिलक को व्यवहार में लाते हैं।

रामनामी तिलक इस तिलक का श्री गणेश खैडाया शाखा के महात्मा परशुराम ने किया था। इसमें पत्राकार पुण्ड्र के भीतर 'राम' शब्द लिखा रहता है। इस तिलक का प्रयोग अब नहीं के बराबर होता है।

## तिलक-विवरण

## परिचय

(१) स्वामी रामानन्द का तिलक, सिंहासन सहित श्वेत ऊर्ध्व पुण्ड्र, मध्य म श्री की विन्व पत्राकार पतली रेखा ।

(२) रामसनेही सम्प्रदाय की शाहपुरा शाखा में सामान्य रूप से प्रचलित गोरीचन्दन का श्री तिलक ।

(३) महात्मा परशुराम का रावनामो तिलक, पत्राकार पुण्ड्र के भीतर राम ।

## माला

रामसनेही सम्प्रदाय के सन्त सगुणोप सरो की भाँति माला का भी प्रयोग करते हैं । यद्यपि साम्प्रदायिक साहित्य में माला की निन्दा की गई है फिर भी सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं में तुलसी माला का मुक्त रूप में प्रयोग होता है । इसे भी सगुण रामोत्तमक जाद्याचाचों का प्रसाद समझना चाहिये ।

## दिनचर्या

रामसनेही सन्ता का सम्पूर्ण समय बाणो-गाठ, गुरु वन्दना, भगवद्भजन सत्संग तथा अपने उपदेशामृत से जनता को लाभान्वित करने में व्यतीत होता है । सन्त्या को ये निर्गुण जास्ती करते हैं, जिसमें सन्त जीर घृहस्थ सभी भाग लेते हैं । इधर इस सम्प्रदाय के बहुत से सन्ता ने वैद्यक का कार्य अपना लिया है । इससे समाज को बहुत बड़ा लाभ हो रहा है ।

## पर्व

रामसनेही सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं में पर्व बहुत कम मनाये जाते हैं । इनके महीं का एक मात्र पर्व 'फूलडोल' है । यह पर्व सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं में समान रूप से प्रतिष्ठित है । शाहपुरा में इस पर्व के मनाये जाने का समय सामान्य रूप से फाल्गुन शुक्ल ११ से चैत्र शुक्ल ५ तक है, किन्तु उत्सव का विशेष पुरोगम चैत्र कृष्ण १ से चैत्र कृष्ण ५ तक रहता है । खैरवाड़ा और रेण में इसके मनाने की तिथि क्रमशः फाल्गुन पूर्णिमा और चैत्र पूर्णिमा है ।

फूलडोल नामकरण सामान्य रूप से प्रतीत होता है कि वसन्तागमन के समय मनाये जाने वाले इस पर्व का नामकरण प्रकृति का श्रृंगार करने वाले फूलों के नाम पर हुआ होगा किन्तु गम्भीरता पूर्वक विचार करने पर यह बात स्वतः समझ में आ जाती है कि हर समय पद्मस्तु की शोभा से मण्डित अगम देश में विहार करने वाले महात्माओं के लिए राजस्थानी प्रकृति इतनी आकर्षक लग ही कैसे

सकती थी कि वे साधना छोड़कर उत्सव में तल्लीन हो जाते। कैप्टन वेस्काट ने इस पर्व का सम्बन्ध वृष्ण भक्ति में मनाये जाने वाले 'फूलडोल' से जोड़ा है,<sup>1</sup> जो कि सम्भावनाओं से पर न होत हुये भी प्रस्तुत प्रसंग में समीचीन नहीं प्रतीत होता। साम्प्रदायिक मान्यता के अनुसार इस पर्व का सम्बन्ध प्रह्लाद और हिरण्यकश्यपु के आश्रय से है। फाल्गुन पूर्णिमा के दिन हिरण्यकश्यपु की वहिन हौलिका ने प्रह्लाद को जलाने का उपक्रम किया था। भगवान की वृषा से प्रह्लाद बच गये और हौलिका के प्राणा की 'होली' जल गया। भक्त की रक्षा से प्रसन्न हो कर देवताओं ने गगन से फूला की धपा की थी। अतः रामसनेही सम्प्रदाय के सत्ता ने इन पर्व का नाम फूलडोल रखा है।<sup>2</sup>

फूलडोल पर्व के महत्त्व की विवेचना हम दो दृष्टियों से कर सकते हैं। पत्नी सामाजिक और दूसरी साम्प्रदायिक। निगुणो पामक सन्ता की सामना अ मूर्खी हुये भी आरम्भ से ही सामाजिक हिता की सजग प्रहरी रही है। उसका प्रवचन दूषित, नतिक तथा आध्यात्मिक प्रवृत्तियों का परिष्कार करने के लिए हुआ था। फूलडोल होली के अवसर पर मनाया जाता है। इसको आयोजन सत्ता ने होली के अवसर पर प्रचलित कुत्तित गीतों और भद्र प्रदर्शना की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप किया था। इस प्रकार यह पर्व होली को एक मर्यादित रूप देने की चेष्टा का परिणाम है।

साम्प्रदायिक दृष्टि से भी इस पर्व का कम महत्त्व नहीं है। इस अवसर पर दूर दूर के रामसनेही सत्त आचार्य पीठ पर एकत्र होने हैं। रात-दिन सत्संग चलता है। साम्प्रदायिक व्यवस्था भी इसी अवसर पर ठीक की जाती है। अनुशासनहीन सन्ता व प्रति दण्ड व्यवस्था करने का समय भी यही है।

1 The name of festival signifying 'Flowers Swinging' is borrowed, I understand, from the eighteen purans called 'Sri Math Bhagwat, which contains an account of Krishna and intended more particularly for the instruction of his followers

Journal of Royal Asiatic Society, p 76.

२ अतः वसन्त फाल्गुन में होई पूरनवासी जातू सोई ।  
सो दिन तो असुन को होई प्रह प्रह्लाद जू जारे सोई ॥  
राम वृष्ण प्रह्लाद न जरिया फूल डोल ता पीछे करिया ।  
देवन आय पुहुप बरसाये फूलडोल ता नाम बहारी ॥

—फूलडोल समाधि, छन्द २०

## प्रचार-क्षेत्र

रामसनेही सम्प्रदाय का प्रचार-क्षेत्र मुख्य रूप से राजस्थान है, यद्यपि प्रदेश, गुजरात और दिल्ली में भी इसकी शाखाएँ हैं और बम्बई, मुरत, हैदराबाद, पुना, अहमदाबाद तथा बनारस में भी इसके रामद्वारे बताये जाते हैं।<sup>१</sup> प्रस्तुत लेख बहुत पता लगाने पर भी बनारस में इस सम्प्रदाय के किसी रामद्वारे का कोई नहीं चला। फिर भी बनारस जैसे सांस्कृतिक क्षेत्र पर गत दो शताब्दियों के रामसनेही सम्प्रदाय के किसी छोटे-बड़े रामद्वार का स्थापित होना असम्भव नहीं। इरिरामदास के एक शिष्य लक्ष्मणदास ने मुलतान को अपनी साधना भूमि बनाया।<sup>२</sup> पता चला है कि वहाँ उनकी परम्परा अब भी चल रही है और वहाँ अपने रामसनेही जाति का बताते हैं। सम्प्रदाय में दीर्घित माहेश्वरी और ओसवास जाति व्यापार अथवा देशों में भी निवास करते हैं। इससे इस धर्म के सिद्धान्त विदेशों में प्रचार पान लग है।

## पीठाचार्य की निर्वाचन-पद्धति

शाहपुरा और रेण की पद्धति शाहपुरा और रेण में पीठाचार्य का चुनाव जनतांत्रिक ढंग में होता है। १८वीं शताब्दी में यह प्रणाली आश्रय की बात है, क्योंकि उस समय भारतवर्ष में राजा का ज्येष्ठ पुत्र और सम्प्रदायाचार्य के प्रधान शिष्य ही गद्दी के अधिकारी होते थे। जन तान्त्रिक प्रणाली से हमारा तात्पर्य यह नहीं है कि यहाँ लोग आचार्य पद के लिए चुनाव उभरे हैं और बहुमत प्राप्त करने वाले को विजयी घोषित किया जाता है। इस सम्प्रदाय की चुनाव पद्धति भिन्न प्रकार की है। नियम यह है कि दिवंगत आचार्य की तेरहवीं तिथि या किसी निर्धारित समय पर समस्त रामसनेही सत एक गृहस्थ एकत्र होने हैं। साधुओं और गृहस्था की अलग-अलग गोष्ठियाँ होती हैं और विचार विमर्श करके सर्वसम्मति से किसी एक महात्मा को आचार्य बनाने का निणय किया जाता है। आचार्य बनने के लिए कोई आवश्यक नहीं है कि वह पीठ-स्थान का ही हो। पीठस्थान, खालसा, धामागत किसी स्थान का रामसनेही साधु आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया जा सकता है। समिति के द्वारा निणय हो जाने पर निर्वाचित साधु को बागद्वारी के ऊपर छत्र मंडल में ले जाकर

१ They are met within the neighbourhood of most large cities and towns such as Bombay, Surat, Hyderabad, Punah, and Ahmedabad and there are some at Benares,

# रामसनेही समग्रदाय का प्रसार क्षेत्र

 साम्प्रदायिक आचार्य पीठ  
 प्रसार क्षेत्र





गुदड़ी या अलफी पर बैठा दिया जाता है। से यही चुनाव की मूक घोषणा है। दूसरे दिन वह विधिवत् आचार्य पद पर समासीन होता है।

### सिंहथल-खंडापा की पद्धति

सिंहथल खंडापा में पीठाचार्य के चुनाव की प्रणाली शाहपुरा और रैण स भिन्न है। यहाँ पर उत्तराधिकार के परम्परागत नियमों का अनुसरण किया जाता है। यहाँ के आचार्य सम्प्रदाय के सत्तों की सम्मति से अपने जीवनकाल में ही उत्तराधिकारी मनोनीत कर देते हैं। किसी विशेष कारणवश जब कभी ऐसा नहीं हो पाता है तब यहाँ भी उसी जनशक्ति प्रणाली का अनुसरण किया जाता है, जिसका प्रचलन शाहपुरा और रैण की शाखाओं में है।

### परम्परा

रामसनेही सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं का सम्बंध स्वामी रामानन्द से है। रामानन्द का आविर्भाव वैष्णवाचार्य स्वामी रामानुज की परम्परा में हुआ था।<sup>१</sup> 'रामाचन पद्धति' में रामानन्द को रामानुजाचार्य की १४वीं पीढ़ी में बताने हुये निम्नलिखित परम्परा दी गई है<sup>२</sup> —

१— श्री रामचन्द्र	१३— श्री बोपदेवाचार्य
२— ,, मीता जी	१४— ,, देवाचार्य
३— ,, विश्वकसेन	१५— ,, पुरुषोत्तम
४— ,, घठकोष (आलवार)	१६— ,, गंगाधर
५— ,, नाथमुनि	१७— ,, रामेश्वर
६— ,, पुण्डरीकाक्ष	१८— ,, द्वारानन्द
७— ,, राममिश्र	१९— ,, देवानन्द
८— ,, याधुनाचार्य	२०— ,, श्रियानन्द
९— ,, महापूरणीचार्य	२१— ,, हरियानन्द
१०— ,, रामानुज	२२— ,, राघवानन्द
११— ,, कूरुश	२३— ,, रामानन्द
१२— ,, माधवाचार्य	

१ कुछ लोग रामानन्द को आचार्य वैष्णवा से पृथक् बताने हुये इनका सम्बंध पुरुषोत्तमाचार्य अथवा बोधासन नामक किसी प्राचीन वैष्णव से प्रमाणित करते हैं, किन्तु यह मत सर्वथा अप्रामाणिक और मन गन्त है। इसके पीछे एक साम्प्रदायिक रहस्य है जिसका जन्म उद्घाटन हो चुका है।

दृष्टव्य रामभक्ति में शक्ति सम्प्रदाय पृ० ३२०-२३

२ रामाचन पद्धति, श्लोक ३-५

'रामाचन पद्धति' के एक अन्य संस्करण के अनुसार स्वामी रामानन्द का नाम श्री रामानुजाचार्य की २१वीं पीढ़ी में आता है —

दृष्टव्य—रामाचन पद्धति (टाइपकार प० रामनारायण दास

(प्रकाशक सेठ छोटेलाल लक्ष्मीचन्द्र अयोध्या १९१४ ई०)।

नाभादास दत्त 'भक्तमाल' में रामानन्द का प्रादुर्भाव रामानुज की पाचवी पीढी में दिखाया गया है ।<sup>१</sup> सतवाणा पुस्तकालय बीकानेर के हस्तलिखित पत्र के आधार पर श्री रामसनेही सम्प्रदाय' नामक ग्रन्थ में जो गुरु प्रणालिका उद्धृत की गयी है उससे प्रकट होता है कि रामानन्द रामानुज की २३वी पीढी में हुये थे ।<sup>२</sup> उक्त ग्रन्थ के सम्पादको ने इस परम्परा को प्रामाणिक बताते हुए रामसनेही सम्प्रदाय में इसी के मान्य होने का उल्लेख किया है, लेकिन उका यह ब्यथन प्रामाणिक नहीं प्रतीत होता क्योंकि रामसनेही सम्प्रदाय (शाहपुरा शाखा) की एक मात्र पुस्तक 'रामसनेही धर्मदपण' में एक भिन्न परम्परा दी हुई है जिसमें रामानन्द को रामानुज की ३४वी पीढी में बताया गया है ।<sup>३</sup>

यही नहीं प्रस्तुत लेखक को श्री दयालु पुस्तकालय खंडापा स प्रात मोनीराम द्वारा लिखित एक हस्तलिखित पत्रक के अनुसार श्री रामानन्द रामानुज की ३४वी पीढी में ठहरते हैं —

(१) आद सु न	(१६) प्रलाकण	(२१) पदमाचार्य
(२) महामु न	(१७) पुहुपदव	(३२) कर्माचार्य
(३) निरगुन	(१८) रमेसुनेगर	(३३) देवाचार्य
(४) निराकार	(१९) महापूण	(३४) दयाचार्य
(५) आकार	(२०) विद्याधर मुनि	(३५) रिवाचार्य
(६) बीज ओकार	(२१) श्रोवण मुनि	(३६) बशीषराचार्य
(७) जाम्बूल नारायण	(२२) जिग्यास मुनि	(३७) वृषालाचार्य
(८) महालक्ष्मी	(२३) रामानुज	(३८) सुखाचार्य
(९) भिषक सेन	(२४) श्रुत प्रकाश	(३९) वृषभाचार्य
(१०) इच्छा श्रु प	(२५) श्रुतधाम	(४०) पुण्योत्तमाचार्य
(११) उजास मुनि	(२६) श्रुतप पा	(४१) नरोत्तमाचार्य
(१२) जात मुनि	(२७) भगलपुन	(४२) सामाचार्य
(१३) प्रणट मुनि	(२८) प्रताल मुनि	(४३) पूरणाचार्य
(१४) गभीर मुनि	(२९) शिष्टगोप	(४४) गंगाचार्य
(१५) घोरज मुनि	(३०) परमविजोवन	(४५) धाराचार्य

१ भक्तमाल सटीक ( रूपवला ), पृ० २८७ ।

श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० ३८

३ श्री रामसनेही धर्मदपण, श्री मनोहरदास, पृ० १०६-११० ।

(४६) रामेश्वराचार्य (५०) सचतानन्द	(५४) दरिमानन्द
(४७) द्वारानन्द (५१) अचतानन्द	(५५) सरियानन्द
(४८) दवानन्द (५२) सामानन्द	(५६) हरियानन्द
(४९) सरस्वतानन्द (५३) पूरणानन्द	(५७) राववानन्द
	(५८) रामानन्द

इन परस्पर विरोधी मतों के बीच तथ्यान्वेषण बड़ा ही दुश्कूल काम है। मयांगवश रामानुजाचार्य और स्वामी रामानन्द की ऐतिहासिकता अब पूर्णरूपण निश्चित की जा चुकी है और उनके आविर्भाव-काल का भी बहुत कुछ पता चल चुका है। इसमें उनके सम्बन्ध-निर्णय में महत्वपूर्ण सहायता ली जा सकती है। रामानुज का समय स० १०१६ और ११३७ के बीच माना जाता है<sup>१</sup> और रामानन्द १४वीं-१५वीं शताब्दी में वतमान थे। इस प्रकार दोनों महापुरुषों के जीवनकाल में तीन सठ्ठे तान सौ वर्ष का अन्तर पड़ता है। अब ध्यान देने की बात यह है कि इस अवधि में कितनी पाढ़ियाँ ध्यतीत हुई होंगी? विद्वानों ने एक पीढ़ी के लिये औसत २५ वर्ष निश्चित किया है, जो समीचीन प्रतीत होता है। इस कसौटी पर परीक्षा करने पर उपर्युक्त परम्पराओं में से केवल 'रामाचन पद्धति' की परम्परा, जिसके अनुसार रामानन्द रामानुज का १४वीं पीढ़ी में आविर्भूत हुए थे, सबसे अधिक विश्वसनीय जान पड़ती है।

रामनेही सम्प्रदाय नाम से राजस्थान में तीन सम्प्रदाय (रेण, सिंहवल-खैडापा और शाहपुरा में) चल रहे हैं। तीनों को अपनी-अपनी स्वतंत्र शाखाएँ और परम्परायें हैं। इनमें से रण की शाखा सर्वाधिक प्राचीन है किन्तु साहित्यिक उत्कृष्टता, परिमाण, साम्प्रदायिक मात्रव एवं व्यापकता की दृष्टि से शाहपुरा तथा सिंहवल-खैडापा के पीछे उसमें अधिक महत्वपूर्ण हैं। अतः इस अध्ययन में इनकी परम्परा इसी क्रम में प्रस्तुत की गई है।

१ द्रष्टव्य—(क) गीता रहस्य-वालगाधर तिलक।

(ख) Ramanuja—Rajagopalachariar

(ग) Ramanuja—K S Aiyangar

(घ) Life and teachings of Ramanuja—Rangacharya

(च) Vaishnavism and Saivism—Bhandarkar

२ द्रष्टव्य—(क) Vaishnavism and Saktivism—Bhandarkar

(ख) Journal of the Royal Asiatic Society, 1920

(ग) Outlines of Religious Literature of India—Farquhar

(घ) Kabir And his followers—F A Keay

## शाहपुरा की परम्परा—

### (१) शाहपुरा रामद्वारा की परम्परा

इस गद्दी की स्थापना आचार्य रामचरण जी ने की थी। शाहपुरा शाखा के रामसनेहियों का यही प्रधान पीठ है। इस गद्दी को रामजन दूल्हेराम और हिम्मतराम जैसे प्रसिद्ध महात्मा और विद्वान् सुशोभित कर चुके हैं।

श्व भी रामचरण की, रामानन्द के बाद की गुरु परम्परा इस प्रकार है—

- |                     |                    |
|---------------------|--------------------|
| (१) रामानन्द        | (७) प्रेमभूरा      |
| (२) अनन्तानन्द      | (८) रामदास         |
| (३) वृष्णदास पयहारी | (९) छोटा नारायणदास |
| (४) जगदास           | (१०) सतदास         |
| (५) नारायणदास       | (११) वृषाराम       |
| (६) प्रेम पठाजी     |                    |

रामचरण के परवर्ती पीठाधीश्वरों की नामावली नीचे दी जाती है—

- |               |                         |
|---------------|-------------------------|
| (१) रामचरण    | (८) दिलशुद्ध राम        |
| (२) रामजन     | (९) धर्मदास             |
| (३) दूल्हेराम | (१०) दयाराम             |
| (४) चन्नदास   | (११) जगरामदास           |
| (५) नारायणदास | (१२) निभयराम            |
| (६) हरिदास    | (१३) दशनराम             |
| (७) हिम्मतराम | (१४) रामकिशोर (वर्तमान) |

### (२) जीवणदास का राम द्वारा नागौर

इस राम द्वारे के संस्थापक थे स्वामी रामचरण के शिष्य जीवणदास। महात्मा नारायणदास, जो आगे चलकर प्रधान पीठ शाहपुरा के चौथे पीठाधीश्वर हुये, यहीं के महात्मा भूषणदास के शिष्य थे। रामद्वारे के निकटवर्ती भू भाग में इनकी बनी प्रतिष्ठा थी। यहीं के मन्त मनसुखराम ने खाड्ग में रामद्वारे की स्थापना की थी। नीचे इसकी परम्परा दी जाती है—

१ (अ) रामसनेही धर्मपण, पृ० ११०

(ब) श्री रामसनेही सम्प्रदाय में दी गई परम्परा में नारायण दास और प्रेम भूरा जो क बीच में प्रेमपठा जी का नाम नहीं है। इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। सम्भव है नाम सम्प के कारण अज्ञात-जानी स प्रेम पठा का नाम छूट गया हो।

- |               |                         |
|---------------|-------------------------|
| (१) जीवणदास   | (५) नवलराम              |
| (२) भूधरदास   | (६) हेमदास              |
| (३) सुखरामदास | (७) जुगतिराम            |
| (४) लालदास    | (८) लच्छी राम (वर्तमान) |

### (३) लाहून राम द्वारा

नागौर रामद्वारे के महात्मा सुखराम के शिष्य मनसुखराम ने इस रामद्वार की स्थापना की थी। मनसुखराम जो लाहून के रहने वाले पारीक ब्राह्मण थे। कहते हैं कि बचपन में वे गार्थ चराया करते थे। एक दिन इनकी भाभी ने, जिनके प्रति इनके हृदय में बड़ी श्रद्धा थी, कुर्से में गिर कर आत्म हत्या कर ली। इस घटना से बालक मनसुखराम का हृदय भी बड़ा आघात पहुँचा। परिणामस्वरूप इनके हृदय में वैराग्योदय हुआ और इन्होंने, नागौर आकर, सुखरामदास से दीक्षा ले ली। सुखरामदास के परमधाम पधारने के पश्चात् ये नागौर रामद्वारे के प्रधान बने किंतु शीघ्र ही आस पास का वातावरण प्रतिकूल पाकर, नागौर का रामद्वारा अपने गुरु भाई लालदास को सौंप कर स्वयं लाहून चले आये। लाहून में इनकी परम्परा अभी चल रही है जो निम्नोक्त है —

- |  |                        |
|--|------------------------|
| (१) मनसुखराम                             | (४) मेवाराम            |
| (२) विलासी राम                           | (५) रामनिवास (वर्तमान) |
| (३) लज्जाराम (पदत्याग करके कहीं चले गये) |                        |

### (४) मूडवा का रामद्वारा

मूडवा रामद्वारे की स्थापना सुखरामदास के शिष्य रामनारायण ने की थी। रामनारायण की मृत्यु के पश्चात् गद्दी के प्रधान उनके शिष्य आदवराम हुये। आदवराम बड़े ही चरित्रवान् और समयी महात्मा थे। विनय बावनी नामक एक लघु कृति की रचना भी इन्होंने की थी। इनकी मृत्यु वि० स० १९९२ के आस-पास हुई। आजकल मूडवा रामद्वार में कोई महत् नहीं है।

### (५) खजवाणा का रामद्वारा

नारायणदास जी रामचरण महाराज के शिष्यों में प्रमुख थे। ये विदेही महात्मा थे। इन्होंने खजवाणा को अपनी साधना-भूमि बनाया। खजवाणा में इनकी परम्परा अब तक चल रहा है, जो इस प्रकार है —

- |                          |              |
|--------------------------|--------------|
| (१) नारायणदास            | (४) गरकराम   |
| (२) सुजाणदास             | (५) भगीरथराम |
| (३) जरणराम               | (६) मोलाराम  |
| (७) भगताराम जी (वर्तमान) |              |

## (१४) कूचा पातीराम का रामद्वारा, देहली

कूचा पातीराम रामद्वार को स्थापना मनोरथराम शास्त्री ने की है। शास्त्री जी का जन्म फाल्गुन शुक्ल १४, म० १९७७ को दिल्ली के एक गणगोत्रीय अस्पताल घरने हुआ था। पिता का नाम लालरुग्गन और माया का वर्षादेवा है। रुग्गन जी ने इ.ह. आठ वर्ष की अवस्था में चैत्र वृष्ण ५, वि० सं० १९८५ को चितलीकबर रामद्वारे के महात्मा अमोलकराम जी का शिष्य बना लिया। उन्होंने इनके लिए एक मकान भी बनवा दिया जो अब रामद्वारा, कूचापातीराम के नाम से प्रसिद्ध है। शास्त्री जी ने इसी रामद्वार में एक राममनेही विद्यालय की भी स्थापना की है।

शास्त्री जी बड़े भजनानन्दी महात्मा है। उनकी एक 'भजन पायप मजरी' नामक पुस्तक भी प्रकाशित है।

## सिंहथल खैडापा की परम्परा—

## (१) सिंहथल का रामद्वारा

इस रामद्वारे की स्थापना राममनेही सम्प्रदाय की सिंहथल शाखा के जादाबाय हरिरामदास ने की थी। इसकी शाखायें प्रभाखाण पयात दूर दूर तक फैली हुई है। खैडापा की परम्परा, जो अब प्रायः स्वतन्त्र रूप से चल रही है, हरिरामदास के शिष्य रामदास की चलाई हुई है। इस प्रकार सिंहथल, खैडापा की गुरु गद्दी है।

हरिरामदास के पूर्ववर्ती आचार्यों की परम्परा इस प्रकार है—

१ रामानन्द	८ मोहनदास
२ अनतानन्द	९ माधोगास
३ कर्मचन्द	१० मुन्दरदास
४ दिवाकर	११ चरणदास
५ पूणमालवी	१२ जयमलदास
६ दामोदरदास	१३ हरिरामदास
७ नारायणदास	

१ (क) श्री दयालु पुस्तकालय, खैडापा से प्राप्त हस्तलिखित 'गुरु प्रणालिका' में

(ख) रामानन्द वदि दास व अनतानन्द

वदो कर्मचन्द व दिवाकर मुखकन्द का

पूरण ही मालवी व दामोदर दास वन्दो

नारायण व मोहन वदो तजि द्वन्द को

वदो जन मधोगास मुन्दर चरणदास

जैमल हरिराम वदो वदो ।

—श्री राममनेहीधमप्रकाश, पृ० ३२४

हरिरामदास के पश्चात् इस गद्दी पर निम्नांकित आचार्य आसीन हुए—

१ हरिरामदास	६ चेतनदास
२ विहारीदास	७ रामप्रताप
३ हरदेवदास	८ चौकसराम (चतुर्भुज दास)
४ मोतीराम	९ रामनारायण (पद त्याग दिया)
५ रघुनाथदास	१० भगवदास (वर्तमान)

## (२) खैडापा का रामद्वारा

इस रामद्वारे की स्थापना हरिरामदास के शिष्य रामदास ने की थी। रामदास जी के ५२ शिष्य थे जिनकी पृथक्-पृथक् परम्पराएँ मेवाड़, मारवाड़, मध्य प्रदेश, गुजरात आदि में फैली हुई हैं। इस परम्परा में एक से एक महात्मा, विद्वान् और साहित्यकार हुए।

खैडापा गद्दी के पाठाधीश्वर हरिदास जी दशनाथवेदाचार्य, हिन्दी और संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित तथा बड़े ही उदार महात्मा थे। आपने लोकहितार्थ, जोधपुर में दयालु औषधालय तथा खैडापा में दयालु विद्यालय की स्थापना की, जहाँ निश्चुल्क औषधि और शिक्षा की व्यवस्था है। हरिदास जी ने 'आचार्य चरितामृत', नामक ग्रन्थ के माध्यम से रामसनेही सम्प्रदाय की परम्परा और इस गद्दी की परम्परा और विचार धारा का विशद विवेचन किया है। इस गद्दी की परम्परा निम्नलिखित है—

१ रामनाथ	५ हरिलालदास
२ दयालुदास	६ लालदास
३ पूरणदास	७ केवलराम
४ अजुनदास	८ हरिदास
	९ पुरुषोत्तमदास (वर्तमान)

## (३) नारायणदास की शिष्य-परम्परा

नारायणदास हरिरामदास जी के प्रमुख शिष्यों में से थे। इनके आठ शिष्य हुये—सदाराम, मूलदास, मयारामदास, चेतनदास, काहूडदास, विजयराम, सावतराम और गजाराम। इन लोगों द्वारा स्थापित रामद्वारों की परम्परा नीचे दी जाती है—

क—सदाराम का रामद्वारा, ऊठसर

१ सदाराम	४ गिरधारीदास
२ मानराम	५ जमुनादास
३ योगीदास	६ ईश्वरदास

ऊँसर रामद्वारे की तीसरी पीढ़ी में योगीदास के एक शिष्य ध्यानदास ऊँसर से बरसीसर चले गये और वहाँ अपना रामद्वारा स्थापित किया जिसकी परम्परा इस प्रकार है —

- |            |             |          |
|------------|-------------|----------|
| १ ध्यानदास | २ शिवरामदास | ३ कहीराम |
|------------|-------------|----------|
- कहीराम ने पश्चात् यह परम्परा समाप्त हो गई ।

ख—मूलदास का रामद्वारा, कालू

- |              |            |
|--------------|------------|
| १ मूलदास     | ५ अमरदास   |
| २ राधोदास    | ६ नानगराम  |
| ३ गोविन्दराम | ७ भक्तिराम |
| ४ रामसुखदास  |            |

मूलदास की शिष्य प्रशिष्य शाखा का विस्तार झगरगढ़, सूरतगढ़, गुसाईसर-वाडा, सिनावडा और वाटसर आदि स्थानों पर हुआ ।

ग—मयाराम का रामद्वारा, गौगासर

- |              |              |
|--------------|--------------|
| १ मयारामदास  | ४ शालग्राम   |
| २ प्रेमदास   | ५ जयकृष्णदास |
| ३ लक्ष्मणदास | ६ अक्षयराम   |

घ—चेतनदास का रामद्वारा, पलाना

- |           |             |
|-----------|-------------|
| १ चेतनदास | ३ सवाराम    |
| २ चतुरदास | ४ शिवरामदास |

ङ—कान्हडदास का रामद्वारा, मूडमर

- |             |          |           |
|-------------|----------|-----------|
| १ कान्हडदास | २ उदेराम | ३ अमृतराम |
|-------------|----------|-----------|

अमृतराम के पश्चात् मूडमर रामद्वारे की परम्परा टूट गयी और अब वहाँ कोई नहीं रहता ।

च—रामनारायणदास के छठे शिष्य विजयराम ने बिहवर में निवास किया किन्तु उनकी कोई परम्परा नहीं चली ।

छ—सावतराम का रामद्वारा, सिंहथल

- |           |          |              |
|-----------|----------|--------------|
| १ सावतराम | २ दूतराम | ३ मुकुन्ददास |
|-----------|----------|--------------|

मुकुन्ददास के बाद यहाँ कोई महात्मा नहीं हुआ ।

ज—गजाराम का रामद्वारा, जेतपुर

- |          |             |
|----------|-------------|
| १ गजाराम | ३ मुक्तिराम |
| २ हरिराम | ४ राधी बाई  |

रामीबाई के उपरान्त जेतपुर रामद्वार की परम्परा खण्डित हो गई।

### रामदास की शिष्य-परम्परा

सत रामदास जी रामग्रन्थी सम्प्रदाय की सिद्ध्यल शाखा के संस्थापक सत हरिरामदास के यशस्वी शिष्य थे। इनके बावन शिष्य हुए, जिनमें दयालुदास, गगाराम, पीयोदास, निमलराम, परसुराम आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। रामदास जी के अधिकांश शिष्यों की परम्पराएँ स्वतंत्र रूप से चल रही हैं। कुछ प्रमुख शिष्यों की परम्परा का उल्लेख नीचे किया जाता है।

#### (४) गगाराम का रामद्वारा, बडलू

१ गगाराम ३ प्रह्लाददास २ गोविन्ददास ४ माधवदास

#### (५) कन्हडदास का रामद्वारा, वालीसर

१ कन्हडदास  
२ बालकृदास ४ शोमाराम  
३ नबला बाइ ५ आशाराम

#### (६) हेमदास का रामद्वारा, जैतारण

१ हेमदास ४ कन्याणुदास  
२ दौलतराम ५ चैनराम  
३ रूपदास ६ रामगोदाल

हेमदास की तीसरी पीढ़ी में रूपदास के एक शिष्य रुसिहदास ने अपना रामद्वारा बलोदा में स्थापित किया। इनकी परम्परा इस प्रकार है—

१ रुसिहदास २ भावनादास ३ गिरधारीदास

#### (७) श्री मनीराम का रामद्वारा, बडलू

मनीराम रामदासजी महाराज के प्रमुख शिष्य थे। इनके अनेक शिष्य हुए, जिनकी पृथक् पृथक् परम्पराएँ चलीं, बडलू, साधीण डावा, खांगटा, आदि स्थानों पर चल रही हैं। मुख्य रामद्वारा बडलू की परम्परा निम्नलिखित है—

१ मनीराम ४ गिरधारीदास  
२ वृपाराम ५ परमलदास  
३ प्याराराम ६ सुस्तराम

#### (८) पीयोदास की परम्परा, रतलाम

पीयोदास रामदास जी के प्रमुख शिष्यों में से थे। इनकी शिष्य प्रशिष्य शाखा का विस्तार गीतमपुरा पंचेवा, सरसो, इगणोद, ठामदिया आदि स्थानों पर हुआ। पंचेवा की परम्परा अब समाप्त हो गयी है। वहाँ के रामद्वारे में अब कीर्ति नहीं रहता। रतलाम के रामद्वारे की परम्परा की निम्नलिखित है —

- |              |               |
|--------------|---------------|
| (१) पीषोदास  | (४) साधूराम   |
| (२) कर्हीराम | (५) कल्याणदास |
| (३) उदयराम   | (६) आत्माराम  |

(७) रामविलास (वर्तमान)

## (६) ज्ञानदास का रामद्वारा, कालाउना

ज्ञानदास रामदास जी के शिष्य थे। इन्होंने अपना साधना क्षेत्र कालाउना को बनाया। इनके द्वारा स्थापित कालाउना के रामद्वारे की परम्परा निम्नलिखित है —

- |              |               |                  |
|--------------|---------------|------------------|
| (१) ज्ञानदास | (३) हरिचरणदास | (५) वाँदगम्बरदास |
| (२) वृष्णदास | (४) जगरामदास  | (६) भगवतीदास     |
|              |               | (७) शिवरामदास    |

## (११) निर्मलदास का रामद्वारा, पाली

निर्मलदास रामदास जी महाराज के शिष्य थे। ये रामसनेही सम्प्रदाय की सिद्ध्यल-खेडाया शाखा के विशिष्ट महात्माओं में गिने जाते हैं। इनकी परम्परा इस प्रकार है —

- |               |               |
|---------------|---------------|
| (१) निर्मलदास | (५) नानभराम   |
| (२) बचन राम   | (६) रजुवर दास |
| (३) बाईराम    | (७) भलाराम    |
| (४) गगराम     | (८) तुलसादास  |

## (१०) हरीदास का रामद्वारा, आटया

हरीदास रामदास जी के शिष्य थे। ये गृहस्थ थे और इनकी परम्परा भी श्रुति राम को छोड़कर गृहस्थों की ही थी। यहाँ की परम्परा इस प्रकार है —

- |              |             |               |
|--------------|-------------|---------------|
| (१) हरिदास   | (३) टाडूदास |               |
| (२) लच्छीराम | (४) रामलाल  | (५) श्रुतिराम |

## (१२) बल्लूराम का रामद्वारा, देवातडा

देवातडा के रामद्वारे की स्थापना रामदास जी के शिष्य बल्लूराम जी ने की थी। यह रामद्वारा गृहस्थ महात्माओं का था। अब इसकी परम्परा समाप्त हो गयी। यहाँ के अन्तिम महात्मा हरमुखदास थे। परम्परा इस प्रकार है —

- |              |               |              |
|--------------|---------------|--------------|
| (१) बल्लूराम | (३) स्वरूपदास |              |
| (२) जगरामदास | (४) रामप्रताप | (५) हरमुखदास |

## (१३) लालदास का रामद्वारा, डागियास

लालदास का डागियास में बड़ा सम्मान था। इनके प्रशिष्यों ने धूम-धूम कर धर्म का प्रचार किया। इनकी शाखा का विस्तार जोधपुर, बालीसर आदि स्थानों पर हुआ। यहाँ की परम्परा निम्नलिखित है —

- |              |                |
|--------------|----------------|
| (१) लाचदास   | (३) अमृताराम   |
| (२) ध्यानदास | (४) रामप्रताप  |
|              | (५) हिम्मताराम |

(१४) प्रेमदास का रामद्वारा, समुदडी

- |              |               |
|--------------|---------------|
| (१) प्रेमदास | (३) मुन्दरदास |
| (२) लाधूराम  | (४) शालिग्राम |
|              | (५) भक्ताराम  |

(१५) बुधाराम का रामद्वारा, जोधपुर

- |             |              |
|-------------|--------------|
| (१) बुधाराम | (४) प्रेमदास |
| (२) हेमदास  | (५) क्षमादास |
| (३) चरणदास  | (६) रामलाल   |

बुधाराम के शिष्य हेमदास की शिष्या ताजाबाई न जोधपुर में ही अपना अलग रामद्वारा स्थापित किया। इस गद्दी पर रामनारायण, रामब लाल आदि महात्मा हुये।

(१६) राधोदास का रामद्वारा, नीमाज

यह रामद्वारा रामसनहिया का पशुव पीठ है। यहाँ पर हरिराम जैसे महात्मा और प० दिगम्बरदास जैम विद्वान् हो चुके हैं। परम्परा इस प्रकार है —

- |              |                   |
|--------------|-------------------|
| (१) राधोदास  | (५) हरिराम जी     |
| (२) चैतराम   | (६) हुनामराम      |
| (३) अमृताराम | (७) चोकमराम       |
| (४) गुलाबदास | (८) प० दिगम्बरदास |

(१७) मनीराम का रामद्वारा शोटावद

- |              |              |
|--------------|--------------|
| (१) मनाराम   | (४) ईश्वरदास |
| (२) अडु नगम  | (५) बलमनास   |
| (३) गोपालदास | (६) गगाराम   |

मनीराम का एक शिष्या गगाबाई ने अपना रामद्वारा गरीता में स्थापित किया। उनकी परम्परा नीचे दी जाती है।

- |               |                |
|---------------|----------------|
| (१) गगाबाई    | (३) रामरतन बाई |
| (२) बाणाखीबाई | (४) हरिदास     |

(१८) रूपराम का रामद्वारा, बूडीवाडा

- |                |               |
|----------------|---------------|
| (१) रूपराम     | (३) शालिग्राम |
| (२) गोविन्दराम | (४) गङ्गाराम  |
|                | (५) समधराम    |

(१९) कालूराम का रामद्वारा, मकला [मालवा] ।

- |              |              |
|--------------|--------------|
| (१) कालूराम  | (४) भक्तिराम |
| (२) काशीराम  | (५) मोडीराम  |
| (३) परमानन्द |              |

कालूराम की एक अथ शाखा रामसर में विकसित हुई ।

(२०) सगरामदास का रामद्वारा, ईडर

सगराम जी ईडर ( गुजरात ) नरेश शिवसिंह के पुरोहित थे । ये गृहस्थ महात्मा थे । इन्होंने गुजरात में त्रिगुण रामभक्ति के प्रचार का बड़ा ही गौरवपूर्ण कार्य किया । इनके शिष्यों प्रशिष्यों ने बडौदा, मूरत, प्रांतीज आदि में रामद्वारे की स्थापना की जिसकी परम्परा नीचे दी जाती है —

क—ईडर-रामद्वारा की परम्परा —

- |              |               |
|--------------|---------------|
| (१) सगरामदास | (६) गुलाबदास  |
| (२) रामचन्द  | (७) रूपराम    |
| (३) मुनिजी   | (८) भाऊदाम    |
| (४) नगवानदास | (९) हिम्मतराम |
| (५) उदयराम   | (१०) समर्थराम |

(ख) मुनि जी का आदिभाव महात्मा सगर रामदास का तीसरी पीढ़ी में हुआ था । इनके एक शिष्य दयाराम ने बडौदा रामद्वारे की स्थापना की थी । इनकी परम्परा इस प्रकार है —

- |             |                |
|-------------|----------------|
| (१) दयाराम  | (४) विष्णुराम  |
| (२) बदरीदाम | (५) वेश्वराम   |
| (३) बालकदाम | (६) गोविन्दराम |
|             | (७) लाखाराम    |

(ग) बडौदा रामद्वारे के सतन्याराम ने एक शिष्य मुक्तराम ने अपना रामद्वारा प्रांतीज ( गुजरात ) में बनाया । उनकी परम्परा निम्नलिखित है—

- |            |             |           |
|------------|-------------|-----------|
| १ मुक्तराम | २ जुक्तिराम | ३ जीवणदास |
|------------|-------------|-----------|

(घ) दयाराम के शिष्य और मुक्तराम के गुह भाई स्वरूपदास ने मूरत में रामद्वार की स्थापना की । उनकी परम्परा इस प्रकार है —

- |             |           |
|-------------|-----------|
| १ स्वरूपदास | ३ रामलाल  |
| २ मनसुखराम  | ४ मंगलदास |

## (२१) परशुराम का रामद्वारा, सूरसागर (जोधपुर) ।

परशुराम जी का नाम मिहथल और खेडापा के रामसनेहियों में बड़ ही आदर के साथ लिया जाता है । रामसनेही सम्प्रदाय में विरक्त शाखा के प्रवक्तक यही महानुभाव हैं । इनकी शाखा कार विस्तार मानू, वीसनगर चाखा, जयपुर, देहली, मान्दा, आदि स्थानों पर हुआ । जब सूरसागर के नय परमहंस गद्दी पर बैठते हैं तब उनके लिए सिहथल खेडापा दोनों स्थानों के महन्तों क सामन खईदार गद्दी विद्याई जाती है और तदनंतर वे परम्परानुसार बाघम्बर या मृगचम अथवा टाट के आसन ग्रहण करते हैं । इस रामद्वार की परम्परा नीचे दी जाती —

१ परशुराम (विरक्त)	५ सम्पतिराम
२ सेवगराम (परमहंस)	६ हरसुखदास
३ मोवतराम	७ रामधन्लम
४ सुमद्वाराम	८ अमयराम (वतमान)

## (२२) वक्ताराम का रामद्वारा, तीतरी

रामदास के शिष्या में सर्वाधिक विशाल परम्परा वक्ताराम की है । इनकी शिष्य शाखा का विस्तार वासणी राजलक्ष्मण, रतनगढ, दहली, गाञ्ज मूडवा, बीदामर, जैसलमेर, गगाशहर, सरदारशहर, मैदूसर, गारासणी, बीकानेर आदि स्थानों पर हुआ । विस्तारभय स यहा केवल तीतरी की परम्परा दी जाती है —

१ वक्ताराम	४ शीतलदास
२ तुलसीदास	५ गगाविष्णु
३ रामरतन	६ रूपराम

## (२३) सावतराम का रामद्वारा, बानारावास

१ सावतराम	३ चरणदास
२ सगरारामदास	४ मुक्तराम
	५ कन्होराम

## २४—दौलतराम की परम्परा, बोयल

दौलतराम की साधना-भूमि जोधपुर जिले के बिलाडे परगमातगत बोयल नामक स्थान पर है । इनके दो शिष्य हुये—धीरमदास और गङ्गाराम । धीरमदास गद्दी के अधिकारी हुये और गङ्गाराम रामगणी ( जोधपुर ) में रहने लगे । बाद में वहाँ उन्होंने अपना रामद्वारा स्थापित कर लिया । धीरमदास के मृत्योपरांत उनके शिष्य गुप्ताराम भी जोधपुर चले आये और मोनी चौक में अपना रामद्वारा बनवाया । इन दोनों रामद्वारों की परम्परा नीचे दी जाती है—

(क) गगाराम का रामद्वारा, रामगढी [जोधपुर]

- |            |                                   |
|------------|-----------------------------------|
| (१) गगाराम | (३) धमगढीराम                      |
| (२) रामरतन | (४) श्रीराम (५) रामकिशन (वर्तमान) |

(ख) मोती चौक-जोधपुर का रामद्वारा

- |               |                            |
|---------------|----------------------------|
| (१) गुप्तराम  | (४) उदोतराम                |
| (२) आगाराम    | (५) भक्तिराम               |
| (३) प्रतीतराम | (६) १० उम्मेदराम (वर्तमान) |

(२५) साईदास का रामद्वारा, आचीणा [नागौरा]

- |              |                          |
|--------------|--------------------------|
| (१) साईदास   | (३) परमलदास              |
| (२) साहिबराम | (४) लच्छीराम (५) गणेशदास |

साईदाम की शाखा देशनोक, किस्मीदेसर, गङ्गाशहर, नयाशहर आदि स्थानों में फैली, और उम्र भूभाग में राम भक्ति के प्रचार में विशेष महत्त्वक हुई।

(२६) वक्तराम का रामद्वारा, जोधपुर

- |             |               |
|-------------|---------------|
| (१) वक्तराम | (३) विष्णुदान |
| (२) सदाराम  | (४) शमदास     |

(२७) हरिश्चन्द्रदास का रामद्वारा, खवासपुरा [मारवाड]

- |                    |              |
|--------------------|--------------|
| (१) हरिश्चन्द्रदास | (४) रामलाल   |
| (२) आत्माराम       | (५) प्रेमदान |
| (३) भक्तिराम       | (६) लाधूराम  |

(२८) दयालुदास की शिष्य-परम्परा

दयालुदास रामदास जी के पुत्र और शिष्य थे। यह बहुत बड़ महाराम, विद्वान् तथा वाणीकार थे। इनके अनेक शिष्य हुये जिनको पृथक् पृथक् परम्परायें अब तक चल रही हैं। यदि सब की गद्दी का परिचय और परम्परा का उल्लेख किया जाय तो केवल परिचय और परम्परा पर ही एक विशाल ग्रन्थ तैयार हो जायेगा। अस्तु केवल एक, दो रामदारों की परम्परा का उल्लेख करके सतोष करना पड़ता है।

क मोतीराम का रामद्वारा, सियोणा

- |            |             |
|------------|-------------|
| १ मोतीराम  | ४ जगजीवनदास |
| २ भक्तिराम | ५ नेशवदास   |
| ३ साहिबराम | ६ श्रीराम   |

इ हों महाराम की शिष्य परम्परा बोदासर रतनगढ, सुजानगढ, छानार, डोवा, आदि स्थानों में है।

## ख तुलसीदास का रामद्वारा, रामसर

- |             |            |
|-------------|------------|
| १ तुलसीदास  | ३ मनोहरदास |
| २ गुमानोराम | ४ गलतानदास |

तुलसीदास की दूसरी पीढ़ी में गुमानोराम हुए। गुमानोराम के एक शिष्य जेठाराम न श्रीकानेर में निवास किया, और रामद्वार का स्थापना की। इस गद्दी के वर्तमान प्रधान लक्ष्मणराज जी हैं। ये सम्प्रदाय के बड़े ही प्रसिद्ध और यशस्वी महारमा हैं। इनको परम्परा नीचे दी जाती है—

१. जेठाराम                      २ नानगराम                      ३ लक्ष्मणराज

## रेण की परम्परा

रेण रामद्वारे का स्थापना दरिया साहब ने की थी। यह गद्दी रेण शाखा के रामसनेहियों का आचाय-पीठ है। दरिया साहब के जीवन काल में इसे पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त हुई, किन्तु उनका मृत्यु के उपरांत कोई ऐसा महात्मा नहीं हुआ जो इस गद्दी का महत्व अनुपुण रख सके। परिणामस्वरूप यहाँ की परम्परा खगिडत हो गयी, और रामद्वारा तथा देवल एक प्रकार से श्रीहीन हो गयी। गुरु गद्दी की दुदशा देखकर हरखाराम जी ने इसकी देव भाल का भार लिया। उनक पश्चात् इस काय को, सम्प्रदाय के पांच महात्माओं ने जिनमें नागौर के निवासी रमकरण जी प्रमुख थे अपने हाथ में लिया। इस प्रकार लगभग सवा सौ वर्ष तक रामद्वार का प्रबन्ध होता रहा। इतने दिनों के उपरांत सम्प्रदाय के कुछ प्रमुख लोगों के आग्रह में महारमा भगवद्दाम ने इन सूनी गद्दी को स० १९३८ में सुशोभित किया। तब से यहाँ का प्रबन्ध सुचारु रूप से चल रहा है।

दरिया साहब के पूर्ववर्ती आचार्यों की नामवला स्वामी रामानन्द ने लकर सतदाम तन शाहपुरा गद्दी से अभिन्न हैं। इसके बाद की परम्परा इस प्रकार है—

- १ सतदास
- २ बालकदास
- ३ प्रेमदास
- ४ दरिया साहब

वर्तमान समय में सम्प्रदाय के महात्मा प्रेमदास का गुरु सतदास को मानत हैं, किन्तु साम्प्रदायिक साहित्य एक स्वर से प्रेमदास को सतदाम का प्रशिष्य और बालक दास का शिष्य बताना है। दरिया साहब के प्रमुख शिष्य पूरणदास<sup>१</sup>, और

१ बालक दाम प्रेम जन पूरा। दरिया साह परमानन्द मूरा ॥

किसनदास<sup>१</sup> वृत्त भक्तमाला में प्रेमदास को स्पष्ट रूप से बालकदास का शिष्य कहा गया है। हमदास के शिष्य प्रेमदास विरचित 'भक्तमाल',<sup>२</sup> मदाराम वृत्त 'ज म-लीला',<sup>३</sup> बालकराम वृत्त भक्तमाल<sup>४</sup> तथा सम्प्रदाय द्वारा प्रकाशित, पाठ पुस्तक से भी इसी तथ्य की पुष्टि होती है। तथ्य का पता लगाने के अभिप्राय से प्रस्तुत लखक ने दांतडो के वतमान पीठाचार्य से भी इस सम्बन्ध में बातचीत की थी। उन्होंने चारणों की एक प्राचीन बही का साक्ष्य देते हुए बताया कि प्रेमदास बालकदास के शिष्य थे, और सतदास के शिष्यों में प्रेमदास नाम का कोई महात्मा नहीं हुआ था। अनुसंधान करने पर पता लगा है कि इसके पाछे एक रहस्य है और वह यह है कि इस सम्प्रदाय के लोग अपने आद्य चाय का रामसनेहियों की शाहपुरा शाखा के आचार्य रामचरण से

- १ बालक दास भजन बहो किया भजन भेद बहो आगो ।  
सतदास जा सतगुरु भेटे होय विरक्त बैरागी ।  
प्रेम नाव का बहोन पियासा सगुर सग मिल पीया  
जन दरियाव साध बड भागी राम भजन कर लीया  
—भक्तमाल, छंद १६८ ६९
- २ स्वामी सतदास जो जग में ररकार रट लीहा ।  
जे जे चरण परस कर प्राता तीनुक पावन कीहा ।  
बालक राम जिनके सिप जानो प्रेमी जन मतवाल ।  
अरुभ प्रमट वैपरी बाणो पिया प्रेम रस प्याचा ।  
जिनके सिप दरिाव धपाएया सो तो ध्यान समाधी ॥  
—प्रेमदास वृत्त 'भक्तमाल' से
- ३ सतदास का सिपा एव बालक प्रधाणी ।  
जाका सिप स त प्रभ ब्रह्म की भगत पिछाणी ॥  
—मदाराम वृत्त 'ज म लीला' में
- ४ था पैहारा की प्रणाली में भयो सतदास है ।  
ठाही को बालक राम तास प्रप ताम सम ॥  
—बालकराम वृत्त 'भक्तमाल' (राजस्थान भाषा और साहित्य पृ० ३१२ से उद्धृत)
- ५ धाम दांतडो सतदास प्रमट किय स्थान ।  
जिन चरणों का रज्ज में शानक भय निधान ।  
बालक दास प्रताप से प्रेम पिछाणिया राम ।  
जन दरिया बहण भय मरया मनोग्य काम ॥  
—पाठ पुस्तक, पृ० १८ (गुरु प्रनामी)

पीडा म छोटा नहीं देखना चाहते । इसी उद्देश्य की सिद्धि के लिए आजकल यत्र-तत्र साम्प्रदायिक साहित्य को भ्रष्ट करने की प्रवृत्ति भी दिखाई पड़ती है । इस सम्बन्ध में अपनी धारणा यह है कि सत अननो साधना से महान् होता है, जति, कुल परम्परा का उसके यहाँ कोई अर्थ नहीं होता । एक पाद्री ऊपर-नीचे होने से कोई कयमपि बढा या छोटा नहीं हो सकता ।

दरिया साहब के परवर्ती आचार्यों की नामावली नीचे दी जाती है —

- |              |                    |
|--------------|--------------------|
| १—दरिया साहब | ३—रामगोपाल         |
| २—भगवतदास    | ४—शमाराज (वर्तमान) |

## (२) सुखरामदास का राम द्वारा, मेडता

इस रामद्वारे की स्थापना दरिया साहब के गणस्वी शिष्य सुखरामदास ने की थी । इसका परम्परा निम्नलिखित है—

- |                    |                      |
|--------------------|----------------------|
| १—सुखरामदास        | ५—शम्भूराज           |
| २—गमाबाई           | ६—तुलसीराम           |
| ३—मानकराम (परमहंस) | ७—विलासीराम          |
| ४—मोतीराम          | ८—प्रभुदास (वर्तमान) |

## (३) अर्जुनदास जी का राम द्वारा, गुलाब सागर (जोधपुर)

अर्जुनदास सुखरामदास के शिष्य थे । इन्होंने जोधपुर का अपना साधना-भूमि बनाया है । इस रामद्वारे का परम्परा इस प्रकार है—

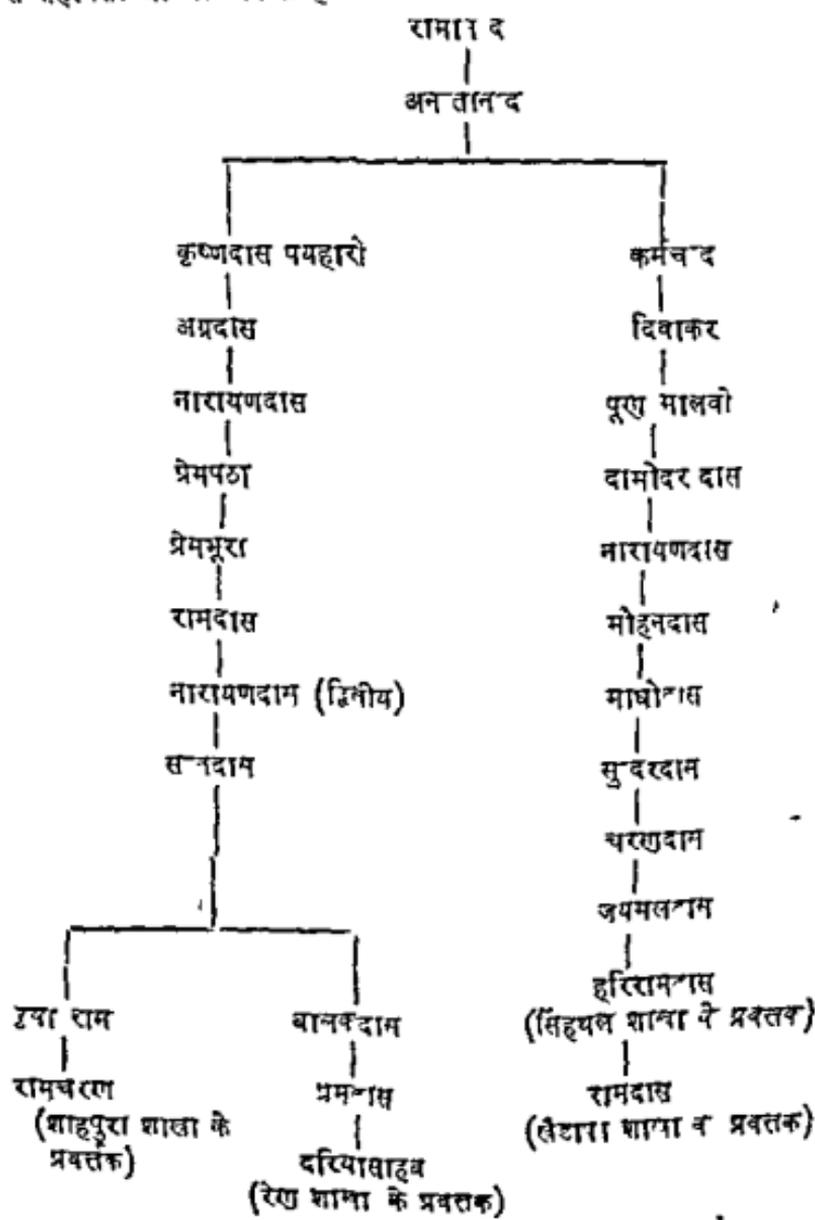
- |             |                     |
|-------------|---------------------|
| १—अर्जुनदास | ८—सम्राटदास         |
| २—शिवरामदास | ५—रघुनाथदास         |
| ३—भरतदास    | ६—आनंदराम (वर्तमान) |

इसी प्रकार इस सम्प्रदाय के और भी बहुत से रामद्वार हैं, स्थापनाभावक कारण इनमें से प्रमुख की नामावली नीचे दी जाती है —

- १—पूरणदास का रामद्वार, भोकर (मालवा)
- २—विसनदास का रामद्वार, टाकला (राजस्थान)
- ३—नानकदास का रामद्वार, कुचेरा (राजस्थान)
- ४—हरलाराम का रामद्वार, नागौर (राजस्थान)
- ५—बाई का रामद्वार, नागौर (राजस्थान)
- ६—श्यामदास का रामद्वार, डोडवाना (राजस्थान)
- ७—मनसाराज का रामद्वार, साँझ (राजस्थान)
- ८—हरलाल का रामद्वार, साँझ (राजस्थान)
- ९—उह का रामद्वार (राजस्थान)

कतिपय महत्त्वपूर्ण रामद्वारों का समित्त परिवच्य देने के उपरांत यह निबदन करना अप्रासंगिक न होगा, कि स्थानाभाव के कारण सैकड़ा रामद्वारा पर प्रकाश नहीं डाला जा सका है। फिर भी एतद्विषयक जो सामग्री प्रस्तुत की गई है, उससे सम्प्रदाय की व्यापकता का अनुमान सहज ही किया जा सकता है।

तीनों शाखाओं के परम्परागत सम्बन्ध को समझने के लिए निम्नलिखित तालिका से सहायता ली जा सकती है —





नमो रामरमतीतनगोमु  
 रदेषुवामी नगोनगोसवमतनावरतिनगुनामी  
 जिनकचरणुदेविस्तीनितिसीसद्भार तनमनधन्य  
 रणोणकरुमवेलावरसारा रामसनगुरदेवविनीनही  
 प्रोरशाधार रामचरणानरिजोभिकेबदेवास्वार २  
 नमो रामरमतीतिसकलव्यापकधणामी सव  
 पोषेप्रतिपालसवनकासेनगस्वामी करणामर्कितता  
 रकासमवहुरिनिनारे नगतिवह नताविदुदजगत  
 तकालेगुधोर रामचरणवदनकरेसवईसतवेईस  
 जगपालकजुमजगतगुरजगतीवनजगदीस २ आनंद  
 पमसुषासिचिनानदकहीगस्वामी निराजवनिरलेप  
 अकलेदरिअंतरजामी वायवारमपिनाहिकणविधि  
 करीपसेवा गहीनिरावनरशाकार अजन शवगतिदे  
 वा रामचरणवदनकरेअलदेअषहनमूर सधिम  
 शलपालीनहीरह्यासकलनरपूर २ नमोनगो  
 पुरवत्तनगोनहेकेवलराया नगोअतगअसगन  
 हीकलेगयानश्याया नगोअलेपअलेपनहीकोई  
 केमनकाया नमोअमापअथापनहीकोईभारग  
 पाया सिवसिनुकादिकसमररततनपावेअत ग  
 म्चरणवदनकरेनगोनिरजनकत ३  
 क्रिपागंमकलि अवनरजीविनप्रमदर २ २०६ तगक

ज्ञानसमुद्र ( डा० भगवती प्रमाद सिंह, एम० ए०, डी० लिट के  
 दिजी सप्रहालय की प्रति ) मे सकलित स्वामी रामचरण  
 की बाणी के प्रथम पत्र की छायाचित्र लिपि ।

# साम्प्रदायिक साहित्य और साहित्यकार

## (क) साम्प्रदायिक साहित्य

रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य की सजना एस स तों द्वारा हुई है जिहोने स्वप्न मे भी कवि बनन और ख्याति प्राप्त करन की बात नहीं सोची थी । काव्य रचना करना उनका लक्ष्य नहीं था । काव्यशास्त्र और छन्दशास्त्र का अध्ययन उहोने नहीं किया था । उनसे अनक की 'मसि कागद' से भी भेंट नहीं हुई थी । वे भक्त थे, अत उनको वाणी म भक्त-हृदय का स्वाभाविक उद्गार ही देखा जा सकता ह । साधक हान से साधनागत अनुभूतियों की अभिव्यक्ति उनकी रचनाओं का सब कुछ है और समाज द्रष्टा हान के कारण उनकी रचनाओं मे सामाजिक कुरीतियों पर कठोर आघात क्रिय गये हैं । उनकी वाणी का प्रतिपाद्य विषय परम पुरुष राम के स्वरूप का निरूपण, ज्ञान, भक्ति, योग धराम्यादि का विधान, सहज सात्विक जावन का उपदेश और माया मोह, विषय-वासना तथा आहवरपूण जीवन की निंदा है । इस दृष्टि से इस सम्प्रदाय के स ता का काव्य-क्षेत्र पूव मध्यकालीन सत कवियों की अपेक्षा किमी भी अश म विस्तृत नहीं कहा जा सकता, फिर भी अनुभूतिया की निश्छल वरजना तथा विभिन्न भाषा शैलियों का सफल समन्वय इसकी विशेषताए ह जा अनुसधित्मुग्धा का ध्यान बरबस आकृष्ट कर लती हैं ।

## स्वरूप

रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य की सामान्य रूप स हम चार वर्गों मे विभा जित कर सकते हैं —

- १ अगबद्ध वाणी ।
- २ भक्ति-भावनापूण पद ।
- ३ अश ।
- ४ गद्य ।

## अगबद्ध वाणी

प्रारम्भिक सत कविया का उद्देश्य अथ प्रणयन करना नहीं था । वे अनुभूतिया की अनक छन्दो म अभिव्यक्त करके सन्नुष्ट हा जाते थे । उहोने किसी विषय का क्रमबद्ध विवेचन करन का प्रयास नहीं किया । यही कारण है कि पूववर्ती सतों की रचनाए अगबद्ध रूप म नहीं मिलती । उदाहरणाय नानक, दादूदयाल और कबीर की

रचनाएँ ली जा सकती है। 'आदि ग्रन्थ' में अग का वर्गीकरण नहीं किया गया है। दादूदयाल ने भी अपनी बाणी की रचना अगबद्ध रूप में नहीं की थी। उनकी मातिया तो अगों में विभाजित करने का काम उनके शिष्य रज्जब ने किया। इसी प्रकार कबीर की रचनाएँ भी उनके शिष्या प्रशिष्यों द्वारा व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत की गईं। रामसनेही सम्प्रदाय की शाहपुरा गाछा व मस्थावक रामचरण ने भी अपनी बाणी की रचना अगबद्ध रूप में नहीं की थी। उनके शिष्य रामजन और नवलराम न मिलकर गुरु की रचनाओं को विषय व अनुसार सुयोजित किया। कालान्तर में बाणी-संग्रह के साथ ही साथ बाणी साहित्य को व्यवस्थित रूप में रखने और अगबद्ध रूप में रचना करने की परम्परा का सूत्रपात हुआ। शनैः शनैः इस प्रवृत्ति का पर्याप्त विकास हुआ। दादूदयाल की बाणी में जहाँ केवल २७ अग हैं वहीं रज्जब का रचनामात्र लगभग दस सौ अग मिलते हैं। रामसनेही सम्प्रदाय का बहुलांश साहित्य अगबद्ध रूप में ही है। इसके ऐतिहासिक अनुशीलन से ज्ञात होता है कि परवर्ती सत निरंतर नये अगों का समावेश करते गये हैं। शैली के विचार से भी पिछले श्रेय व साम्प्रदायिक कवियों न सवैया, कुण्डलिया, भूलना, अरिल, चंद्रायण, कवित्त आदि अनक छंदा का प्रयोग किया है जबकि पहले क सता ने अभिव्यक्ति का माध्यम प्रधान रूप से साणी का बनाया था।

पद

हमारे अध्ययन युग क सता ने पदों की रचना पर्याप्त मात्रा में की है। य पद अनक राग रागिनियों में लिखे गये हैं। आकार क विचार से ये छोटे बड़े सब प्रकार के हैं। सत साहित्य में पदों का बहुत बड़ा महत्त्व है। इन्हें 'शब्द' या 'भजा' कहते हैं। सता की रचनाओं का प्राचीन रूप पदों के रूप में ही लिखाई पड़ता है। इन पदों को पढ़ने से प्रकट होता है कि इनकी रचना अनुभूति की सघनता की स्थिति में का गई है। इन पदा में जितनी आत्मपरकता है, उतनी सत साहित्य में आद्यत्र दुर्लभ है। इनमें प्रधान रूप से भक्त की भगवान क लिए विह्वलता, दीन आत्मनिर्वन् और कभी-कभी मायाजाल से बचने की चेतावनी दी गई है। कभी भक्त अपने प्रियतम राम क वियोग में रोता है, कभी भावनागत रयोग की स्थिति में मिलने व गाल गाता है, कभी अपने को अत्यंत दीन, हीन एवं पतित बता कर शरण की याचना करता है। कभी वह भगवान को उनके विरद का याद लिताता है और कभी प्रवचनापूर्ण सकार की प्रयोग कर अगम दग में शरण लेने का उपदेश देता है। अस्तुत सत साहित्यकारों क रवि रूप का दर्शन उनक इन पदा में होता है।

पद्य

रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में छोटे-बड़े अनेक पद्य मिलते हैं। इन पद्यों

को मुख्य रूप में हम दो वर्गों में रख सकते हैं (१) मौलिक और (२) अनुदित। मौलिक ग्रंथों का स्वल्प की दृष्टि में कई वर्गों में रखा जा सकता है। पहले हम मौलिक ग्रंथों के विविध रूपों पर विचार करेंगे।

**समय के भिन्न भिन्न ग्रंथों पर आधारित ग्रंथ**

सत् परम्परा में, प्रारम्भ से ही, वाचक अथवा समय के भिन्न भिन्न ग्रंथों के आधार पर रचना करने की प्रवृत्ति रही है। सहजानाई की 'सो-हृ तिथि नित्य' सन्त रज्जब की 'पद्म तिथि' सत् हरिदास की 'दश तिथि योग,' 'लघु तिथि योग' आदि इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। कहना न होगा, तिथि और वार शोधक के अतन्त रचना करने की परम्परा सत्ता की नाथयोगियों से मिली थी। 'गोरखदानी' में गोरखनाथ की 'पद्म तिथि' और 'सप्तवार' नाम की दो कृतियाँ संकलित हैं। परिशिष्ट भाग में 'सप्तवार नवग्रह' नाम की एक रचना और दी गयी है। कालांतर में, इन परम्परों का विस्तार सगुणापासक भक्तों में भी हुआ। रसिक रामभक्त युगलानन्दशरण ने भी 'बारह राशि सप्तवार' नाम की एक रचना की है। रामसन्तहा सम्प्रदाय में इस प्रकार की अनेक रचनाएँ प्राप्त हैं, जिनमें 'तिथि बोध' (रामजन) 'सप्तवार प्रकाश,' 'तिथि प्रकाश' (दवादास), 'तिथि नाम' (मुक्तराम), 'सातहा कला' (रामदास), 'मोल्है तिथि का विचार' (हरिरामदास) आदि प्रमुख हैं। तिथियाँ वस्तुतः पद्म होती हैं किन्तु सत्ता में तिथि की गणना अभावस्था से लेकर पूर्णमास तक करके सोलह दिन पूरा कर लिया है। स्मरण रखना चाहिए कि गोरखनाथ की 'पद्म तिथि' नामक रचना में भी सोलह तिथियाँ दी गई हैं, यद्यपि नाम के अनुसार दसक अतन्त पद्म तिथियाँ का विस्तार होना चाहिए था।

**भक्तमाल**

रामसन्तहा सम्प्रदाय में 'भक्तमाल' की रचना का बहुत प्रचार था। मुझ श्रवण तक, इस सम्प्रदाय की छाया-बड़ा कद भक्तमालें देखने का मिली हैं जिनमें दण्डुदास, किरणदास, सुन्दरामदास, प्रेमदास, और पूरणदास (दरिया साहब के शिष्य) की कृतियाँ विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। रामदास ने भी एक छोटी सी 'भक्तमाल' की रचना की है जो 'श्री रामसन्तहा प्रकाश' में प्रकाशित हो चुकी है। भक्तिकाल के अन्तर्गत के लिये भक्तमाल साहित्य बरदान स्वरूप रहा है। दुर्भाग्य से अभी तक नामदास की 'भक्तमाल' उसकी कुछ इतिहासी टीकाओं और एकाध ग्रंथ भक्तमाला के अतिरिक्त इस परम्परा की अनेक रचनाएँ प्रकाश में नहीं आ सकी हैं। प्रस्तुत लेखक का विश्वास है कि यदि भक्तमाल-परम्परा में विरचित ग्रंथों की खोज की जाय तो एक महत्त्वपूर्ण साहित्य रत्न के प्रमाण में अन्त के साथ ही साथ उत्तर मध्यकालीन भक्ति काव्य पर अनुसंधान करने वालों का मार्ग प्रशस्त हो जायगा।

## गुरुमहिमा

निगुणिमास न गुरु के अनन्य भक्त हैं। वे गुरु और ब्रह्म को स्वयं एक मानते हैं। यहाँ कारण है कि प्रायः सभी सतों न गुरुमहिमा सम्बन्धी छंदा की रचना की है। गुरु महात्म्य जगण की यह परम्परा परवर्ती युग तक आनमान और भी बढ़ गयी। परिणामस्वरूप सामान्य रूप से सभी सत कवियों ने 'गुरुमहिमा' नाम न स्वतंत्र ग्रंथ विरचित करके ही सतोप किया। हमारे अध्ययन-युग क सता ने भी 'गुरु महिमा' शीर्षक ग्रंथ लिखे हैं। रामचरण, दरिया साहब, रामदास, पीथो दास, पूरणदास, किमनदास, सूरतराम, मुक्ताराम, नानकदास आदि महात्माओं क 'गुरु महिमा' ग्रंथ, विनोप रूप से, उल्लेखनीय हैं।

## परची

इन सतों की, रामनाम म जितनी अनुरक्ति थी, वाम और दास स उतनी ही विरक्ति। भौतिक जीवन के प्रति उन्हें कोई राग नहीं था। इसलिए उनकी वाणी में आत्मोल्लसों का स्वथा अभाव है। यही कारण है कि अधिकांश सत कवियों क जीवनवृत्त की खोज म शोधक, अभी अधकार म, भटक रहे हैं। परवर्ती सतान 'गुरु महिमा' के साथ-साथ गुरु की 'परिचयी' लिखना आरंभ किया। अतः सता क जीवनवृत्त पर, साम्प्रदायिक माहित्य से, जो थोड़ा बहुत प्रकाश पड़ता है उसका श्रय 'परची' या 'परिचयी' साहित्य को है। इस वग की वृत्तिया अनुसंधित्नुओं क लिए त्ना ही उपयोगी हैं। रामसनेही सम्प्रदाय म 'परची' साहित्य की मजना प्रारम्भ स हो हाती रही है। रामजन वृत्त 'राम पढाति', पूरणदास (खडवा) वृत्त 'जमलाला', जगन्नाथ वृत्त 'ब्रह्म समाधि लीन याग', दयानुदास वृत्त 'गुरु प्रकरण परची', सालदास वृत्त 'रामचरण की परची', पदुमदास वृत्त 'दरिया साहब की जम-लीला', मदाराम वृत्त 'दरिया साहब की परची' और 'बुधसागर की परची', सवराराम वृत्त 'परमुराम की परची', अजु नदाम वृत्त 'परचीसार' आदि वृत्तियाँ, सम्प्रदाय के अधकारपूण अतीत के अनुसंधायकों के लिए अक्षय पान-स्रोत के रूप म, अभिनन्दनीय हैं।

## सख्यावद्ध कृतिया

आत्मोच्युगीन साम्प्रदायिक साहित्य का एक वृहदा छन्द-सख्या के आधार पर नामांकित ग्रंथों क रूप म है। इस प्रकार की रचनाओं में 'बत्तीमी,' 'पचीसी,' 'छत्तीसा,' अष्टक, बावनी आदि प्रमुख हैं। रामसनेही सम्प्रदाय म उपयुक्त सभी प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं। सख्या के आधार पर रचित ग्रंथों म 'करुणा रस बत्तीसी' (हरखाराम), 'कजावतीसी (प्रेमदास), रक्षा बत्तीमी (दयानुदास), 'पदवत्तासी (रामदास) पदवत्तासी (हरिरामदास), 'करुणा छत्तीमी' (पूरणदास) 'गुरु अष्टक (दयानुदास), 'विनय वाचना' (आदराराम), वार वाचना (१० उमाहराम) आदि

का नाम गिनाया जा सकता है। इस गैली म लिखी गई, पूर्ववर्ती मतां की भी कुछ रचनाएँ मिलती हैं। कबीरदास ने 'रमैली' ग्रंथ में 'मल्लपदी', 'बड़ी अष्टपदी', 'दृपदी', 'अष्टपदी', 'बारह पदा' तथा चौपदी रमैगिया का संग्रह किया है। 'आदि ग्रंथ' में भी 'असट पदीग्रं' नाम का कुछ रचनाएँ, गुरु नानक, गुरु अमरदास, गुरु रामदास तथा गुरु प्रभु नदाम की कृतियाँ के रूप में, संकलित हैं। कबीरनाम तथा सित गुरुभो की उपयुक्त रचनाओं में छंद संख्या प्रायः स्वतंत्र ढंग से रखी गयी है किन्तु राममनेहो सम्प्रदाय के कवियों ने नियम का उचित ढंग से पालन किया है। इस सम्प्रदाय की उपयुक्त रचनाओं में से किसी में भी मध्या विषयक घट-बढ़ नहीं है।

### ककहरा

राममनेहो सम्प्रदाय में ककहरा प्रणाली पर ग्रंथ रचना करने की परम्परा रही है। रामप्रताप (गुरु रामचरण) विरचित 'कका काया कारिज करणीसार निरूपण', 'कका काया करणीसार निरूपण' और मुत्तराम विरचित 'ककरा बत्तीसी' की रचना इसी पद्धति पर की गयी है। अक्षरानुक्रम से लिखने की यह प्रणाली कोई नयी नहीं है। कहा जाता है कि इसका आरम्भ अथर्व वेद-काल में ही हो गया था। सुन्दरदास की 'बावनों' एक ककहरा ग्रंथ है, यद्यपि इसमें सभी वर्णों का समावेश नहीं हो सका है। परन्तु साहब, गुलाल साहब, और भोखा साहब ने भी इस प्रकार के ग्रंथों की रचना की है। कहना न होगा कि ककहरा पद्धति का प्रयोग केवल देवनागरी लिपि में ही नहीं बल्कि फारसी लिपि में भी किया गया है। यारी साहब और गोविन्द साहब के 'अलिफनामे' फारसी अक्षरानुक्रम में लिखे गये हैं। असम्भव नहीं कि इस विषय में जामसी का 'अखरावट' इनका पथ प्रदर्शक रहा हो।

### गोष्ठी

साम्प्रदायिक साहित्य में 'गोष्ठी' ग्रंथ भी देखने को मिलते हैं, जैसे रामचरण विरचित 'गुरु शिष्य-गोष्ठी'। 'गोष्ठी' ग्रंथों की रचना कथोपकथन के रूप में होती है। इस प्रकार की रचनाओं की एक सुदृढ़ परम्परा नाथपंथी साहित्य में मिलती है। 'गोरखवानों' में 'गोरख-गणेश-गुष्टि', 'महादेव-गोरख-गुष्टि', 'महादेव-गोरख-गुष्टि' और 'नाम की तीन गोष्ठियाँ' नामक तीन ग्रंथ प्रकाशित हैं। गोष्ठियों का दूसरा नाम 'सम्वा' भी है। राममनेहो सम्प्रदाय में 'गुरु शिष्य-सम्वा' नाम की दो रचनाएँ प्राप्त हैं, एक की रचना सेवकराम ने की है और दूसरी की परगुराम ने।

### प्रश्नोत्तरी

'गोष्ठी' से कुछ मिलते-जुलते 'प्रश्नोत्तर' नामक ग्रंथ भी देखने को मिले

जीवन-चरित्र और साम्प्रदायिक सिद्धांत विवेचन। टीका के रूप में हम 'दृष्टांत सागर' की टीका (रामजा) 'घंघर निसाणो' की टीका (चौकमराम) और चौकसराम तथा उत्तमहराम कृत 'करणासागर' की टीकाओं का नाम ले सकते हैं। भूमिकाएँ तो बहुत महत्त्व की नहीं हैं फिर भी 'रामसनेही सतवाणो' और 'अणुभववाणो' तथा भगवद्दास जो द्वारा सम्पादित 'हरिदेवदास की वाणो' की भूमिकाएँ उल्लेखनीय हैं। श्री हरिदास शास्त्री कृत 'आचार्य चरितामृत' जीवन चरित्र सम्बंधी एक सुंदर ग्रंथ है। विवेचनात्मक ढंग में लिखी गई 'रामसनेह धर्मदण' (मनोहरदास) ही एकमात्र ऐसी रचना है जिससे, साम्प्रदायिक सिद्धांतों के अनुशीलन में, पर्याप्त सहायता मिलती है।

### (ख) साहित्यकार

'उद्भव और विकास' के अध्याय में कहा जा चुका है कि राजस्थान में रामसनेही नाम से तीन सम्प्रदाय चल रहे हैं। इनकी मूल गढ़िया, रेण, सिंहवल खडापा और साहपुरा में, अभी वर्तमान है। इन तीनों शाखाओं में प्रचुर मात्रा में साहित्य-सजना हुई है। स्थानाभाव के कारण प्रत्येक शाखा के कतिपय प्रमुख कवियों का परिचय दिया जायगा।

रेण शाखा के आद्याचार्य दरिया साहब (सं० १७३३-१८१५), सिंहवल के रिरामदास (मृ० १८३५) और साहपुरा के रामचरण (सं० १७७६-१८५५) थे। तीनों संस्थापकों के जीवन-काल को ध्यान में रख कर विचार करने से विदित होता कि इनमें सर्वाधिक प्राचीन रेण शाखा है, सिंहवल तथा साहपुरा का स्थान क्रमशः दूसरा और तीसरा है। किन्तु प्रस्तुत प्रबंध में लोकप्रियता की दृष्टि से प्रथम स्थान साहपुरा को, दूसरा सिंहवल-खडापा को और रेण को तीसरा स्थान दिया गया है। आगे इसी क्रम में साहित्यकारों का जीवनवृत्त प्रस्तुत किया जायगा।

### साहपुरा शाखा के साहित्यकार

#### रामचरण

रामसनेही सम्प्रदाय की तीनों शाखाओं में सर्वाधिक शक्ति नाम महात्मा रामचरण का है। इनका जन्म बूझाड़ राज्यस्थित सोडा नामक ग्राम में माघ पुष्य ५, सनिवार, संवत् १७७६ की, मनिहाल में, हुआ था।<sup>१</sup> यं जाति कं बीजाधर्मी

(म) समत सतरा से हूतो और छइतर जान ।

चतुरदशो तिथि महामुं वार सनीसर जान ॥

+ + +

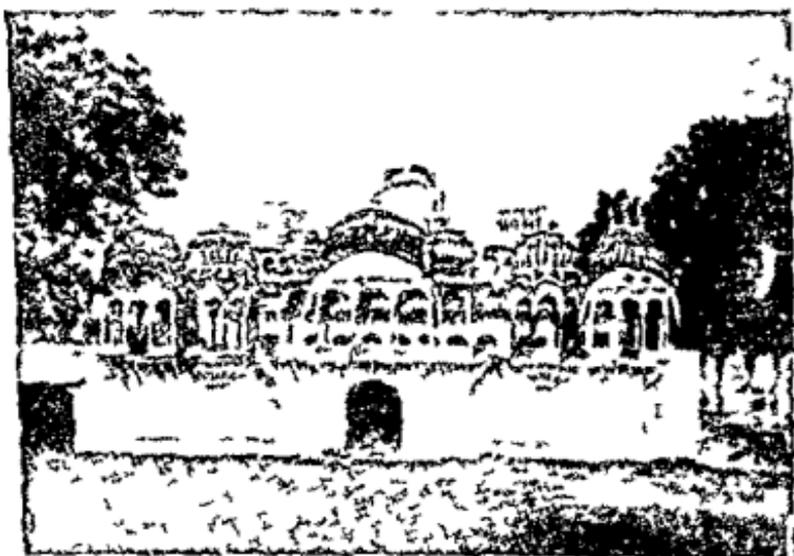
बूझाड़ देस मोडे नगर गाना जी न द्वार ।

भगतिरात्र कनि धवतरे जग जीवन हितकार ॥

—साहित्यज्ञ कृत रामचरण की परची ।



श्री रामचरण जी (शाहपुरा शाखा के प्राचार्याय)



प्राचार्य पीठ शाहपुरा (मेवाड़)



वैश्य (माहेश्वरी) थे। इनके पिता का नाम बखतराम और माता का देऊ जी था। बखतराम मालपुरा निकटस्थ बनवाडा नामक ग्राम के निवासी थे।<sup>२</sup> रामचरण का बचपन का नाम रामकृष्ण था।<sup>३</sup> इन्होंने तीस वष की अवस्था तक गाहस्थ्य जीवन व्यतीत किया था। कुछ समय तक ये जयपुर नरेश के प्रधान मंत्री भी रहे। अतः साध्य से भी इनका दरबार में रहना मिठ होता है।<sup>४</sup> इनके विरक्त होने के सम्बन्ध में कहा जाता है कि एक बार ये एक दूकान में सोये हुये थे। वहाँ एक यती आया। उसने इनके चरणचिह्न को देखकर इनके गृहस्थ होने पर आश्चर्य प्रकट किया और महात्मा होने की भविष्यवाणी की। इस घटना के बाद रामकृष्ण के हृदय में निर्वेद समा गया। संसार की अमारता का ज्ञान होने ही पारिवारिक बंधन इन्हें खलने लगे। इस प्रकार एक वष भी नहीं बीत पाया कि एक दिन रात के अन्तिम प्रहर की मधुर मिट्टी में सोये हुये रामकृष्ण ने एक स्वप्न देखा। इन्हें लगा कि ये नदी में स्नान कर रहे हैं। इतने में सरिता के प्रबल प्रवाह से इनके पर उखल गये और ये धारा में बहने लगे। अब इनके लिए चारा ही क्या था? ये 'बचाओ-बचाओ' के ऊँचे स्वर में चिल्लाने लगे, किन्तु इसज्ञान की साय-साय में इनके बरहण क्रन्दन को सुनने वाला एक

(ब) देस हूँ आड सोभे अजमरो सोडो नगर मालपुर नेरो।

+ + +

सतरा से ह छहतर वरसा मास महामुद कहुँ विसेमा ॥  
चवदम वार मनीसर नीको जा दिन काटयो बहुमिर टीको।  
- ब्रह्म समाधि लीन जोग छ० ८, ११ और १२

१ वैश्य वण कुल उत्तम जानो।  
बीजागोति महाबुधिबानो ॥  
- वही छ० ८

१२ सास ग्राम बनवाडो कहीए मालपुर के नेरे लहीए।  
+ + +  
बइस वरण हरिभगता ग्याता बखतराम जी पिता विख्याता।  
देऊ जी माता का नामा परम सुमोल सुलछन धामा ॥  
- परधी

३ कुल का प्रोहित निया वोलाई जम पत्रिका बेग तिखाई।  
राम किसन जी नाम बताया सकल कुटुम्बी के मन भाया ॥  
- वही

४ जम थ य घर पाइय पुनि सेवत राजद्वार।  
रामचरण जन न मिलै तो होता बहुत खवार ॥  
अमृत उपदेश, प्र० ५ छ० ३६

वृद्ध मन के अतिरिक्त और कोई न था। उस दिव्य व्यक्तित्व-सम्पन्न महात्मा ने राम कृष्ण को मृत्यु के क्षण गाल में जाने में बचा लिया। तदनन्तर नींद टूट गई और रामकृष्ण की प्रकृत निद्रा के साथ-साथ मोह निद्रा भी भंग हो गई। ये तत्काल स्वप्न में धाय हुए उसी महात्मा की खोज में निकल पड़े। डूबते-डूबते दांतड़े त्रिवामी महात्मा कपाराम से इनकी भेंट हुई और मनमाना गुह पाकर भाद्रपद, स० १८०८ में उही में दीक्षा ले ली।<sup>१</sup> दीक्षोपरांत इनका नाम रामचरण पड़ा।

रामचरण कुछ समय तक वेप धारण कर साधना करते रहे। एक बार रसाई बनाने समय जलती लकड़ों में से चीटियाँ निकलते देखकर इनका मन उचट गया। धीरे धीरे साधुओं की आपसी खीचतान से इन्हें चिढ़ हो गई और साम्प्रदायिक बाह्याचार प्रवृत्ति का बखेड़ा सा लगन लगा। अतः स्वामी कृपाराम की आनामने विरक्त हो गए। विरक्ति-भाव धारण करके रामचरण जी वृन्दावन की ओर चल पड़े। कहते हैं माग में इहे साधु वेप में साक्षात् ईश्वर ने दर्शन दिया और वृन्दावन न जाकर मवाड़ में त्रिगुण राम भक्ति का प्रचार करने के लिए कहा। इस प्रकार देवी प्रेरणा प्राप्त कर वे मवाड़ की ओर लौट गये और वहीं तपोमय जीवन व्यतीत करने लगे। इन्होंने पहले अपनी साधना भूमि भीलवाड़ा की बनाया। दस वर्ष की अनवरत साधना के उपरांत इस प्रयत्न में स्वामी जी का प्रभाव बड़ी तेजी से बढ़ने लगा। इनकी कीर्ति को बढ़ते देखकर उनके विरोधियों को, जो मूर्ति पूजक थे, बड़ा चिन्ता हुई। उन लोगों ने उदयपुर के राणा से इनकी निवासत की। महाराणा ने इन्हें बुलाने के लिए सिपाही भेजे। इस पर रामचरण जी बहुत दुःख हुआ और वे कुहाड़ ग्राम चले गये। कुछ दिन वहाँ रहने के अनन्तर, साहपुरा नरेश के आमन्त्रण पर, स० १८२६ में ये साहपुरा चल आय और जीवन पर्यन्त यही रहे। साहपुरा-नरेश राण सिंह का पूरा परिवार इनका अत्यन्त भक्त था। य अपने समय के बहुत प्रसिद्ध महात्मा थे। इन्हें मवाड़ और उदयपुर के राजाओं द्वारा भी सम्मान मिला था।

१ (अ) समत घाटारा से अरु आठा ले बैराग गये तन काठा।

भाद्र पद मास दास पद पायो रामचरण जी राम कहायो ॥

—ब्रह्म समाधि तीन जाग छ० २३ ३४

(ब) घाटारा से अरु आठा के गाला माय हाथ दियो निपाला।

भाद्रमास भए निरवाधा रामचरण जी नाम पमना ॥

—गुरु लीलाविलास छ० ४४

(स) सट्टादग अरु आठ के समत भई गुरु भेंट।

घाप शरीखा कर लिया मूल भ्रमना भेंट ॥

—परबी, छ० ३१

इनका देहावसान बंगाल कृष्ण ५, बृहस्पतिवार वि० म० १८५५ को शाहपुरा म हुआ ।

रामचरण जी के कुल २२५ गिण्य बताये जाते हैं किन्तु अभी तक उनकी नामावली प्राप्त नहीं हो सकी है । शाहपुरा रामद्वारे की 'वारहद्वारी' की भित्ति पर इनके १२६ शिष्यों का नाम अंकित है । इनके गिण्यो में १२ प्रमुख माने जाते हैं— बलभराम, रामसेवक, रामप्रताप, चेतनदास, काहडदाम, द्वारकादास, भगवानदास, रामजन, देवादास, मुरलीराम, तुलसीराम और नवलराम ।<sup>२</sup>

रामचरण जी ने २२ ग्रंथों तथा स्फुट अगबद्ध वाणी की रचना की, जिसकी सम्पूर्ण छन्द संख्या ३६३६७ है । ग्रंथों की नामावली इस प्रकार है

१ गुल्महिमा	१२ चिंतावली
२ नामप्रताप	१३ मनखडन
३ शम्भुप्रकाश	१४ गुरु शिष्य-गोष्ठी
४ अणभोविलास	१५ गिण्य पारख्या
५ सुखविलास	१६ जित-पारख्या
६ अमृत उपदेश	१७ पठित-संवाद
७ जिज्ञासबोध	१८ लच्छप्रलच्छ योग
८ वि यामबोध	१९ वेजुक्ति निरम्कार
९ विश्रामबोध	२० हृष्टातमागर
१० समतानिदाम	२१ काफरबाध
११ रामरसायण	२२ धन्द

१ (क) सम्बत अठारा से सही जान पचावन और ।

वैशाख बदी पाँचै तिथी ब्रह्मपति छतरयाँ ठौर ॥  
दिवस पहर पिछलो रह्यो बियो कूच प्रतीवार ।

—ब्रह्म समाधि लीन-जोग, छन्द १४३ ४४

(ख) सम्बत अठारा से पचास वैशाख बदी पाँचै प्रमान ।  
गुरुवार पहर तीजै तयार आप भये निज निराकार ॥

—राम पढति, रामजन, छन्द ३१

२

बलभराम बलवत रामसेवक तपधारी ।

राम प्रताप पुनीत दाम चेतन सुखनेही ।

काहड करणीवान द्वारकादास विदेहा ।

भगवानदास भजनक राम ही जन अधिकारी ।

दवादास निल गुद्ध जान मुरली धन धारी ।

तुलसी तत परबीन नवल पुस्तोधरप्यारा ।

य द्वादश गिण्य साथ कस्या रथ काण्णहारा ।

—राम रसाम्बुधि, भाग २, पृ० १२३

इनकी काय-शली के उदाहरण के लिए कुछ छंद नीचे दिये जाने हैं—

सग लगे तिर जाय सोही सिख जो गुरु पाव जहाज नमाना ।  
सो परमारण कारण जानिये भवजल सू ततकाल तिराना ॥  
आप न चाह करै न कछू मन अय कथा कवहूँ न बखाना ।  
राम कहै अर राम कहावत सोही पूरा निज भेद बताना ॥<sup>१</sup>

ससार बृच्छ की छाहडी फिरती दलती जोय ।  
ज्ञान बृच्छ की एक रस सदा ज शीतल सोय ॥  
सदा ज शीतल सोय ज्ञान अधिकारी पावै ।  
घटती बघती समे देखि दृष्टा होई जावै ॥  
रामचरण समझ्या जिवे ज्या अतिसै अजक न होय ।  
ससार बृच्छ की छाहडी फिरती दलती जाय ॥<sup>२</sup>

माया को स्वरूप सोतो बयो है चिरत सारो,  
विचारोये ज्ञान भया तेरी ये बडाई है,  
ज्ञान के विचारे बिना घना घना भूर मुदा,  
हुवा न तपति कोई समना गुमाई है ।  
कपटी कुबुधि कूर कहै नाना भाति कोऊ,  
तोहू न रहै र धार नहवै दुखनाई है,  
राम ही चरण कहै करै तू अकाज काइ,  
माया की मरोड सबै भूठी असनाई है ॥<sup>३</sup>

पतित उधारण विद्वद तुम्हारो,  
अबकै राम पतित कू त्यारो ॥टेक॥  
भक्त बछल कू भक्ति पियारी, हम तो पतित पाप की क्यारी ।  
अजाभोल गणिका सो त्यारी, उन सू मैलो नाति हमारो ॥  
कामी कपटी में पण हारो, लोभी लपटि विक्ल विकारी ।  
तन मन अगुचि नहीं आचारी, परपची अर परधन हारो ॥  
गुण बरता सू अनगुणकारी, अपणो अवगुण गुण विस्तारी ।  
रामचरण मन यहि विचारी, गुण-सागर में शरण तुम्हारो ॥<sup>४</sup>

१ जिनासा बोध—द्वितीय प्रकरण, छ० ५१

२ विद्वाम बोध प्रथम प्रकरण, छ० ५०

३ विश्राम बोध—दशम् विश्राम, छ० १

४ अणमैवाणी, पृ० २६२

१. - - - 'रमइया मरी पसक न लागै हा ।  
 दरसा तुम्हारे कारणै निशि धासर जागै छौ ॥६॥  
 दू दिसा घातर करू, तेरी पय निहाऊँ हो ।  
 रामराम को टेर दे, दिन रैण पुकारू हो ॥१॥  
 नैन दुखी दीदार दिन रसना रस भासै हो ।  
 हिरदो हूलसै हेत कू, हरि कब परकासै हो ॥२॥  
 स्वाति बू द चातक रट, जल श्रीर न पीयै हो ।  
 घन घाटा पूरै नही, तो कैस जीवै हो ॥३॥  
 दास की अरनास सुण, पिया दणण दाजै हो ।  
 रामचरण विरहिनि कहै भव विलम न पीजै हो ॥४॥'

### रामजन

रामसनेही सम्प्रदाय की साहेपुरा शाखा के द्वितीय पीठाचार्य रामजन जी थे<sup>२</sup>। इनका जन्म वि० सं० १७६५ म, वैश्य कुल (मोहरवरी) म हुआ था<sup>३</sup>। य सिरसा नामक ग्राम के निवासी थे<sup>४</sup>। कबलराम स्वामी के अनुसार इहोने सम्बत् १८२४ म रामचरण स दीक्षा ली थी<sup>५</sup>। गार्गी द तासी न इनका दीक्षा-काल सं० १७६८ (सम्बत् १८२५) माना है<sup>६</sup>। प्रमाणों के अभाव म उक्त दोनों मता की समोबानता क सम्बन्ध म निश्चित रूप स कुछ नही कहा जा सकता। ये स्वामी रामचरण के बारह प्रमुख शिष्या म से थे। स्वामी रामचरण से इनकी घनिष्टता का उल्लेख करते हुए जगन्नाथ ने 'नन पूतरी' से उपमा दा है<sup>७</sup>। रामचरण की परमधाम-यात्रा के पश्चात् इहान सम्बत् १८५५ म आचार्य पद ग्रहण किया और जीवन पय त इसी पद पर आसन रह कर धर्म प्रचार करते रहे। इनका

१ अणभैवाणी, पृ० १००६

२ रामचरण महाराज मूर ज्यो भवनि उजागर ।

जाकी गादी दिपै रामजन सुप क सागर ॥

- जगन्नाथ कृत 'महिमा के शब्द'

३ श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० ४४

४ इस्वार दला लितरात्पूर ऐदुई ऐं ऐदुस्तानी, पृ० २३७

५ श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० ४४

६ इस्वार दला लितरात्पूर ऐदुई ऐं ऐदुस्तानी, पृ० २३७

७ रामचरण और रामजन नैन पूतरी जेम ।

—महिमा क शब्द

८ श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० ८४

देहावसान आषाढ़ कृष्ण ११, बुधवार, म० १८६७ को हुआ<sup>१</sup>। 'श्री रामसनेही सम्प्रदाय' नामक ग्रन्थ में भी इसी तिथि का उल्लेख है। गार्गी दत्तात्री ने इनकी मृत्यु मन् १८०७ (स० १८६६) में मानी है<sup>२</sup>। इसी तिथि का समर्थन प० परगुराम चतुर्वेदी ने भी किया है।<sup>३</sup> वस्तुतः रामजी जी का देहावसान-काल सम्बत् १८६७ मानना उचित होगा क्योंकि साहपुरा स्थित उनकी समाधि पर यही तिथि अंकित है जिसकी समीचीनता पर किसी प्रकार से अविश्वास नहीं किया जा सकता।

इनके बीस ग्रन्थ प्राप्त हैं, जिनकी नामावली इस प्रकार है —

१ उपदेशग्रन्थ	११ चालुकबोध
२ बालबाध	१२ ह्यानबोध
३ रत्नबाध	१३ ध्यानप्रबाध
४ विचारबाध	१४ तपतिबोध
५ प्रतीतिबाध	१५ विवकबोध
६ वैरागबोध	१६ दिनतीबाध
७ गुमिरणबोध	१७ ध्यानरगाधो
८ गुम्फुतिबाध	१८ गुमिरणगिडात
९ साहीशबोध	१९ रामपद्धति
१० तिथिबाध	२० हृत्पानसागर की टीका

उपरोक्त ग्रन्थों में 'रामपद्धति' और 'हृत्पानसागर की टीका' का छोड़ कर शेष गन्ना अक्षरान्वित है। इनका अक्षरबद्ध वाणी की संख्या भी पर्याप्त है। रामजन विरचित 'हृत्पानसागर की टीका' में संक्षेप में रामजी का अष्टा परिचय मिलता है। रामजन जी का सम्पूर्ण साहित्य साहपुरा के 'रामविद्यालय धाम' में सुरक्षित है, जिस द्वा पत्तियों का संग्रह न स्वयं जाकर देखा है।

इनकी रचना में कुछ नमून नीचे दिये जाते हैं —

वैराग्य के राग बुधवति जाओए ।  
 त्रिजन्त रत्न की हृदि निवारै,  
 योजन ज्ञान के हाथ न छोड़न,  
 माया गढ़े ताकी गति टार ।  
 मां गुण स्वामी विद्या के जोति है,  
 वाणी गुवाणी की गुण प्रहारै,

१ अक्षरान्वित गणसंज्ञक नाम कृष्ण आषाढ़ बुधवार ।

२ अक्षरान्वित गणसंज्ञक नाम कृष्ण आषाढ़ बुधवार ।

— समाधि के निता-लेख के

३ अक्षरान्वित गणसंज्ञक नाम कृष्ण आषाढ़ बुधवार, पृ० २३७

४ अक्षरान्वित गणसंज्ञक नाम कृष्ण आषाढ़ बुधवार, पृ० १२०

आप अजाचिक बाहु न जाचिक,  
नाचि कौ सगत नाहि निहारै ॥<sup>१</sup>

गुरु के चरण चित रापोए ज एक रसि,  
बसोय ज वाक बासि पासि कटै भ्रम की,  
होइ निरखघ बढ मान द को पाइ रहौ,  
गहौ गुरु बाइव अघारी भागै भ्रम की ।  
होइ प्रकास महा पद की उदोतकार,  
दोसति विभूति निति आतम धरम की,  
रामजन मन बधि गुरु व सरणि सदा  
जनम मरण मिटै लगे जा मरम की ।<sup>२</sup>

जेठ अयाढ ज आईया धन आगम धन धोरि ।  
विरहिन बोल प्रीति अति मानौ कुरसे मोर ॥ टेक ॥  
घटा चढ़ी धन उमग बै बड़ी ब्रिहनि व आस ।  
बब हरि बरसै प्रेम जल तब तन होइ निवास ॥  
रस न उचारै धारिवा चाल्या धरि कू धीर ।  
सुमरण लागी लू ब भडि साइर भरया गम्भीर ॥  
ब्रिहनि भूने तास मधि करि करि आनन आप ।  
लहस्या खै प्रेम की ज्यू ज्यू मिट है ताप ॥  
ताप मिटी तन सानि करि हर बरसै हृदनीर ।  
रामजन सुग पाईया रम रम सुख सीर ॥<sup>३</sup>

रमत रमत तत अपर जटल मत  
बरतत बरजन मरन मटत ह ।  
सरप गरल गात रसन अन्नत रत,  
रटत रटत पत कमस फटत ह  
घटत घटत घट मट समटत मन  
हटत हटन तम सबद रटत ह  
धरन धरत तब मदन मरत जव  
सदन सजत जत सबत रटत ह ॥<sup>४</sup>

१ स्यान प्रबोध—नवम् राड, छ० २८

२ सुमिरण सिद्धांत, छ० १८३

३ गद्द, छ० १०

४ था रामसनहा सम्प्रदाय, पृ० १६७

## दूल्हेराम

दूल्हेराम का जन्म जयनगर में वैशाख, कृष्ण ४, स० १८०६ को हुआ था।<sup>१</sup> इनका पिता का नाम मुखदेव और माता का विष्णुकाता था।<sup>२</sup> ये जाति के सडेतवाल वैश्य थे। इनका बचपन का नाम दयानिधि था<sup>३</sup>। बाल्यकाल में ही कुलगुरु ने इनकी जन्मपत्री देखकर बहुत बड़ा महात्मा होने की भविष्यवाणी की थी।<sup>४</sup> शिशु दयानिधि धार धारे सयाना हुआ और गृहकाय सभालन लगा। एक दिन ये अपने व्यापारिक लेखा-जाखा में व्यस्त थे। इतन में एक महात्मा आया और इनकी कायरत देखकर उसने निम्नलिखित सान्वी कही—

बसू बाला कागद करो इत बात कया होय ।

रामचरण भज रामको दिल का दस्ता खोय ॥<sup>१</sup>

इत सान्वी को सुनकर दयानिधि का ज्ञान-नत्र खुल गया। इन्होंने उस महात्मा से सान्वी के रचयिता का नाम पूछा। उसने रामचरण जी का परिचय दिया और फिर अपनी राह ली। उस क्षण ता दयानिधि फिर कायरत हो गया किन्तु उनके हृदय में विरक्ति की भावना जागृत हो गई और अदृश्य के रगमच पर एक नय अभिनय की तयारी होने लगी।

इनका विवाह मेवाड़ नरग के मन्त्रि रामलाल की सुपुत्री के साथ होना तय हुआ। निश्चित तिथि पर धूमधाम से दारान खली। जूनिया नगर तक पहुँचते-पहुँचते सूर्यास्त हो गया। रात्रि त्राम के लिए गिबिर पड गया। प्रात काल दयानिधि नाई के साथ घन जगन की ओर टहलने गय। जाकर देखा कि एक वृक्ष के नीचे कोई महात्मा समाधि लगाय बटा है। दयानिधि उसका निवट जाकर बैठ गया और 'राम राम' जपन लग। ध्यान दूटन पर महात्मा के नत्र खुल तो सम्मुख दयानिधि की बैठा दला। उसने सतार की असार बताने हुए भवसागर पार करने के लिए रामनाम की नौका का आश्रय लेने की सिखा दा और फिर ध्यान मग्न हो गया। दयानिधि अपनी

१ रस सूय बसु क्षिति वाम गति स अद विक्रम मान लो ।

कृष्ण माधव वेद तिथि भवनार प्रभु का जान लो ॥

—दूल्हेरामरितामृतम्, पृ० १२

२ वहा, पृ० १२

३ वग गुरु न भटित भावर जन्म पत्र बना दिया ।

ग्रह योग विधि से दयानिधि गुभ नाम निश्चय कर लिया ॥

—वही, पृ० १२

४ हाता महा यापी यती जन्माग पत्र गुरु न कहा ।

वही पृ० १०

निधि पा गये। वे शादी-ब्याह सब कुछ भूल गये। घरवार से ठगवत नाता तोड़कर वे उसी क्षण रामचरण जी की पावन तपोभूमि शाहपुरा की ओर चल पड़े। वहाँ जाकर इन्होंने माघ शुक्ल प्रतिपदा, स० १८३३ को उनसे दीक्षा ली। दीक्षोपरान्त इनका नाम दूल्हेराम पड़ा, क्योंकि 'दूल्हा' वेप म ही य शरणागत हुए थे।

लगभग दस वर्ष तक घूम घूमकर धर्म प्रचार करने के उपरांत ये शाहपुरा लौटे और रामचरण जी का आना से वहीं रहने लग। रामजन के देहावसान के पश्चात्, य वि० स० १८६७ में शाहपुरा गद्दी के पीठाधोस्वर हुए। इन्होंने राजस्थान के राजवंश में काफ़ी सम्मान मिला था। प्रसिद्ध है कि एक बार इन्होंने मेवाड़ के राजा भीमसिंह का आतिथ्य भी स्वीकार किया था। इनका देहान्त अषाढ कृष्ण १०, मंगलवार वि० स० १८८१ को हुआ।<sup>२</sup>

इनकी सम्पूर्ण वाणी-सख्या १४००० श्लोक है। इन्होंने स्वतन्त्र ग्रन्थों का प्रणयन नहीं किया। इनकी वाणी का विवरण इस प्रकार है —

साप्ती	अंग २५	सख्या २६४५
चांद्रायण	अंग ३४	” २६२
सर्वेया	” ३६	” १६४
मूलना	” २६	” ११२
मनहर	” ३६	” १४६
किवत	” ३२	” १६६
कुण्डलिया	” ४८	” ३६२
रेखता	” २२	” ७५
पद	राग ५०	” २११

दूल्हेराम की भाषा राजस्थानी मिश्रित साधारण हिन्दी है। अभिव्यक्ति में सतजनोचित सरलता और भाषा का सहजता ही इनकी वाणी की प्रमुख विशेषता है।

१ भीम सिंह मेवाड़ भूप, विनय कीर्त अतिपाय अतूप।

कर स्वीकृत सग ले सत वृत्त, उदय नगर भयो उदय चन्द्र ॥

—दूल्हेचरितामृतम्, पृ० ३३

२ (घ) सम्बत् इक्यासी हे विख्यात, अषाढ कृष्ण दशमी प्रभात।

तन त्याग भये गुरु निराकार ॥

—वही, पृ० ३६

(व) समत अठारा इक्यासीय अषाढ कृष्ण पचनम्।

भीम दसे तनत्यागि क गये दूल्हेराम निज घाम ॥

—समाधि के गिला लेख से।

नमूने के लिए कुछ छंद नीचे दिये जाते हैं —

सन्तो ऐसा जोगी भाई ।

एकाएकी रमता रहता, वन बस्ती समलाई ॥ १ ॥

सैली सील नाद दिल विष करि मन मुद्रा पहिराई ।

भोग तज्या भगवा तन बस्तर, त्रिगुण छुरी गहाई ॥ १ ॥

पण पातर कर माही लीया, सत क. भिक्षा खाई ।

आत्म तपति ग्यान की छोला तन मन सीतल थाई ॥ २ ॥

अगम अगोचर देव निरजन, सतगुरु सबदा पाई ।

दूल्हेराम दोदार पाक दिल, राम कह्या होइ जाई ॥ ३ ॥<sup>१</sup>

नाम सम तारण तिरण भज मुख पद मिलिय ।

देह काची है दूल्हेराम जाय साच बलिए ॥

रावण हिरण्यकुसु से दुर्जोधन सिसुपाल ।

घोष्या दल बल छाडि गया मन यह नहच हाल ॥

यह मन नहचै जाण न जाणा रहणा नाहि ।

दूल्हेराम ता कारणे राचा राम समाहि ॥<sup>२</sup>

राम रामै सय माहि वदन में करू ताहि ।

द्वितीया गुरु राम रूप नहचै यह जान है ।

भूत भविष्य वतमान सत सबै है प्रमान,

नाम लै तिहारी जन राम ही समान है ॥

तन मन वार फेर वदन कर बेर वर,

जना की कृपा सू मिट जाय ध्यारू खान है ।

राम गुरु सत बिना कहू मुख नाहि छिना,

ताते दूल्हेराम तू तो शीश तेरे भान है ॥<sup>३</sup>

### सूरतराम

सूरतराम रामचरण के शिष्य थे ।<sup>४</sup> इनकी साधना भूमि जयपुर थी । ये अपने समय के बड़े सिद्ध महात्मा थे और इ ह राज्य-सम्मान भी मिला था । जीवन

१ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २०४

२ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २०३ ।

३ श्री पचरत्न स्तोत्र, पृ० ४८ ४६

४ रामचरण गुरु तपत है मुरत राम के सीध ।

के अंतिम दिनों में य शाहपुरा आकर रहने लगे थे। यही फाल्गुन सुदी २ श्रृगुवार स० १८७५ को इनकी परमधाम-यात्रा हुई।<sup>१</sup>

इन पत्तियों के लेखक को इनकी रचनाओं का जो संग्रह मिला है, उसके अनुसार इनकी वाणी-संख्या ११३२ है। इनकी अगवद्ध वाणी का विस्तार साखी, सबैया, क्वित, चन्द्रायण, कुण्डलिया, रत्ना आदि छंदा में हुआ है। सूरतराम वृत्त 'चितावण बोध', 'कवावतीसी' और 'पद बधावणा' नामक तीन ग्रंथ भी प्राप्त हैं। 'चितावण बोध' में ससार को अनित्य बताते हुए जीव को माया-भोह से विरत रह कर राम-नाम जपने की शिक्षा दी गई है। 'कवावतीसी' एक ककहरा ग्रंथ है। 'पद बधावणा' में भक्त के भावाकुल हृदय के व्यञ्जक पद संग्रहित हैं।

इनकी काव्य-शैली के नमून के लिए दा छद नीचे दिये जाते हैं —

ना कोई साथी ना कोई सगी एको जासी आप असगी ।  
ना कोई पिता ना कोई भाई, राम नाम जपित्यो रे भाई ।  
ना कोई नारी ना कोई नाती ना कोई जाति नहीं कोई पाती ।  
ना कोई बंधु सगा ना साई, राम नाम जपि त्योरे भाई ।  
ना कोई माया ना कोई काया ना कोई धाम नहीं कोई जाया ।  
निसिदिन काल करत हे धाई, राम नाम अपित्यारे भाइ ॥<sup>२</sup>

नना करणा भरत है, ब्रिहन क अठजाम ?  
सूरत राम साचो कहै दरसोगे कब राम ॥  
दरसो तो भानद होई दोग्यो तुम दीदार ।  
सूरत राम अब विरहिनी निसिदिन करै पुकार ॥  
निसिदिन रहत पुकारती, पल भरि रहती नाहि ।  
सूरतराम विरहिनि तणी खबरि लीजियो आहि ॥  
तन सू क्यों पडपड भयो रह्यो न लोहू मास ।  
सूरतराम विरहिनि कहै दूदन आवै साम ॥<sup>३</sup>

### भगवानिदास

भगवानिदास जाति के माहेश्वरी वैश्य थे। ये पीपाड के निवासी थे। इनका जन्म आश्विन शुक्ल १४ शनिवार संवत् १८०१ को हुआ था।<sup>४</sup> इनके पिता का नाम

१ समत अठार पंचतर फागुण सुद श्रृगुवार ।

दोज तिथि ब्रह्म पद मिल जन सुरत राम निरधार ॥

—शाहपुरा स्थित समाधि के गिलालेख से ।

२ चितावण बोध, छंद-सर ७-६

३ सूरतराम की वाणी, पृ० स० १७७

४ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० ५१

दामोदर था ।<sup>१</sup> एक बार ये व्यापार के सम्बन्ध में भीलवाड़ा गये थे । वहाँ इनकी भेंट रामचरण जी से हुई । उनसे प्रभावित होकर इन्होंने भीलवाड़ा में ही, स० १८२३ के आश्विन मास में, दीक्षा ले ली । इन्होंने मधुक्वरी वृत्ति से जीवन-यापन करते हुए धर्म-प्रचाराय, रेणु, भरुदे, जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, अजमेर आदि स्थानों का पयटन किया था ।<sup>२</sup> इनके २१ शिष्य थे जिनमें रामदास, अन्नदास (चतुरदास), नानकदास और मुत्ताराम बहुत विद्वान् हुये । श्रावण शुक्ल १, वृहस्पतिवार, वि० स० १९५६ को इन्होंने महाप्रणाल किया ।<sup>३</sup>

इनकी वाणी सख्या लगभग ४००० श्लोक है । य सभी फुटकर रूप में प्राप्त हैं जिनमें साम्प्रदायिक सिद्धांतों के अनुसार आध्यात्मिक जीवन के विविध भ्रमों का निरूपण किया गया है । इनकी रचना के कुछ नमूने नीचे दिये जाते हैं —

संतो ऐसी विधि भव तरिये ।

मन पवना थोई धिर राखो राम ही राम उचरिय ॥ ठेर ॥

अनल बगल का छाडि पसारा ध्यान भखडित धरिये ।

पाइ समझ मिल्या गुरु पूरा इन पवन कू जारिय ॥

सुरति-सबद को भागो जीबो आसन भचल ज करिये ।

सास उसासा अरध-उरध में ऐसी जुगति पकरिये ॥

चहुको चटको पटको भटको इनको धरिये ।

भगवान दास सतगुरु के सरखे काहू हेत न लरिये ॥<sup>४</sup>

भगति करो भगवान की ज्यु होइ कामना नास ।

निस वासुरि सुमरण करो, छाड्यो दुजो आस ॥

सिर उपरि मेरे सदा एक राम सिर दार ।

भगवानदास सुमरण करो, रसना नित उचारि ॥

नित रसना सू सुमरिये सास उसासा बीर ।

भगवानदास तब ही पुलै इभ्रत रूपी सीर ॥

१ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० ५१

२ रेणु भरुदे भेडते जोधारा जैसलमेर ।

अजमेर सिरियारी वही उत्तर बीकानेर ॥

—अवतार चरित्र, प० स० २७

३ अठारा से अरु गुणमठे सावण पडवा जानि ।

सकुल पाप गुरुदिन मिल निज पद जा भगवान ॥

—शाहपुरा स्थित समाधि के शिलालेख से ।

४ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २३६

इअत पीवै अहनिसा सुमरण करि करि सत ।  
 भगवानदास रसना रटे राम नाम निज तत ॥<sup>१</sup>  
 कामना वं काज काई घरत घरम घारा ।  
 तेनी रोजगारी मारा अन्त पछितावेंगे ॥  
 कहा जोग जिग तप का सूर्या अनन्त रीति ।  
 प्रीत प्रेम हीन जाका फल नहि पावेंगे ॥  
 कहा हिन्दू तूरक और जैन सिव पयन के ।  
 एक साथ सुद्ध भाव राम जो को भावेंगे ॥  
 ताते भगवान सब जानिय पावढ रूप ।  
 अनुपम गुरू राम भजन बतावेंग ॥<sup>२</sup>

### रामप्रताप

य भी रामचरण जी के शिष्य थे । इसकी पुष्टि इनके निम्नलिखित दोहे से होती है

सतगुरु मरे सोस पर रामचरण महाराज ।  
 राम प्रताप शरणे सदा रखियो मरी लाज ॥<sup>३</sup>

इनका जन्म भीलवाडा जिले के नारी नामक ग्राम में हुआ था । य प्रारम्भ से ही साधुप्रवृत्ति के थे । इनका दाक्षा भा बाल्यकाल में मिल गयी थी । रामप्रताप रामचरण जी के बारह प्रमुख शिष्या में से थे । इनका साधना भूमि माघापुर थी ।<sup>४</sup> इनका देहावसान हूडाड क्षेत्र-स्थित भारज नामक नगर में, माघ शुक्ल २, शुक्रवार, संवत् १८५७ को हुआ था ।<sup>५</sup>

१ भगवानदास की अणभे वाणी—सुमिरण की अङ्क, छ० १-४

२ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २३५

३ वही, पृ० २१३

४ जिनकी मुख्य स्थान गहर माघोपुर जानो ।

—गिरधरदास कृत महिमा क गद्द

५ नम्र भारज घाट सहज में झूगी त्यागी ।

समत अठारा से जानि उपरै सत्तावनि जोई ।

महासुदि जो दोजि वार गुन जो होई ॥

परम धाम मिल गया गिरधर दास हूँ जग जुवा ।

गुरु रामचरण प्रताप मू रामप्रताप ऐसा हुआ ॥

—वही

दामोदर था ।<sup>१</sup> एक बार ये व्यापार के सम्बन्ध में भीलवाड़ा गये थे । वहाँ इनकी भेंट रामचरण जी से हुई । उनसे प्रभावित होकर इन्होंने भीलवाड़ा में ही, स० १८२३ के आश्विन मास में, दीक्षा ले ली । इन्होंने मधुवरी वृत्ति में जीवन-यापन करते हुए धर्म-प्रचाराय, रेणु, भैरुदे, जोषपुर, जैसलमेर, बीकानेर, अजमेर आदि स्थानों का पयटन किया था ।<sup>२</sup> इनके २१ शिष्य थे जिनमें रामदास, चन्द्रदास (चतुरदास), नानकदास और मुक्ताराम बहुत विख्यात हुए । श्रावण शुक्ल १, वृहस्पतिवार, वि० स० १९५९ को इन्होंने महाप्रयाण किया ।<sup>३</sup>

इनकी वाणी सख्या लगभग ४००० श्लोक है । ये सभी फुटकर रूप में प्राप्त हैं जिनमें साम्प्रदायिक सिद्धांतों के अनुसार आध्यात्मिक जीवन के विविध अंगों का निरूपण किया गया है । इनकी रचना के कुछ नमूने नीचे दिये जाते हैं —

सत्तो ऐसी विधि भव तरिये ।

मन पवना दोई धिर राखी राम ही राम उचरिय ॥ ठेर ॥

अगल बगल का छाडि पसारा ध्यान अलङ्कित धरिये ।

पाइ समझ मिल्या गुरु पूरा इन पचन नू जरिय ॥

सुरति-सवद को सागो जोडो धामन अचल ज करिये ।

सास उसासा अरध-उरध में ऐसी जुगति पकरिय ॥

चहूको चटको पटको भटको इनको धरिय ।

भगवान दास सतगुरु के सरणै काहू हेत न लरिय ॥<sup>४</sup>

भगति करो भगवान की ज्यू होइ कामना नास ।

निख वासुरि सुमरण करो, छाड्यो दूजी भास ॥

धिर उपरि मेरै सदा एक राम धिर दार ।

भगवानदास सुमरण करो, रसना नित्त उचारि ॥

नित्त रसना सू सुमरिये सास उसासा वीर ।

भगवानदास तब ही पुलै इभ्रत रूपी सीर ॥

१ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० ५१

२ रेणु भैरुदे महते जोषाणा जैसलमेर ।

अजमेर सिरियारी यही उत्तर बीकानेर ॥

—भवतार धरिय, प० स० २७

३ अठारा से अठ गुरामठे सावण पढवा जानि ।

शकुल पाप गुरुदिन मिले निज पद जन भगवान ॥

—शाहपुरा स्थित समाधि के गिलावेत से ।

४ रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २३६

इअत पीवे अहनिता सुमरण करि करि सत ।  
 भगवानदास रसना रटे राम नाम निज तत ॥<sup>१</sup>  
 कामना के काज कोई घरत घरम धारा ।  
 तेती रोजगारी सारा अत पछितावेंगे ॥  
 कहा जोग जिग तप का सर्या, अनत रीति ।  
 प्रीत प्रेम हीन जाका फल नहि पावेंगे ॥  
 कहा हिंदू तूरक और जैन सिव पंचन के ।  
 एक साम सुद्ध भाव राम जो को भावेंगे ॥  
 ताते भगवान सब जानिय पाखंड रूप ।  
 अनुपम गुरु राम भजन बतावेंगे ॥<sup>२</sup>

### रामप्रताप

ये भी रामचरण जी के शिष्य थे। इसकी पुष्टि इनके निम्नलिखित दोहे से होती है

सतगुरु मेरे सीस पर रामचरण महाराज ।  
 राम प्रताप शरणे सदा रन्वियो मरी लाज ॥<sup>३</sup>

इनका जन्म भोलवाडा जिले के नारी नामक ग्राम में हुआ था। य प्रारम्भ से ही साधुप्रवृत्ति के थे। इनको दोस्ता भी बाल्यकाल में मिल गयी थी। रामप्रताप रामचरण जी के वारह प्रमुख शिष्या में से थे। इनकी साधना भूमि माधोपुर थी।<sup>४</sup> इनका देहावसान हुडाड क्षेत्र स्थित भारज नामक नगर में, माघ शुक्ल २, शुक्रवार, सम्बत् १८५७ को हुआ था।<sup>५</sup>

१ भगवानदास की अणभै वाणी—सुमिरण को अङ्क, छ० १४

२ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २३५

३ वही, पृ० २१३

४ जिनको मुख्य स्थान शहर माधोपुर जानी।

—गिरधरदाम कृत महिमा के शब्द

५ नम्र भारज आइ सहज में भू गी त्यागो ।

समत अठारा से जानि उपरे सत्तावनि जोइ ।

महामुदि जो दोजि वार गुरु जो होई ॥

परम धाम मिल गया गिरधर दास ह्वै जग जुवा ।

गुरु रामचरण प्रताप सूर रामप्रताप एसा हुआ ॥

—वही



रामप्रताप सुमरण करी रसना राम उचारि ।  
 आसण सजम सुद्ध मन ले सतोप विचारि ॥  
 आसण करि थिर एक रस वसि परणाम सवारि ।  
 रामप्रताप जिह्वा अगारि रामहि राम उचारि ॥  
 सुरति पवन मन जोडि कै रसना करी उचार ।  
 रामप्रताप कहै राम को सोही भजन ततसार ॥  
 सुरति निरति मन पवन की लगी एक भुणकार ।  
 रामप्रताप तव जाणिये सुमरण सुख को सार ॥<sup>१</sup>

### देवादास

देवादास रामचरण जी के द्वादश प्रमुख शिष्यों में से थे। इनका जन्म ढूढाड प्रदेश के बाहातरि परगना स्थित गुढा नामक ग्राम में हुआ था। साम्प्रदायिक साहित्य से इनके सम्बन्ध में अब केवल इतना ही पता चलता है कि ये जगत् से बहुत विरक्त थे और गृहस्थ लोग इनके निकट आने से डरते थे। इन्हें सम्बत् १८२८ में नान प्राप्त हुआ।<sup>२</sup> य किस कुल में उत्पन्न हुए थे? इनके माता पिता का क्या नाम था, इन्होंने दीक्षा कब ली आदि बातों का कोई पता नहीं चलता। या तो इन्होंने जोधपुर में एक रामद्वारे की स्थापना भी की थी जो आज तक बतमान है, किन्तु वस्तुतः इनका कोई अपना निवास स्थान न था। भ्रमण करते हुए जहाँ भी इच्छा होती थी, रात व्यतीत कर लिया करते थे। इनका देहावसान इसी प्रकार भ्रमण करते हुए हुआ। एक बार ये पयटन करते हुए चित्तौडगढ़ के निकट स्थित स्यावो नामक ग्राम में आये। इनके साथ तीन सत और थे। वहीं दस दिन निवास करने के उपरान्त

१ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २१४

२ देस ढूढाड माही परगनी बाहातरि जानू

कस्वा भधि एक गाम नाम गुढो सो मानू

जहा प्रगट भये आइ जन सो देवादासा

लिया ग्यान अरु भगति वैराग धरि बहौत उदासा

जगत डरत रहे दूरि निकटि नहि आवै कोई

ब्रह्म देश की बात सबद कहै महा बताई

समत अठारा पूरि उपरि हूँ अठार्दिस बिलाए

गिरा उचारो तव राम जब हिरदै घाये

रामचरण गुह्यदेव जास का सिर पर राजै

रामत दिसा ज च्यारि मुखी होइ तहा विराजै

— हरीराम कृत महिमा का शब्द बाणी गुटका प० ४४०

(देवादास का रामद्वारा, जोधपुर)

जनम मरण प्रति दुप ये बोही पहि रे ।  
परिहा देवा भगति कीया मै नाहि पव सुप माह रे ॥<sup>१</sup>

रामबल्लभ

रामचरण के बारह प्रमुख शिष्या में रामबल्लभ भी थे। व द्वापे मृत्यु  
ये।<sup>२</sup> इनकी साधना-भूमि बनवपुर नामक जिनो ग्राम में थी।<sup>३</sup> इनका देगान  
भगहन कृष्ण १२, बुकवार, स० १८७० को हुआ।<sup>४</sup> इनका जन्म ४ जनवरी  
इससे अधिक और कुछ मात्र नहीं है।

इहोंने सागी, चद्रायण, सबया, मूनना, शिउ, कुन्ति, देगा  
छत्रों में भगवद्ध बाणा की रचना की है, जिसका विवरण निम्नलिखित है —  
साखी १६३७ भा ४७। चद्रायण १४८ भा १२। कन्या १४४ भा २१।  
मूलना ३५ भा ७। क्विउ ३० भा १३। कुन्ति २१४ भा १४। देगा १६  
भा ८। पद ४८६ रा ७०। कहा जाता है कि इहोंने ११ कबो की जो रचना की  
थी किन्तु अभी तक इनकी कोई भा कृति प्राप्त नहीं हो सकी है। इसी रचना के  
कुछ नमूने नाचे न्दि जात हैं —

सररा की लग्या तुम रागी राम जो।  
बार बार भरण रामो मन मान जो ॥  
रामबल्लभ की भय राम जो मन्दिगो।  
परिहा, हुनरू शीज्या मुपा सरराउरि मन्दिगो।  
जरु नाहि पद संगी पर बिना,  
निमवानर विरहित जारि है।

१ बाणो मुटका, बिनाबली को भाग, प० १०  
२ 'रामबल्लभ जो सत बही'।  
बाण मुटका की पुस्तिका (मन्तराम पुत्र)

३ नगर बनक जानि जहाँ जो भात विरये।  
दरत परस जो करत कवन के भाग्य मये ॥  
— तुभाराम पुत्र मर्दिना के कव

४ समत घाटा स सत्तरि सही दे रूब बावु।  
भायण बन्धिरास वार मुकर ले मन्दि ॥  
दिन सवा पहर जो बहनी हरी मूले शिवाई।  
राम राम बरिबन्ध मरु दे रहे मकाई  
— परमचम मन्दिना के कव  
विदये

तन माहि सबद की त्रिद बहै,  
 बिस कारा पाडै घणी प्रापती है ।  
 पनि उठै बैठे इछै अछै चोर्ये,  
 रग महल की वारी म भावती है ।  
 राम बलभ अरदाम कहै,  
 पीया सेज अलूणी लागती है ॥<sup>१</sup>

राम ही राम रटैं सित्र सकर ध्यान मदा सुष देवल गावै ।  
 आणद मै बिचरें सनकादिक राम ही राम वै भी मुपि गावै ॥  
 नाम की यी परताप देपी हनुमानजी लक फलक कै जावै ।  
 रामबलभ भजन जोरावर वेद पुराण भागीत बतावै ॥<sup>२</sup>

### मुरलीराम

महात्मा मुरली राम का जन्म मेवाड स्थित मेढता नगर में माघ कृष्ण सप्तमी, स० १८०२ को<sup>३</sup> हुआ था। इनकी माता का नाम गगादेवी और पिता का रामनाथ था।<sup>४</sup> ये जाति के गग गोत्राय अग्रवाल थे। इनका प्रारम्भिक नाम मुरलीधर था। य अल्पावस्था में ही विद्याध्ययन समाप्त करके व्यापार करने लग। एक बार ये व्यापार के सम्बन्ध में भीलवाड़ा गये। वहाँ इनकी भेंट रावचरण के गृहस्थ शिष्य नवलराम से हुई। मुरलीधर नवलराम के व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित हुए।<sup>५</sup> रामचरण विरचित 'गमचेताधनी' ग्रन्थ पढ़कर इनके ज्ञान-वक्षु खुल गये। मन में

१ रामवल्लभ को वाणी—मूलना विरह को अग, छ० १

२ रामवल्लभ की वाणी—सवैया—सुमिरण को अग, छ० ४

३ ताक धर अवतार भो मुरलीधर शुभ बाल को ।  
 माघ कृष्ण सातम तिथी, सम्बत् भठारा दो शाल को ॥

—मुरलीराम का जीवन चरित्र, पृ० १

४ रामनाथ तहाँ बने परम दानी गुणधानी ।  
 विट अग्रवाल धनवान गगगीत्री सु कहीजे ।  
 पतनी गगादेवी पतिव्रत धम गहीजे ॥  
 ताके धर अवतार भो मुरलीधर शुभ बाल को ।

—वही, पृ० १

५ व्यापार निमित्त मेवाड में भीलोडे जावत भये ।  
 सतसग कर नवलेस के वे प्रेमी उनके बन गये ॥

—वही, पृ० २

वैराग्योदय हो गया और इन्होंने धन कुट्टु बादि नश्वर पदार्थों को त्याग दिया ।<sup>१</sup>

नवलराम ने मुरलीराम को गृहस्थाश्रम में रह कर भगवद्भजन करने की अनुमति दी<sup>२</sup>, किन्तु इन्हें यह विचार अच्छा न लगा । य भीक्षवाड़ा छोड़ कर रूपाहली चले गये<sup>३</sup> । वहाँ से शाहपुरा जाकर वैशाख शुक्ल ५, वि० सं० १८५५ को रामचरणों से दीक्षा ले ली<sup>४</sup> । दीक्षापरांत इनका नाम मुरलीराम पड़ा । मुरलीराम का हृदय-कमल सद्गुरु की मात्र किरण के स्पर्श मात्र से विकसित हो उठा । साधना का पराग दसों दिशाओं में उड़ने लगा । कुछ समय की एकांत साधना के उपरांत ये धूम धूम कर घम प्रचार करने लगे । इसी स्थिति में इन्होंने बलाढ्य, भरतपुर, बाडमेर, पाली, जोधपुर आदि स्थानों का भ्रमण किया । इनका देहावसान भाद्रपद कृष्ण १, संवत् १८५७ को हुआ<sup>५</sup> ।

कहते हैं कि जब इनका अग्नि संस्कार किया गया तब शत्रु तो जल कर भस्म हो गया किन्तु काला कम्बल जिससे ये ढक हुए थे, नहीं जला । वह आज भी रायपुर के रामद्वारे में सुरभित है । इनकी समाधि पर प्रतिवर्ष फाल्गुन मास में पन्द्रह दिन मेला लगता है, जिसमें सत महात्माओं और श्रद्धालु गृहस्थों की अपार भीड़ होती है ।

१ गम चित्तवणो ग्रथ पठ यो अति भय उपजायो ।

यह ससार असार सार किमो समुक्त समायो ॥

मम माही वैराग बढ यो अति तिब्र करारो ।

धन जन नश्वर जानि त्यागि दिया सकल पसारो ॥

—मुरलीराम का जीवन चरित्र, पृ० २

२ भेष लेन की चाह करो मति उतत भाई ।

गृहवश भक्ति करो, मने भो या फरमाई ॥

—वही, पृ० ३

३ यह न रुची मन माहि, त्यागि भीलाड़ा दीनो ।

ग्राम स्पाहेलो जाय भेष परिवतन की हो ॥

—वही, पृ० ४

४ समत अठारा पचोस बशाख सुत्तो पचमी भीनो ।

करा दया गुरुदेव कमल कर सिर पर दीनो ॥

—वही, पृ० ५

५ समत अठारा सौ सत्तावन भादवा बदा एकम जानो ।

नश्वर तन को त्याग ब्रह्म में कीन पयानो ॥

—वही, पृ० १०

मुरलीराम की सम्पूर्ण वाणी-संख्या १८,००० है, जिसमें निम्नलिखित नव ग्रन्थ भी सम्मिलित है —

- |                  |                    |
|------------------|--------------------|
| १ चैतावनी सारबोध | ५ क्विदत्त सार बोध |
| २ अमृत सार बोध   | ६ गृहस्थ सार बोध   |
| ३ नावयोग         | ७ दयाबोध           |
| ४ वैष्णव सार बोध | ८ गुरुमहिमा-स्तुति |

#### ९ साध पारख्या

इनकी वाणी का मुख्य प्रतिपाद्य विषय गुरु-माहात्म्य, रामनाम-माहात्म्य, वैष्णवधर्म, गृहस्थधर्म, दयाधर्म एवं निगुण ब्रह्म का स्वरूप निरूपण है। इनकी रचना के दो नमूने नीचे दिये जाते हैं —

अधर पियाला नाव का कोई पीवै निज दास ।  
 सुमरै रमता राम कू निस दिन सास उसास ॥  
 सास उसासी नाव का प्याला पिया अघास ।  
 मुरली मन सीतल भया मिटी सकल तन तास ॥  
 राम रसायन पीजिये रसना होठ सुमेल ।  
 मुरली सास उसास सू मुरति निरति परिवेल ॥  
 उभे होठ परक्यो करे रसना सास स जारि ।  
 मुरली सुमिरै राम कू ज्या भोका अति भोर ॥<sup>१</sup>

सता राम दया बहु कीनी ।

हम अपराधी अधम असाधी साते एक न चीन्ही ॥ टेक ॥  
 मिनखा जनम कलू अवतारा उत्तम कुल मे जामा ।  
 सा हम धन कू जाण्यो नाही हरि सू भया हरामा ॥  
 नीचा कुल का करम कमाया जैसा सुपवा नाहि ।  
 विषया भोग किया बहुतेरा कबहूँ नाहि अघाहि ॥  
 खर कूकर भी हम सू आछा रति सिर विषय विचारे ।  
 हम अपराध करत नहिं दरप्या नित प्रति भाण्यो मारे ॥  
 धनि वे राम धनि सत्सगति जिन सतगुर निया बताई ।  
 लोहा कू पारस सु भेट्या कुल यह मेल मिलाई ॥  
 सतगुर दस्त धर्या मिर ऊपर रामनाम मुग्ध भास्या ।  
 जगत जान तज कर बरानी चरण कमल तल रास्या ॥

१ मुरलीराम की वाणी—सुमिरण की अथ, पान्नी ५३ ५६

अब तो घोख्या तिल भर नाही दया भई भरपूरी ।  
 मुरलीराम राम गुरु परस्या दे जगतर दिमी घूरी ॥<sup>१</sup>

### पोहकरदास

पोहकरदास रामचरण के शिष्य थे। इनका जन्म दिल्ली नगर में दिल्ली दरवाजा के निकट एक स्वणकार परिवार में हुआ था। इनकी साधना भूमि दिल्ली ही थी। इन्होंने कुछ दिनों तक शाहपुरा में रहकर गुरु-सवा की घी, कित्त कालांतर में दिल्ली आकर रहने लगे। कहा जाता है कि एक बार भिक्षा में वहाँ से पापड़ आया था। भोजन के समय किसी कारण से उन्हें पापड़ नहीं मिला। वे अपने को सम्हाल न सके और भाग बैठे। अतः रामचरण जो न इनपर अप्रसन्न होकर इन्हें निष्काशित कर दिया और लौट कर फिर मुख न दिखलाने की आज्ञा देते हुए कहा कि जो जिह्वा को अनुशासित नहीं कर सकता वह इन्द्रियों की कसे नियंत्रित कर सकेगा? गुरु आना का शिरोधार्य कर आप दिल्ली चल आये। यही चौबुज की एक हूँती मस्जिद में साधना करते हुए उन्होंने जीवन व्यतीत किया। इनका देहावसान श्रावण शुक्ल १४, सं० १८७२ को हुआ।<sup>२</sup> इसी तिथि को पहाड़पुर रामद्वार में उनकी वर्षा मनायी जाता है।

पोहकरदास ने अपनी आत्मानुभूतियों को साखी, सबैया, कुण्डलिया आदि छन्दों में व्यक्त किया है जिनका विवरण इस प्रकार है —

स्तुति ५, स्तुति की साखी १, साखी १७३, सबैया २१३, कुण्डलिया २६ और पद २०१।

पोहकरदास का वाणी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनके प्रत्येक छन्द में रामचरण का नाम आया है। इससे उनकी गुरुनिष्ठा का पता चलता है। आशा राग में लिखा हुआ इनका एक बहुत बड़ा पद प्राप्त हुआ है जिसमें आदि भक्त शकर से लेकर रामानुजाय और तदनंतर रामचरण तक के अनेक सत्तों की नामावली दी हुई है। इस पद को 'भक्तमाल' की पद्धति पर लिखा हुआ एक छोटा सा ग्रन्थ माना जा सकता है।

ये फारसी के अच्छे जानकार थे। अतः इनकी वाणी में फारसी शब्दों की बहुलता है। नमूने के लिये कुछ छन्द नीचे दिये जाते हैं —

रहम रख दिल, रहम रख दिल, रहम रख दिल यार रे ।

कहर मत कर, कहर मत कर कहर है बशकार रे ॥ टेक ॥

१ श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० १४७

२ समाधि के शिला लेख से।

होवैगा इनसाफ तेरा साईं क दरबार रे ।  
 रहम सँ रब दाद देवै बहर पै काहार रे ॥१॥  
 रब की बहर खैर कहा होवै सजावार रे ।  
 तुरबत मै तकलीफ पावै क्यामत तक आजार रे ॥२॥  
 वाद दोजक बीच मै तू होवै गिरफ्तार रे ।  
 पोछे त। पहतावैगा बहा पहल हो हँसियार रे ॥३॥  
 मालिक का कर पीछे बन्द तोबा कर हर वार रे ।  
 तरक दे बंद फैलिया कर बंदगी इत्फार रे ॥४॥  
 रामचरण कहै मुरसद रहम है रब ध्यार रे ।  
 पहीकर फजले हक होवै रीफ द दीदार रे ॥५॥<sup>१</sup>

नमो नमो राम राइ सब के करतारा ।  
 आप तो अघाय देव स्वय उजियारा ॥ टेक ॥  
 पाच तत तीन गुन तुमरे अघारा ।  
 चौदा तीन सप्त दीप नौ खड दिमतारा ॥१॥  
 अगम अगम नेति नेति निगम कहै पुकारा ।  
 सकर सनकादिक सस रटैत लैन पारा ॥२॥  
 पतित पावन दीनबधु नाम हैतिहारा ।  
 जुग जुग जन साहि करी सतन का प्यारा ॥३॥  
 काहे राम देर करा पहीकर की वारा ।  
 लीज राम चरण सरन बक्स गुहा भूहारा ॥४॥<sup>२</sup>

रता रहौ राम सुमरन में, नफा ये हो नरतन में ।  
 हवाले ग्यान गुलसन में, भूले मत जग भरम बन में ॥ टेरे ॥  
 न था जग आद के माही, न रह्या अन्त क ताई ।  
 अधिर मध बीच थिर नाही, य भूठा काल तीनन में ॥१॥  
 अनानी राम अवनारी, आद अह अत सुपरासी ।  
 वही मध बीच परकामी, उसी का ध्यान घरमन में ॥२॥  
 ध्यावौ नित राम निरकारा, अनत आकार विसतारा ।  
 अनित स मति रच प्यारे, य दामिन ज्यू चपल धन में ॥३॥

१ पोहकरदास की बाणा ( गुटका ), प० स० १२०-१२१

१ पोहकरदास की बाणा ( गुटका ), प० स० १००-१०१

कहै मुरछद रामचरना, भरम डूजे को परहरना ।  
पहावर आ राम की सरना अमर होई नाम रैजमन में ॥४॥<sup>१</sup>

### रामनिवास और इच्छाराम

रामनिवास और इच्छाराम दोनों सग भाई और सहजात थे । व भीलवाडा के निकटस्थ रीछडा नामक ग्राम के निवासी थे । दोनों भाई प्रारभ से ही बड़े आस्तिक थे । इनके विरक्त होने की एक मनोरञ्जक घटना है । प्रसिद्ध है कि एक बार रामचरण जी धम प्रचार करते हुए रीछडा गये । गाव के लोगो पर इनके व्यक्तित्व और सदुपदेशों का बहुत प्रभाव पडा । जब व चलने लगे तो उनके साथ रामनिवास और इच्छाराम भी चल पडे । गाव वाला के बहुत कहने पर भी वे न माने । उस गाव के अठारह व्यक्ति जो इन दोना भाइयो को बारी-बारी से मनाने आये थे, वे भी इन्हीं के रग में रग गये ।

बभ्रु-द्वय ने रामचरण से दीक्षा ली और भ्रमण करते हुए गुजरात की ओर चले गये । वहाँ ईडर नामक स्थान पर पहाड की एक कदरा में साधनापूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे । कहा जाता है कि एक बार छोटे भाई इच्छाराम भिन्ना लेने गये थे । इधर राम निवास ने स्वेच्छया महाप्रयाण कर दिया । इच्छाराम लौट कर आये तो देखा कि बड़े भाई चिरनिद्रा में पाव पसारे सो रहे हैं । भ्रात विद्योग से याकुल होकर इहोने भी उसी समय प्राण त्याग लिया । इस प्रकार दोनों साथ ही इस ससार में आये और साथ ही आश्विन शुक्ल ६, गुजवार, वि० स० १८४६ को परलोक वासी हुए<sup>२</sup> ।

इच्छाराम की बाणी का अभी तक पता नहीं चला है । इनकी केवल एक साखी प्राप्त है, जो निम्नलिखित है—

राम कहत सनकादिका सतगुरु सत महत ।  
गुरु रामचरण परताप ते इच्छाराम कहत<sup>३</sup> ॥

रामनिवास की बाणी साखी, कु डलिया और सबैया आदि छदों में प्राप्त होती है । इनकी भाषा में बोलचाल के राजस्थानी शब्दों की बहुलता है । नमूने के लिए दो छद नीचे दिये जाते हैं —

१ पहेकर दाम की बाणी (मुटका), प० स० ११४

२ अठारा से गुणाचाम शुक्ल, आसोज सुन छठ ।

धाम पधारे दोउ भ्रात, इक मग गत्रन मट ॥

— बतमान पीठाचाय श्री रामकिशोर जी के सौजन्य से ।

३ बतमान पीठाचाय श्रीरामकिशोर जी के सग्रह स उधृत

चार मोल से मोल है भीलाडो ही जान ।  
 धय देस व ठाम है जह रामचरण परमाण ॥  
 रामचन्द्र ज्या रामचरण हैं ईश्वर अवतार ।  
 वा तारी अयोधिया या तारी मवाड ॥  
 सतगुरु मेरा है सही रामचरण जी आप ।  
 दरसण करता दु ख मिट और मिटावै पाप ॥  
 दोष नही करतार कू गुहा घणा मो माहि ।  
 पण मेरे विश्वास है बूडण देवे नाहि<sup>१</sup> ॥  
 अनत कोटि ने आदि दे गारख य ही भाप ।  
 गुरु बिन तारक को नही वेद माहि दे सापि ॥  
 व<sup>२</sup> माहि दे सापि तास सम तुरय न कोई ।  
 ज्या कै सरणै जोव बहुत ही परगट होई ॥  
 रामनाम को जाप दे सोही गुरु तू आव ।  
 अनत कोटिने आदि दे गोरख य ही भाप<sup>३</sup> ॥

### जगन्नाथ

जगन्नाथ आचार्य रामचरण जी के शिष्य थे<sup>४</sup> । ये माहेस्वरी (ढोड्डोसोना गोत्रीय वश्य) जाति मे उत्प न हुय थे<sup>५</sup> । इनके ज म भरण आदि के सम्बन्ध मे साम्प्रदायिक साहित्य सवधा मौन है, फिर भी विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि य सम्बत् १८८१ मे अवश्य वतमान थे, क्याकि चन्द्रदास (चतुरदास) की महिमा का बणन करते हुए इन्होंने लिखा है —

रामचरण महाराज की चौथी पीढी आजि ।  
 वही बाल बटि ह्वाल सू चन्द्रदास महाराजि<sup>५</sup> ॥

१ श्री रामकिशोर जो महाराज के सग्रह से उद्धृत

२ वही

३ सतगुरु पाया रामचरण ताने उपज्या ग्यान ।

—जयारथ बोध

४ (अ) जाति हमारी महेसरी ढोड्डोसोनी गोत ।

—वही

(ब) जगन्नाथ मो नाम जातज ढोड्ड मसरी ।

—गुरु लीलाविलास, छ० ३२०

५ चन्द्रदास की महिमा के सबद, छ० २

उपयुक्त पक्षियों से स्पष्ट परिलम्बित होता है कि इनकी रचना चतुरदास के पीठाचार्य होने के बाद हुई है। चतुरदास ब्रह्माराम की मृत्यु के अनन्तर सम्बत् १८८१ म गद्दी पर बैठे थे। अतः यह स्वतः प्रमाणित हो जाता है कि जगन्नाथ का देहावसान स० १८८१ के बाद ही कभी हुआ।

इन्होंने 'जधारषबोध', 'फूल डोल समाधि', ब्रह्म समाधि लीनयोग', 'चौरासी बोल' और 'गुरु लीला विलास—य पाच ग्रंथ लिखे। 'जधारष बोध' निगुणपद्यो सिद्धांतों से प्रभावित रचना है। 'फूल डोल समाधि' में फूल डोल महोत्सव की महिमा गायी गयी है। 'ब्रह्म समाधि लीन योग' और 'गुरु लीला विलास' में रामचरण जी की जावन लीला बर्णित है। 'चौरासी बोल' में चौरामी गुण-अशुभ का वर्णन किया गया है। उदाहरण स्वरूप इनके कुछ छंद नीचे दिये जाते हैं —

नवकारा नीरस वचन नटतटि उपजे दुख ।

या चौरासी जाहिगा नटै ता वरतै सुख ॥

मिनस जम को पाइवे टालो इनना दोष ।

जगन्नाथ नर नारि को सुपरै लोक प्रलोक<sup>१</sup> ॥

गुरु दरमण परमात करै परकमा गुरु की ।

सोत चरणामत पाई सिलक माथ श्रीवर की ॥

भजै राम नाइ अक सक बिन हरिजम गावै ।

जल गाढै पट छाणु आन पूज न पुजावै ॥

हरष भोग सम भाई भरम पस्या नहि मानै ।

भांग तमाखु अमल पान जरदो नहि चापै ॥

ऊची मगत कर नीच को मग न रापै ।

भूठ कपट पापट पार को बुरो न ताक ॥

बचा ममा की गाल मुगो नहा मुगु नू भापै ।

रामसनेही चाल सुघ ए लछ जा बतासै ॥

जगन्नाथ गाटा गहै जाक सनगुर भीम<sup>२</sup> ।

### नवल राम

नवलराम रामचरण जी के लीन प्रमुन गृहस्थ गिप्ता म स ३<sup>३</sup> । ये माहेस्वरा

१ चौरासी बोध, छ० १०

२ गुरु लीला विलास, छ० ३००

३ स्वामी रामचरण के गहण गिष अन्क ।

दरनरण बुमता नवल मुटिया तान विसप ॥

—परचो—छ० ५१

वैश्य कुल में उत्पन्न हुए थे। इनका निवास-स्थान भीलवाड़ा था। इन्होंने सपरिवार रामसनेही सम्प्रदाय स्वीकार कर लिया था। इनके दीक्षा-काल के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। इतना अवश्य है कि इन्होंने सम्बत् १८१७ के बाद ही दीक्षा ली थी। इसका पुष्टि इनके समकालीन सत जगन्नाथ की इन पत्नियों से भी होती है —

अठाराने सतरा की साल ऐकादसी विगत ह्वाल ।

देवकरण तथा दरमन पायो मुणि जन वचन मोद मन आयो ।

नवलराम कुमला पुनि मिलिया सुणत ग्यान हिरदै पट खुलिया<sup>१</sup> ।

इनका अधिवास समय शाहपुरा में रह कर स्वामी रामचरण की सेवा में होता। रामचरण जी की वाणी को सकलित करने पाठ्या के सम्मुख लान का बहुत कुछ श्रेय आप ही को है। इनका दहात चैत्र वदी ५, सोमवार, वि० सं० १८४२ को भीलवाड़ा में हुआ था<sup>२</sup>।

नवलराम जी का सम्पूर्ण वाणी 'नवलसागर' नामक ग्रन्थ में सकलित है। इनके अतिरिक्त इनका 'श्रवणसार' नामक एक ग्रन्थ भी बहुत प्रसिद्ध है। 'श्रवणसार' एक सग्रह ग्रन्थ है जो सत साहित्य के अनुसंधितसुआ के लिए बड़ा ही महत्वपूर्ण है। नाचे इनकी रचना के कुछ नमून दिये जाते हैं —

राम र राम रमलीन नरपूर है दूर क्या जाय नर खाइ गाता ।  
 बुझि गुरुदव कू मुझि ताकू पढै, सुझि विन सकल जग फिर राता ॥  
 कोइ बटुकाम नरकामना हत जू चेतन चित्त हरि नाम ल्यावै ।  
 आन हा आन बहु मान सू पूजिक आप नर मान बहु दुख पावै ॥  
 देस परदेग अर सुरग पानाल में भरम अधीन भव दुग माही ।  
 नवल निवाण पद राम का नाम है सुमरि अठ जाय य दूरनाही ॥<sup>३</sup>

आन धरम का आस क्वहुँ नहि कोजिय ।

रामनाम निरवाण प्रीति कर लाजिय ॥

१ जगन्नाथ बोध (जगन्नाथ)

२ अठारा से बयाल समत चैता पाचै ।

सोमवार वदि पाप दिवग मध्याह्न सुरार्चै ॥

नगर भीलेश माहि समागम दहणी श्रेणी ।

जगन्नाथ कर जाडि कथ्यो जमा का तमा ॥

आत उठाइ ता दिन नया सब क उपजी प्राति ।

नवल सात सजि राम भति गया जमाग जाति ॥

—जगन्नाथ वृत्त महिमा के गीत

३ श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० २५५

सुखदानी सन्नय सदा ही आप हे ।  
परिहा, नवल राम दुख दान भ्रान की जाप है ।  
मेरा सिर पर राम निरजण एक है ।  
दूजा भाद्रु गाहि हमारो टेक है ।  
टेक बिना नहि भलो जीव को होय रे ।  
परिहा नवलराम सत राम कह सब कोय रे ॥<sup>१</sup>

स्वाति सदा समरूप प्रभु तुम हो परपूरण काम सदाई ।  
काहूँ सो बर विचारत नाही बडे ही कृपाल नही कपटाई ॥  
जो तुम कू तजि और भजै ताहि को मूरख जानीए लाई ।  
स्वान की पूछ समाइ के माइर कसे तिरै जय होत हसाई ॥<sup>२</sup>

### हरिदास

ये शाहपुरा आचाय-पीठ के पाचवें पाठाधीश्वर थे । इनका जन्म मेवाड के आगूचो नामक स्थान पर वि० स० १८६० म हुआ था ।<sup>३</sup> स० १८७२ मे बारह बष की अल्पावस्था म हा इहोने दीक्षा ला थी ।<sup>४</sup> चौथे पीठाधीश्वर नारायणदास के परमधाम पधारने के पश्चात् वि० म० १९०५ मे, इहें आचाय पद प्राप्त हुआ । इहोने चैत गुक्क गष्टमी, वि० म० १९२१ को अगमदेश के लिये प्रस्थान किया ।<sup>५</sup>

हरिदास की बहुत कम कृतिया प्रकाश म आई है । इनकी वाणी की भाषा साधारण राजस्थानी है । बीच बीच म संस्कृत शब्दा का भी प्रचुर मामा मे प्रयोग हुआ है । इनकी वाणी पर अद्वैत वेदांत की गहरी छाप है । इनका पूरा साहित्य अभी प्राप्त नही हुआ है ।

हरिदास जी की रचना के कुछ नमूने नीचे दिये जाने हैं —

नमो अनंत अनंत कृत वेदांत बखान ।  
अस्ति भक्ति प्रिय विषेपन करत प्रमान ।

१ श्री रामसनेही सम्प्रदाय पृ० २५४ ५५ (नवल सागर)

२ अक्षय सार—चांगेपवा विधान, छ० ७८

३ श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० ४४

४ वही, पृ० ४४

५ उगल्लोस इकासे चैत सु गतिधि अष्टमी गुरवारा ।

परमधाम प्राप्ति भये थी हरिदास निराकार ॥

—ममाधि के शिवात्म से

यण द्वादश वाक्य था कि महावाक्य रहावे ।  
 करत विषेय निषेध वेदसो भेद न पावै ।  
 जेय घ्येय प्रमेह नही नहि प्रमाण प्रभात ।  
 नमो नमस्ते देव तुम वह हरिदास सुनाय ॥<sup>१</sup>  
 जाग जाग जन कहते हैं लाग लाग हरिनाम ।  
 त्याग त्याग ससार बू, भाग मिल्या निजघाम ॥  
 भाग मिल्या निजघाम काम जासू सिध होई ।  
 मान पिना परिवार लार लागे नहि कोई ॥  
 बहै दाम हरिदाम जन फिर फिर घारे चाम ।  
 जाग जाग जन कहत है, लाग लाग हरिनाम ॥<sup>२</sup>  
 झूठा जग झूठा हिया, फिर्या झूठा दयाम ।  
 झूटा धन खाली गया, झूटा नही हरिनाम ॥  
 झूटा नही हरिनाम वाम दामा सघ घूटा ।  
 पकड ले गया दून पून घर का कर कूटा ॥  
 तने सार की चाच कर खग ताड तन चाम ।  
 हरि गुरु विन साहिक का है हरिदास जताम ॥<sup>३</sup>

### हिम्मतराम

साहपुरा पाट गादी के सातवें पीठाधा वर हिम्मतराम का जन्म आश्विन वृष्ण  
 १४ सम्बत् १८८३ की धानली ( साकर ) नामक स्थान पर हुआ था ।<sup>१</sup> य जाति के  
 माह चारण थे । इन्होंने सम्बत् १९०७ म श्री हरिदास से दाक्षा ली, और उनके परम  
 धाम पधारने के पश्चात् वि० स० १९२१ म आचार्य पद को सुशोभित किया । य  
 सस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे । इनका गणना अपन समय के प्रकाण्ड पंडितों में होती थी ।  
 ये चन्द्र शुक्ल नवमी, शनिवार, स० १९४७ को परलोकवासी हुए ।<sup>२</sup>

१ श्री रामस्नही सम्प्रदाय, पृ० २०६

२ वहा, पृ० २०६

३ वही, पृ० २१०

४ वही, पृ० ४४

५ श्री गुरु हिम्मत राम महाराज सिरताजा ।

वपु त्यागे निज राम धाम आचार्यपदराजा ॥

सम्बत् सत जगणीश उपरि सैतालिस जानी ।

चैत्र शुक्ल नवमी सनी बामर कीह पयानो ॥

—समाधि के शिला लेख मे

इहोनि दा प्रथा का प्रणयन किया—‘प्रदोत्तर प्रकाश’ और ‘ज्ञान बत्तीसी’ । दोना प्रथा का प्रतिपाद्य विषय, ब्रह्म, माया, शोक, जगत तथा निगुरु भक्ति है । ‘प्रदोत्तर प्रकाश’ का रचना व्याकर, अजमेर और सीतामऊ के कतिपय भाय समाजिया के दासनिक प्रश्ना के उत्तर रूप म हुई है । ‘ज्ञान बत्तीसी’ एक स्वतंत्र आत्मानुभूति व्यजव ग्रंथ है ।

हिम्मतराम अछे विद्वान् थे । अत उनका वाणी पाठित्व से भरो है । इनके साहित्य म भावा की गम्भारता तथा ममृत निष्ठ परिमाजित भाषा के दान होने हैं । भाषा भाव और अभिव्यक्ति सभा दृष्टिया से हिम्मतराम की वाणी सन्त साहित्य मे उन्वामन की अधिगारिणी है । उदाहरणाय कुछ छन्द नीचे दिय जाने हैं —

विषय वाच्य तारवाचक, अनव पद ।  
 मत्प न समझ बिना मत्पता न लेख है ॥  
 रामपद वाच्य तार वाचक प्रभूत दान ।  
 आधार की सत्ता पाद साय म प्रवेग है ॥  
 तेगी उपचार जाव उर म विचार करे ।  
 धार गुद भाव तान मिटत कलग है ॥  
 मालवेग गान्वा म प्रमाण एना कह्यो वद ।  
 वेद साइ राम मत्र जावा जपत महदा है ॥<sup>१</sup>  
 पूरव महान ऋषि भय ते वस्वान गय ।  
 पार नही पायो ताने और वीन पावगो ॥  
 जैसे महामागर ते वूद एकपान किये ।  
 य तो ही पिपोलिना के उद्र म समावेपो ॥  
 प्रोढ़ अपयो गो ज्वाल माला त फुलिंग एक ।  
 साय तेज पुज का प्रभात कम आवगो ॥  
 हीमत बखान कियो जान की अलप अग ।  
 सकल कहयो न जाय तावू वेद गावैगो ॥<sup>२</sup>

कटो कम्मपासी मार्यो मोह सो मवासी

भई ऋद्धि सिद्धि दामी शुद्धि ब्रह्म सावकासी है ।

आनद उपासी अज्ञ निद्रा को बिनासी,

धीर धीरज धरासी जाकी सातिता सुधासी है ।

१ ज्ञान बत्तीसी, छ० स० २४

२ ज्ञान बत्तीसी, छ० स० २६

असत प्रपच जासो, धिरना रहासो तामू,  
 भयो हैं उदासो, पायो मुख भविनासो है ।  
 दै सिख कृपासो, दिव्य ज्योति की उजासो,  
 व्योम सविता प्रभासो, जाकी वीरति प्रकामो है ।<sup>१</sup>

### मुक्तराम

मुक्तराम भगवानदास के शिष्य और रामचरण क प्रशिष्य थे । ये भरु दे के निवासी थे ।<sup>२</sup> तेरह वष की अल्पावस्था म इन्होंने दीक्षा ले ली थी । इसकी और सकेत करते हुए ये एक स्थान पर लिखते हैं —

बाल अवस्था बरस जु तेरह ।

ता तिन भाग खुल्या है मरा ॥<sup>३</sup>

दीक्षा लेने के उपरांत य काफी समय तक भ्रमण करते रहे । बाद म बोकानेर का इन्होंने स्थायी रूप से अपनी साधना भूमि बनायी, और जीवन पयंत वहां रह । बोकानेर म इहे बडा सम्मान मिला । तत्कालीन बोकानेर नरेश सूरतमि<sup>४</sup> इनकी साधना स बहुत प्रभावित थे, और समय समय पर इनका दर्शन करने रहते थे । इनका देहावसान फाल्गुन, सुदी १४ शनिवार, सम्वत् १८७२ को हुआ<sup>५</sup> ।

इनकी सम्पूर्ण वाणी सख्या १४१८१ श्लोक है । इहाने बीस ग्रंथा का प्रणयन किया जिनकी सूचा निम्नलिखित है —

१ गुरु स्तुति	११ तिथिनाम्
२ नाम प्रताप	१२ विचार बोध
३ चक्का बत्तीसो	१३ ग्यान प्रकाश
४ वैराग बपीचो	१४ मन चरित
५ भक्ति महिमा	१५ आनन्द निवान
६ ग्रंथ चिन्तावलि	१६ भक्त विरदावली
७ ग्रंथ मार असार	१७ गुरु समाधि लीन जोग
८ गुरु उपकार	१८ कया सवाद
९ गुरु मिलाप	१९ कवित्त
१० ग्यान धम्म्यान पारख्या	२० आरती

१ ज्ञान बत्तीसो, छ० ८

२ श्री रामसनेही सम्प्रदाय, पृ० ५४

३ वही, पृ० ५४ पर उधत

४ समत अठारै सो सततरा मुद फागण शनिवार ।

तिथि चौदम मिध्यान मे सत भये निरकार ॥

इनकी रचना साखी सवया चन्द्रायण, भूलना, कवित्त, कुडलिया और पद भादि छदो म हुई है ।

मुक्त राम जी की बारी, भाषा, भाव और अभिव्यक्ति सभी दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है । इनकी अपरोभानुभूति, सशक्त भाषा और सहज अभिव्यक्ति का सहारा पाकर साकार हो उठी है ।

नमून के लिए कुछ छंद नीचे दिये जाते हैं —

नूर लहँयो परमात्म को, जब आत्म ब्रह्म सबै दरसाया ।  
सूक्ष्म स्थूल सबै सचराचर, व्यापक नूर निरजण राया ॥  
ज्यू रवि ज्योत प्रकाशक कु भ म, है घट माहि जु पूरि रहाया ।  
दास मुक्त कहै इमटर के ब्रह्म का रूप अरूप समाया ॥<sup>१</sup>

चाद की चाह चकोर कर, पुनि दीपक ज्योति चहै जुपत ॥  
चात्रग मोर चहै धनघोर कू, स्वानि का बूद कु सोप चहै जु उतगा ॥  
प्रीतम होय ज्यो परदेस पधारत नारी को सुख बढै होय अगा ॥  
मुक्त हा राम विलाग कर नित आप बिना नहि लागत रगा ॥<sup>२</sup>

भरम माहि सतार भूलि गया राम कू ।  
पूजे पत्वर देव सब जड धाम कू ।  
सरजाबत कू ताडि चढाव जडे कू ।  
परिहा विन सतगुरु के ग्यान अक्ल नहि मूड कू ॥  
पूजे अघी लोष दवता गारका ।  
कह धागो घात वार और जडदार का ।  
ताम नही जीव पीव कहा पाव ही ।  
परिहा मुक्ता भजन बिना नर नारिवाद ही जावही ॥<sup>३</sup>

### सग्रामदास

इनके जीवन वृत्त का कुछ पता नहीं चलता । अ तस्साक्ष्य के आधार पर इतना ही पता हो सका है, कि ये मुरलीराम के शिष्य थे ।<sup>४</sup> मुरलीराम रामचरण जी के शिष्यो मे से थे । सग्रामदास राजस्थान के सत महारामाग्रो म अपने कुडलियों के

१ था रामसनेहा सम्प्रदाय, पृ० २६७

२ वही, पृ० २६७

३ वही, पृ० २६६

४ मिनस जमारो ने भक्त गुरु पाया मुरलस ॥

लिये बहुत प्रसिद्ध है। इनकी कुडलिया का एक सग्रह के० आ० महता, नागौरी द्वार जोधपुर से प्रकाशित हो चुका है।

इनकी कुडलिया में राजस्थानी लोक भाषा का निम्बरा हुआ रूप देखा जा सकता है। यत्र-तत्र कहावता तथा मुहावरों का प्रयोग तां सोन में सुगंध का काय करत हैं। सप्रामदास की भाषा का यह रूप साहित्यिक एवं आकषक होत हुय भी अय प्रात वालों के लिए महजप्राह्य नहीं है। नमून के लिए कुछ कुडलिया नीचे दी जाती हैं

कहै दास सगराम गरीबी में गुण भारी ।  
 राम गरीब निवाज जहान जानत है सारी ॥  
 जाणे सारी जहान पण राखी कियसू जाय ।  
 वेरणिया आही फिर मान बडाई खाय ॥  
 मान बडाई खाय करे कुण यान यारी ।  
 कहै दाम सगराम गरीबी में गुण भारी ॥<sup>१</sup>

कागद सारो वाचिया आग पीछ जाय ।  
 मिरै आक दोठा नही सगराम दास कहै दाय ॥  
 सगराम दाम कहै दोय आखिया फूटी बारा ।  
 साहिव र दरवार माहि भुगत ला भारी ॥  
 पहला कहू हूँ धन या बह अतरप हाय ।  
 कागद सारो वाचिया आगे पीछे जोय ॥<sup>२</sup>

अण छाण्या जल म पडे परभात ही जाय ।  
 मारै जीव असग हा पाछे रोटा खाय ॥  
 पाछे रोटी खाय बुदध या बूण सिखाइ ।  
 नव लाख जात सू बर पडे है सुण र भाई ॥  
 बावो लेखा बूममी जद भुगत ला किय माय ।  
 अण छाण्या जल म पडे परभात हा जाय ॥<sup>३</sup>

### स्वरूपावाई

स्वरूपावाई का जन्म भीलवाड़ा में हुआ था। ये रामचरण के प्रसिद्ध गृहस्थ शिष्य नवलराम की पुत्री थी। भक्त-दम्पति की सतान होने के कारण स्वरूपावाई

१ सप्रामदास की कुडलिया, पृ० ६४ ६५

२ वही, पृ० ६५ ६६

३ वही, पृ० ६५ ६६

बचपन में ही राम भक्ति में अनुरक्त हो गयी। सयानी होने पर उनकी इच्छा के विरुद्ध उनका विवाह कर दिया गया। समुराल पहुँचने पर वहाँ वाले इनके भगवद्भजन में बाधक सिद्ध हुए। कहते हैं एक बार स्वर्णपादाई के पति ने इनकी नित्यापाठ पुस्तक और गुस्त्राणों को बूझ म डाल दिया। भय पति के द्वारा परमपति का भनादर देवकर स्वर्णपादाई का हृदय क्रोध, घणा और उदासीनता की भावना से भर गया। परिणामस्वरूप इन्होंने पति का परित्याग करके गृहस्थ जीवन से मुक्ति ले ली और रामचरणों में से दीक्षा लेकर शाहपुरा में ही साधनापूर्ण जीवन व्यतीत करने लगीं। इनकी जन्म-मरण तिथि का कोई निश्चित पता नहीं चलता किंतु इतना निश्चित है कि ये म १८५५ में वतमान थी, क्योंकि तत् रामचरण की मृत्यु के समय इनके उपस्थित रहने का पुष्ट प्रमाण उपलब्ध है।<sup>१</sup>

स्वर्णपादाई ने अनेक ललित पद्यों की रचना की है। इनमें पद वचने ही सरल और भावपूर्ण हैं। इनका हस्तलिखित बाणी शाहपुरा रामद्वारे में सुरंगित है, जो केवल पूनडोल महोत्सव के अवसर पर खाली जाती है। नमून के लिये इनके दो पद नीचे दिये जाते हैं —

मुग्धदाना सतगुरु जो मेरा रामचरण भवतारी हो ।  
 जनम सुधारण काज घरयो तन पार विच नर नारी हो ॥ टेर ॥  
 अधम जीव का पावन करिया सब ही दया विचारी हो ।  
 दुस दुःखता मँट दिया मव मुय उपजायो भारा हो ॥  
 चरण रेणु से मस्तक परिये काम कुबुधि होइ पारा हो ।  
 ज नर भयल सबल विच सतगुरु जग में जस विस्तारी हो ॥  
 य जग वज्जि महा शक्ति दुखदर मुख नहीं बहूँ सगारी हो ।  
 गुणदायक मव के हिन बछन रामचरण लछपारी हो ॥  
 तुम गुण सागर चाह न कोई को बरछे लछ सारी हो ।  
 नाम सन्दा शरणु पक्षी है बार-बार बलिहारी हो ॥<sup>२</sup>  
 काज मयो गुफ बिया चलायो यो दुख सत्ता न जावगा ।  
 छानो फाँटे जीव लहनाव मन माया रहि भावगा ॥ टेर ॥  
 तालाबलो लगी जीव में मुरछ मारछा तावगा ।  
 रामचरण जी जसा सतगुरु भव कुण कर मिलावगा ॥

१ गुरु प्रसादि व वगन ज माही बाई सरुणा सररि बाई ।  
 नव बायो कू न यह मायो भाई, राम जन बायो सरुपा बाई ॥

—ब्रह्मगमाधि तीन योग, छ० १३४ ३५

२ श्री रामसनेही सम्प्रदाय पृ० २५६

और दुल तो सब मह सेस्यु यो दूम कहां रामावेगा ।  
 हिर<sup>१</sup> नाम षठ कै माही छाती स्वास न मावेगा ॥  
 सीच्या शीत चरणामृत बेरा बालक ज्यु बतलावेगा ।  
 ऐसी हम नही जागी सतगुरु बबर पदो ल जावेगा ॥  
 नवरराम जी निज घर चाल्या सो तो दुख बिसरावगा ।  
 यो ता दुल आकरा बीतो बहना म नही आवगा ॥  
 घर भागण आछो नही लागे वावन बिरह सतावेगा ।  
 दाससत्पा विरह बिलवी, बोलत बाच न आवेगा ॥<sup>१</sup>

### मनोरथराम

मनोरथराम, स्वामी रामचरण के प्रशिष्य और निहचलराम (निदघलराम) के शिष्य थे ।<sup>२</sup> इनका साधना भूमि राजगढ़ थी । साम्प्रदायिक सोता से इनकी जीवन-यात्रा विषयक कोई महत्त्वपूर्ण सूचना नहीं मिलती । किन्तु इतना निश्चित है कि य वि० म० १८७१ म बतमान थे, क्योंकि इन्हीं के सत्सग म रहनर सदाराम नामक किमी दादूपथी साधु ने पीप गुनल २ म० १८७१ की 'नानसमुद्र' नामक महान संग्रह ग्रंथ तैयार किया था ।<sup>३</sup>

मनोरथराम वृत्त 'नानसमाधि' नामक एक ग्रंथ और प्राप्त है जिसमें सत्सग-महिमा, साधुलक्षण, नयनाभक्ति काम माया, जगत्, धम, नाम, आदि का विशद वर्णन है । इसके अतिरिक्त इन्होंने कुटुंबर अग्रबद्ध वाणी की रचना भी की थी, जिनकी संख्या १८२६ है । इनकी रचना के नमूने नीचे दिये जाते हैं —

आसरा अडिग जमाइ व नामा निरति लगाइ ।  
 राम राम मुख उचर सुरति र सवद मिलाइ ॥  
 राम राम मुख उचर जग सू होय एकत ।  
 मना मनोरथ छाडि करि एवाग्रह करि चित ॥  
 साम उसासा ध्याइए निस दिन ऐकी राम ।  
 मन विकार सब ही मिट सरै मनोरथ काम ॥<sup>४</sup>

१ था पच रत्न स्तोत्र, पृ० १३५

२ कलियुग माही प्रगट्या रामचरण महाराज ।

जिनके निहचल राम जी किया हमारा काज ॥

—मनोरथराम की वाणी गुरुदेव का अंग, छ०-२

३ ज्ञान समुद्र, प० स० ८८४

४ ज्ञानसमाधि—चौथी समाधि, छ० २४

मन रे आणद माहि विचरणा ।  
 वादि बिबाद विषमता त्याग्यो ध्यान आस्रडित धरणा ॥ टेक ॥  
 आस्रग अडिग जमाओ नोको राम ही राम उचरणा ।  
 नामा निरत टरे नहि कत्रहूँ चित चितवन नही करणा ॥  
 पापी अमर भया जन जुग म भटयो जनम र मरणा ॥  
 ऐसो अमृत पीकरि छकिया अणभे वाणी वरणा ।  
 तरक करक रहौ जग सू यारा अति मोहबति नहि करणा ॥  
 छुधा निवारण भूख अजगरी जल नित पीणा भरणा ।  
 मनोरथराम सतगुर किरपा ते भव सागर कू तरणा ॥<sup>१</sup>

जगत बध कू त्यागो सतो, जगत बध कू त्यागो रे ॥ टेक ॥  
 करम पाप तो हसि हसि करि है सीख्यो लवो लवो रे ।  
 मोह माया म गरक फिरत है मन म बोहीत सोहाबो रे ॥  
 काम दाम को मार्या डोलै तिसना दुख अपारो रे ।  
 बगडी मै कोई बलभ नाही सब ही द दुरकारो रे ॥  
 भेलो करि करि बोहीता मूवा सग न चली लिंगारो रे ।  
 लका से कोट कचन के छाजा रती न चाली लारो रे ॥  
 झूठ कपट पापड करिया लिया सीस पर भारो रे ।  
 लख चौरासी जाम भरसी कही याहा कुन थारो रे ॥  
 रामचरण जी कहै श्रीतारी मुणि ज्यो पिडत ग्यानी रे ।  
 राम राम रसना रस पोवी ग्रह मिलाव याना र ॥  
 निहचन राम जी सतगुर गूरा दत सबद भरपूरा रे ।  
 मनोरथराम निस वामर रति है जा मुख झलक दूरा रे ॥<sup>२</sup>

सगति कीज साध की दिन म सौ सौ बार ।  
 जे एता नाही बण तो दिन म कर दो बार ॥  
 तो दिन मे कर दो बार नाहि तो एक ही वारा ।  
 एक बार के माहि चूकिए नाहि लिंगारा ॥  
 मनोरथराम सतसग में उपजै भगति करार ।  
 सगति कीजै साधु की दिन म सौ सौ बार ॥<sup>३</sup>

१ सबद, स० १४

२ मनोरथराम का सबद, स० ५

३ मनोरथराम की वाणी—साध सगति को अग, छ० १०

## सिंहथल-खैडापा शाखा के साहित्यकार

### हरिरामदास

हरिरामदास जी सिंहथल-खैडापा-शाखा के आचार्य थे। इनका जन्म बोकानर राज्य में स्थित सिंहथल नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम भाग्यचन्द्र था। ये गुरुणा ( चमार ) जाति के थे। अतस्साक्ष्य से भी इनका गुरुडा होना सिद्ध होता है।<sup>१</sup> इस जाति के लोग मेघवाल ( चमार ) जाति के गुरु होते हैं। उनके विवाह आदि संस्कार करने हैं और अपने को जासी ब्राह्मण बताते हैं।<sup>२</sup> शायद इसीलिए 'श्री रामस्नेह धमप्रकाश'<sup>३</sup> और 'आचार्य चरितामृत'<sup>४</sup> में इन्हें जोशी ब्राह्मण या वैष्णव गृहस्थ कहा गया है। इनकी जन्मतिथि का ठीक-ठीक पता नहीं चलता किन्तु यत्र-तत्र इस बात का उल्लेख अवश्य मिलता है कि इन्होंने अल्पावस्था में वेद शास्त्रादि का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके सम्वत् १८०० में गुरु-दीक्षा ली थी।<sup>५</sup> इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि दाक्षा के समय इनकी अवस्था कम से कम पचीस-तीस वर्ष अवश्य रही होगी। अतः इनका जन्म वि० सं० १७७० के आस-पास माना जा सकता है।

हरिरामदास बड़ी ही प्रखर बुद्धि के थे। इन्होंने थोड़े ही समय में वेद, शास्त्र ज्योतिष आदि का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त इन्होंने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। इनका धर्मपत्नी का नाम चापाबाई था।<sup>६</sup>

इनके गृहस्थय जीवन में ज्ञान, भक्ति और कर्म का संगम था। गृहस्थ-जीवन व्यतीत करते हुए भी ये भगवद्भक्ति में तमय रहते थे। इनकी परमतत्त्व को प्राप्त करने का जिज्ञासा निरन्तर बढ़ती गयी। धीरे धीरे इन्हें एक योग्य गुरु की आवश्यकता

१ जाति पाति है गुरु हमारी, नाम दिया हरिराम।

पिया हमारे भागचन्द्र है ग्रह सिंहथल ग्राम ॥

गुरु परीक्षा, छ० २३ ( बड़ा बाणी गुटका, प० सं० ७० )

२ राजपूतान का इतिहास, भाग १, जगदीश सिंह गहलोत, पृ० ८२

३ श्री रामस्नेहधमप्रकाश, पृ० ४

४ आचार्य चरितामृत, पृ० ११०

५ हरिया सम्वत् सत्रहसे वर्ष सईको जान।

निधि तेरस आपाठ वदि सतगुरु पडी पिठान ॥

घघर निसाणा ( हरिराम दास ), साखी सं० १

६ पुनि अर्घा गो चापा माता।

सीता माता जसे राम ॥

- गगाराम वृत्त परची।

का अनुभव होने लगा । एक दिन जब हरिरामदास जो इसी प्रश्न पर विचार कर रहे थे, रामसर निवासी उदयराम नामक एक व्यक्ति आ गया । प्रसंगवश उसने दुलचासर निवासी श्री जयमलदास के विषय में बताया । हरिराम जो उदयराम के साथ दुलचासर गय और जयमलदास से भेंट की । वहीं आपाठ कृष्ण १३, वि० स० १८०० में इ होने दीक्षा ले ला । दोक्षोपरा त ये सिंद्ध्यल चले आय और विदेह भाव से जावन व्यतीत करन लगे ।

हरिरामदास बहुत बड़े गुरु भक्त थे । दुलचासर सिंद्ध्यल से १४ मील की दूरी पर स्थित है । ये नित्य प्रति सध्या के समय दुलचासर जाते थे और गुरु दशन करके प्रात काल लौट आते थे । यह नियम निरंतर ६ महीने तक चलता रहा कि तु इसके बाद गुरु के आग्रह पर य प्रतिदिन आन-जाने का नियम बन करके हर दसवें दिन जाने लग । छोड़े ही दिना के उपरांत गुरु प्ररणा से इह इस नियम का भी परित्याग करना पडा । फिर आपन महान में एक बार गुरु-दशन करन का नियम बनाया और आजीवन इमका पालन करत रहे ।

इन्के सम्बन्ध में अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाएँ प्रचलित हैं । कहा जाता है कि एक बार शिष्या ने इनका जीवित महात्सव मनाल का निन्दय किया । उत्सव का तिथि से १५ दिन पूर्व ही इहान देह त्याग दिया । इससे शिष्या को बडा दुःख हुआ । अतः मय एक महाने व लिए पुन जीवित हो गये । इसी बीच अपनी अत्यन्त क्रिया की पूर्ण व्यवस्था करके चैत्र शुक्ल ७, शुक्रवार, वि० स० १८३५ को इहोने परमगति प्राप्त की ।<sup>१</sup>

अब तक इनके ६ ग्रंथ प्राप्त हुए हैं जिनकी नामावली इस प्रकार है—

१ घटपरचा	५ धधरनिसारणी
२ नावपरचा	६ प्रश्नोत्तर
३ निजानान	७ अक्षर अणु अर
४ पदब्रत्तोसी	८ साल्हे तिथा का विचार

#### ६ गुरु परीभा

इन्के अतिरिक्त इहान अगवद्ध वाणी की रचना भी की है । इनकी भाषा राजस्थाना मिश्रित हिंदी है । कटी-कटी पर अरबी, फारसी और पंजाबी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है । 'धधर निमाणा' इनकी प्रसिद्ध रचना है । इसमें हठयोग साधना का अष्टा वगन हुआ है ।

<sup>१</sup> रावत अटारू जा वप पुनि शुभ पैंतीस ।

चैत्र शुक्ल सप्तमा मिले परमात्मा ईस ॥

श्री हरिरामदास का परची (गगाराग)-(रामसन्तहधमप्रवाश पृ० ३३६)



श्री हरिरामदास (सिंहवल के प्राचाचाय)



श्री रामदास (खडापा के प्राचाचाय)



श्री दयालुदास जी



श्री परशुराम जी



साजन धर आवी भावन में किन सग खेखू फाग ।  
तो कारण निर भर नहीं सोऊ जोई पलपल जाग  
क्या जानू कब आवे करता रही अनेसे लाग  
सोऊ तो सन सुख देखू जागू ता जक नाहि ।  
प्रीतम कारण विरहन ठाडी छौ दरसणु दिलमाहि ।  
वेग मिली प्रभू अतरयामी अक्सर बीतो जाय ।  
जन हरराम राम कर अपनी हाथ लिवी बिलमाय ॥<sup>१</sup>

प्राणी कर लो राम सनही  
बिनस जायगी एक पत्रक में या गदा तर दही  
राती माती विषे स्वाद में पर पूनत मन माही  
जोव तरणा आय जम किंकर पकड ले गया दाही  
भूरम भगन भया माया में मरो कर कर मान  
अतकाल में भई बिडाणी सूनी जाय भसान ॥<sup>२</sup>

### रामदास

रामदास जी का जन्म जौघपुर राज्य के श्रीकोटार नामक ग्राम में फाल्गुन  
वृष्ण १३, सं० १७८३ को हुआ था ।<sup>३</sup> इनके पिता का नाम सादू ( गानू ल ) और  
माता का अणुभोवाई था ।<sup>४</sup> इनका जाति के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं

१ साठे की बड़ी वाणी, प० म० ७६ पद सं० १२

२ वही, प० सं० ८०, पद सं० १६

३ सम्बत सतरह सौ जान वष तयास्यो कहिए ।

(क) पागणा वद त्रयाणी रामदास जन भइय ॥

अनु नदामि कृत परचीसार ( २१० प० प्र०, पृ० १६ )

(ख) जन्म भयो सत्रह समत वष तयास्या जान ।

पागल यदि तेरस मुनि धिन धिन समय प्रमान ॥

- गुरु प्रवरण परची, २६।०

(ग) सादू एक पर सप्तमष्ट त्रिय मिल है वरष ।

बद पाणु त्रियोमी प्रहै सबहा गिन हरष ॥

- वाचकाम कृत परची

४ सादू नाम लकार उधना धिन धिन पिता पुत्र जमता ।

अण्मा उन्तर लिया अतारा बादू कापर तगर मन्तरा ॥

- गुरु प्रवरण परचा, पृ०

कहा जा सकता। १० मानोनाथ मेनारिया ने इन्हें मधवाल जाति का बताया है।<sup>१</sup> अथ यानों से भा इनका मधवान होना पुष्ट होता है।<sup>२</sup> दयागुप्त कृत 'गुरु प्रकरण परचा' में भा 'मधना पते इम ऋषि जानी' कहकर 'मधना-याते' अर्थात् मध की धार सबत किया गया है।<sup>३</sup> राजस्थान में मधवान चमारों का एक जाति है। इस जाति के लोग मोची का काम करते हैं।<sup>४</sup> स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इन्हें इड़ (चमारा या हा एक जाति का) माना है।<sup>५</sup> डा. डी. इतना तो निर्दिष्ट है कि अधिकांश निगु गिजा सन्ता का मत य भी गमाश के निचल स्तर से प्राप्त थे। इन्होंने स्वयं भी अपने का निम्न जाति का कहा है —

पात हीण कुल हीण है, हाण हमारी जात ।

हीण चलये रामदास तुम उजल करा रुपनाय<sup>६</sup> ॥

य बहुत छोट थे तथा इनकी माता का देहात हो गया। इस घटना के बाद ही निर्वाण बीकावार में भयंकर भूकाल पड़ा। सब लोग गाय छोड़-छाड़ कर इधर-उधर भागने लगे। गाढ़ू भा गिगु रामदास के साथ अपनी समुदाय गढ़ाना में आकर बस गए। वहीं अपना बाड़े हो लिये बोते थे कि अधिकांश साँप से बालन में गाढ़ू की मृत्यु हो गई। बालन में रहा गहो छाया उठ जाने में इनके साँपारिण बंधन टाल पड़ा लग। किन्तु गृहस्थाश्रम का त्याग करने लिए सम्भव न था, क्योंकि मरणाश्रय-कर्मों में पिता ने इन्हें विवाह कर लेने का लक्षण बचनबद्ध कर लिया था। अतः विवाह हारकर इन्हें विगत पिता का इच्छा पूरा करनी पड़ी। इनका विवाह हो गया। पत्नी का नाम सुन्दरबाई था।

या तो भक्ति धीर कराम्य के राज रामदास के हृदय में या पलायन में ही प्रकृतित हो गए किन्तु माता-पिता के मरुत्जनित अधुना रय धर्मनिमित्त हातर के प्राप्त हो पत्नी का हो गए। इन्होंने एक गति मज्जित्वा का धरणा गुरु बनाया किन्तु मात्र मन के प्रति इनके हृदय में प्राप्त हो पाया के भाव उत्पन्न हो गए। अतः वे माता गुरु के प्राप्त में अथ उपर मन्त्रन लगे। य १ १ कि गृहस्थ-धरन पक्षेण का का धरण्या में बारह गुरु बनाए। य तु जगा के भा य गये । ।

१ राजस्थान में या छोटे गाँव, पृ० ३००

२ राजस्थानी जातियों का गात्र, पृ० १६०

३ गुरु प्रकरण परचा, पृ० २

४ The Chitpavs—W. Briggs, p 30

५ कल्याण प्रकरण, पृ० २३६

६ रामदास के मत पृ० म० ७३

हुआ<sup>१</sup>। अन्त में सयागवश एक दिन ये वाकानर गये। वहाँ एक गृहस्थ के मुख से हरिरामदास का एक रेखता<sup>२</sup> सुनकर ये बहुत प्रभावित हुए और सिंहपल जाकर वैशाख शुक्ल ११, वि० सं० १८०६ का उही सतीथा ली।<sup>३</sup> अतस्साध्य से भी इनका इसी तिथि को दोषित होना प्रमाणित होता है।<sup>४</sup>

दोषा लेकर इन्होंने मारवाड के महलाणे नामक ग्राम में अपनी कुटी बनायी। यही रहकर कठोर साधना करते हुए इन्हें सिद्धि मिली।<sup>५</sup> फिर इन्होंने कुछ दिना तक घम प्रचाराय भ्रमण किया। धीरे धीरे इनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई। इनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर जाधपुर नरेश राजा विजय सिंह और बीकानेर नरेश मूरत सिंह ने इन्हें विशेष सम्मान दिया था। इनकी साधना से प्रसन्न होकर हरिरामदास ने अपने जीवनकाल में ही इन्हें पथक गद्दी स्थापित कराने की आज्ञा दे दी।

इस प्रकार इनकी कानि बढत देखकर विराधिया का बन्ने इर्ष्या होने लगा। उन लोगों ने जोधपुर नरेश से शिकायत की। राजा ने निन्दकों की बात में आकर फाल्गुन शुक्ल ६, वि० सं० १८४६ का डट्ट अपने राज्य में निष्कासित कर दिया।

१ पूरा पुरुष कहीं नहीं पाया लोने द्वादश गुरु का जाय।

जटा विभूति धरया बहु बाना काज मरया नहिं नान काय ॥

—श्री रामस्तन घमत्रकाण, पृ० ३४६

२ अगम आयाध में नान पोथी पढ्या भम अनान कू हरि टार्या।  
नाम निघार आघार मरे भया गहर गुम्मान मन मोह मार्या ॥  
तीन चकचूर करि चित्त चौथे गया नाभि अम्बान भुनि धम्मकारा।  
शवास उच्छ्वास में वाम निरभय किया मम रह्या एक आतम्म यारा ॥  
महज म श्याम मुख राम ऐन मड रोम में राम ररकार जाये।  
दास हरिराम गुरुव परतापत हट्ट का जाति बहद नामे ॥

—गुरु प्रकरण परची, प० ६

३ समत अठारो भन भन आया नी क वप पदारथ पायो।

मास वाग्य गुक्त पम् माती एकाग्नी तिथी सुय दाही ॥

—गुरु प्रकरण परची, ७।२२

४ धरम नरोतडी बसाव मास, मुग् इयारम जाण।

रामा कू मतगुर मिला भागी मन की काण ॥

समत अठारै नरोतड नगी राम सू प्रीत।

पचसट दोन वृष सोन में सुग्गी सुन की रात ॥

—जाम फारगती, छ० १२

५ श्री रामस्नेहधमप्रवाण, प० ००

आदेश पाते ही रामदास जी सब कुछ छोड़कर बटोही की भाँति हाथ में कुबरी और कंधे पर कबल रखकर चल पड़े। निष्कामन-काल में उन्होंने देवगढ़ नामक स्थान पर प्रयास किया। कुछ समय के बाद नरेश को अपनी भूख का अनुभव हुआ। उन्होंने इसे बुलाकर उचित सम्मान दिया और श्रुटियों के लिए क्षमा याचना की।<sup>१</sup>

रामदास का दहावसान लगभग ७० वर्ष की आयु भोगने के उपरांत आषाढ वृष्ण ७, मंगलवार, सं० १८५५ का वैशाख रामघाम में हुआ।<sup>२</sup>

इन्होंने छठे-बड़े कुल २४ ग्रन्थों तथा विविध छंदों में अगबद्ध वाणी की रचना की। इनके ग्रन्थों की नामावली इस प्रकार है —

१ ज्ञान विवेक	१३ आकाश बोध
२ गुरु महिमा	१४ नाम माल
३ भक्तमाल	१५ भक्तमसार
४ चेनामनी	१६ ब्रह्मजिज्ञासा
५ जमफारगती	१७ पटलगाण
६ मन ( स ) राड	१८ पद वत्तीसी
७ जग जन	१९ बानबोध
८ रणगात	२० पचमात्रा
९ अमर बोध	२१ सालह कला
१० मूल पुराण	२२ आत्मबलि
११ उभय ज्ञान	२३ निरालव
१२ आदि बोध	२४ नीमाणा

उपरोक्त सब ग्रन्थों का प्रतिपाद्य विषय मत मतानुकूल है। इनका भाषा में ठठ राजस्थानी शब्दों की बहुतायत है। आध्यात्मिक विरह-वर्णना में ये सूफी विरह वर्णन-पद्धति में प्रभावित प्रतीत होते हैं।

१ लिख पत्र भाव भक्ती समत दे भेंट पठाय सतहत ।

+ + +

सत विराजे सज्जन में आनन्द में गुन गात ॥

— श्री रामसनेह धर्मप्रकाश, पृ० २१ २०

२ समत अठारै ताम मध वष पच युग जोव ।

तिथि सानम आषाढ बनि सामवार दिग दाय ॥

+ + +

रामदास निजपुर चलो पूरण समय मुताना ॥

गुरुप्रारण परची, पृ० ११३

नमूने के लिए इनकी रचना व कुछ उद गोचे दिये जाते हैं —

तुम ही तीरथ तुम असनानो तुम ही पुन तुमही दातू ।  
 तुम ही स्वामी तुम ही भोगी तुम ही जगम तुम ही जोगी ॥  
 तुम ही सतगुरु तुम ही चेला तुम ही सगी तुमो अकेला ।  
 तुम ही बाहर तुम ही काया तुमहां मारै तुम ही साया ॥  
 तुम ही हिंदू तुरक कहाया तुम ही तानू जाक समाया ।  
 तुम ही पिता तुमही माता तुम ही बधु तुम ही भ्राता ॥  
 तुम ही सगा तुमही सोइ तुम दिन भरै और न कोई ।  
 तुम ही सब घट साइया तुम बिन और न कोय ।  
 दुतिया मिट्यो रामदास उताट आप में जोय<sup>१</sup> ॥

साहब सिरजन निरजन राया नाय अनाथ अजात अजाया ।  
 राम रहाम करीमह कसा, ब्रम निरालब कात नरसा ।  
 नाम न केवल केवल यारा, रामदास मित्या तहा प्यारा ॥  
 निरालब निरलेप है राम निरजन राय ।  
 रामदाम सब सत जन मिल्या तामु म आय ॥  
 ब्रह्म विरठ है रामदास छाया माया होय ।  
 उलट मिल्या सत ब्रह्म में जा माया नी कोय<sup>२</sup> ॥

ब्रह्म का सत ससार में आविया, धार अवतार भूलोक माही  
 धरण अवर बिच माग मुगता बिया जगत अर भेष कु गम नाही  
 सतगुरु सबद ले उताट सु न में मिल्या निपरि बात तिहुत्तोक जाणी  
 परपसी जन काई आद अनाद का सुखत सत सबद अणभैत वाणी  
 जगत कू चूर कर उरड आगा धस्या सिवर महाराज महाराज हीई  
 जीव अर सीव अब द्वार दसबै मिल्या रामीया ब्रह्म ऐसो ज साई<sup>३</sup> ॥  
 गुरु मेरे ऐनी कदर बतार्ई ताते सुरत शब्द धर आई । टक ।  
 रमना नाम नेम करि लीया, निशिदिन प्रीति लगाई ।  
 हिरदै माहि प्रेम परकास्या आतम की गम पाई ॥  
 नाभी माही नाद परकाम्या सब ही बन गू जाणा ।  
 पछिम निसा की बाटी खूली मेरु दड हुए जाणा ॥

१ आदिबोध छ० ८४ ८८

२ निरालब, छ० ३२ ३५

३ रेखता, छ० ५६

सहजा उलट आदि घर आया तिरबेणी के तीरा ।  
रामदास मुन सागर भाही चुगत हम जह हीरा ॥

### दयालुदास

दयालुदास रामसनेही सम्प्रदाय की खड़ापा शाखा के प्रवक्तव रामदास जी के पुत्र थे<sup>१</sup> । इनकी माता का नाम सुन्दर बाई था<sup>२</sup> । इनका जन्म मागशीष गुकल ११, मृगुवार, वि० सं० १८१६<sup>४</sup> को प्राभुतिक नागौर जिले में मंडता परगनागत बड़<sup>५</sup> नामक गाँव में हुआ था । उस समय रामदास जो घम प्रचाराथ भ्रमण करते हुए बड़गाँव में ठहरे हुए थे । रामदास की मृत्यु के पश्चात् माघ गुनल ६, सम्बत् १८५५ खड़ापा आचार्य पीठ के महत्तुय और लगभग २७ वर्ष तक जाय भार सभालने के काय उपरांत माघ वदा १०, सं० १८८२ को अपना ऐहिक लीला सवरण की<sup>६</sup> ।

१ हरजस, प० १४

२ रामदास पितु पाय धिन

—पूरगात्स वृत्त 'जन्म लीला (रामस्नेहधमप्रकाश, पृ० ३०)

३ सुन्दर माता कूल भत ।

—वही (रामस्नेहधम प्रकाश पृ० ३०)

अजु नदास वृत्त 'पूव जन्म' से भी इसी बात की पुष्टि होती है —

माता सुन्दर कूल भत, चाल लियो अवतार ।

रामदास पितु पाय धिन जीवा करण उधार ॥

—रामस्नेहधमप्रकाश पृ० ३११

४ गमत अठारह जान करप घोडा परवानो

ता मध मिंगसर मास चुका एकालि जानो

मृगुवार परसिद्ध नेरली नमत भणी जै

सब सोभ ग्रह शुभ ठार पर चाल लिय अवतार तब ॥

—जन्म लीला (रामस्नेहधमप्रकाश, पृ० ३१)

५ बड़गाँव शुभ रास रहा इक सदन कहीजै ।

नमो चाल तहा जन्म प्रथम परची सुनहीजै ॥

—वही, (वही पृ० ३१)

६ (घ) समाधि क लीला लेख मे ।

(ब) मत्ता प्रग जो निग विजय करके करप गुनतर वीतिया ।

इक मास ऊगर प्रगट पुनिता दिवस पनरे पर भए

तत्र करा इच्छा मोक्ष को निज लाव का चितवन टए

तहा मानस तिथि भइ दशमी मध्य दिन मणि आविया

तब स्पश कर उषा सैवि के निज सुरन शब्द मिलाविया ।

—जन्म लीला (श्री रामस्नेहधम प्रकाश, पृ० ३५)

रामसनेही मतानुयायी सनो म से अधिकांश ने गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करत हुए साधना माग पर चल कर जनक के आदेश का जीवन में उतारा था। दयालुदास भा एम ही सहज माग के पथिक थे। उनकी धम पत्नी का नाम यशोदा बाई था। य महाराज अपने समय क महान् तास्त्रा थे। खेडापा शाखा को सुज्यवस्थित और सुमम्कृत रूप देने वालों में आपका बडा ही महत्वपूर्ण स्थान है।

रामसनेही सम्प्रदाय म दयालुदाम क समान वाणी का बादशाह कोई दूसरा नही हुआ। इन्होंने उनोस ग्रंथ और अनेक छंदो म अगवद्ध वाणी की रचना की। इनका रचनाओं की तालिका निम्नलिखित है —

१ भक्तमाल	१० करुणामागर
२ मन प्रतिबोध	११ पिता-पुत्र-सम्वाद
३ चेतनबोध	१२ निरण मायासार
४ सूरजन का समाजबोध	१३ रक्षा वत्तीसी
५ प्रगट बोध	१४ अरदास वत्तीसा
६ निरणवाध	१५ चितावणी
७ आत्मम्यान	१६ वत्रमुची
८ अद्भुत विलाम	१७ शब्द प्रकाश
९ अरथ ततमार	१८ करुणाबोध

### १९ गुरु प्रकरण

दयालुदास का सभस्त रचनाआ का वण्य विषय निगुण भक्ति क विभिन्न भगा का विवेचन है। 'भक्तमाल' इनकी सर्वोत्कृष्ट रचना है। परवर्ती सत साहित्य के आच्छताआ के लिए यह ग्रंथ बडा ही उपाय है। नीचे इनकी रचना के कुछ नमून दिय जात है —

बालमीक त्रेता महीं ज्यू कलधुग तुलसीदास धिन  
 रामरक्षिक रस प्रीत राम प्रण चित्त उपासी  
 रामायण ततसार मुगम भाषा परकासी  
 दरसन दियो दयाल कह्या सो कियो सिहायक  
 नर थो विप्र विजाय नाम प्रताप तिन्वायक  
 पतत अनत पावन भये ब्रह्म हित्या जिव मेत तन  
 बालमीक त्रेता महीं ज्यू कलधुग तुलसीदास धिन ॥

+

+

+

भोय रसोलो क मिन परम रमइयो राम ॥ टेक ॥  
 सासा तरगस अजग चित रोय रोय जोऊ पथ ।  
 परवत बनी निहार निहारे अज १ आये कथ ॥  
 सरव सिगार अगार भय है पारी दगू दिसाह ।  
 पीतम परमाद विा भारी भई निसाह ॥  
 पापा अवर करु सरव तन हीयो चल मयान ।  
 जोगण हाय दूह नवन कव न मिलै भगवान ।  
 परका पिजर वार ह बल बल वद वार ।  
 जन रामा त हन अत वानुल परमरख दो भरतार<sup>१</sup> ॥  
 जाग र बहभागी जाय साधु मूर उगो ।  
 पान पति सुरत श्रवण गन आदि पूगो ॥ टेर ॥  
 सत पथ चलत वद माध द्वार सुलो ।  
 जगत अगत मेट स्वप्न स्वप्न दूर भूलो ॥  
 निशा भून जम का दूत मिटी राम माया ।  
 तिगव दे प्रभात भयो राम नाम गाया ॥  
 आन चोर जोर भाग भरम जलद नाही ।  
 कमल सबल उग्रकार दरम परस माही ॥  
 अजन काग कीज आज जनम दरद जावे ।  
 परिपूरण परम तत्व रामदाम गावे ॥<sup>२</sup>

### परशुराम

ये रामसनेही सम्प्रदाय के विविष्ट साधको म गिने जाते हैं । इनका आविभाब  
 बीकानेर राज्यात्तगत बीठनोक<sup>३</sup> नामक ग्राम म कार्तिक कृष्ण १४, वि० स० १८२४  
 को हुआ था ।<sup>४</sup> ये जाति क परमवशी बढई थे ।<sup>५</sup> बाद म य बीठनोक को छोडकर

१ हरजस, प० २४

२ श्री रामसनेह धमप्रकाश, पृ० ४६१०

३ बीकानेर मुल्क पुन कहिय बीठनोकपुर तामे लहिए ।

वहाँ सतगुर अवतारहि धरियो ॥

—भवकराम कृत परश्वी ( वाणी गुटका, पृ० १३०० )

४ समत अठारा सी चौबीसा कार्ती कृष्ण पक्ष चवलीसा ।

साखू गोत उधारण कारण इकौत्तर पिरिया को तारन ॥

—वही ( वही पृ० १३०० )

५ बरसवस की पावन करियो ।

— वही ( वही, पृ० १३०० )

साईं मरै पूरन सकल प्रकासा ।  
 देव मुनी रिप नाग सबै जम करै तुमारी आसा ॥ टेक ॥  
 तुम एकत रहौ उर सबव वास गृह बनवासा ।  
 ग्राम अनत करै अलगतरी अनत एक निज आसा ॥  
 सिवरै आदि अत जन केता आत्म अग सहैता ।  
 सिवरत भिदरत तुभै समाना पार न सोहि सहैता ॥  
 तोरा पार लहै कुन तारन अपरम विरद कहाई ।  
 सा हरिदेव जानि हरि अपनी करि हो हमै सिहाही ॥<sup>१</sup>

### पूरणदास

पूरणदास का जन्म मालवा प्रांत के मेलकी नामक ग्राम में चैत्र कृष्ण २, रविवार सं० १८२८ को शुभ नक्षत्र में<sup>२</sup> हुआ था। ये जाति के वैश्य थे। इनकी माता का नाम सामा और पिता का जसवत था।<sup>३</sup> वे दाना ही उदार एवं धार्मिक प्रवृत्ति के थे। अतः अपने नवजात शिशु को रामदास जी के शिष्य पीथलदास को, जो रतलाम में निवास करते थे, समर्पित कर दिया।<sup>४</sup> दस वर्ष<sup>५</sup> की आयु में इन्हें पीथलदान में सैनापा पीठाचार्य दयालुदास की सेवा में भेज दिया और उसी वर्ष संवत् १८४८ में 'फूल डान' के शुभावसर पर दयालुदास ने इन्हें दीक्षा दे दी।<sup>६</sup>

पूरणदास गृहस्थ जीवन व्यतीत करत हुए भी, साधना रत रहने वाले सत थे। इनकी घमपत्नी का नाम लक्ष्मीबाई था। इनके एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ था जो

१ श्री हरिदवदास जी गहाराज की बाली, पृ० २५२

२ समत अठार अठाइसै चैत वत् तिथ बीज ही।

हस्त नखतर वार शुभ पूरण जम सहो जहो ॥

—अबु न दास वृत्त जमलीला, छ० ५

३ सामा जसवत अहे जान जनमे पुन आई।

—वही, छ० ५

४ मात पिता हरि भगत करयो पीथलसुत अरपन।

—वही, छ० ७

५ भये बरम जुग पच इम गुर पीथल के घाम ही।

वही, छ० ७

६ अठतीसा सुद पय मै समत अठारो जान।

बाल सत सतगुर मित्वा फूलडोल परवान ॥

— वही, छ० १०

वाग में अजु नदास नाम से प्रसिद्ध हुआ और इनकी मृत्यु के उपरांत अचानक को सुशोभित किया।

ये बड़े ही सदाचारी और सत्यनिष्ठ महात्मा थे। इनकी सद्बृत्तियों को देखकर दयानुदास ने इन्हें अपना परमप्रिय शिष्य बना लिया। दयानुदास की मृत्यु के पश्चात् सम्प्रदाय १८८५ में मे गद्दी पर आसीन हुए और सात वर्ष के अल्प समय के उपरांत कानिक् गुप्त ५, स० १८९२ को परमधाम वासी हुए।<sup>१</sup>

पूरणदास ने निम्नलिखित ग्रन्थों का प्रणयन किया —

१ गुरुमहिमा	४ सुभिरण सार
२ भक्तमाल	५ कल्याण छत्तीसी
३ जमलीला	६ शिक्षा बत्तीसी

इसके अतिरिक्त इन्होंने साखी, चन्द्रायण, चिन्त, पद, आदि छंदों में अगबद्ध वाली की रचना की। 'जमलीला' को छोड़कर इनकी समस्त रचनाएँ अभी अप्रकाशित हैं। नीचे इनकी रचना शैली के कुछ नमूने दिये जाते हैं —

ता दिन तै मा देह धरो दिन ही दिन पाप कमावन हारो ।  
नीच किया बुध हीन मलीन कुचाल अचार विचार बुहारो ॥  
श्रीगण की नहीं ओर कहा लग एक भरोसी है आम तमारो ।  
हो हरिया बिनता इतनी तुम मुप सु बहो पूरणदास हमारो ॥<sup>२</sup>

धर धीरज ध्यान प्रवान सदा मन धीरज पाव विचार धरे ।  
धुन ध्यान अपड धरी मा वायक वादव क्षाप तिहें तप रे ॥  
धिन धारण कारण पार उतारण धाम पराद्रह्य काज सरै ।  
धरियै गुर धम भग्न नित पूरण सकट कष्ट सन छु टरै ॥<sup>३</sup>

कोई राम पिमा धर लाव रे ।

तलफत प्राण दुषी अत मेरो गरता अगन बुझावे रे ॥ टेक ॥

है कोई मित्र हमारो एसी जाय मदसी सुनाव रे ।

विरहिन कू अति आतुर ऐस जागत रण विहाव रे ॥

१ पुन समत अठारो सो बहाल, वाणवा वरस का तीज मास ।  
कर दीप माल उछव सवार, मा जी प्रति कानो निमस्कार ॥

—अजु नदास कृत जमलीला, छ० ७४

२ पूरणदास की वाली—बिनती की अग, छ० २१

३ शिक्षा बत्तीसी, छ० २१



श्री पूरणदास जी



श्री हरलालदास जी



श्री प्रजुनादास जी



श्री भावनादास जी



तलफ तलफ तन तालावेली सास कलप सम जावै रे ।  
नीर बिना मछी क्यु जीवे बीछडिया दुग पावै रे ॥  
अब ती कृपा करी तुम मोहन दरमन वेग दिम्बावै र ।  
जन पूरण विरहिन अति व्याकुल मरतग आन जिवावै रे ॥<sup>१</sup>

### मनीराम

ये सूरपुरा नामक ग्राम के एक जागीरदार थे। इनका जन्म राजपूत भाटी कुल में हुआ था। सम्प्रदाय में प्रवेश करने से पूर्व इनका नाम मन्तरूप सिंह था।<sup>२</sup> इनके श्रीविज्ञान सिंह नामक एक मित्र थे जो रामदास के शिष्य थे। एक बार रामदास जी श्री विज्ञान के यहाँ आये। मन्तरूप सिंह को भी यथाममय उनमें सत्संग करने का अवसर मिला जिसमें वे बहुत प्रभावित हुए। कहते हैं, एक बार ये किसी तालाब में स्नान कर रहे थे। सहसा इनके पाँव फिसल गये और वे डूबने लगे। सबके इस स्थिति में व्याकुल होकर इन्होंने रामदास को स्मरण किया। रामदास ने तत्काल शिष्य रूप धारण करके इनकी रक्षा की। उसी दिन इन्होंने खड़ापा जाकर उनसे दीक्षा ले ली। इनकी साधना भूमि बड़नू थी।

मनीराम के पाँच शिष्य हुए—कृपाराम, देवादास, दयाराम, सूरतराम, धार गगाराम। इन लोगों ने अपना नामद्वारा जन्म ले बड़नू, साधीण (देवादास, और दयाराम) खागटा और बडौदा में स्थापित किया। इनकी शिष्य परम्परा अब भी इन स्थानों पर चल रही है। इनका देहावसान आषाढ कृष्ण ७, सं० १८६० का खड़ापा ग्राम में हुआ।<sup>३</sup>

इनके द्वारा विरचित साहित्य का विवरण, जो प्रस्तुत लेखक को राजस्थान का शोध-यात्रा के पश्चात् प्राप्त हुआ है इस प्रकार है

१ अनात शीर	५ सु मरणसार
२ महिमासार	६ गभ चैतावनी
३ जजा निसाणी	७ आतम परकी
४ आनमसार	८ गुह माहमा

#### ९ हरजस

इसके अतिरिक्त बहुत से फुटकर पद और साखिया भी इन्होंने लिखी। इनका भाषा में राजस्थानी का पुट है। इनके कुछ छन्द नीचे दिये जाते हैं —

- १ हरजस, पृ० ७
- २ आचाय चरितामृत, पृ० २२
- ३ आचाय चरितामृत, पृ० २२३

यो तन जावसो रे चेत सब तो चेत,  
 मनुष दह यह दूलभ है रे, करिखे हरि सो हेत ॥ टेक ॥  
 सब जीव दीस जावतारे रहा न दीसे एक ।  
 काल न छोडे जीव वा रे कहा जगत यह भेक ॥  
 माता पिता मिल बीसुडे रे बहुरि न मिलना हाथ ।  
 जीवन जम ले जानी रे रात सके नहि काय ॥  
 इण भवमर चेत्यो नही रे मूरग महा अजान ।  
 अत समय जम मारगो र बहुती हासी हान ॥  
 अनत कोट मत कहत है र सतगुरु कहे बजाय ।  
 मनीराम मिल सब म र जहा काल न पहुँच जाय ॥<sup>१</sup>

प्रीतम प्यारा हो आवा घर ।

तुम दिन मुख असार का सत्र लागत खारा हो ॥ टेक ॥  
 तुम दिन में दुख देणिया जावा आर न पारा ही ।  
 लख चौरासो मै फिरिया बारम्बारा ठगाया हो ॥  
 मूरख भूल न चेतियो हीरा हाथ गमाया हो ।  
 बाजी देख न भूलियो बाजीगर पारा हो ॥  
 घट मै पैया झोलता ता का मकल पमारा हो ।  
 मनीराम की वीनती सुण सिरजण हारा हो ॥  
 तुम घर आवो राम जी बीज भी पाग हो ॥<sup>२</sup>

मोटी माया मनीराम किनव कामणी दीय ।  
 जोगी जता स पासो तपसो सब कू दाना खोय ॥  
 माया जालम मनीराम तीन लाक क माय ।  
 सुरग मरत पाताल म जीव सकल कू खाय ॥  
 माया डावण मनीराम डकणायो ससार ।  
 सकल जीव कू खात ह, हरान उतरया पार ॥<sup>३</sup>

अजु नदास

ये खंडापा गद्दी के चौथे पीठाधीश्वर थे । इनका जन्म कार्तिक पूर्णिमा सोम-

१ श्रीहरियण-भू खूपा, प० २२५

२ खागटे की बड़ी बाणी, प० म० ७३६

३ वही, प० स० ७१०

वार, वि० स० १८७७ को हुआ था।<sup>१</sup> य खेडाणा आचाय पीठ के तारुण पीठाचाय श्रीपूरणदास के पुत्र थे।<sup>२</sup> इनकी माता का नाम लक्ष्मीवाई था। य अपन समय के बड़े महात्मा थे। जोधपुर के राजयग म इनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। पूरणदास जो का मृत्यु के उपरांत य म० १८६२ म आचाय पद पर आसीन हुए आर जीवनपयन्त कुशलतापूर्वक काय भार सभालते हुए वैशाख कृष्ण ७, रविवार, स० १६५० को पयमघाम पघारे।<sup>३</sup>

अजु नदास ने 'जम-लीला' और 'पूव जम' नामक दो ग्रथो की रचना की। 'जम लीला' मे पूरणदास की जीवनी वर्णित है और 'पूव-जम' मे दयालुदास के पून-जम का कथा है। दयालुदास कृत 'कल्याणसागर' ग्रथ की टीका भा इहान लिखी थी। इनके तान पद और चार फुटकर किवत भी प्राप्त है। इनकी भाषा राजस्थानी मिश्रित सरग हिदी है। वाण्य म साहित्यिकता का अभाव है। इनका रचना क कुछ नमून नीचे लिय जात हैं —

१ सुभ समत अठारो सुनउ सोय ।  
नखि वरस सिततर भनहि लोय ॥  
सुभ मास जासु वाती सुदेप ।  
सुद सुक्ल पक्ष पूनम पेप  
भल चद्रवार कृतका नक्षत्र

+ + +

अजु न लिए अवतार तव्व

—हरलालदाम कृत जम लीला, छ० १० ११

२ मे पूरण ब्रह्म अवधता है अजु न ताको पूता ।

—निगुण भजन माला, छ० १८

३ समत उगनी सो जु कहिए

(क) वरस पचाम वैसायहि लहिए  
तामघ सातम थाव घारा (रविवार)  
घटिका रात रहो हो चारा  
तामघ लगा समाधि अपारा  
प्राण समाय जोति मभारा

—जम लीला, छ० ७७ ७८

+

+

+

(स) था नाट कृत

मथी री आज दिवस भल आयो ।  
 चातक मोर पपइया बोले घन घमधारण लगायो ॥  
 मोथी बू द घटा घन अरसत सारग सबद सुहायो ।  
 चहू दिस बीज चमक अति गहरा धना अजर छायो ।  
 घान टपाल कृपा अब कीज मन देखन फल पायो ।  
 पूरण ब्रह्म गुरु है मेरा उरजन य जम गाया<sup>१</sup> ॥

जिअ मङ्गुर बिन पुय पाव म्हारे तना नीद न आवै ॥ डेर ॥  
 वे परम मुय के वामी अब याह सू भय उगामी ।  
 वे अमरलाज न पूता अब राम जना यहि जुबता ॥  
 अब वा सूरत कइ पाऊ मी रात दिवस मिलताऊ ।  
 मी एव घटी दिन रेता वे बापअ इमत केता ॥  
 अब धीरज कू न बघावै मोय राम इमत कुरु पाव ।  
 व पूरण ब्रह्म अबधूता है उरजन जाव पूता<sup>२</sup> ॥

### हरलालदास

हरलालदास अजु नदाम के शिष्य थे । इनके प्रारम्भिक जीवन और दीक्षानाल के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता । हाँ, इतना अवश्य है कि य स० १६१३ भाद्रपद सुदी १ के पूव दीक्षित हो चुके थे, क्योंकि इसी तिथि को अजु नदाम द्वारा निहयल पीठाचार्य चेतनदाम को लिखे हुए एक पत्र में गैडापा के सता में इनका नाम इस प्रकार आया है —

“ और अठे साथ ब्रह्मदाम जी, स्वरूपदाम जी, तुलसीदाम जी, प्रह्लादाश्रम, जागाराम जी, जगजीवनदास जी, जैतराम, रामरतन, आत्माराम, हरनाल, नागाराम आदि का दडवत परित्रमासहित राम राम मालूम हासा<sup>३</sup> ।”

अजु नदास के परमधाम पधारण के पश्चात् इन्होंने सम्बत् १६५० में आचार्य पत्र की ग्रहण किया और अठारह वय तक भाय भार सभानने व पश्चात् सम्बत् १६६८, पीप कृष्ण ६ को परमगति को प्राप्त हुए<sup>४</sup> ।

१ अजु नदास का वाणी, पद स० १

२ अजु नदाम की वाणी, पत्र स० ३

३ श्री रामस्नेह धम प्रकाश, पृ० ३६ पर उद्यत पत्र से

४ श्रीनाथ कृष्ण

इनके द्वारा विरचित 'जम लोला' नामक केवल एक ग्रन्थ प्रोक्त है। इसमें अजु नदास का जीवन वृत्त लिखा गया है। यह ग्रन्थ हस्तलिखित रूप में खंडापा रामद्वारे के दयालु पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसके अतिरिक्त इनके लिखे हुए कुछ पद भी मिलते हैं। इनकी रचना-शैली के उदाहरणस्वरूप दो छंद नीचे दिये जाते हैं -

दीन दयाल दया के सागर अब तो विलम न कीज हो ॥ टेर ॥

मैं अनाथ तुम पतिता पावन अब मोरी सुघ लीजै हो ।

मो निरवल को बल नहिं कोई रथक विरद बदीजै हो ॥

विपमी बेर धणा है भोमैं अब मोहिं बाहर कीजै हो ।

चरण सरण मैं पर्यो राज री गुना मोय बगसीज हो ।

हरलालदास की याही बिनती चरण मरण नित दीजै हो<sup>१</sup> ।

+

+

+

इम निराकार निगुण अभेद ।

छवि दृष्टि माहिं आवे न छेद ॥

इक अमर अङ्गनी हो अलेख ।

सत भक्त नति पुनि वेद शेष<sup>२</sup> ॥

### लालदास

लालदास हरलालदास के शिष्य और खंडापा गढ़ी के छठे आचार्य थे। इनका जन्म डूडाड राज्य के घाट नामक ग्राम में सोनकी सरदार कुल में हुआ था<sup>३</sup>। ये वि० स० १६६८ में गढ़ीपति हुये और भाद्रपद कृष्ण ४, स० १६८२ को मन्वर जगत् से सदैव के लिए नाता तोड़ कर परमधाम वासी हुये<sup>४</sup>।

इन्होंने कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं लिखा। इनके बहुत से पद 'श्री हरियश मजूपा', 'श्री हरियश-भणि मजूपा' आदि साम्प्रदायिक भजन-संग्रहों में संकलित हैं। इनकी बाणी के अध्ययन से रामसनेही सम्प्रदायागत एक नयी प्रवृत्ति का पता चलता है और वह यह है कि सम्प्रदाय के परवर्ती सतों ने अथ देवताओं की उपासना प्रारम्भ कर दी थी। उदाहरणार्थ इनका एक पद उद्धृत किया जाता है जिससे इनकी शिव निष्ठा व्यक्त होती है—

१ राममंदिर खंडापाधाम में रखा हुआ बाणी गुटका-हरलालदास की बाणी, प० स० १

२ जम लोला, छ० ४

३ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० ४०

४ श्रीनाद वृक्ष

जोगी मेरे द्वारे आयो बावरो निहग ॥ टेक ॥  
 बेल की सवारी विभूति ललाट चन्द ।  
 दखण को आयो तेरे कृष्ण मुखारविन्दु ॥  
 कु डी लिए खाक मे लगाय नाथ बाघछाल ।  
 छाल मान लोचन विशाल गले रण्ड माल ॥  
 भाव औ घतूरा का डोली भर लीनी सग ।  
 सेर सात हू की ये सग म लिए हैं भग ॥  
 साप की जनोई लगोटी बाजु भाडबद भूरो ली जटा म गग ।  
 सामने गणेश माप सैबडों लपेट बठे भैरु कोतवाल सग ॥  
 गोदी में ले आयी बाल, लायके दिखाया लाल ।  
 देवे परिक्रमा निगी फूक बोले जयगोपाल ॥  
 लालदास शिव गावे ऐसा सुत जायो नदराणी तोको २ग<sup>१</sup> ॥

बदे रहना रे हूंसियार, नगर म चोर भावेगा ॥ टेक ॥  
 तुपक तीर तरवार न बरछो ना बडूक चलावेगा ।  
 भावत जावत कछू न दीस घर म धम मचावेगा ॥  
 गढ़ नहि फोडै किला न साठै ना कोई रूप दिवावेगा ।  
 नगरा सेती काम नहीं है तुम्हे पकड ले जावेगा ॥  
 वा तेरी परियाद न चालै ना कुछ कारी लावेगा ।  
 बैठा बुटुम्य चीज ले जावे खोजी खोजन पावेगा ॥  
 जो कोई चतुर विवेकी होवै राम नाम लिख लावेगा ।  
 लालदाम भगवान भरोसे खुली बिवाडी जावेगा ॥<sup>२</sup>

### मनोहरदास

मनोहरदास का जन्म वि० सं० १८८४ कार्तिक; शुक्ल २ को मूल नक्षत्र म<sup>१</sup>

१ श्री हरियण मजूपा, पृ० ३४७

२ वही, पृ० २९७-८८

३ गमल भठारो घरस वसु वेद भक्तानो ।

मुनि कार्तिक द्वि तिथि धरा पर जन्म धरालो ॥

—बाबा श्री मनोहरदास जी महाराज की याणी-परिचय; पृ० ८

बीकानेर राज्यातर्गत मण्डाण नामक वस्त्रे कानिकट मोटोलाई नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम चौधरी रायचन्द्र और माता का पत्तुवाई था।<sup>१</sup> ये जाति के जाट थे। मूल नक्षत्र में जन्म लेने के कारण विचारों की हृदता और ईश्वर प्रेम भावके स्वाभाविक गुण थे जो बाल्यकाल से ही परिलक्षित होने लगे थे। युवावस्था प्राप्त होने पर इनका विवाह सम्पन्न हुआ, जिससे कालांतर में इन्हें दो पुत्र रत्न भी प्राप्त हुए।

सम्बत् १९०६ में इन्होंने रामसर निवानी सत गुमानीराम से दीक्षा ली थी।<sup>२</sup> इनका शेष जीवन भगवद्भजन, सस्मग और घूम घूम कर धर्म प्रचार करने में व्यतीत हुआ। फाल्गुन कृष्ण ५, सवत् १९७२ की ८८ वय की अवस्था भोगकर य परम तत्त्व को प्राप्त हो गए।<sup>३</sup>

इन्होंने सावो और कुण्डलिया छंद में भगवद्द वाणी की रचना करने के साथ ही 'नाम निद्रवय बोध' और 'हाडा बोध' नामक दो लघु ग्रंथ और स्फुट पद एक कवित्त भी लिखे। इनकी रचना के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं -

राम राम सोई ध्यान है रामा राम समाध,  
राम राम रसना रटे तो तुरत कहावै साध।  
तुरत कहावै साध और ऊपाधि मिटावै,  
कनक कामणी त्याग क्रोध को मूल उठावै।

१ पिता रायचन्द्र चौधरी फता माना पाट।

—बाबा मनोहरदास जी महाराज की वाणी-मरिचय, पृ० ४

२ (क) पूरव पुष्प प्रभाव प्रगट भये पर उपकारी।

शुभ सवत उन्नीस पष्ट में माघ शुक्ल पचमि मही।

जाल छाडि भक्तो मिले गुरु गुमानीराम गही।

—वही, पृ० ८

(ख) ध्यात्मवचन से भी इनका गुमानीराम का शिष्य होना प्रमाणित होता है—

गुरु गुमानीराम को दास मनोहर बाल

भवसागर में डूबतो काडि लियो तत्काल ॥

वही, पृ० ३५

३ इच्छावरी उन्नीस बहोतर ध्यान स्वरूप मनोहर धारण।

फाल्गुन नदी पचमी के दिन छाहि वपु मिलिये प्रभु कारण ॥

—वही, पृ० २३

निष्ठा करै न ईरयो आगा तृष्णा पाध,  
राम राम साई ध्यान है रामा राम समाध ॥<sup>१</sup>

और उपाधि सबै तजि दीनी जु, टेक गहो इक नाम उचारयो ।  
तोरथ ब्रत एकादशी आदिक, राम बिना सब भ्रान निवारयो ॥<sup>१</sup>  
सूरज तेज ज्यु शीतल चन्दा ज्यु, ध्यान अखड भूतेश ज्यु धारया ।  
मो गुहदेव नमो परमानन्द, दास गुमान मनोरेकी तारयो ॥<sup>२</sup>

### कनीराम

कनीराम पीषोदाम के प्रमुख गिण्यो मे मे थे । इनकी माधना भूमि रतलाम थी । गुरु की मृत्यु के उपरांत य वि० सं० १८५१ मे रतलाम रामद्वारे के महत्त हुए और आजीवन काय भार मभालते रहे । इनके उत्तराधिकारी उदयराम थे । कनीराम के जन्म मरण आदि के सम्बन्ध मे साम्प्रदायिक सूत्रा से कोई प्रमाण नहीं पडता । इनकी सम्पूर्ण बाणी संख्या ५,१६३ है जिसमे चार ग्रंथ भी हैं । दुर्भाग्य से इनका साहित्य उपलब्ध नहीं हो सका । अतः साम्प्रदायिक भजन-मंत्रों मे इनकी जो रचनायें संकलित है उही मे सतोष करना पडता है ।

नीचे इनकी काव्य-शैली के कुछ नमूने दिये जाते हैं —

प्राण मनेही राम की निगिनि मग जोऊ,  
आवन की आगा लगी छिन भर नहि सोऊ ॥ टेक ॥  
केने युग देन गय केई जनम वनीत ।  
अब के अबसर चुक वे मत रहो न चीते ॥ १ ॥  
छोडो हठ बठोरता परसन ह्य आवो ।  
गुण औगुण की वातही मन ते बिसरामो ॥ २ ॥  
यो तन बीतो जान है अब क्या मन भावे ।  
आन मोको राम जो दिया वणु आव ॥ ३ ॥  
जगत पति पणुजण ज्यो बिरनारा मारा ।  
कनीराम का दाजियो अब दरस तुमारा ॥ ४ ॥<sup>३</sup>

१ बाबा मनाहरदास की बाणी, पृ० ४०

२ वही, पृ० ६०

३ श्री हरिमण-मञ्जूषा, पृ० १३८

पतित उधारण राम जी शरणागत सरी ।	- -	१२
इत्रत हूँ भवरूप म वैया गहो मेरी ॥८६॥		११
गुधम कहु साध्यो नही अधम मन दीना ।		११
अथ न सा या एक हू अनर्थ बहु कीनी ॥१॥		११
हम मम अपता वा नही सब जग कि देखो ।		
आत पाप को पोडलो, करिये कहा लेखी ॥२॥		
ऐम अधम अनाथ को तुम बिन बुण राखे ।		
शरणाई साधार हो सन शाश्व भाखै ॥३॥		
एसी सण शरणो गहूया भावै सो कीजो ।		
कनोराम का बाती निरभय पद दीजो ॥४॥ <sup>१</sup>		१२

### सवकराम

परमहंस सवकराम रामनन्दी सम्प्रदाय की विरक्त शाखा के प्रवर्तक परशुराम जी के शिष्य थे । इनका पूरा जीवनव्रत अतीत व अधकार मे विलीन हो गया है । साम्प्रदायिक परम्परा में उन कवल इतना ही जात है कि इ हाने जापाठ पूर्णिमा स० १८६१ को दीया ली थी और पाप शुक्ल अष्टमा, शुक्रवार, स० १९०७ को अंगार सप्ताह से सन्त के लिए विदा हो गय ।<sup>२</sup>

१ इति कुन आठ थ या की रचना की, जो निम्नलिखित है —	
१ भगत प्रभाव	५ परसराम जी की परची
२ शब्द प्रकाश	६ विधवा विचार
३ निष्पक्ष तिलिय सार	७ गुरु शिष्य सम्वाद
४ परमहंस प्रकाश	८ हरिवश

इनके अतिरिक्त इनकी फुलकर रचनाएं भी मिलती हैं, जो हस्तलिखित रूप में, भूरमागर रामगारा (जोधपुर) में सुरक्षित हैं । सवकराम की वाणी बड़ी ही भधुर और भावा प्रवाद गुणपूर्ण है । इनका सरल जीवन अद्विप्रम भाषा में मुन्वरित हो उठा है । इनका रचना के कुछ नमूने नीचे दिये जात हैं —

कोऊ जान न पात कुटब तरा, घर घाम घरा रह जायगा रे ।  
 अ मान न तात न भ्रात सगी, मृत दास चारा पायगा रे ॥  
 जब जम गोरावर वाम घेरे, तब जाडा काऊ नोह जायगा रे ।  
 कहै सवगराम समार साई, ऐती जीव अकेलाई जायगा रे ॥

<sup>१</sup> या हरिवश मङ्गला, पृ० १३७  
<sup>२</sup> जोधपुर स्थित समाधि के शिलालेख से

यह सुप ससार सुपन जैसा, सो तो जागत जाय विलायगा २ ।  
जैसे छाहि बादर की जोर बनी, तो सो नक न बिर रहायगा रे ॥  
पुन सीत का कोट सूरज उ<sup>१</sup>, नीर जजरी नाहि ठहरायगा रे ।  
कहै सेवगराम सभार साइ, जैस जिद तेरी चल जायगा र ॥<sup>१</sup>

कुजर मि-यां कुपीत करे तन, मिष सर्व भय जावे ।  
मिलिया अही अत हुय तन का, चोर मार मुम खावे ॥  
राकस मिल्या रहै नाहि बाकी, मूल आदि ले जावे ।  
छोडै नही आर बस पूगत, सोइ धरै चढ़ खावे ॥  
गत्र है चान जान कर कसर, बेनी नागिन कहिये ।  
काम चोर बस है ता माही, वदन एकसी लहिये ॥  
यह सब प्राण लेहकर छूटै समझ्या तो नही जावे ।  
नापी तरक जीव ता भुगते, मुवा नरक ले जावे ॥<sup>२</sup>

ऐसे साधु सगति मिल भेलो रो होरो ।  
साधु सगति अज सकर चाहै, सुर नर नाग सकोरी ॥८२॥  
चौरासी फिर नर तन पायो, पूरख पुण्य मिलो रो ।  
छूट गया पीठे पछिनासा ब्रू न सफल करलो रो ॥  
परहित सत पुकार कहत हैं यो जग जाल तजो रो ।  
कोटि निनागूँ राजा रमिया, सो पुन साख भरो रो ॥  
गुरु गम पाग भेल हुय सनमुख, ज्ञानगुलाल गहो रो ।  
प्रेम मजल निषकारा छूटत, नख सिल भीजि रहो रो ॥  
चित्त चदन गुर गाल अरणाओ, चोवा चान चुनो रा ।  
सूधा सुरत लगाय रैन तिन, जनहद नाट सुनो रो ॥  
भक्ति परा जिव पाप परम पद, निश्चल होय रहो रो ।  
जनम मरण केरा मिग जावे, नख तत देह दहो रो ॥  
अनत कोटि रम पार पहुँवा, गुह गोविन्द स जोरो ।  
सेवगराम सतगुर सग खेलै, जोसर साज समोरी ॥<sup>३</sup>

### निर्मलदास

इनका जन्म राजस्थान के रासतरो नामक किसी ग्राम में हुआ था । इनके पिता का नाम कृपाजी और माता का महजाबाई था । ये जाति के गौड़ ब्राह्मण थे ।  
अल्पकाल में थोड़ी शिक्षा प्राप्त करके ही इन एक सिद्ध योगी से उपदेश पाकर स पाठ

बाणो गुटका—जेताबनी को अंग छ० ५-६ । २ भक्त प्रभाव—अष्टम प्रभाव,

छ० २४ २७ । ३ निगण भजनमाला. प० ११ ।

ले लिया। उस समय स ये मारवाड के पानी नामक ग्राम में रहने लगे थे। एक बार रामदास जी के शिष्य लालदास धर्म प्रचारार्थ पाली गये थे। उनके मुख से अनुभव वाणी सुनकर य द्रुत प्रभावित हुए और खैडापा जाकर अगहन शुक्ल २, सम्भत् १८४५ को उनसे दीक्षा ली। कहते हैं कि दीक्षा देने समय जब रामदास जी इनके गले में कठी बाँधन लगे तब उन्होंने परीक्षा लेने के अभिप्राय से अपना गला बढाना शुरू किया। रामदास ने इनके मन की वान जान ली और वे भी अपनी कठी बढाने लगे। अंत में उन्होंने इनके गले पर मुष्टिक प्रहार करते हुए इन्हें डाटा। परिणामस्वरूप, इनकी सिद्धि जड़ हो गई। फलतः उन्होंने उनकी शरण लेकर क्षमा माँगी। दोस्रोबारात ये फिर पाली चले गये और वही पर आजीवन साधनारत रहे। इनका देहावसान चैत्र शुक्ल १, रविवार, सं०, १८८२ को हुआ। इनकी शिष्य परम्परा आज भी पाली में चल रही है।

निम्नलिखित की वणी सख्या १८, २५२ श्लोक है, जो पानी रामद्वारे में मुरझित है। सूरसागर (जीवपुर) रामद्वारे के बतमन महत्त परमहंस जभयराम के सौज्य से वे वन वाणी का विवरण मान प्राप्त हो सका है जो निम्नलिखित है —

साधी—३७६०। सवैया—१२५। इदव—८४। मनहर—८१। रखता—२५७।  
 किवत जग २२-३०९। किवत प्रसंग ८-१६। पुत्रवर—९०। कुडनिया जग—८४-  
 ८३४। चन्द्रायण जग ८४५००। हरिजस राग ३० २६६। भूलना—६०। इसके अतिरिक्त इन्होंने ३५ ग्रंथों की भी रचना की है।

### भावनादास

उत्तमवी शताब्दी के राजस्थान के प्रसिद्ध महाभाषा में महात्मा भावनादास का नाम जगदगण्य है। इनका जन्म सम्भत् १८८८ के आस-पास हुआ था। प्रयत्न करने पर भा इनका जन्म-भूमि और जन्म तिथि ज्ञात नहीं की। इनका गुरु का नाम दामोदरदास था। दामोदरदास खैडापा जाचाव पीठ के तीसरे पाठाध्यावर पूरणदाम के शिष्य थे।<sup>२</sup>

१ भावना हमारे गुरु दामोदरदाम हीरे।

धीरे धर्म घारी धार पूज्य पद पायो है ॥

—अमरकोष टीका प्रस्तावना, पृ० १।

२ तिनके प्रगट दास पूरण प्रमानियतु।

पूरन ज्यो चद प्रेम पूरण प्रकाश है।

जिनकी लुनाइ प्रभुताई माधुताई ताहि।

हरत जन त होत हिय म हुलाम है।

दामोदरदास ताई दीन पनि दियतु।

मोना मनि मन्द का प्रनामी भव पास है।

—श्री भागवत एकादश भाषा टीका (गुरु प्रनामिका), प० ८० ९१।

इनकी साधना-भूमि जोधपुर थी। जोधपुर में जूनीनगर नामक स्थान पर आज भी भावनादान का रामद्वारा वलमान है जहाँ इनकी परम्परा चल रही है। इनका देहावसान वि० सं० १९६५ में हुआ।<sup>१</sup>

भावनादास एक पहुँचे हुए महत्तमा, प्रभावशाली उपदेशक और कुशल प्रवचनकर्ता थे। ये सस्त्रुत के प्रकाश पंडित और हिंदा के सिद्धहस्त कवि थे। इन्होंने 'श्रीमद्भागवत' के एकादश स्कंध, 'श्रीमद्भागवत गीता' तथा 'भृगु हरिशतक त्रय' का पद्यबद्ध अनुवाद बड़ी सफलता से किया है। 'चाणक्यनीति' और 'अमरकोष' को भी हिंदी में छंदबद्ध रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय इन्हीं को है। इनके भजना का एक संग्रह 'भवन भजन रत्नावली' नाम में प्रकाशित हो चुका है। भावनादान की समस्त रचनाओं को ब्रह्मानंद शरधुवीर सिंह जी रानी साहिबा ने प्रकाशित करवाया है।

अनुवाद तथा में भावनादास जी की भाषा परिमार्जित और सस्त्रुत पदावली से सुसज्जित है, किंतु भजनादि में राजस्थानी की छटा दशनीय है। ब्रजभाषा, अवधी राजस्थानी और सस्त्रुत पर आपका समान अधिकार था। इनका रचना के कुछ नमूने नीचे दिये जाते हैं —

उपदेशत सिख मूढ कहूँ, विभिन्नारिनि दिगशास ।  
 अरि को करत विनास उर, विदुपहु लहत विनास ॥४॥  
 भामिनि दुष्टा मित्र सठ, उत्तरायक भूत्य ।  
 अहिजुत बसत अगार म, मव विधि मरिबो सत्य ॥५॥  
 धन गहि राखहु विपत हिन, धन ते बनितो बोर ।  
 तजि बनितो धन को तुरत सबतैं रखहु शरीर ॥६॥  
 कुल हित त्यागिय एक का, गृहहु छाडि कुल ग्राम ।  
 जननद हित ग्रामहिं तजहु, तन हित अबनि तमाम<sup>२</sup> ॥७॥  
 मंद मंद हासन तैं बदन अनंद दय ।

सरल तरल नन वैभव कला बढाहि ।

पुहुप भगी से बैन बरमत हुलास हीय ।

नूतन विलास उक्ति रचना भली रचाहि ।

गौन के अरम्भन में रहहु अचभ नात ।

लीला के समाज होत जाहि मने जनाहि ।

जबै तरुनाइ मुगनैनिन के छाडि तन ।

नाहा रमणीय तबै तिनती तिनोक माहि ॥<sup>३</sup>

१ भावन भजन रत्नावली—भूमिका । २ पौंश चाणक्य नीति, पृ० ३० ।

३ भृगु हरि शतकत्रय—शृङ्गारमञ्जरी, छ० ३० ।

काई भूलो मूढ़ गवारा, तर लगे तुटेरा सारा ।टेरा।  
 मात पिता तिरिया मुन बधू, मजही लोग टगारा ॥१॥  
 छूटत हैं चहुँ दिश ते तोहू, दगाराज ससारा ॥२॥  
 तूँ कर पाप कुट्टुम को पोपत, ती गिर बंधे भारा ॥३॥  
 जम जम आय पकड ते जामी, दूर हूतो सुत दारा ॥४॥  
 कर चलने की तयारि बूच का, तो गिर घुरत नगारा ॥५॥  
 करना मो अब ही कर लीजे भावन हुय हु गियारा<sup>१</sup> ॥६॥

### खेताराम

खेताराम मरुधर देशस्य भांडीसर नामक ग्राम के निवासी थे । इनका जन्म कार्तिक शुक्ल १४, स० १९४५ को हुआ था । ये बचपन से ही मत् प्रवृत्ति के थे । जाठ बप के भी नहीं हुये थे कि इ होने में १९५२ में गुम्दीक्षा सेली । इनके दीगा-गुरु खेडापा पीठाचार्य हरलाल जी थे । ये वैशाख शुक्ल १४, स० १९८४ को परमोक्तवासी हुए ।

खेताराम एक कुशल संगीतकार और प्रसिद्ध धर्मोपदेशक थ । अपने ह्मही गुणा के कारण, ये मारवाड मेवाड, गुजरात, मालवा, वरार आदि प्रदेशो मे प्रसिद्ध हो गय । इनके भजना का एक ह्मस्तलिखित सग्रह बीकानेर के रामद्वारे मे सुरक्षित है, जिसमे से कुछ पद 'श्री हरियश मङ्गपा' म सकनित्त किये गये हैं । इनकी का ये शैली के उदाहरणस्वरूप दो पद नीचे दिये जान है —

तेरी कुदरत पे कुर्बान भेद तेरा किसी न न पाया ।

तेरी कुन्दरत पे बलिहार ॥टेक॥

पल म बहते अथाह समु दर, जिसका चार न पार ।

पल मे हूँडा मिले न पानी, लीला अपरम्पार ॥

पल म पुष्प बिले बागा मे, फूल रही फुलवार ।

पल म पलट गई सत काया, मूल गई सब डार ॥

पल म माता पुत्र गोद म, लेकर करती प्यार ।

पल मे रोती खडी पुत्र बिन, जिन न यन हजार ॥

पल म जो मानुष महाराजा, परजा पावनहार ।

पल मे राज सिंहासन छूटा, त्रिखर गया धरवार ॥

याते समझ विचार देख लो, यह जग स्वप्न अमार ।

खेताराम कहे कर जोरे तेपा जग करतार ॥२

(१) भावन भजन रत्नावली, पद ३८, पृ० ३३-३४ ।

(२) श्री हरियश मङ्गपा, पृ० ३२३-२४ ।

कोई विरले मिनस मया दिल के ॥टेक॥  
 योगी यति म यामो जेते, देव लिण सबके खिलके ।  
 परिडत कवि जन गुणी गवैया, भेग साधु देवे मिलके ॥  
 सब घट करत त्रिगाड शत्रु ये, काम क्रोध उपर दिलके ।  
 घोर अविद्या अधकार म, चित उज्ज्वल कैसे बिलके ॥  
 मल विकेष आचरण नाही प्रेम नूर मुख पर मिलके ।  
 सेताराम खरी यो कहता, मन राजी जिनसे मिलके ॥<sup>१</sup>

### प० उत्साहराम

प० उत्साहराम का ज म राजस्थान के बाडमेर जिले क भऊ टिया नामक ग्राम म चैत शुक्ल १४, वि० स० १९५५ को एक साधारण किसान परिवार मे हुआ था । जब आप बहुत छोटे थे आपके माता पिता अर्ध-वृच्छता के क रण घर छाडकर जोबिका की खोज मे जोधपुर का ओर चले आये जीर दुर्भाग्य से इमी बीच जापरो ६, ७ वर्ष का छोडकर चल बसे । पिता को खोकर जाप इस बायावस्था म ही परमपिता की खोज म लग गये । गौभाग्य से हे हिम्मतराम जैम उदार महात्मा का आश्रय मिल गया । इहीं महाराज से जापने स० १९६२ में दीक्षा ग्रहण का । तनिक बड होने पर इहोने विद्यारम्भ किया जीर सम्बत् १९७५ तक ज ययन करते हुए याकरण, साहित्य, दशन तथा आयुर्वेद का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया । इसके उपरांत आपने धर्म प्रचार का बीडा उठाया । यह गुफ काय करते हुए आपने अहमदाबाद, पूना, नागपुर, अमरावती आदि स्थानो का भ्रमण किया । हिम्मतराम के देहावसान क उपरांत स० १९६६ से आप जोधपुर म स्थायी रूप से निवास कर रहे हैं । जाप धर्मोपदेशक होने के साथ-साथ अच्छे वैद्य भी हैं ।

पंडित जी इस समय राममनेही सम्प्रदाय के एकमात्र कवि हैं । राजस्थान के प्रसिद्ध कवि बाकीदान के साहचर्य में रहकर य काय-रचना में प्रवृत्त हुये ।<sup>२</sup> इनके काव्य मे ब्रजभाषा की माधुरी देखने योग्य है । अभी तक इहोने निम्नलिखित छ ग्रथो का प्रणयन किया है —

- (१) नल दमयती चरित्र
- (२) वृष्ण दैत्य प्रसंग

१ श्री हरियश मञ्जूषा ।

२ सदा सुहावन गरवडी विर निवान शुभ धान ।

राम प्रताप विन्ध्य वर कविवर बाकीदान ॥

तित प्रसंग कविता तनो चाव लग्यो मुझ चित्त ॥

—श्री दयायु शिष्य चरित्र, पृ० १५३ (कवि का आत्म निवेदन)

- (३) दयानुदिव्य चरित्र
- (४) बलहस का कजरब
- (५) वीर वावनी
- (६) श्री रामक्षेत्री मत- दिग्दर्शन (गद्य)

इनकी काव्य शैली के कुछ नमूने नीचे दिये जाते हैं —

कौन कमनोय रूप त्रिय श्रुति धारिनी तू,  
 शारदा समानी भने वीणा सुभ्रु पानि ना  
 पुष्य पुगण वधू पद्मजा परै ना सखि  
 सत्तमत ज्ञाना सत्त पद्य अनजानी ना  
 नाहीं तू भवानी जगन्मवा जगजानी सोइ  
 ब्रह्म विद्या रूपा वाके दश कछु हानी ना  
 रूप मदसानी ज्यो दिवानी बन माहि डोले  
 बोले बया न बानी दवि तोहि पनिकानी ना ।<sup>१</sup>

गुरन क मुख तूर बढे रण तूर भुन न मुन प्रण मेली  
 भीषण त्या भूटकी भकुटी बसिके यमराज रहे रण खेली  
 सजय साहस के सहमा गलमाल धरै जय श्री अलबेलों  
 कज वृषापन कानन म कमला बलहस करै नित बेसी ॥<sup>२</sup>

सत्तत सत्तत क हम सेवक  
 सत्य सनातन मारण गामी  
 राम निरजन को जप जाप  
 भये निष्पाप मिटी सब खानी  
 छोडि सबे विषयारम छोडर  
 है अब आनंद सागर स्वामी  
 कोई हमार विगारि सबे कहा  
 साहब रच्छक है धनलामी ॥<sup>३</sup>

- १ श्री दयानुदिव्य चरित्र, पृ० ४७ ४८
- २ वीर वावनी, छ० ५०
- ३ श्री दयानुदिव्य चरित्र, पृ० ५३ ५४

## रेण-शाखा के साहित्यकार :

### दरिया साहब

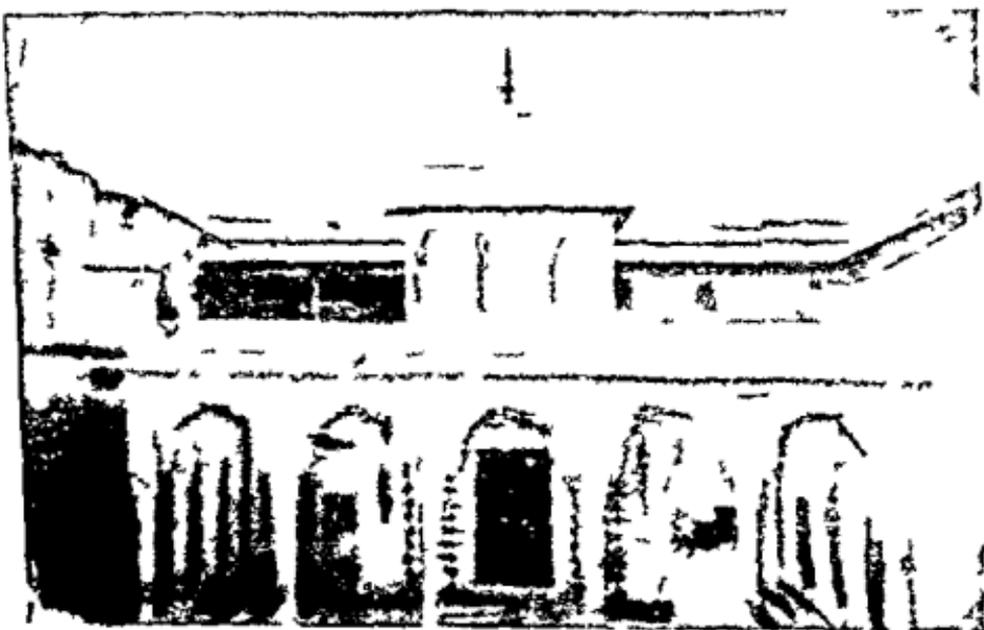
रामसनेही सम्प्रदाय की सर्वाधिक प्राचीन शाखा रेण के मन्थ्याक दरिया साहब की वाणी में कही भी ऐसा उल्लेख नहीं है जिसके आधार पर उनकी जन्म तिथि अथवा उपस्थिति काल का निणय किया जा सके। इस सम्बन्ध में हमें बहिस्साक्ष्यों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। दरिया साहब के शिष्य और पूरणदास के शिष्य पदुमदाम कृत 'जन्म लीला' के अनुसार दरिया साहब का जन्म भादों वृष्ण अष्टमी, वि० सं० १७३३ को हुआ था।<sup>१</sup> इनके एक दूसरे शिष्य विश्वनाथ क प्रतीक शिष्य मदाराम ने भी दरिया साहब का जन्म काल भाद्रपद वृष्ण ८, सं० १-३३ ही माना है।<sup>२</sup> जयरामदाम<sup>३</sup> एवं आत्माराम<sup>४</sup> कृत लावणियों में भी इसी तिथि को पुष्टि होती है। आचार्य नितिमोहन सन<sup>५</sup> डा० रामकुमार वर्मा, प० परशुराम चतुर्वेदी<sup>६</sup>, प० मोतीलाल मेनारिया<sup>७</sup> प्रभृति विद्वानों ने भी इसी तिथि को स्वीकार किया है। दरिया साहब की समाधि पर भी यही तिथि अंकित है।

रेणवीठाचार्य श्री क्षमाराम द्वारा प्रकाशित 'श्री स्व० दरियाव महाराज की अनुभव गिरा' में इनकी जन्मतिथि इस प्रकार दी हुई है :—

- १ सतरा में के समत बरम तैतीसा भारी ।  
मास भादवा बंद अष्टमी तिथि इवकारी ॥  
—जन्म लीला
- २ समत मन्ना सो जाणल्यो पुन तैतीसा सार ।  
बंदी भादवा अष्टमी जन दरिया अवतार ॥  
—दरिया साहब की परची
- ३ सतरासे तैतीस का जन्म अष्टमी जण  
जन्म लियो दरियाव जी, रोप्या भक्ति निमाण  
—लावणी, छ० प १
- ४ सतरा सौ के समत माही तहतीसा की साल  
भादवा बंद अष्टमी शुभ कारी  
—लावणी, छ १
- ५ Medieval Mysticism of India-p 135
- ६ हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ४०२
- ७ उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृ० ५७८
- 'जस्थानी भाषा और साहित्य, पृ० ३०५



श्री दरिया साहब (रिण-शाखा के प्राचार्य)





मतरा सौ की माल मं वर्ष बनीसो जान ।

माम मात्र बदी अष्टमो प्रगट वृषानिधान ॥<sup>१</sup>

उपर्युक्त उद्धरण के अनुसार दरिया साहब की जन्म-तिथि भाद्रपद कृष्ण ८, १७३२ ठहरती है। उपर्युक्त दोनों तिथियों में दिन और मास का अंतर न होना हुए भी पूरे एक वर्ष का अंतर पड़ जाता है। इनमें से सन् १७३३ की तिथि ही अधिक समीचीन प्रतीत होती है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य विचारणीय है —

- (१) दरिया साहब की ममाधि का निर्माण उनके समकालीन लोगो द्वारा हुआ है इसलिए यह निश्चिन्त अवश्य ही उन लोगों द्वारा समर्थित रही होगी।
- (२) पदुमदास और मदाराम दरिया साहब के प्रशिष्यो म म थे। इसलिए इन लोगो के साम्य अधिक प्रामाणिक मान जायेंगे।
- (३) ममी विद्वानो ने इसी तिथि का समर्थन किया है।
- (४) 'अनुभव गिरा' म छत्र हुए जीवन-चरित्र के लेखक और रचनाकार का कही उल्लेख नहीं है। अतः इसकी प्रामाणिकता सिद्ध है।

दरिया साहब के जन्म-स्थान के सम्बन्ध में विद्वानो म मतभेद नहीं है। सबने एक स्वर से जेतारण की इनकी जन्म भूमि स्वीकार किया है। 'जन्म लीला'<sup>२</sup> और 'परची'<sup>३</sup> से भी इसी मत की पुष्टि होती है। 'अनुभव गिरा' के अनुसार<sup>४</sup> दरिया साहब की प्राप्ति उनके पोषक मानशाह को द्वारका में, समुद्र तट पर स्नान करते समय, सागर की लोल लहरियों में क्रीडा करते हुये शिशु रूप में हुई थी।<sup>५</sup> कहने की आवश्यकता नहीं कि यह कल्पना साम्प्रदायिक प्रवृत्ति के अतिवाद से प्रेरित

१ स्व० श्री दरियाव जी महाराज की अनुभव गिरा, पृ० ४६

२ जेतारण में बाण प्रगट्या दरिया दादा ।

—जन्म लीला

३ मारु देस विख्यात नग्न जेतारण भारी ।

जन दरिया महाराज आप आया वपुधारी ॥

—परची

४ बडे पजर की बर, गया सिधु तट नाणे ।

सलिल हाव जब मान केन मून में ज्ञाने ।

सीह पुत्र उर साय हरप मन भवन सिधाय ॥

—अनुभवगिरा, पृ० ५१



प० मोतीलाल मेनारिया विद्वानों की दरिया साहब की जानि विषयक इस मायता का प्रत्याख्यान करते हुए इ ह इतर जानि का बताने है<sup>१</sup> जो कि सर्वथा भ्रान्तिपूर्ण है। वस्तुतः साम्प्रदायिक साहित्य ने एक स्वर से दरिया साहब के धुनिर्वा जात्योत्पन्न होने की पुष्टि की है।

दरिया साहब की दीक्षा क सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है। प० मोतीलाल मेनारिया ने इनको हिन्दी, संस्कृत, फारसी आदि का अच्छा ज्ञान बताया है।<sup>२</sup> सम्प्रदाय की ओर से प्रकाशित बाणी में छपे जीवन-चरित्र के अनुसार उन्होंने काशी में जाकर, न केवल संस्कृत भाषा का अध्ययन किया था वरन् व्याकरण, पुराण, शास्त्र, ज्योतिष, कायशास्त्र, दशन आदि विषयों का भी पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया था। इसके अतिरिक्त इन्होंने कुरान के एव-एक कलमे का मन्तन भी किया था।<sup>३</sup> 'कल्याण-सन्त अक' में दरिया साहब को निरक्षर कहा गया है।<sup>४</sup> ऐसी स्थिति में इनकी शिक्षा के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता है। इतना अवश्य है कि इनकी बाणी कवित्वपूर्ण और भाषा सुव्यवस्थित है, चाहे वह सत्सग का ही परिणाम क्या न हो।

दरिया साहब के गुरु का नाम प्रेमदास था। प्रेमदास जी बीकानेर राज्य में स्थित ब्रियाननगर नामक स्थान के निवासी थे। वे बालकदास के शिष्य और सतदास के प्रशिष्य थे। सम्प्रदाय वाले अब प्रेमदास को सतदास का शिष्य बताते हैं जो तथ्याधारित नहीं है। साम्प्रदायिक परम्परा के प्रसंग में, इस सम्बन्ध में विस्तृत विवेचन किया गया है। दरिया साहब का दीक्षा-काल कार्तिक शुक्ल ११, वि० सं० १७६९ है।<sup>५</sup>

दरिया साहब की साधना-भूमि आधुनिक नागौर जिला तगत स्थित रेण नामक स्थान था। जब ये केवल सात बप के थे, इनके पिता का देहांत हो गया।

१ राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ० ३०८

२ वही, पृ० ३१०

३ अनुभव गिरा, पृ० १२२

४ कल्याण सन्त अक, पृ० ६२१

५ (क) समत सतरै भया रया सतरै में एका।

मिलै प्रेम दरियाब ग्यान का करण बभेका ॥

—जम लीला

(ख) तैतीसा को जनम गुणातरे दीप्ता ली ॥

काती सुद एकादशी प्रेम जी किरा की हो ॥

—परची

तभी मे य अपनी माता के साथ ननिहाल रैण म रहने लगे । का पालन-पोषण नाना कमीस ने किया ।<sup>१</sup> विरक्त होने पर इमी स्थान को दरिया साहब ने अपनी माधना-भूमि बनायी । आज भी रैण म दरिया साहब की समाधि पर निमित्त सुगमरमर का मय स्मारक उनकी घबल कीर्ति का गुणगान कर रहा है । दरिया साहब ने मरुधरा के इस रेणुकामय रैण म ज्ञान, भक्ति, और योग की ऐसी त्रिवेणी प्रवाहित कर दी कि कुछ लोगो ने 'रैणु' को ही दरिया का उद्गम मान लिया । इतना हा नहीं, दोनो का ऐमा घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हा गया कि रैण, दरिया की रेणु बन गये और दरिया साहब बन गये उस भरभूमि के दरियाव ।

दरिया साहब ने ८३ वष से कुछ अधिक आयु भोग कर, मागशीर्ष पूर्णिमा, सम्बत् १८१५ का अगम देश के लिय प्रस्थान किया ।<sup>२</sup>

दरिया साहब विरचित कोई रवतत्र ग्रथ नहीं मिलता है । इनकी केवल अगवद्ध वाणी ही प्राप्त है जो सख्या म बहुत कम है । कहने है इ होने 'बाणी' नामक एक बहुत बडा ग्रथ लिखा था जिसम १०,००० के लगभग पद श्लोके आदि थ किन्तु अब उसका कोई पता नहीं चलता । इनकी वानियो के दो सग्रह—एक बेल-वेडियर प्रेम इलाहाबाद से और दूसरा प्रधान पीठ रैण (राजस्थान) से क्रमश 'दरिया साहब (मारवाड वाले) की वानी' और "स्व० श्री दरियाव जी महाराज की अनुभव गिरा" नाम से प्रकाशित हो चुक है । भाकर (राजस्थान) निवासी आनन्दराम रामस्नेही द्वारा प्रकाशित 'रामस्नेही सत वाणी' मे भी दरिया साहब की कुछ रचनाए सकलित है ।

दरिया साहब की भाषा म बड़ी ही सरलता तथा अभिव्यक्ति म पर्याप्त सजीवता है । उदाहरण स्वरूप कुछ छंद नीचे दिय जाने है —

साधो एक अचभा दीठा

कडवा नीम कहै सब कोई पीने जाको मीठा-मडेक॥

१ (क) वष सप्त का भया पिता परलोक सिवाया ।

जैतारण से चाल मानु सग राहणु जाया ॥

नाना नाम कमीस भाग मोनो अति भारी । —अनुभव गिरा, पृ० १५

(ख) कल्याण (सत अक, पृ० ६२१) म दरिया साहब का पालन-पोषण उनकी दादी कमीस के घर पर होने का उल्लेख है । यह मन सर्वथा भ्रामक प्रतीत होना है क्योंकि बाप की मा को दादी कहा जाता है और बाप एव दादी के दो घर नहा होने । यदि हो भी तो ऐसा नहीं कि दोनो रैण और जैतारण जैसे दूर स्थान स्थानो पर रहने नगें ।

२ समाधि के शिवा लक्ष से ।



राम भज, राम भज, राम भज रे मना  
 राम ही राम भज सत जावे  
 जीव हर जान सब काल की नीरणी  
 सतगुरा शरण विज प्रेम पीवे  
 मर की सेरिया सत जन सचरे,  
 गुप्त का गली मिल जाय दीना  
 जोग की जुगन मू पुरप आसन किया  
 अगम अस्थान घर जाय लीना  
 सरण दरियाव की दास पूरण कहे  
 ब्रह्म ही ब्रह्म मिल ब्रह्म चीना ।<sup>१</sup>

जत समय बी घेर शोक नही कीजिये,  
 माह ममत का जीव राम भज लीजिये ॥टेरा॥  
 अत त्रो त्याग दह, सहा नही रोईये,  
 नै ॥ डार नीर पाप बहु हाईय ॥१॥  
 जो कोई करे विलाप प्राणी दुख पावशी,  
 मोह ममता के हत नरक जीव जावशा  
 अत का उ सब मान बडाई पाइय,  
 हस गये निज धाम काहे पछिताइय  
 राव रक सरदार गया सब छोड रे,  
 भूठो है ससार रहण नही होय र ।  
 पूरण गुरु दरियाव दया जय होवशी,  
 सत का अर्थ विचार परम पद पावशी ॥<sup>२</sup>

### किसनदास

किसनदास दरिया साहब के शिष्य थे । इनका जन्म दामोजी और  
 बेदी नामक मेघवशोय (चमार) दम्पति के घर भाद्र कृष्ण पंचमी, वि० स०  
 १७४५ को हुआ था । इनकी जन्मभूमि रण निकटस्थ टूकला नामक स्थान

१ वही, पृ० १०३

२ श्री रामसनेही सातवाणी एव भवन सग्रह, पृ० २४६

है ।<sup>१</sup> दूकला को ही आपने अपनी साधना भूमि बनायी । इन्होंने २८ वर्ष की अवस्था तक गृहस्थ जीवन व्यतीत करने के अनंतर वैशाख शुक्ल ११, सं० १७७३ को दरिया साहन से दीगा सी थी । इनके विरक्त होने का कोई विशेष कारण नहीं ज्ञात होता । दयालुदास ने इन्हें भक्त-अश ने आविर्भूत बताने हुए जगत्-जल से पद्म दल की भाँति निरलस कहा है ।<sup>२</sup>

किसनदास जी की १९ रचनाएँ और सावी, क्वित, कु डलिया, चन्द्रायण, रेखता, अरिल आदि छन्दो में लिखित अगबद्ध वाणी प्रस्तुत लखक ने जोधपुर नगर में गुलाब सागर निवस्य रामदारे के बाणो-सप्रहानय में देवी हैं । प्रथो की नामवाली निम्नलिखित है —

- |                 |                      |
|-----------------|----------------------|
| (१) गुरु महिमा  | (७) निरभ ध्यान       |
| (२) भक्तमाल     | (८) ग्यान उदान       |
| (३) गोरख छन्द   | (९) सुमिरण ध्यान     |
| (४) भरतरी उपदेश | (१०) अगोचर पुराण     |
| (५) जमविराट     | (११) सप्तश्लोकी गीता |
| (६) चाणक्य बोध  | (१२) अगाध बोध        |

१ राहण पासो दूकलो किसन पुरुष को गाँव ।  
सप्तदीप नवलखण्ड में सो तो साना नाहि ।  
सो तो साना नाहि आप हरिदास जी आया ।  
होता आदू ग्यान ध्यान धुन वही समाया ॥  
पतित केतो पावन कियो रटयो ज हरि को नाम ।  
राहण पासो दूकलो किसन पुरुष को गाँव ॥

—मदाराम वृत्त भक्तमाल

२ भगत अश परगट भये किसनदास महाराज धिन ।  
पद्म गुलाब सफूल जनम जग जल सू यारा ॥  
सीप आस घाकाश समद अप मिले न खारा ।  
परगट राम प्रताप अघट घट भया प्रकासा ॥  
अनुभव अगम उदोत ब्रह्म परचे तत भागा ।  
मरुधर पावन करी गाँव दूकले वास जन ॥  
भगत जश परगट भये किसन दास महाराज धिन ॥

—भक्तमाल, (दयालुदास) छन्द १३५

(१३) नाव बोध	(१७) सुखमण ध्यान
(१४) वि तावणी	(१८) हरजस
(१५) समरथ बोध	(१९) रामरक्षा
(१६) अचल बोध	

इनकी रचना के कुछ नमूने नीचे दिये जाते हैं —

राम राम अमर अवनामी सब घट व्यापक स्वामी ।  
 अघट अतोल अमोल अररवल अविगत अतरजामी ॥  
 दीनदयाल दयानिधि देवा सेवा सिवरण सारण ।  
 पूरण ब्रह्म परम परमानन्द आणन्द अधम उधारण ॥  
 केता तिरया तिरैगा केता सतगुर सबद अराध ।  
 मिथ्या सुफेर मरहिगा नाही सध्या मृ ह्रीइगा मध ॥<sup>१</sup>  
 नीन्डला नहि आवै रमइया प्रिना । टेक ।  
 निम वासर मरी पलक न लाग जामत रेण प्रिहावै  
 सास उसास राम धुन लागी जप तप मारी जावै  
 जावण कह गया अबू र जाया विरहा कुण विलमावै  
 याकुल विरह भई तन देटा धन जावन नहि भावै  
 तन मन वार वर कर डारू पति दीदार दिखावै  
 किमनदास विरहित की वाता सदगुर विन कुण धावै ॥<sup>२</sup>  
 काठ मथ्या निकस अगन, दधि मध निकस धीव ।  
 राम रटया से किसनपास, ग्रह होत है जीव ॥  
 सुल चाहो तो राम कसो, सब म राम अराध ।  
 किमनदास जामण मरण, दोना मिटे वियाध ॥  
 मन मुन्ना मस्सोत में, ऊभा करे अवाज ।  
 किसनदास निज नाव को, नसलिन पड़े निवाज ॥  
 किमनपास सदगुर दिया, किरपा करके पीव ।  
 सरने राम न जो लख्यो विपै भुलख्यो जीव ॥  
 पाखड पातक न मिटे, जव ला रटयो न राम ।  
 किसनदास सिवरण सही, खरी खरी को वाम ॥<sup>३</sup>

१ अचल बोध, छंद २-४

२ गावण का पद, सं० १३

३ रामस्नेही सत वाणी और भजन सग्रह, पृ० १२७

दिन दिन जन्म बीतो जाय ।  
 भक्त तज भज राम रमता, बहो मतगुरु जाया । डेर ।  
 बान हेरु किर निषदिन, तुरा जोवन लाय ।  
 सास जाय फिर आवत नाहा, नाम की तज समाय ॥  
 जनन तरा किया जामू रह्यो क्यो रे रिसाय ।  
 कह्यो मेरो मान मूरख, राम वग मनाय ॥  
 राम नाम उबार रसना, भजन कर एक भाय ।  
 जाय मिल जहाँ घणी तेरा, जामण मरण मिटाय ॥  
 मयो मोमर वोहोर नही, र वारता बह जाय ।  
 भजन कर भजा होय तरा, नाम नर हरि गाय ॥  
 होय सचेत अचेत मत रह, जाग जीव जगाय ।  
 किमनदाम तिठुँ लोक तारण, नाम नाव चलाय ॥<sup>१</sup>

### नानकदास

दरिया साहब के शिष्यों में नानकदास प्रथम पात्त्र्य हैं ।<sup>२</sup> इनका जन्म और मरण की तिथियाँ अभी तक ज्ञान नहीं हो सकी हैं, किन्तु इतना निश्चित है कि ये सम्बन्ध १७७८ में वर्तमान थे ।<sup>३</sup> दरिया साहब का समकालीन होने के कारण भी इनका समय विक्रम का १८वीं शताब्दी प्रमाणित होता है । इन्होंने ग्रेण (राजस्थान) को अपनी साधना भूमि बनाया ।<sup>४</sup>

सम्प्रदायात्गत नानकदास की श्याति एक सिद्ध महात्मा के रूप में रही है । पद्मदाम ने, किसनदास, सुखराम और पूरणदाम

१ रामस्नेही सत वाणी, पृ० २२६ २७

२ अन्तस्मात्प्रय स भी इनका दरिया साहब का शिष्य होना प्रमाणित होता है—

दाता गुरु दरियाव सही गुरुदेव हमारा ।

राम-राम सुमिराय पतित को पार उतरा ॥

—गुरु महिमा

३ सतरा से बीनर की साला, ताही समय पढियो द्वे काला

पूरण नानक कीये चाता, हूँगर विरघा से कियो हाना

—दरियाव जी महाराज की नावणी, आत्माराम, छ० ८

४ पूरण नानक पाम नेनसी गुलाबी दाउ

कृपाराम बगताराम देवीचद रग मे

सतरे ये सतजन रेण के सग मे ।

—दरियाव साहब की अनुभव गिरा, पृ० ३१६

के साथ इ हे भी भक्ति को प्रकाशित करने वाला बनाया है ।<sup>१</sup> दयालुदास वृत्त 'भक्तमाल' के निम्नलिखित छंद स भी इनके व्यक्तित्व पर विशद प्रकाश पड़ता है —

राम सिंवर निरमल भया सुध मन नानकदास जन ।  
 सूर वीर मधोर टेक गुरु आनाकारी ॥  
 बाहू लिपत न छिपत भगत पण व्रत कौ धारी ।  
 घट बिच अघटा पाप त्रिकुटि में आसण कीहा ॥  
 जनम मरन भव भेट जाय निरभे घर लीना ।  
 भगत भोम का घर सकन गुरु दरिया परताप मन ॥  
 राम सिंवर निरमल भया मुध मन नानकदास जन ॥<sup>२</sup>

अभी तक नानकनाम विरचित फुटकर साखी और पद के अतिरिक्त 'गुरु-महिमा' नामक एक लघु कृति ही प्राप्त हुई है । 'गुरु महिमा' आनंदराम रामस्नेही द्वारा प्रकाशित, श्री रामस्नेहा सतवाणी एव भजन सग्रह नामक पुस्तक में सकलित हो चुकी है । उदाहरणार्थ इनकी कुछ पक्तिया नीचे दी जाती हैं —

जामण मरण राग है मोटा ।  
 सतगुरु जिना नान सब खोटा ॥  
 गुरु बिन नान कहाँ, से सूभै,  
 गुरु बिन भरम्या पाधर पूजै ॥  
 गुरु बिन जीव अगति अधिकारी,  
 गुरु बिन भक्ति मिले नहि प्यारी ॥  
 गुरु बिन पार ब्रह्म कुण पावै,  
 गुरु बिन जीव जगति में जावै ॥  
 गुरु बिन वेद शामतर बांधे,  
 गुरु बिन पडित भूठ अराधे ॥  
 गुरु बिन तीरथ व्रत फिर आवे,  
 गुरु बिन ठोक ठोड नहि पावै ॥

१ किसनदास मुखराम उजागर पुरण नानकदास ।  
 निख चारों प्रगट दरिया के, बरी भक्ति परकास ।

—रामस्नेही सतवाणी पृ० ३५२

२ भक्तमाल, छ० ४३६

गुरु बिन होम यज्ञ बहु थापे,

गुरु बिन क्रिया कम कुण कापे ॥<sup>१</sup>

कर मन आरती राम निवाजे, गगन मडल धुन अनहद बाजे ।  
 प्रथम पूज गुरा का पाया, दीन दयाल दयाकर आया ॥  
 रचना भजन हृदय हरि वावा, नाभि केंवल निज नाद प्रसासा ।  
 मन का पुहुप भाव की पूजा, अलख निरजन जीर न दूजा ॥  
 इडा पिगला सुपमन मेला, पाँच पुरुष त्रिवृटी मेना ।  
 सुरत निरत मे जाय समावे, नानगदास आरती गावे ॥<sup>२</sup>

### चतुरदास

यह भी दरिया साहब के शिष्य थे । अन्तस्माभ्य ग भी इनका दरियानाहब का शिष्य होना प्रमाणित होता है ।<sup>३</sup> य एक गृहस्थ सत थे । य वही चतुरदान हे जिनकी बहन से सत हरखाराम के पिता विजयराम का विवाह हुआ था । स्मरणोय है कि चतुरदास का पूरा परिवार दरिया साहब का अनन्य भक्त था जिसके कारण विजयराम जैन धर्म का परित्याग कर रामनेही सम्प्रदायातर्गत दीर्घिन हो गये थे । चतुरदास ने अपना सम्पूर्ण जीवन दरिया साहब के साहचर्य में रहते हुए रण में व्यतीत किया था । रचना-शैली के नमूने के रूप में इनकी 'गुरु महिमा' से दो छन्द नीचे दिख जाते हैं ।

सतगुरु जन दरियाव पर वारू तन मन प्राण ।  
 पतित जीव पावन किया जादू अपना जाण ॥  
 जादू अपना जाण प्राण मोहि शरणे लीया ।  
 बालक के मुख माहि डला मिसरी का दीया ॥  
 मुख छोटा बड चीज किसी बिध पाई जावे ।  
 चूसे शोली रीत जीम ताको रस आवे ॥<sup>४</sup>

बिधो रीत कैसे बखे (जहाँ) प्रेम प्रीति को प्यार ।  
 सकल सूक्ष साइ के सारे ई को किसो विचार ॥

१ श्री रामस्नेही सतवाणी एव भजन सग्रह, पृ० १४२

२ श्री दरियाव जी महाराज की अनुभव गिरा, २८६-२०

३ चैला चतुरदास दरिया को दरिया बास बसाणो ।

—गुरु महिमा, छ० ४

४ श्री रामस्नेही सतवाणी एव भजन सग्रह, पृ० १४८

ईको किसी विचार भार सब उनको छाजै ।  
उलटा विरद विचार और सब सुलटा लाजै ॥  
साचा शिष्य दरियाव का सब सुणली-यो का ।  
कहुँ महिमा गुरुदेव की मेरा मुख उनमान ॥<sup>१</sup>

### मनसाराम

मनसाराम भी दरियामाहव के शिष्य थे ।<sup>२</sup> इ हान "जस्थान के साँजू-नामक स्थान पर निवास करते हुए साधना की थी ।<sup>३</sup> साम्प्रदायिक साहित्य से इनके जीवन-वृत्त पर स्वल्प प्रकाश पता है । इनका वाणी में नाम साधना, साधु-लक्षण, जीवन की नश्वरता आदि का विशद बणन हुआ है । उदाहरणार्थ इनकी दो कुण्डलियाँ नीचे दी जाती हैं —

ररकार महाराज की, महिमा कर महेस ।  
नारद नौ जोगेमराँ, निस दिन ध्यावे सेस ।  
निस दिन ध्यावे सेस, पार ब्रह्मा नहि पावे ।  
सनकादिक शुक याम, सिपत्त ध्रुव नामो गावे ।  
पैगम्बर अवतार सब, कह्यो तमो आदेस ।  
ररकार महाराज की, महिमा करे महेस ।<sup>४</sup>  
साध साध सब कोइ कह, साधू विरला कोय ।  
लालच लोभ न मान मद साधू कहिये सोय ।  
साधू कहिये सोय भोग वा मारग सावे ।  
सब मत मिथ्या दख, एक ही ब्रह्म, अर धे ।  
गान घटा बरस सदा, सगत सीतल होय ।  
साध साध सब कोई कहे, साधू विरला कोय ।<sup>५</sup>

१ श्री रामस्नेही सतवाणी एव भजन सग्रह पृ० १४८ ४९

२ आभा वाई ने अना शिष्य सम्प्रदाय नामक रचना में दरिया साहव के बहत्तर शिष्या में मनसाराम का नामो-उल किया है ।

३ जादूराम हरीदेव अभीराम मनसाराम ।

भोगणी ये साँजू माँय सत येठ सेम जी ॥

—शिष्य सम्प्रदाय, आभा वाई छ० ४

४ श्री रामस्नेही सतवाणी एव भजन सग्रह, पृ० १५० ५१ ।

५ वही, पृ० १५१-५२

## टेमदास

रामसनेही सम्प्रदाय की रण शाखातगत टेमदास की बड़ी श्रद्धा के साथ स्मरण किया जाता है। य दरियासाहब के शिष्य थे। इनकी साधना भूमि डीढवाना थी। पदमदास वृत्त एक पद भे कतिपय अथ रामसनेही सता क साथ टमदाम का गुरु-निष्ठा का वणन करते हुए उस जन भोन के सम्बन्ध स उपमित किया गया है।<sup>१</sup> इनका जावन कात्र विरम की १८वी एव १९वी शता क मध्य माना जा सकता है। इन्हान अगवद्ध वाणी और पदों की रचना की है। इनके द्वारा विरचित आरती का एक पद नीचे दिया जाता है —

नमो नमो गुरुदेव को सद्गुरु सय ही सत ।  
 जन टमनाम बदन करे नमो निरजन कव ॥  
 आरति राम गुराँ की कीजे ।  
 गुरति लयाय दरश सुख कीजे ॥  
 सद्गुरु शब्द लिया ततसारा ।  
 सान छूटा जगत पमारा ॥  
 मिट गया भरम भया लजियारा ।  
 सहज जा सुया मुक्ति का ताला ॥  
 बार बार स सुरता लागी ।  
 दिल का नाई सवहा भागी ॥  
 हृदय माहि ब्रह्म का वासा ।  
 काटि मनु का भया प्रवासा ॥  
 सेवक स्वामी एकहु होइ ।  
 टेम न दरलै दूजा कोई ॥२

### मुखरामदास

मुखरामदास का जन्म मेढवा स्थित हनुवर नामक ग्राम म हुआ था। ये जाति के सोहार थे।<sup>३</sup> इनकी साधना भूमि मेढवा था। ये अपने समय के श्रेष्ठ साधक थे

१ मतसारा म छेम जन टेमा, गमनाम नवनीन ।  
 हिल मिल हत गुराँ का चरणा पूरु उल माहीं भोन ॥

—श्री रामसनेही सतवाणी, पृ० ३५२ ।

२ श्री दरियाब महाराज की अनुसूचि मिरा, पृ० १०० ३०१ ।

३ जन मुखरामा जात सोहारा ।

लिव कुरसाग सगारा ।

और दरिया साहब के शिष्यों में अग्रगण्य माने जाते थे । इनकी साधना का परिचय दते हुए दयानुदास जी लिखते हैं —

गुरु दरियाव सह पात्रम पद मुखराम राम पीवक पिया ।  
मन मजमस भिट जहर, निमल नख चख मुख घारा ।  
आरत चिरह उदोत, लिंगन प्रिय प्राप्त पियारा ।  
आसण अचल सधार, सदा सिवरण दिस सूरा ।  
खिद कुरसाण लगाय, काल क्रम कीना दूरा ।  
जीव सीध मिल अमर पद, चरण सरण जावक पिया ।  
गुरु दरियाव सह पारमपद मुगराम राम पीवक पिया ।<sup>१</sup>

इनकी सिद्धि के सम्बन्ध में अनेक किंवदंतियाँ प्रचलित हैं । प्रसिद्ध है कि एक बार भारखाड-नरेश बस्तसिंह बिनी असाध्य रोग से पीड़ित हुये । उन्होंने दरियामाहब की प्रसिद्धि सुनकर उनमें कृपा की याचना की । दरियासाहब ने मुखरामदास को भेजा । मुखरामदास के उद्देश में बस्तसिंह पुन स्वस्थ हो गये । इनका दहावसान फागुन शुक्ल ११ सं० १८२२ को हुआ ।

मुखरामदास की वाणी बड़ी ही प्रौढ़ सरस, और भावपूर्ण है । इनकी निम्नलिखित १५ रचनाएँ प्रसिद्ध हैं —

- |                 |                    |
|-----------------|--------------------|
| (१) भक्त वशावली | (८) आत्म बोध       |
| (२) वि नामणि    | (९) अगाधबोध        |
| (३) चाणक बोध    | (१०) अणभै बोध      |
| (४) भरम तोड     | (११) ब्रह्म निसाणी |
| (५) विचार बोध   | (१२) ध्यान मूल     |
| (६) ग्यान दीपक  | (१३) नाव निसाणी    |
| (७) ग्यानसार    | (१४) विचार निसाणी  |
|                 | (१५) नृपति बोध     |

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त साखी, किबत, चन्द्रायण, रेखता, पद आदि छन्दों में अगबद्ध और फुटकर वाणी की रचना भी इन्होंने की थी । इनकी रचना के कुछ नमूने नीचे दिये जाते हैं —

निशदिन जोऊँ बाट पीव घर आइये ।  
चाहि तुम्हारी माँहि दरश लिखलाइये ।  
कैसे धरिये धीर पीर है पीव की ।  
हरि हौं । बिन दरशन मुगराम किसी गत जाव की ।

तलफ्त रैण विहाय दिवस जाय तलफता ।  
 दोत गई सब आयु विरहनी कलपता ।  
 दया न आवे तोय खबर नही लेत है ।  
 हरि हा ! यूँ विरहन सुखराम सदेशो देत है ॥  
 आवो दया विचार सलोना श्याम जी ।  
 आया ही सुख होय सरै सब काम जी ।  
 चेरी अपणी जान दरश पिव दीजिये ।  
 हरि हाँ ! साच कहे सुखराख विलम नही कीजिये ॥<sup>१</sup>

चलो सब सतगुरु जी के दरवार ।  
 चलो सब ग्यानी गुरु के दरवार ॥टेर॥  
 किया करम सबही कट जावे, जम मुफल नर नार ॥१॥  
 सब कूँ दान मोय का देव दरिया सा दातार ॥२॥  
 ग्यान भक्ति वैरान उपजे दरिया के दीदार ॥३॥  
 अर्थ धर्म अरु काम मोय फल देत पदारथ चार ॥४॥  
 अब सुखराम परमपद पावै जीव होत भव पार ॥५॥<sup>२</sup>

तन मद धन मद राज मद, पृथ्वी लागे पाय ।  
 जम की झाट बुरी हे राजा सब मद उत्तर जाय ॥  
 भाया मद भूले भती जम शिर खरची खाय ।  
 सुखाराम साची कहे केता गया विलाय ॥  
 राम सिवर सुखराम कह मरणो एकण वार ।  
 एकण मरणो मुक्ति है, एकण जम की मार ॥  
 क्षमा क्षमा सब कोई कहे हुकम सबल पर होय ।  
 जम पकडे सुखराम कह तो दिन सगी न काय ॥<sup>३</sup>

क्या तू जटा बघावै रे, क्या तू घुरइ मुढावै रे ।  
 क्या तू नित उठ न्हावै रे, क्या तू राख लगावै रे ।  
 क्या तू तन मन नागा रे, क्यूँ गुरु सबद न लागा रे ।  
 क्यूँ तू फिरे उदासी रे, यूँ तेरी कटे न पासी रे ।  
 क्या तू दूषाहारी रे, क्या तू सुघ-बुध हारी रे ।

१ श्री रामस्नेही सतवाणी, पृ० १३०

२ श्री रामस्नेही सतवाणी, पृ० २२९

३ ऋषबोध, छ० ११-१४

बयू तू उठे आकामा रे, बयू तू जाइ निराशा रे ।  
 बयू तू धरणी धँसे रे, बयू तू मर मर बसे रे ।  
 बया तू देवल दरमण रे बया तू भया न परसण रे ।  
 बया तू फेरै माला रे, यो तरा बटे न जाना रे ।<sup>१</sup>

निगम का अथ संसार सारा कहे  
 जगम को अर्थ कोई सत पाये  
 निगम हूँ वद विधि मिथ सबही कहै  
 अगम हर ग्रह ज्यो सत जायै  
 नाव की मोट जम चोट लागै तही  
 मुन का मवद भू सुरत लागी  
 चढ्या आकास कन वास सबही मिटी  
 प्रगटया मुरन जग जोत जागी ॥<sup>२</sup>

### हरखाराम

हरखाराम का जन्म आधुनिक नागौर जिले के फिडौद नामक गाँव में, वि० स० १८०२, भाद्रपद कृष्ण १२ को हुआ था। इनके पिता का नाम विजयराम और माता का बालाबाई था। ये जाति के खटेलवाल वैश्य थे। हरखाराम जन्म से ही रामसनेही थे। इस सम्प्रदाय में ज्ञात यह है कि इनके पिता विजयराम पहले जैन धर्मावलम्बी थे। इनका विवाह रेण में चतुरदास की बहन से हुआ था। चतुरदास दरिया साहब के शिष्य थे। एक बार विजयराम समुद्राल गये। वहाँ दरिया साहब का उपदेश श्रुत पान करने का उन्हें अवसर मिला। उससे प्रभावित होकर ये दरिया साहब के शिष्य हो गये। बाद में इनका पूरा परिवार दरिया साहब का अनुगामी हो गया।

हरखाराम पाँच भाई थे—नेमचन्द, जयचन्द, श्रीचन्द, लक्ष्मीचन्द और वे स्वयं। इनमें हरखाराम सबसे छोटे थे। ये पाँचों भाइँ दरिया साहब के शिष्य थे।

बड़े भ्रातृ निज नेम विष्णु पद बहु विधि गावै ।  
 द्विज जे चन्द घट ग्यान राम भजि राम रिझावै ॥  
 तृतीये श्रीचन्द राम सदन के आज्ञाकारी ।  
 चतुरथ लक्ष्मीचन्द वृद्ध की किरपा भार ॥

१ भ्रमतोड छ० स० १०-१३

२ बाखी गुटका, प० स० २२५, रेखता छ द २४१-४२

हरखाराम सधु सवन मू करी भगत विरुदावली ।  
सतगुर जन दरियाव की सव ऊपर किरपा भली ॥<sup>१</sup>

हरखाराम की साधना-भूमि नागौर थी ।<sup>१</sup> नागौर के राजवंश में इनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी । जोधपुर के राजघराने में भी इनका बड़ा सम्मान था । वहीं से इन्हें 'रामनामी महात्मा की उपाधि मिली थी जो अब तक चली आ रही है । इनकी महिमा का वखाव करने हुए दयानुदास कहते हैं —

रामनाम की टेक पर हरखाराम सधीर मत ।  
जात यात जग राज मुख मिल पन पच हारे ।  
किमकी रत्ना न मक राम जन राम पियारे ॥  
कूठण यात राज बल देव दबाई ।  
सो हम छाडी सकल साध सगत जिन जाई ॥  
विजयराम भजमम पुतर पण राख्यो महाराज सत ।  
राम नाम की टेक पर हरखाराम सधीर मत ॥<sup>२</sup>

अगष्ट बाणी और फुन्कर छंदा के अतिरिक्त इनकी निम्नलिखित १७ रचनाएँ उपलब्ध हैं —

- |                          |                     |
|--------------------------|---------------------|
| (१) गुरुमहिमा            | (६) करुणा सागर      |
| (२) भुजगी गीत            | (१०) नाम निवार      |
| (३) गम चित्तामणि         | (११) नेपैसार        |
| (४) गम चित्तामणि (छोटी)  | (१२) भ्रमवि बस      |
| (५) भक्तमाल <sup>१</sup> | (१३) भ्रमतोड        |
| (६) शब्द भेद निसाणी      | (१४) अजामिन की परची |
| (७) ब्रह्म विलास निमाणा  | (१५) नारायण लीला    |
| (८) नाम निसाणी           | (१६) करुणरस वत्ताशी |
|                          | (१७) नान समुद्र     |

नमूने के लिए इनके कुछ छंद नीचे दिये जाते हैं —

रामनाम ततसार, सर्व ग्रथन मे गयो ।  
सन्त जनत विद्याण राम ही राम सरायो ॥

१ भक्तमाल, छंद ६०८-१०

२ जन्मभूमि फीहोद चाल नागौडे आया ।

विजय राम का पुत्र विजय निसाण बजाया ॥

३ भक्तमाल, छंद १४०

वेद पुराण उपनिषद कह्यो गीता मे ओही ।  
 ब्रह्मा विष्णु महेश राम नित ध्यावे सोही ॥  
 ध्रुव प्रह्लाद कबीर, नामदे आदि प्रमाणी ।  
 सनकादिक नारद, शेष जोगेश्वर सारा जाणी ॥  
 सो सदगुरु प्रताप त, कियो ग्रथ विस्तार ।  
 जन हरका तिहुँ लोक में राम नाम तत्सार ॥<sup>१</sup>

रमता रमैया हो, झूठी ब्यू नहि सुणो पुकार ।  
 सरणो आयो अब मैं स्वामी जाऊ किणरे द्वार ॥टेरा॥  
 या जग में कोई सग न साथी देख्या निजर तिहार ।  
 सुख माहे स्वाराय का सगी सब मतलब का पार ॥  
 भवसागर भव-जल भ्रम भूल्यो मृग तृष्णा ससार ।  
 जाहा जीव जाग कडु नाही देख्यो सुखत विसार ॥  
 चूक कस्य मुज मे बोही तरी पग पग को गुनागार ।  
 अब मैं तोऊँ कदे न तजूस जीत होय भावै हार ॥  
 सब जन जाणो ए जीवतारग मैं पतितन को दूहार ।  
 मेरा करम सखल सू बिटा जाको वार न पार ॥  
 गात कहुवो याती जाती घर धन देस दुवार ।  
 तरे कारण सब तज दीना राम घणी करतार ॥  
 भरा औगुण का लग बरणु तुम गुण अपरम्भार ।  
 हो महाराज अरज सुण मेरी अपणी बिहद विचार ॥  
 सब जिव तरे आपरे बैठा करे इकतार ।  
 हरकाराम कहे हरी आवो इण औसर इण बहार ॥<sup>२</sup>

क्या जामा क्या पागडी, क्या तूकी लगोट ।  
 राम जिना उतर नतीं, सिर पापा की पोट ॥  
 सिर पापा की पोट, खोट तो दह में माई ।  
 कपडा मे क्या दोम दोम कर दो उतराई ॥  
 हरका हर दिन ना मिटे, जम जानम की घोट ।  
 क्या जामा क्या पागडी, क्या तूकी लगोट ॥<sup>३</sup>

१ दरियाव जी की अनुभव गिरा, पृ० २२७-२८

२ रामसनेही स त वाणी एव भजन सग्रह, पृ० २४२-४३

३ रामसनेही सन्तवाणी एव भजन सग्रह, पृ० १८८

## मदाराम

मदाराम का आविर्भाव फाल्गुन शुक्ल १३, स० १८२५ को राजम्यान के जालण्यार नामक ग्राम में रागौर क्षत्रिय वंश में हुआ था। इनके गुरु का नाम बुधारा राम या बुधसागर था। बुधाराम किशनदास के शिष्य और दरिया साहब के प्रशिष्य थे। इन तन्त्रियों के समर्थन में डेहू रामद्वार के सत श्री गोपालदाम द्वारा प्राप्त निम्नांकित श्लोक उद्धृत किया जा सकता है—

जात प्रांत राठीड मे, जन्म जालण्यार ग्राम।

बुधसागर के सरगो रह्यो मदाराम है नाम ॥

इन्होंने बीस वर्ष की अवस्था में, वि.सं. १८४५ के आपाण मास में, दीक्षा ग्रहण की थी। इनकी साधना-भूमि डेहू थी जो नागौर में लगभग १२ मील पूर्व में स्थित है। यह भाद्रपद वृष्ण अष्टमी बुधवार सम्बन्ध १९१० को जीवन-लीला समाप्त कर परमगति को प्राप्त हुए।

अब तक मदाराम विरचित कुल पाच ग्रंथ और कुछ फुटकर पद ही प्राप्त हो सके हैं। इनके 'प्रश्नोत्तर' नामक एक छोटे ग्रंथ का भी पता लगा है किन्तु अभी तक वह प्राप्त नहीं हुआ है। प्राप्त ग्रंथों का नामावली निम्नलिखित है —

- |                            |               |
|----------------------------|---------------|
| (१) दरिया साहब की जन्मलीला | (३) गुरुमहिमा |
| (२) बुधसागर की परचा        | (४) दा अष्टक  |
|                            | (५) भक्तमाल   |

इनकी रचना शैली के कुछ नमूने नीचे दिए जाते हैं —

राजपाट घन मोय न भावै, दासी तरी नाम बडाई।  
 सुरग नरक की सासे नाही सतसगत सुखराम गुसाई ॥  
 जहँ जह जाऊँ राम ही गाऊँ ओदत राम सदाई पाऊँ।  
 मदाराम की अरजी एही ओदत दीजे किया सहती ॥

मन रे जगत भूठो जाण।

कृण तेरा तु कुण कामू ज मिलीछै आण। टेक।

जैसे मारग बीच में मिल्पा बटाऊ आण ॥

किस विष प्रीत ज कीजिए आप आप दिस जाय।

जैसे पक्षी रैण का तरवर बैठा छाय ॥

भोर भया उठ जायगा किरण सु नेह लगाय।

ऐसो यह ससार है -सो तू नहचै धार।

जैस मेलो हाट को किरण सू -कीजे प्यार ॥

आवत था यो एकलो जाता सगी नाहि ।  
 ऐसी जप तप हावसी समझ देव मन माहि ॥  
 महजा ही सासा चले सहजा सिमरण होय ।  
 सहजा ही निरप्यो करे, कथा जापणों सोय ।  
 कथा आणो भोय सदा नेणा के माही ॥  
 सोवे नेणा जीर बाहर लाभी फुन नाहीं ॥  
 मन्ाराम माची कहै काची नाही कोय ।  
 सृजा ही साचा मिले सहजा सिमरण होय ॥

### सहजराम

सहजराम जो राजस्थान के चाडो नामक स्थान के निवासी थे । यह मेघदास नामक कृष्ण महात्मा के शिष्य थे । अनस्तान्य से भी इन तथ्य की पुष्टि हाती है ।<sup>१</sup> इनके बहुत से पद यत्र तत्र संकलित हैं । इनकी 'सतगुरु महिमा' नामक, १४ छंदों की एक लघु रचना भी प्राप्त होनी है । नमूने के लिए कुछ छंद नीचे दिये जात हैं ।

राम गुण गायले साजा थका शरीर ।  
 पीछे याद न आववसी रे विजर व्यापै नीर ॥ टेक ॥  
 जोदन थका भज लीजिये रे जेज न कीजे वीर ।  
 फेर बुटापो आवसी रे नेना डरसी नीर ॥ १ ॥  
 अबसर बीतो जात है रे ज्युं अजलो को नीर ।  
 फेर न हसो आवसी र शण सरवर के तीर ॥ २ ॥  
 भाग भला सतगुरु मिनर्गो रे पडयो समू से सीर ।  
 हसा होय चुग लीजिये र नाम अमोनक हीर ॥ ३ ॥  
 सब दवन को दव है रे सब पीरन को पीर ।  
 'सहजराम' भज लीजिय रे दुख भेटण मुख सीर ॥ ४ ॥<sup>२</sup>  
 चैन चैन भज राममनेहा अबसर बीतो जावे र  
 महा पदारथ मिनखा देही वार वार नहि पावे रे ॥ टेक ॥

१ जन्म-जन्म को दालद्री भूखो निपट कपाल ।

भनवत कीनो सहज कूँ सतगुरु मेघ दयान ॥

—सतगुरु महिमा, छन्द २

२ श्री रामसनेही सत वाणी एव भजन सग्रह, पृ० २६८

पावण्डो है यो तन अब के आज काल म जाव रे ।  
 भज ले राम, मुक्ति के दाता सतगुरु भेद बतावे रे ॥ १ ॥  
 एसो दाव बहुरि नहि आवै गोविन्द क्या नहि गावे र ।  
 आधो हाथ जमोनक हीरा सो जनि बाद गमावे रे ॥ २ ॥  
 राजा परजा एकण मारा अतकाल सब जावे रे ।  
 भजन करे सो पार पहुच बंमुख परले जावे र ॥ ३ ॥  
 जमे साई यिर नहि काज जो दास सो जावे र ।  
 धरियादिक वचे सो नाही जमरो सबकूँ खावे रे ॥ ४ ॥  
 एक बेर चारो युग माटी यह मिनवा तन पावे रे ।  
 सहज राम भज रामसन्ही प्राण परम गति पावे रे ॥ ५ ॥<sup>१</sup>

### आभावाई

राजस्थान के नारो सतो मे आभावाई का नाम बडे ही सम्मान के साथ दिया जाता है । इनके भौतिक जीवन का वृत्त अतीत के अधकार मे विनीत हो गया है । अतस्साध्य स प्रकट होता है कि इनका ज म किसी राजवश मे हुआ था ।<sup>१</sup> ये दरिया साहब के प्रमुख शिष्य टेमदास की शिष्या थी ।<sup>२</sup> इनकी साधनाभूमि डीडवाना थी । अभी तक इनकी दो रचनाएँ—'गुरु महिमा' और 'शिष्य सम्प्रदाय' तथा कुछ फुटकर पद ही प्राप्त हो सके हैं । इनकी रचना के कुछ नमून नीचे दिये जाते हैं —

सुखज्यो सिरजण हार, दीन होय कन्त हूँ ।  
 पूरण ब्रह्म निधान सरण मे रहत हूँ ।  
 पालो पोखो आप तात तुम मात जी ।  
 मस्तक राखो हाथ निरजन नाथ जो ।  
 विडद तुमारो आद लज्या है आपने ।  
 छोड़ होय कपूत सरम है वाप ने ।

१ श्रीरामस्तेही सन वाणी एव भजन मग्नह, पृ० २४१

२ राजनाति मे गरक थो नी दाम की रीति ।  
 पर उनकारी गुरु मन्वा की ही साची प्रीति ॥

—गुरु महिमा, छ० २२

३ जन जमा सतगुरु मिया परशन हो गयो मन्न ।  
 बलिहारी गुरु टेम जी तपत बुझाई तन्न ।

—वही, छ० ३१

सुरत निरत मन ल्याय ध्यान धुन ध्याइये ।  
 सास उसासा राम अखड निव लाइये ।  
 आठो पहर अखड भजो एक राम जी ।  
 मन का मनोरथ राम सारो सब काम जी ।  
 करो बिडद की वार वेद कहे साध जी ।  
 बकसो मेरा छून गुहा अपराध जी ।  
 दया करी जै दयाल गुर भुज ऊपरे ।  
 जन अम्भा भजो राम मनोरथ सब सरे ।<sup>१</sup>

इस विध देव की आरती कीजे ।  
 तन मन जरय चरन चित दीजे ॥टेरा॥  
 मन माला सेवा सनगुर श्री की हा तपन मिटे सत्र तन की ॥१॥  
 ध्यान का धून मन कर अगार चित कर चदन तिनक गभीर ॥२॥  
 भालर सुरत शब्द कर डका वाजै नाद लथे गढ बका ॥३॥  
 सुपमन-श्रीर शकोदक छाजै ज्ञान को घगटा गगन में वाजै ॥४॥  
 पाँच कर वाजी पुण्य चढाउ दास अभा मिल हरि गुण गाऊ ॥५॥<sup>२</sup>

कर सनगुरु जी रो सग याद कर पीव ने ॥टेक॥  
 गरभवास की धार भार बहु जीवने ॥  
 सुत बनिता क हेत पच्यो दिन रात र ।  
 जम जोरावर लार, करे निज घात रे ॥  
 मोह रया लभटाय लोभ वश पड गया ।  
 जोड या पाँच पचीस अठे घर गाडिया ॥  
 तेरो सगी नाम स्वारथी लोग है ।  
 सुण सता की सोख भजन कर जोग है ॥  
 छुरा पहुँची आय नीर नैना करे ।  
 या सन की नर आश अज्ञ नहि परहरे ॥  
 सत कह्यो समभाय ज्ञान हृदय धरो ।  
 जन अभा भज राम दुर्मती परिहरो ॥<sup>३</sup>

१ श्री रामस्नेही सत वाणी एव भजन सप्रह, पृ० ३४६-४७

२ दरियाव जी की अनुभव गिरा, पृ० ३१०

३ श्री रामस्नेही सतवाणी एव भजन सप्रह, पृ० २४७

ग्रन्थ के कलेवर का दृष्टि में रचित हुए इस अध्ययन में रामसनेही सम्प्रदाय के सभी साहित्यकारों का जीवनवृत्त नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। अतः अब सन्त कवियों का गणित विवरण मात्र लेकर इस अध्याय का समाप्त करना उचित होगा।

### क—शाहपुरा शाखा

क्रम न०। साहित्यकार	गमय स०।	गुरु-नाम	माधना-भूमि	रचनाएँ
१ तुलसीदास	मृ० १८८५	रामचरण	—	वाणी और पद
२ काहलदास	मृ० १८६२	रामचरण	जानावार	'
३ चेतनदास	१८वीं शती	रामचरण	कोटा	,
४ उमाबाई	१९वीं शती	रामजन	—	"
५ चन्द्रनाम	१८०८-१८८७	दूल्हेराम	शाहपुरा	"
६ नारायणनाम	१८५३-१९०५	सुन्दरदास	शाहपुरा	"
७ दिनशुद्धराम	१९१०-१९५३	नारायणनाम	"	साखी और आरती
८ धर्मदास	१८०६-१८५४	दिनशुद्धराम	"	"
९ न्याराम	१८१८-१९६२	धर्मदास	"	"
१० नश्वरराम	१९वीं २०वीं शती	हिम्ममगम	,	ज्ञानपक्षीसी की टीका
११ जगरामदास	१९७७-१९६७	न्याराम	"	साखी और आरती
१२ निमयराम	१९४३-२०१२	जगरामदास	"	"
१३ लालदास	१९ वां शती	—	—	रामचरण की परची
१४ आनन्दराम	मृ० १९६२	रामनारायण	मून्वा	विनय बावनी
१५ सुप्रधाम	वर्तमान	निर्मयराम	—	निर्मयरामाष्टकम्
१६ रामनिवास	वर्तमान	मदाराम(मुल्ताम)	लानन	फूलगोल उत्सव
१७ मनारथराम	वर्तमान	अमोलकराम	दिन्नी	साखी और पद

### ख—सिंहधल-खैडापा शाखा

१८ धिनारीनाम	मृ० १८२५	हरिरामनाम	मिहधल	पद
	१८३५ के मध्य			
१९ नारायणदास	मृ० १८१३	"	"	ग्रन्थ चैतावनी, प्राणपत्रवा
२० राधोदास	मृ० १८७६	रामनाम	निमाज	स्फुट वाणी
२१ जाभूराम	१९ वीं शती	"	नमीराबा	पद
२२ सप्रामदास	"	"	ईडर (गुजरात)	वाणी और पद
२२ गोविन्दराम	"	"	धतरखे	वाणी और पद
२४ सहजराम	"	"	बोरानेर	पद

कालवाद वैशेषिक केवल मान बनात ।  
बनागत हमरे मते सकल पर मत सत<sup>१</sup> ॥

लेगी स्थिति में स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि सत माहित्य का दार्शनिक अध्ययन करना समीचीन है अथवा नहीं ? निगुणिया सत दार्शनिक नहीं है, यह मानना नहीं आपत्ति नहीं हो सकती । उनके साहित्य में किमी व्यवस्थित विचार-धारा का दर्शन नहीं होता, यह भी सत्य है । इसमें बाबूद इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि ये धार्मिक साधक थे । 'धर्म' मनुष्य की अनुभूतिया, विचारों भावनाओं और क्रियाओं का वह पक्ष है जिसके द्वारा वह अलौकिक सत्ता में सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करता है<sup>२</sup> । तापन यह कि धर्म के माध्यम से मानव उसी परममत्त्य या अलौकिक सत्ता का अन्वेषण करता है जो ज्ञान का मूल मन्त्र है । इस प्रकार दर्शन और धर्म में बहुत निकट का सम्बन्ध है । दर्शन आध्यात्मिक साधना का सिद्धांत पक्ष है तो धर्म उसका व्यावहारिक रूप । बिना धार्मिक आचारों के द्वारा कार्यान्वित हुए दर्शन की स्थिति निष्फल है और बिना दार्शनिक विचारों के द्वारा परिपुष्ट हुए धर्म की सत्ता अप्रतिष्ठित<sup>३</sup> । दोनों का सामंजस्य ही जायात्मिक साधना का चरम उत्कर्ष है । अतः परममत्त्य के ज्ञान के हेतु मानव-अन्वेषण का अग्र हाने के कारण धर्म का दार्शनिक अन्वेषण अत्यन्त आवश्यक है<sup>४</sup> ।

सन्ता की दार्शनिक विचारधारा पर अपना मत प्रकट करने हुए डा० पीताम्बर दास बन्धवाल कहते हैं—“हम उनमें (सन्ता में) कम से कम तीन प्रकार की दार्शनिक विचारधाराओं के स्पष्ट दर्शन होते हैं । ज्ञान के पुराने मतों के नाम में यदि उनका निर्देश करना उचित अद्वैत, भेगभेग, और विशिष्टाद्वैत बतल सकता है । पहली विचारधारा के मानने वालों में कबीर प्रधान हैं । बाद, मुदरदास जगजीवनदास भीष्मा, और यत्रक उनका अनुगमन करते हैं । नानक और उनके अनुयायी भगभेगी हैं और शिव-

१ विस्मरण सम्हार, पृ० ४१

२ R. H. G. : that aspect is a person's experience including his thoughts feeling and actions whereby he endeavours to live in relation up with what he deems to be divine

—The world's living Religion (R. E. Hume) P. 2

३ भारतीय दर्शन (बलदेव उपाध्याय), पृ० १३

४ Religion must also be studied philosophically as part of human quest for a knowledge of supreme reality

—The world's living Religion, p. 7

दयालु जी तथा उनके अनुयायी विशिष्टाद्वैती । प्राणनाथ दरियाद्वय, दान दरवेश, दूल्हेशाह इत्यादि गिबदयालु की ही श्रेणी में रखे जा सकते हैं<sup>१</sup> । इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि इस प्रकार का पूजाग्रह लेकर सन्त साहित्य का अध्ययन करना स्वतः सत्वाली नहीं है । सत्मत का दार्शनिक अध्ययन सर्वथा स्वतंत्र ढंग से करते हुए विभिन्न पद्धतियों से प्रभावित स्थला की ओर मन्त्र मात्र कर देना पर्याप्त है । डॉ० बद्धवाल ने जा विचार-मरणि प्रस्तुत की है उसका अनुसार रामसनेही सम्प्रदाय विशिष्टाद्वैतवाद के अन्तर्गत आता है किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि परम्परागत रूप से रामानुज की परम्परा में होते हुए भी इन सत्ता के दार्शनिक विचारों पर अद्वैत के साथ अत्यन्त दृढ़ता की छाया है । इसका कारण यह है कि सत्ता में कोई ब्रह्मबद्ध दार्शनिक अध्ययन नहीं किया था । उनमें जा बुद्ध ज्ञानकता थी यह मन्त्रों की देन थी । अतः सत्संग द्वारा सन्तित ज्ञान में अनेक-रूपता और विविधता का होना बहुत ही स्वभाविक है ।

## ब्रह्म

निगुण पथ का परम्परागत मायना के अनुसार रामसनेही सम्प्रदाय के आचार्यों ने 'राम' को ब्रह्मका पर्याय माना है और उसे ही परमतत्त्व स्वीकार किया है । साम्प्रदायिक साहित्य में उक्त हर रम<sup>२</sup> रामनिरजन<sup>३</sup> राम,<sup>४</sup> गोविन्द,<sup>५</sup> रामरमायन,<sup>६</sup>

१ हिन्दी काव्य में निगुण सम्प्रदाय पृ० १७

२ रामनाम हर रम पिथा अवा मन्त्रण मिताय ।

पात्रा कलम कुम्हार का चाक न चन्गी आय ॥

—रामनाम की वाणी, प० सं० १५

३ (क) राम निरजन निगुण यारा

—नाम परचा (हरिरामनाम), छ० ३६

(ख) देखा राम निरजन राया

—श्री रामसनेह धर्मप्रकाश, पृ० १५२

४ राम बिना फीका लग सब किरिया शास्तर जान ।

दरिया दीपक कहा करे उन्ध भया निज भान ॥

—रामसनेहा मन्त्र वाणी, पृ० ६८

५ गोविन्दा मित्र हमारा र,

मानि जग लागे खारा रे ।

—वही पृ० २३६

६ राम रमायन पीया प्याना

जैसे अवधू होय मतवाला ।

—वही, पृ० १७

शब्द, <sup>१</sup> ररकार, <sup>२</sup> हरि, <sup>३</sup> जगदीश, <sup>४</sup> नारायण, <sup>५</sup> रमापति <sup>६</sup> माधव <sup>७</sup> छालिक  
त्रिलोकीनाथ <sup>८</sup> सारङ्गपाणि <sup>९</sup> आदि विविध भारतीय नामों के साथ ही

१ (क) शब्द सरूपी राम उपज विनशैऊ नाही ।

सकल सृष्टि ता माहि सृष्टि मे आर समाहीं ॥

—अमृत उपदेश, —छात्र प्रकाश, छ० ४३

(ख) हरिया सौदा शब्द का दूजा सोना माहि ।

दूजा सौदा सो करै खाड परै मुक्त माहि ॥

—श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० ५३

२ जन दरिया आकाश लग आकार का राज ।

महामुन तिसवे परे ररकार महाराज ॥

—रामस्नेही सतवाणी, पृ० ५२

३ कह हरेश्व पिता हरि मुनिज्यो बाल करो प्रतिपाला ।

—श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० १८३

४ जाग रे जाग जगदीश कू याद कर बाद नर देह कू काई खोवै ।

—श्री रामस्नेहधर्म प्रकाश, पृ० २८

५ तेरा सज्जन को नहीं नारायण से तूल ।

—वही, पृ० ६६

६ धारण सूधा साहि, कारण ना रखि जगत को ।

तो मिले रमापति आप भक्त विछल विडद है जावो ।

—अथर्भ वाणी, पृ० ६

७ माधव का चाकर मैं हूँ ।

—श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० १५४

८ (क) छालिक छोटि खलक वू लग,

—वही, पृ० १४३

(ख) सो बड भागिया रे छालिक से मिल खेल ।

—वही पृ० १५७

९ नमो-नमो गुरुदेव को नमो त्रिलोकीनाथ,

अन र्जना कर दन्दता (कर) जाड नमाऊ पाध

गुरु महिमा', छ २

१० ऐसी आरती करो कोई ग्यानी ।

अरम तजो गहो सारगपानी ॥

—श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० २५३

हृदक, <sup>१</sup> रहिमान, <sup>२</sup> रब, - और, रहीम<sup>३</sup>, आदि नामों से भी अभिहित किया गया गया है। नामों की इस विविधता का देखकर स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि वाक़िर यह राम है कौन ? निगुण, सगुण, परात्पर या और कुछ ? 'निगुण' और 'सगुण' कहने पर प्रायः निगुण न निगुण—निराकर तथा सगुण में सगुण—साकार का अर्थ लिया जाता है। इस प्रकार के भ्रम का निराकरण हम इन शब्दों में कर देना चाहते हैं कि राममनेही सम्प्रदाय ही नहीं बरन् किसी भी निगुण सम्प्रदाय में साकार की आराधना नहीं की गयी है। उनका आराध्य निगुण सगुण, परात्पर चाहे जो हो किन्तु वह बह निराकार ही। राममनेह सम्प्रदाय के मतानुसार अपने परम उपास्य के लिए राम, हरि माधव, रमापति, जगन्नील, आदि पौराणिक नामों का प्रयोग अवश्य किया है किन्तु इनमें उनका तात्पर्य सगुण—साकार अथवा अवतारा से कदापि नहीं था। यद्यपि इस सम्प्रदाय के साहित्य में भक्ति के आवेश में लिखे गये ऐसे पद्यों की कमी नहीं है जिनमें यह प्रकट होता है कि इस सम्प्रदाय के राम नृसिंह रूप धारणा करके प्रह्लाद की रक्षा करने वाले, गज को ग्राह्य बनवाने वाले, चीर बढ़ाकर द्रोपदी की लाज बचाने वाले, ध्रुव को अटल राज्य देने वाले, वेदोद्धार के लिए बारह रूप धारण कर धरती का धपन दातो पर उठाने वाले, वामन होकर बलि का छानने वाले तथा अनन्त काल से भक्तों के लिए अवतार धारण करके उनकी इच्छा की पूर्ति करने वाले और सत शिरोमणि हैं, <sup>१</sup> किन्तु हमें भी हम अविष्कृत में अधिक पौराणिक एवं वैष्णव प्रभाव ही मान सकते हैं। "राम

१ हृदक का माथी हृदक है बहृदक के हृदक

—श्री राममनेहमप्रकाश, पृ० ६६

२ शिव ब्रह्मा सब ही चले जावे वेद पुराण ।

रामदास साईं सदा रहे एक रहैमाण ॥

—रामदास की वाणी, प० स २३

३ सानवार सोले तिया नपतर जाय सरब ।

नम गिर सब ही जायगे रहै एक ही रब ॥

—वही, प० स० २३

४ तूही रामा तूही रहीमा, जन हरिराम जपदा है ।

—घघरनिसाणी छ० ३०

५ (क) संत शिरोमणि अत जुगे-जुग भक्त हेतु अवतारा ।

“जन पूरण परताप राम के मिट गया विषय विकारा ॥

—राममनेही मनवाणी, प० ६२

पिता दशरथ कहै तो हाम जनम की परिण <sup>१</sup> की घोषणा करने हुए रामसन्तो सम्प्रदाय (शाहपुरा शाखा) के प्रवक्तक मत रामचरण ने कबीर के 'दशरथ सुत तिह लोक बगवाना रामनाम को भरम है आना <sup>२</sup> वाग मिद्धात का ही अनुसरण किया है। राम का यह

(ख) भज रे मन राम निरजन कू

जन्म मरण दुख भजन कू ॥ टक ॥

अध नाम सिल सायर पयो रामच द्र दल तागण कू ।

जल बूढत गज के फल काटे अजामील अध जारण कू ।

राम कहत गगिका निसतारी जुग जुग अधम उधारण कू ।

ऊच नीच की भ्राति न राखै शरणा की प्रतिपालण कू ।

'राम चरण हरि ऐस दारध अवगुण गुहा निवारण कू ।

—अणभ वाणी, पृ० ६६२

(ग) ऐसे हैं राम गरीब निवाज

भीर परी प्रह्लाद उबारे हिरण्यकशिपु हणताज ।

मा उपदश तियो ध्रुव सेती अण बसायो राज ।

टेर मूनत वेगि हरि आये तार लियो गजराज ।

जन द्रापा को धीर बधारयो भई पच भरताज ।

देवल फेर किया जन सागहो भक्त नाम द काज ।

दाम कबीर घरे लनि बालन आन उतारे नाज ।

मीरा जहर कियो चरणोत्क राखि भरोमो राज ।

सब मतन बे वारज मारे भक्त विरल की लाज ।

'जन हरिराम सदा मिध कामा राम मुमर महाराज ॥

—श्री रामस्नेहधमप्रकाश, पृ० १४७ ६८

(घ) विरला निधान बहियो त्रिज विरदा आप केरा ॥ टक ॥

अजामेल से अध मारे अत पुत्र हें पुकारे ॥

साद सुणे सुण ध्याय, जमदूता पास छुडाय ॥१॥

गजराज की सुणि वाणी सो ध्याये सारग पाणी ॥

निज आगे चक्र चलाये गज ग्राह क दुख मिटाय ॥२॥

आग अधम अपारे सो अध टर मुणि तागे ।

हम औगुण अधिक यात, प्रभु साण सुणो नहि तात ॥३॥

मुभ ओगुण लुभ ना लहिया सो अधम तार नुम कहिया ।

निज आपा विरद विधारो हरिदेव त्या करि तारो ॥४॥

—श्री रामस्नेहधमप्रकाश, पृ० १६८

१ अणभ वाणी, पृ० ५०

२ बीजक, शब्द १०६

स्वरूप पुराणानुभोदित विष्णु क अवतार राम न सर्वथा भिन्न है। कबीर ने अनेक म्यलो पर अपनी एतद्विषयक भायना को जारनार शब्द म प्रस्तुत किया है। उनके राम ऐतिहासिक अथवा पीराणिक नशरथि राम तथा अय अवतारों से भिन्न है। इसी तथ्य को हृदयगम करान न उद्देश्य स उहने लीलावतारी विष्णु म उनका पृथक्त्व प्रतिपादित किया है। वस्तुन तत्कालीन परिस्थितिया मे ब्रह्म न माकार रूप की उपासना के लिए क्यमपि अवकाश नहीं था। जत सता ने वैष्णवा के आराध्य को तात्त्विक रूप म स्वीकार करते हुए भी उनक अवतारी रूप का निरमन किया। उन्हाने शाखा पर्ण को छोडकर मूल को गहा<sup>१</sup>।

कालान्तर म निराकार राम का यह भावना जन-मानस म बढमूल हाते देखकर गोस्वामी तुलसीदास न उसक प्रत्याख्यान के लिए एक 'मानस' की सृष्टि कर गनी। उन्हाने 'राम सो अवध नृपति सुन सोई की अज अगुग अलन्य गति कोई का समाधान 'रघुमूल मनि मम स्वामि सोड' और 'सोई दसरथ मुत भगत हिन कोसल पति भगवान' कहकर क्रिया और राम वाड आना कहने वाला का विराय किया<sup>२</sup>। फिर भी निगुग परम्परा म राम का कबीरानु-मोत्ति रूप ही प्रनिष्ठित रहा। राममनेही सम्प्रदाय क प्रमुख मत दगिया साहब ने स्पष्ट शब्दो मे विष्णु एव दशावतारो को स्वप्नवत मानते हुए<sup>३</sup> कबीर, दाहूदयाल और सनो के प्रियतम राम को हो अपना जारन्य मागा है<sup>४</sup>। रामचरण अपा आराध्य राम को विष्णु की षोडश कनाश्रो क विस्तार-स्वरूप समय समय पर हान वाले विभिन्न अवतारो से पृथक् बताने हैं —

सतयुग त्रेता द्वापरा कति समय-समय अवतार ।

राम अखडित अजमा धरे न को जाकार ॥

धरे न को आकार ब्रह्म निहचल पद जाना ।

चचल माथा चारत निरति करि किरत निछानो ॥

आवे जाय स त्रिष्णु सँ कला अग विस्तार ।

सतयुग त्रेता गारा कति समय समय जगता<sup>५</sup> ॥

१ हरि या निगुग मून है मगुण तु शाखा पान ।

—थी रामम्नेह धम प्रकाश ६०

२ रामचरित मानस, बालकांड, लोहा १०८—११८

३ ब्रह्म विम्बू दस जीतारा । सुपना अतर सब ब्योहारा ॥

—रामम्नेही मतवासी पृ० ६०

४ सोई कय कबीर का दाहू का महाराज ।

सब सतन का बालमा दरिया का सिरताज ॥

—अनुभव गिरा, पृ० १५३

५ अमृत उपदश—छटा प्रकाण, व० ४३





उम परमतत्व की 'निगम निरूपनम्' अथवा ब्रह्म क द्वारा सम्यक् रूपण अशेष कहा गया है। निर्गुण ब्रह्म का यह निरूपण श्रुतियों में वर्णित परम निर्गुण ब्रह्म के स्वरूप से बहुत कुछ मिलता जुलता है। 'ब्रह्मोपनिषद्' में ब्रह्म को शब्द रहित, स्पर्शरहित, रूपरहित, व्यय रहित, रसरहित और गन्ध रहित कहा गया है<sup>१</sup>। 'मुण्डकोपनिषद्' में उसे अदृश्य, अप्राप्त, अगात्र, अवर्ण, पशुप्राणादिहानि अपाणिगणान् आदि विज्ञापणा में युक्त माना गया है<sup>२</sup>। वे एव भक्तों ने भी ब्रह्म क निर्गुण स्वरूप में आस्था व्यक्त की है। उन्हें ब्रह्म का अविगत अक्षय, अनीह अम्यक्त और आगोचर स्वरूप ता स्वीकार या तिनू साधनागत सुविधा क कारण वे उसके सगुण रूप की उपासना अधिक उपाय्य समझा य। सूक्तान्त में इसी नीति की पाठ्या करत हुए सगुण-सीमा का गान किया था—

अविगत-गति कछु कहत न आवे ।

ज्यौं गूने मीठे फल की रस अतरगत हा भावे ॥

परम स्वात्त सबही जू निरतर अमित ताप उपावे ।

मन बाणी को अगम-अगोचर मा जानै जा पावे ॥

रूप रस गुा जाति जुगति बिनु निरासय मन कष्टन पाव ।

सब विधि अगम विचारहै तान मूर सगुन-पत्त गाव ॥

## गन्दरूप

रामसनेही सम्प्रदाय में गन्दरूप का साधना भी प्रचलित है। कृष्ण १ हागा कि भारत में गन्दरूप की उपासना बहुत प्राचीन काल में चली आ रहा है। ब्राह्मण साहित्य में गन्दरी मूर्तिमा का विस्तृत वर्णन हुआ है। याग शास्त्र का ता प्रतिपाद्य विषय हा गन्दरूप है। नट्टहरि का गन्दारुत नी प्रसिद्ध है

१ श्री रामसनेहीधर्मशास्त्र १०४१

२ अण्डकोपनिषद् अध्याय

तथात्रम नियमसंशयकाम्यम् ।

अनाद्यतन महत पर प्रभुम्

निश्चायकन मू पु मुनिप्रमुखादे ॥

—कटावनिषद् १।३।१४

३ गन्दरूपमदाह मागतमवर्णनचतुर्थांशं तन्मार्गिण पाठम् ।

हिन्दु विद्म मयान्त मगुम तन्मध्य मद्गुणयोनि परिगणदन्ति धीरा ॥

—गुरुरकारणपर १।१।६

त्रिगुणिया सता ने भी शब्द ब्रह्म की उपासना की थी । कबीर अपने निरजन को शब्द रूप मानते हैं<sup>१</sup> । रामचरण ने भी शब्दस्वरूप ब्रह्म का बरण किया है—

शब्द सत्पी राम उपज विनजे ऊ गही ।  
सकल मृष्टि ता माहि सृष्टि में आप समाही ॥  
ज्यु घट पूण आकाश सर्व घट तामें जातो ।  
घट उपजे विनशाहि नम थिर नहचल मानो ॥  
ना कता न अकता नहि किम्ब आधार ।  
रामचरण ता राम का निशिदिन नाम उचार<sup>२</sup> ॥

नारायण नाम न सृष्टि का उत्पत्ति शब्द ब्रह्म से बताया है<sup>३</sup> । दरिया साहब, हरिरामदास रामदास, दयागुदास आदि महात्माजी की वाली मे भी शब्द-ब्रह्म का सुंदर बरण हुआ है । अनहद<sup>४</sup> प्रकारांतर से शब्द ब्रह्म का ही निरूपण है । सता का सुरति 'शब्द याग' भी शब्द-ब्रह्म की साधना का दूसरा नाम है ।

### सगुणरूप

निभी अव्यक्त आत्मन् के प्रति चित्त में एकाग्रता की भावना स्थापित कर उम अनुगम का विषय बनाना असम्भव न होने पर भी अत्यन्त दुस्तुह है । इसीलिए भक्ता ने उपासना के लिए ब्रह्म के सगुण रूप को अपनाया है । वैष्णव धर्म में आराध्य का लिंगुण और सगुण दोनों रूप एक साथ स्वीकृत है । 'श्रीमद्भागवत' के कृष्ण अर्पी होकर भी रूपवात् है<sup>५</sup> ब्रह्म हाकर भी भक्ता का उद्धार करने के निमित्त भिन्न भिन्न रूप धारण करते हैं<sup>६</sup> । पद्मपुराण के कृष्ण १ शङ्कर जी से स्पष्ट शब्दों में कहा है कि हे शङ्कर जा । भेर जिस अलाकिक रूप को आज आपने देखा है, वह विशुद्ध प्रेम की घन मूर्ति और सन्निपात-द स्वरूप है । उपनिषत्समुदाय में भेर इसी रूप को निराकार लिंगुण, सर्वव्यापी, निष्क्रिय और परात्पर ब्रह्म कहते हैं<sup>७</sup> । राममतेही सम्प्रदाय के सन्तो ने भी

१ कबीर ग्रथावली, पृ० १४४

२ अमृत उपदेश—छठा प्रकाश, छ० ४३

३ मार शब्द का सकल पमारा

—श्री रामस्नहधर्मप्रकाश, पृ० १७३

४ जह अनहद सबद है करत घोर ।

—म० ब्रा० शं०, भाग २, पृ० १५५

५ श्रीमद्भागवत, ३/२४/३१

६ वहा, ३/६/११

७ पद्म पुराण, पा० ८२/६६

अपने निगुण निराकार राम को नाना प्रकार के गुणा से भक्ति कर उसमें कृत्स्न का आरोप किया है। रामचरण के अनुसार सम्पूर्ण सृष्टि राम को ही प्रसार है। वह राम समस्त सृष्टि में उसी प्रकार ओतप्रोत है, जिस प्रकार काठ में अग्नि, दूध में घी, पुष्प में गंध, तिन में तेल और धरती में पानी समाया हुआ है<sup>१</sup>। उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम, सभी दिशाओं में वही राम रम रहा है। कोई भी स्थान उतते खाली नहीं है। सप्त-द्वीप-नवखण्ड में, गङ्गा में, गया में, धरम में, वन में, महीं-वहीं, भीतर बाहर, घट-घट, मठ-मठ, सभी स्थानों पर उसी का निवास है<sup>२</sup>। सन्त रामदास ने राम के द्यापु और सर्वत्र रूप<sup>३</sup> का बखान करत हुए दृष्टि और मुष्टि के समस्त विषयों को राममग बताया है<sup>४</sup>। ऐसे अवसर पर गोस्वामी तुलसीदास की 'सियाराम मय सब जग खानी जैगी पति सहज ही मानस-पटल पर उमर आती है।

१. भावुक भक्त भावना के आवेश में अपने उपास्य में श्रेष्ठतम मानव-गुणों का आरोप कर नैकदय-साम के हेतु उससे अनेक प्रकार के कल्पित भावात्मक संबंध

१ राम सृष्टि आधार राम का मवल पसार ।

ओत प्रोत मिल रह्या राम कहै नाही न्यारा ।

—ज्यु काष्ट में अनल खीर में घृत मिलाया,  
पुष्प गंध तिल तेल धरणि मधि नीर समाया,  
रामचरण भरिपूर है कहै खाली दीसे नाहि,  
राम निरव में रमि रह्या विश्व राम के माहि ।

—अणभै वाली, पृ० १२३

२ उत्तर पूरव राम राम ही दक्षिण माही

पश्चिम मध्यम राम राम बिन खाली नाहीं ।

सप्त पुरी में राम राम ही नव उपर में  
गङ्गा गयात्र राम राम ही वन अह धरम  
यहाँ वहा इक राम राम ही है सब घट-घट  
बाहिर भीतर राम राम ही अस्थल मठ-मठ ॥

—अणभै वाली पृ० १२३-२४

३ मोहि राम दया कर दर्श दयो ही ।

दर्शन दयो मेरा मन की पूरी आश ॥ टेक ॥

तुम ही दयाल दया के सागर, निरधारी आधार ।

जग धीरण जगदीश गुसाई, सब बिधि बालनहार ॥

—अणभै वाली, पृ० ६६६

४ राम ही दृष्टि अह मुष्ट सो राम है ।

रम ही देख अनेक प्यार ।

—श्री रामनेह धर्मरत्नाम पृ० २६९

स्थापित करने की चेष्टा करता है। वह अपने को आराध्य का दास भी मानता है, मन्त्राभी बताना है पुत्र भी समझना है और प्रेमिका बनकर उनके वियोग में तीव्र अन्तर्द्वेष्टना का अनुभव करता है। रामसनेही सम्प्रदाय के सन्तो ने उपर्युक्त रागात्मक मन्त्राभा ने राम की उपासना करते हुए, अपनी रचनाओं में तत्पुत्रकूल भाव व्यक्त किये हैं। उन्होंने अपने को राम का पुत्र कहकर अपनी समस्त असावधानियाँ को बालकाचित्त भोलेपन या परिणाम बताकर क्षमायचना की है<sup>१</sup>। सेवक रूप में अहोनिश उनके कमलवत् चरणों की सेवा करने की आकांक्षा व्यक्त की है<sup>२</sup>, और पत्नी रूप में प्रियतम राम को पूर्वजन्म क प्रणय की याद निलाकर दर्शन देने की अत्यन्त यत्न भी की है<sup>३</sup>।

१ रामराय मैं हूँ बालक तरा पिता ज तुम हो मेरा । डेर ।

मैं बालक मति भार रहे उर कह नहि जानू काई ।

दीन बाधु दख हम शिशु मति आप विन्द निरवाइ ॥

सेवा साज न जानू साहिव है मति हीन हमारी ।

करि हो अबे मुझे माहि करता सो हवै रजा तुम्हारी ॥

मैं तो बाल बेनि सङ्ग राता का तो मन गृह मोहा ।

का तो असन वार वस्त्रादिक ए उर सत्त समोहा ।

तुम हो पिता मुझे हरि नौका मैं मति भोर अत्राना ।

जानू नही कछु हम काई तुम हो श्याम मुजाना ॥

मैं मतिहीन किया प्रति ओगुण तुम ना गिना दयाना ।

कह हारदेव पिता हरि मुनिग्यो बाल करो प्रतिपाला ॥

—श्री रामस्नहधर्मप्रकाश पृ० १८३

२ निशिवामर हरि आगे नार्चू, चरण कमल की सेवा जाँचू ।

स्वर्ग लोक का सुख नहि जाँचू धनम पाय हरिदास कहाँ ॥

—वही, पृ० १८६

३ साजन सुख दीजे न्यारा हो ।

राम रोम में रमि रहे पीरने के प्यारा हो ।

अबला अति व्याकुल भई आपणु पी दीजे हो ।

साइयाँ तुझ बिन ना सरे मुझ वेग मिलीजे हो ॥

तन मन तरा तू धरौं मेरा नहि सारा हो ।

मनी बुरी सब जीव को तुही जालन हारा हो ।

मैं मध्यम तन हीनता तुम उत्तम यारा हो ।

प्रीति पुरबत्ती ज्ञान के होवत नहि न्यारा हो ॥

आपा अन्तर मेडि के अपनी करि, लोन्हीं हो ।

अन हरिरामे दोस्ती आतम से कीन्ही हो ॥

—श्री रामस्नहधर्मप्रकाश, पृ० १४१-४२

रामगनही सम्प्रदाय के मन्त्र ब्रह्म निरूपण कृत समय जब 'हरि रत्न' 'रामब्रह्म' २ और 'राम रसायण' की बात करते हैं ना उसमें भी ब्रह्म के आनन्द रूप की ध्वनि आती है। राम का यह स्वरूप तैत्तिरीयोपनिषद् के 'ग्मा वे म' क मेल में निरूपित जान पड़ता है।

**परात्पर रूप** भारतीय विनया न मण्डल - नियम पर और मनु, राज, तम म अतीत परात्पर ब्रह्म की कल्पना भी की है। ब्रह्म का यह रूप आलाच्य सम्प्रदाय के भक्ता श्री पूरणनया माय है। स्वामी रामचरण राण्ट रूप में परात्पर ब्रह्म का वर्णन किया है। उनकी 'बधा चौथा है नहीं है तेगा ही दख जैमी उक्ति ब्रह्म के परात्पर रूप की और संकेत करना है। हरि रामदास ने भी ब्रह्म के परात्पर रूप का निरूपण किया है। दयानुदास अगम अगाध ब्रह्म को छान्ना मोन भारी हलका जैसे विशेषण से सम्बाधित करना उचित न समझ कर शून्य धारण कर गत है। उनके 'मून गहो मन माहि जम कथन म ब्रह्म का मजातान ०५ परात्पर स्वरूप ध्वनित होता है।

१ रामनाम हर रस दिया जावा गवण मिटाय ।

—रामनाम की वाणी ५० म० ६।

२ मून मनावर राम जन भय्या अय्य भररू ।

रामनाम जो जन दिया मुन गायर मिन जोय ॥

—वही ५० म० ५२

+

+

+

माय मतेवर राम जल राग द्वेष बुद्ध नाहि ।

दरिया पीव प्रीत हर मो तिरपत हा जाहि ॥

—रामस्नही सतवाणी पृ० ६७

३ जननी कबहू ना जण जो पाव राम रसाण ।

राम रसायण पीवता मित्र जीव की वाण ॥

—रामरसायण—प्रथम प्रकरण छ० २

४ तैत्तिरीयोपनिषद्, २, ७

५ परापरै पूरण ब्रह्म सौ बरत रह्या सब ठाहि ।

—ममता निवाम—द्वितीय प्रकरण, छ० ३६

६ जणभै वाणा ५० ४३

७ ब्रह्म निरज । नियम न्यारा

—श्री/रामस्नेहधर्मप्रकाश पृ० १३०

८ छोटा भाटा केहै डरे भारी हटका नाहि ।

रामा अगम अगाध है मून गहो मन माहि ॥ १.१ ।

—दयानुदास/की वाणी, ११० म० ५६

**एकेश्वरवाद** — राममनेही सम्प्रदाय के साहित्य में एक रहिमान<sup>१</sup> और एक रहीम<sup>२</sup> की भी चर्चा हुई है। ऐसे स्थलों को कोई मुसलमानों की एश्वर भावना से अनुप्राणित मान सकता है। स्मरणीय है कि कदर ने भी 'एकराम' 'एक रहिमान' का उल्लेख किया है किन्तु वे 'मुसलमान कहे एक खुर्द कबीर को स्वामी घटि-घटि रह्यो ममाई<sup>३</sup> कहकर एकरवरवा<sup>४</sup> का प्रत्याख्यान भी करते हैं।

वास्तव में य सन्त भक्त होने के साथ ही यागी, नानी, एव रहस्यवादी भी थे। वे पापुषे इस्लाम सार का ग्रहण करके थोड़ा उदा दत्त थे। वे पखा पखी से उमर उ हर सत्यावेपण म रत थ। वे पूर्वाग्रह मुक्त थ। उन्हें जो कुछ उचित लगा, बिना किसी सन्देह के स्वीकार कर लिया। अत उनके ब्रह्म निरूपण में अनेक रूपता का हाना स्वाभाविक ही है।

### जीव

राममनेही सम्प्रदाय के मन्तो ने जीव और ब्रह्म को तत्त्वत एक रूप माना है। य जीव और ब्रह्म म अशांति सम्बन्ध मानत हैं। साधारणतया यह विद्वान् अद्वैत द्वैताद्वैत और त्रिशिष्टाद्वैत मतावलम्बियों को भी माय है। फिर भी तीनों की तत्संबन्धी भाषणाओं में कुछ अंतर है। 'द्वैताद्वैतवाद्या के अनुसार ब्रह्म अखंड और अपन स्वल्प में पूर्ण है। माय ही उसमें अनेक शक्तिया है। य शक्तियाँ ही उसके अंश है। प्रत्येक शक्ति के दूमे से भिन्न होने के बावजूद ब्रह्म से सबका तात्पर्य है। प्रत्येक शक्ति के दो रूप हैं एक के द्वारा ब्रह्म से उसका एकात्म्य रहता है और दूसरे के माध्यम से उसकी नाम रूप में अभिव्यक्ति हाती है। इस प्रकार परम ब्रह्म इन शक्तियों से मसूचित होकर अनन्त नाम रूपों में व्यक्त हो रहा है। जिस शक्ति में इन नाम रूपों का एक साथ नाम होता है उसका ईश्वर और जो शक्ति इनको एक-एक करके जानती है, उसे जीव कहते हैं त्रिशिष्टाद्वैतवादी जीव का ब्रह्म का शरीर मानते हैं। जीव और ब्रह्म दाना चेतन हैं। ब्रह्म विभु है, जीव अणु है। ब्रह्म और जीव में सजातीय और विजातीय भेद नहीं है, स्वगत भेद है। ब्रह्म पूर्ण और जीव सडित हैं। अद्वैतवादीयों का मत इन दोनों से भिन्न है। वेदान्त सूत्र में कहा गया है कि जीव ब्रह्म का अंश हाते हुए भी चिन्मय है। शङ्कराचार्य ने इनके सम्बन्ध का अग्नि और म्बुलिग के दृष्टांत में व्यक्त किया है।

१ चिद ब्रह्मा सब ही चले जावे वेदपुराण ।

रामदास माद मदा रहै एक रहमान ॥

—रामदास की वाणी, प० म० २३

२ सकल जिहान में रमि रह्या मुल्ला एक रहोम ।

बाग देत सो कूण है, बहरा नाह करीम ॥

—अणभे वाणी, पृ० ६४

३ कबीर प्रत्यावली, पृ० २००, पद, ३३०

उाका मत है कि जिस प्रकार स्फुलिंग अग्नि स निकलकर उसी में समाविष्ट हो जाता है, उसी प्रकार आत्मा भी ब्रह्म से निकल कर उसी में समाविष्ट हो जाती है। वेदान्त-सूत्र में अशाशिभाव को आभास द्वारा या प्रतिबिम्ब के सहारे सिद्ध किया गया है<sup>१</sup>।

इन मतों के प्रकाश में रामसनेही सम्प्रदाय के सन्ता की जीव ब्रह्म सम्बन्धी धारणा पर विचार करने से यह प्रतीत होता है, कि इस सम्प्रदाय की विचारधारा पर अद्वैतवाद का प्रभाव अधिक है। रामचरण, रामदास और दयालुदास ने जीव और ब्रह्म का संबंध बताते हुए प्रतिबिम्बवाद<sup>२</sup> जल और बुदबुदा,<sup>३</sup> पाला और पानी,<sup>४</sup> नमक और जल<sup>५</sup>, नीर और तरंग<sup>६</sup> आदि के दृष्टांतों से अद्वैतत्वान्ने अशाशि भाव की पुष्टि की है। इसीलिए हरिरामदास ने आत्म तत्त्व का वर्णन ब्रह्म निम्पण के ढङ्ग पर किया है। आत्मा का वर्णन करते हुए वे कहते हैं —

१ देखिए कबीर की विचारधारा, पृ० २०२

२ (क) जल सँ भर कुभ अनेक धरया  
रवि की प्रतिबिम्ब पर्यो सब माही  
पवन लाग्या से ती नीर हुनै  
कहूँ मूरज तेज हुनै चले नाही  
जेस ही ब्रह्म आनन्द नहुँयो  
जिन देह इद्री गुण व्यापे न काही  
देह अध्यासी कू सुवल नही  
घिर नार भया दिन ना दरमाही

—अणभे वाणी, पृ० ८७

(ख) जीव ब्रह्म का अंग है, ज्या रवि का प्रतिबिम्ब होय।  
घट परदा दूरा भया, ब्रह्म जीव नहिं दाय ॥

—वही, पृ० १०७

३ ल्यो जल केरा बुदबुदा जल सँ न्यारा नाहि।

—वही, पृ० १०७

४ पाला गल पाणी हुआ, जीव पलट हुआ ब्रह्म।

—रामदास की वाणी, प० स० ८२

५ (क) जल सेती पैदा भया नाम धरया तब लोन।  
जल से मिल जल ही भया लोन कहै अब कान ॥

—विश्वास बोध चतुर्थ प्रकरण, छ० २

(ख) लूँण मिले गल पाणिया पाणी पिड जल माय।

रामा एकै हूँ गया, यारा ब्रह्म न जाय ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० २२६

६ (क) एक हुता अनेक हुय, अत समाणा ऐक।

रामा नीर तरंग भिन, मूर किरन नही रेप ॥

—वही, प० स० २२६

(ख) रामचरण दरियाव की सहूर्या दरिया माहि।

—अणभे वाणी, प० १०७

दारक म पावक बसे यू आतम घट माहि ।  
हरिया पय में घृत है, बिन मथिया कछु नाहि ॥<sup>१</sup>

इन पत्नियां म अभिव्यक्त विचारों की तुलना निम्नलिखित छंद में वर्णित ब्रह्म क स्वरूप से की जा सकती है —

राम सृष्टि आधार राम का सकल पसारा ।  
ओत प्रोत मिल रह्या राम कहुँ नाही न्यारा ॥  
ज्यो काष्ठ म अगन खीर में घृत मिलाया ।  
पुष्पगघ, तिल तेल घरणि मधि नीर समाया ॥  
रामचरण भरिपूर है कहुँ खाली दीठै नाहि ।  
राम विश्व में रमि रह्या विश्व राम के माहि ॥<sup>२</sup>

उपर्युक्त दोनों उद्धारणों को परस्पर मिलाने से आत्मा और ब्रह्म की स्वरूपगत एकता सिद्ध हो जाती है । दयालुदाम कहते हैं कि आत्मा न हिन्दू है न मुसलमान है । उसका स्वरूप पदार्थानुके आत्मनिरूपण से भी भिन्न है । उसके परिज्ञान का एक मात्र उपाय परम तत्त्व की पहचान है ।<sup>३</sup>

## मोक्ष

भारतीय मनीषियों ने मुक्ति की गणना चार पुरुषार्थों म करते हुए इसे नाना प्रकार से व्याख्यापित किया है । चार्वक दर्शन में देह के पतन के साथ अनेक दुःखों की आत्यंतिक निवृत्ति सिद्धि हो जाती है । अतः वे मरण को ही अपवर्ग मानते हैं—मरणमेवापवर्ग । जैनदर्शन में समग्र कर्मों के क्षय को मोक्ष नाम से अभिहित किया गया है—मृत्यु-कर्मक्षयो मोक्ष । बौद्धों ने मुक्ति के स्थान पर निर्वाण शब्द का प्रयोग करके उस स्थिति म दुःख के अत्यन्तभाव की चर्चा की है । बौद्धों के वैभाषिक सम्प्रदाय म निर्वाण के दो प्रकार बताये गये हैं सोपाधिशेष और निरुपाधिशेष । सोपाधिशेष निर्वाण अनात्मत्व जीवितावस्था का नाम है और निरुपाधिशेष जीव की अनात्मत्व तथा उपाधिहीन उस अवस्था को कहते हैं जो शरीररपात होने के बाद आती है । सोपाधिशेष और निरुपाधिशेष निर्वाण म वही भेद है जो बदान्त की जीवनमुक्ति और विदेहमुक्ति म ।

वैदिक पददर्शन में नैयायिका के अनुसार दुःख से अत्यन्त विमोक्ष ही अपवर्ग है—सदत्यन्त विमोक्षोऽपवर्ग । अत्यन्त विमोक्ष का तात्पर्य गृहीत जन्म के नाश और

१ श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश पृ० १३४

२ अणभे वाणी, पृ० १२३

३ रामा जीव हिन्दू नहीं जीव नहीं मुसलमान ।

घट दरसण नहि आतमा परमात्म पहचान ॥

अविष्य जन्म के न होने से है। वैशेषिक दर्शन के प्रतिपादक महर्षि कणाद के अनुसार मचित, प्रारम्भ और क्रियमाण कर्मों का अन्त हो जाने पर मनुष्य जन्म-मरण की परम्परा से मुक्त हो जाता है। इसी को वे मुक्ति मानते हैं। साख्य सूत्र के अनुसार प्रकृति-गुरु का परस्पर वियोग होना ही अपवग है।<sup>१</sup> योगदर्शन में द्रष्टा का अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाना ही केवल्य कहा गया है।<sup>२</sup> भीसासाकार ने जगत् के साथ आत्मा के सम्बन्ध के विनाश का नाम मोक्ष कहा है—प्रपञ्च सम्बन्ध विलयो मोक्ष।<sup>३</sup> अद्वैत वेदान्तदर्शन के अनुसार मुक्ति की दशा नितान्त आनन्दमयी दशा है। इस दशा में मुक्त साधक प्रपञ्च से मुक्त होकर अपनी एकता सच्चिदानन्द ब्रह्म से स्थापित करता है।<sup>४</sup> मुक्ति, वैचल्य, मोक्ष, निर्वाण निश्रेयस आदि की अवधारणा पर विहगम् दृष्टि डाल लेने के उपरान्त हम रामसनेही सत्तो की मुक्ति सम्बन्धी मा यथा पर विचार करेंगे।

रामसनेही सम्प्रदाय का मुक्ति सम्बन्धी विचार अद्वैत वेदात् से विशेष रूप से प्रभावित है। अद्वैतवादियों की भाँति इस सम्प्रदाय के सत्तो की मायता है कि ब्रह्म का अज्ञ होने के कारण आत्मा का स्वप्न ब्रह्म से अभिन्न है, किन्तु माया के आवरण से आच्छन्न होने के कारण वह अपने को पहचान नहीं पाता। अपनी जाति से बिछुड़ कर पृथक्त्व निर्मित शरीर का आश्रय लेकर देहात्मभाव से इधर-उधर भटकता रहता है।<sup>५</sup> उसकी यह अज्ञानज य स्थिति कस्तूरी मृग की सी हा जाती है जो कि अपनी ही नाभि में स्थित कस्तूरी के रहस्य को न जानने के कारण इधर उधर ढँढता फिरता है।<sup>६</sup> रामचरण ने विभ्राति में पड़े हुए जीव की समानता शीश महल में अपने ही प्रति चित्र को देख कर चकित और विभ्रात स्वान से दिखाई है—

१ द्रष्टव्य भारतीय दर्शन, पृ० १३४, १७१ २०१-२०५, २७६-२७७, ३१७

और ३५६

२ पातञ्जल योगदर्शन, ४, ३४

३ भारतीय दर्शन, पृ० ४२१

४ भारतीय दर्शन, पृ० ४७८-७९

५ जीव जात से पीछुड़ा धर पञ्च तत का भेष ।

दरिया निज घर आइया पाया ब्रह्म अलेख ॥

—रामसनेही सन्तवाणी, पृ० ६२

६ (क) कस्तूरी कुल बसे, मृग न पावे भेद ।

रामचरण घट राम है, भूला हैरे' वेद ॥

—अनुभवे वाली, पृ० ४७

(ख) कस्तूरी कुल भरी मेली उड गाव ।

दरिया छानी क्यों रहे साख भरे सब गाव ॥

—अनुभव गिरा, पृ० १५५

(ग) कस्तूरिया मृग जगत है, भ्रमत दस तिस घ्याय ।

हरि वीणा नाभी बसे ताकी गमन काय ॥

—दयागुप्त की वाली, पृ० सं० २६१

कान के मन्दिर स्वान भुयी मधि  
 आप की भाई दिसे बहुरेरा ।  
 नू कत भजी विराय गई तेहि,  
 भ्रम का भास न हाय निवे । ॥  
 भूलि गया अपना निज रूप कू,  
 हाय विभ्रात डरे चहु, केरा ।  
 रामचरणा यू २व जगत का,  
 आप बरणाय ल आप कू घेरा १ ॥

माया क फदे म पडा हुआ जीव जब अपने शुद्ध चेतन स्वरूप का पहचान लता है, ता वह ब्रह्मस्वरूप हा जाता है । ऐसी स्थिति मे ध्यय घ्याता और ज्ञेय ज्ञाता का भेद समाप्त हो जाता है ।<sup>२</sup> फिर जीव और सीव म किसी प्रकार का अंतर नहीं रह जाता—जीवात्म तत्त्व परमात्म तत्त्व म ठीक उमी प्रकार मिल जाता है जैसे जल की बूद सरिता मे मिलकर स्वय सरिता बन जाता है और उम किसी भी प्रकार पृथक् नहीं किया जा सकता—

तत्त्व मे लीा अब भीन भागी मवे,  
 केर नहि आय के काय धारे  
 जानिए बूँ दरियाव में मिल गई  
 होय गियाव व्यापीक मारे ।<sup>३</sup>

इस अद्वैततावस्था की प्राप्ति ही रामसनेही सन्तो की साधना का परम लक्ष्य है ।

## मुक्तावस्था

अद्वैत वेदात म मुक्ति की दा अवस्थाए मानी जाती हैं—पहली जीवनमुक्ति और दूसरी विदेहमुक्ति । हमारे अध्ययन युग के सन्तो ने मुक्ति की इन दोनों अवस्थावां का वर्णन किया है ।

## जीवनमुक्ति

इसी जीवन मे दु खो स मुक्ति पा जाने वाला मनुष्य जीवनमुक्त कहलाता है । ऐसा मुक्त पुरुष ससार क प्रपचो स विरत रहता है । न मोह उसे सताता है, न शोक उसे अभिमूत करता है । ससार उसक लिए अवश्य चलता है किन्तु वह उसक दु सा से स्पृष्ट नहीं हाता । रामसनेही सम्प्रदाय क सत जीवनमुक्ति मे पूण विश्वास रमने हैं ।

१ अणभे वाणी पृ० ६८

२ ये ग्याता नहि ग्यान तेहा धे ध्याना नहि ध्यान ।

परमात्म परमाणु नहि कहिए कहा विधान ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० २५

३ विश्वास बोध—तृतीय प्रकरण, छ० ७७

साम्प्रदायिक साहित्य में उसे जीवनमुक्त, मरजीवा या जीवन भूतक कहा गया है। महात्मा रामचरण जीवनमुक्त पुराण का लक्षण बताते हुए कहते हैं कि वह अहभाव से मुक्त होता है। उममें किसी के प्रति ममता का भाव भी नहीं होता। वह शरीर सुख से सर्वथा उन्मत्त रहता है, उसे जो भुद्य भोजन मिल जाता है, उमी पर सन्तोष करके जल में कमल की भाँति जगत् से निर्लिप्त रहता है। वह वामनाआ से पृथक रहकर निष्काम भाव से राम का भजन किया करता है।<sup>१</sup> जिस प्रकार कमल पानी में पैदा होता है, उमी में रहता है, फिर भी उससे ऊपर रहता है उसी प्रकार जीवमुक्त पुरुष ससार में रहते हुए उससे सर्वथा असम्भृत रहता है<sup>२</sup>। यस्तुत वह सर्वतोभावेन निष्काम होता है<sup>३</sup>। हरिरामनाथ ने आत्मबोध और परम सन्तोष को जीवनमुक्त पुरुष का एकमात्र लक्षण बताया है।<sup>४</sup>

### विदेहमुक्ति

जीवनमुक्त साधक के संचित कर्म का नाश हो जाता है। सचीयमान कर्म से भी वह छुटकारा पा जाता है किन्तु प्रारब्ध कर्म का नाश तो भोग से ही हो सकता है। जब भोग करते करते प्रारब्ध कर्म समाप्त हो जाता है तो साधक सब प्रकार के कर्मों से छुटकारा पा जाता है और इस दशा में जीव के स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार के शरीर का अन्त हो जाता है। मुक्ति की इसी अवस्था को विदेहमुक्ति कहते हैं। महात्मा रामचरण विरचित निम्नलिखित पंक्तियों में विदेहमुक्ति का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया गया है —

१ अहू ममत बांधे नहीं अरु तन सुख साथे नाहि ।  
 प्रसाद पाय अलिप्त रहै, ज्यू कमला जल माहि ॥  
 ज्यू कमला जल माहि शोक ससा से न्यारा  
 शत्रु मित्र सम गियो ज्ञान लछ भिया ज घारा ।  
 राम कहै भ्रमना दहै यू गृह भक्ति सधि पाहि  
 अहू ममत बांधे नहीं, अरु तन सुख साथे नाहि  
 राम भजै तजि कामना, करि मैली चितवनि हाणि  
 रामचरण घर वासना, सो जीवनमुक्ता जाणि ॥

—समता निवास—प्रथम प्रकरण, छं० २८-२९

२ अणुभेवाणी पृ० ८६१

३ राम भजै तजि कामना करि मैली चितवन हाणि ।  
 रामचरण गत वासना सो जीवनमुक्ता जाणि ॥

—वही, पृष्ठ ८६१

४ आत्म का सुख जाणिया, भया परम सन्तोष ।  
 जन हरिया जब जाणिये, याही जीवन मोष ॥

—श्री रामस्नेहवर्षप्रकाश, पृ० ६२

आपा भटि आप में मिलिया आप रूप हाइ रहिया ।  
 जनम मरे न जरा सताव अइस अगम पद लहिपा ॥  
 वा पद की तारीफ न आव करिय कहां बजाना ।  
 गुणातीन पचरग न वावै अग संग नहि जाना ॥  
 अग न मग भग नहि भिनता सबग पूरण स्वामी ।  
 निर्विकार निर्लेप निरजन, परिपूरण घणानामी ॥  
 छोट न मोट न छाना परगट घट घट अघट समारा ।  
 अन्तर बाहर एक समाना जहा न व्यापे माया ॥  
 माया पार ब्रह्म अदिनामी म्व मुख रासी राया ।  
 रमता राम धाम घर याग भजन करे कर पाया ॥  
 सो अब लीन सदा ता पाही कबहुँ न धरहै काया ।  
 रामचरण बलिहारी गुन की जिन ये भद बताया ॥  
 म या भेद छेद मव भागी जागो अणभे असी ।  
 मै भ्रम गया रह्या या मोही कहिए मो गति कैसी ॥  
 अकथ कहाणी सतगुरु जी की कीही महूर निधाना ।  
 रामचरण नित चरणा शरगौ पाया आनम जाना ॥

## माया

सामान्य रूप से 'माया शब्द का प्रयोग घोसा कपट इन्द्रजाल जादू आदि के अर्थ में किया जाता है किन्तु भारत की दार्शनिक चिन्ताधारा में इसे परमेश्वर की प्रपञ्च कारणभूता अव्यक्त बीजशक्ति, प्रकृति और अविद्या के रूप में जाना जाता है। इस शब्द का प्रयोग वैदिक काल से लेकर अद्यावधि कई अर्थों में होता आया है। 'ऋग्वेद' में यह शब्द देश या रूप बदलने के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है<sup>१</sup>। उपनिषदों में इसे प्रकृति<sup>२</sup> और नाम<sup>३</sup> रूप में ग्रहण किया गया है। बौद्धयुग तक आते आते माया का वैदिक

१ राम रसायण बोध पाचवा प्रकरण, छ० ६४

२ ऋग्वेदो मायामि पुरु रूप ईयते ॥

—ऋग्वेद ६।४।७।१८

३ माया तु प्रकृति विद्या मायिन तु महेश्वरम् ।

—श्वेताश्वतरोपनिषद् ४।१०

४ यथानद्य स्यन्दमाना तमु—

जत गच्छन्ति नाम रूपे विहाय  
 तथा विद्वान्नाम रूपादि मुक्त  
 परात्परपुण्य प्रपैतिदिव्यम् ॥

—मुण्डकोपनिषद् ३।१।२।८

काशीन स्वरूप स्वप्नवात् १ ११ म परिवर्तित हो गया, और यह मिथ्या मवृत्ति या मृग-मराचिका का बाधक समझा जाना लगा। गौणउदाचाय का मायावात् स्वप्नवात् ही है। मायावात् का इस प्रकार ज्ञान देवकर स्वामी शंकराचाय न इसका पुनरुद्धार का बीडा उठाया। उन्होंने बौद्धों के स्वप्नवात् का मडन करते हुए माया की शास्त्रीय दृष्टि से पुन प्रतिष्ठा की। उनसे अनुभार माया न मन् है न असत्। वह दोना से मित्र अनि-र्नघनीय तत्त्व है। सत् उग इसलिये नहा कहा जा सकता कि वह ब्रह्म के समान त्रिकान-बाधा से मुक्त नहीं है और प्रत्यक्ष प्रतीयमान होने के कारण उसे असत् भी नहीं कहा जा सकता। उन्होंने माया की दो शक्तियो 'आवरण और 'विशेष-की कल्पना की। आवरण शक्ति ब्रह्म के शुद्ध स्वप्न का आच्छादित कर लेती है और विशेष शक्ति इस प्रपचात्मक जगत् का उत्पत्ति करती है। कुछ वेगन्ती आचाय प्रवृत्ति को दो प्रकार की मानते हैं — 'विशुद्ध सत्त्वप्रधान और अविशुद्ध सत्त्व प्रधान। पहली को माया कहते हैं, दूसरी को अविद्या। पहली ईश्वर की उपाधि है, दूसरी जीव का। इसी को विद्या-माया और अविद्या माया भी कहा जाता है।

सांख्यवादी माया को प्रवृत्ति कहते हैं। यह माया या प्रवृत्ति त्रिगुणात्मिका और प्रसवधर्मिणी है। स्वयं अन्वक्त होते हुए भी यह व्यक्त महत् तत्त्व की जननी है। इस मूलतत्त्व से अहकार का प्रादुर्भाव होता है। अहकार से सात्त्विक, सद्रिय और निरीन्द्रिय सृष्टियाँ होती हैं। सात्त्विक सृष्टि से पंचतन्मात्राये तथा पंच महाभूत होत हैं। मधेय म साख्य का सृष्टि-विकास क्रम यही है<sup>३</sup>।

उत्तरी भारत म सन्त-मत के प्रवर्तक कबीर न माया का निरजन का शक्ति माना है। ब्रह्मांड म जा माया है पिंड म वही कुण्डलिनी। वस्तुतः कुंडलिनी का ही नाम माया है। कबीर ने इसके दो रूप बताये हैं एक वह जो राम से मिलाता है और दूसरा वह जो नरक ले जाता है। कबीर माया का बणन करते हुए जब एक मलात्रे राम से एक नरक ले जाय जैसी बात कहते हैं तब उनका मन्तव्य वस्तुतः विद्या और अविद्या माया से जान पड़ता है। उन्होंने अविद्या माया का वर्णन अधिक किया है। उन्होंने इने नागिन, रमैया की दुलहिनि, ठगिनिया आदि नामों से अभिहित किया है। माया नागिन की फुफकार ही प्रणव है। इसी तरह ब्रह्मांड मे जो वस्तु निरजन है, पिंड मे वही मन है। इसी को नाग कहते हैं। इसी नाग और नागिन ने मिलकर विश्व का सारा प्रपच खडा किया है। नागिन की जहरोली फुफकार प्रणव की ही उपासना

१ कबीर की विचारधारा, पृ० २३५

२ कबीर-द्विवेदी, पृ० १०७

३ कबीर की विचार धारा, पृ० २३६-६०

मे दुनिया भटक रही है। इस वशीभूत करन वाला ही जगत् विजयी होता है<sup>१</sup>। निरजन से कबीर का तात्पर्य परब्रह्म से था। अतः निरजन या परब्रह्म की शक्ति क रूप में कबीर ने माया को जो निरूपण किया है उममें प्रकट होना है कि वह बड़ी प्रबन्धा है। कबीर ने माया के ध्वसात्मक रूप का बड़ा ही विवाद चित्रण किया है। उनके अनुसार रघुनाथ की माया शिकार खेलने निकली है और मुनि पीर जैन जोगी प्रगम ब्राह्मण और शन्यासी सबको साम्प्रदायिकता के जान में फसा कर मार रही है। कवन राम की शरण में जाने वाला ही इसक बगुना से बच सकता है।<sup>२</sup>

वह मोहिनी रूप में नयना के लीले तीर चलाती रहती है जिनस भाग कर भी कोई बच नहीं पाता<sup>३</sup>। एक स्थान पर उहान माया को रुई लपेटो आग से तुलना की है जो क्षण मात्र में सर्वनाश कर देती है। कबीर की भांति अथ अन्ता ने भी माया के विश्वसात्मक रूप को मजारी भगर, मिसरी की छुरी, 'डाकिणी, सपिणी 'पापिनी कामिनी, भामिनी, 'नकनी आदि नामा स सम्बोधित किया है।

रामसनेही सम्प्रदाय के सन्तो की माया विषयक अवधारणा पर माख्य, वेदान्त, और उनके पूर्ववर्ती निगुणिया सन्तो का पूरा प्रभाव पटा है। रामचरण और दयानुगम

१ द्रष्टव्य कबीर, डा० द्विवेदी, पृ० १०८-१०९

२ तू माया रघुनाथ की खेलण चली अहेडे

चतुर चिकोरे चुणि चुणि मारे फोड़ न छोड या नडे  
मुनिवर पीर दिगम्बर मारे जतन करता जोगी  
जगल महि के जगम मारे तूर फिरे बलवन्ती  
वेद पढता ब्राह्मण मारा सवा करना स्वामी  
अरय करता मिसर पछाडया तूर फिरे मीमती  
सापित क तूर हरता करता हरि भगतन की चेरी  
दास कबीर राम के सरन ज्यू लागी त्यू तारी।

—क० प्र०, पृ० १५१ पद्य १८७

३ कबिरा माया मोहिनी माहे जाए सुजाण।

भागा ही छूँ नही भरि भरि मारे धान ॥

—क० प्र०, पृ० ३३

४ माया के भक जग डरे, कनक कामिनी लागि।

कहै कबीर कस बाचिहै रुई लपटी आग ॥

—स० बा० स०, भाग १, पृ० ५७

माह्व ने भी माया के पाप और पुण्य को रूपा की उल्लेख करके प्रकारान्तर से विद्या माया और अविद्या माया की ओर संकेत किया है<sup>१</sup> ।

वैश्वतवादिया न माया की स्वतन्त्र सत्ता न मानकर परमात्मा के आधीन माना है । रामचरण और दयानुदास भा माया को राम की दासी<sup>२</sup> और इच्छा<sup>३</sup> कहकर उसे परमात्मा की वशतिनी मानने हैं ।

रामस्नेही सम्प्रदाय की माया का धर्म और स्वाभाव साम्यवादियों की प्रवृत्ति से बहुत भिन्नता-बहुलता है । साह्य का प्रवृत्ति के समान वह त्रिगुणात्मिका<sup>४</sup> तथा सृष्टि की उत्पत्ति का कारण है ।<sup>५</sup> त्रिगुणात्मिका प्रवृत्ति को प्रमुख विशेषता उसकी परिवर्तनशीलता है । शंकराचार्य ने भी माया का परिवर्तनशीलता माना है । दयानुदास छाया से तुलना करके माया व इसी गुण की ओर ललित करते हैं—

ब्रह्म विरिद्ध जूय जानिछ छाया माया देष ।

छाया घट बढ़ होत है रामा तखर एक<sup>६</sup> ॥

ससार के सब जीवों को जावगमन के इच्छाजन में फसाय रहने व कारण माया बन्धनरूपा भी है । रामस्नेही सम्प्रदाय के सन्तो न माया का वणन बन्धनरूप में किया है । हरिरामदास के अनुसार जीव माया के घेरे में निवास करता है ।<sup>७</sup> दयानुदास न माया को मकड़ी के जाले के सदृश माना है ।<sup>८</sup> रामचरण ने माया और जीव का साम्य कमल

१ पाप पुण्य लोय रूप है उनही की माया ।

—अनुभव गिरा पृ० १६६

२ माया दासी ब्रह्म की पासि मोहिनी फल ।

ब्रह्म जान बिसराय के पमरावे दुख घष ॥

—विश्वास बोध-नवम प्रकरण, छ० १८

३ रामा इच्छा राम की माया परबल हाय ।

—दयानुदास की वाणी प० स० ११६

४ तीन गुणा की माया त्याग पावे पन् निरवान ।

—पदवत्तीसी, छ० ३

५ सब माया को पैदास है, एव ब्रह्म ना पैद ।

ब्रह्मा बिष्णु महेश लग सब माया कीया वेद ॥

—अस्य भे वाणी, पृ० ५५

६ दयानुदास की वाणी, प० स० ११२

७ बास पास माया को घेरो बिच है जिव का वामा ।

—श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० १५०

८ माया मकड़ी जान मे काल कित्ता जिव होय ।

—दयानुदास की वाणी, प० स० ११६

और रसलोलुप मधुप स स्थापित किया है माहाध हाकर फूल का पसदियो म आवद्ध हो जाता है उसी प्रकार विषय-वासना क लोभी प्राणी भी चौरामी लाव योनियो के चक्र में फँस जात है—

माया कमल स्वरूप जीव मधुकर सब भूल ।  
विषिया रस मोहीन हाम निज घर क भूले ॥  
पहर च्यार गये बीति प्रीति स नही अघाने ।  
उडि न सके मति हीए माहि भरि खरे खिसान ॥  
रामचरण गुरु जान बिन नर तन चाने हार ।  
चौरासी की जलगि मे दुख पावै जग च्यार ॥<sup>१</sup>

साम्प्रदायिक साहित्य में माया क मोहिनी अथवा विशवाकर्षक रूप का भी पर्याप्त वर्णन मिलता है । उमका आकषण जीव के लिए ठीक वैसा ही है जैसा कमल का भ्रमर के लिए <sup>२</sup>, कामिनी का कामी के लिए - और दीपक का पतंग के लिए <sup>४</sup> । माहिनी माया भक्त को भगवान् की भक्ति नहीं करने देती<sup>३</sup> । उसी की प्रेरणा से जीव ब्रह्म-ज्ञान को विस्मृत कर दुःखमूलक धधा में प्रवृत्त होता है <sup>६</sup> । साधना में बाधा प्रस्तुत करने वाला माया का यह स्वरूप मूर्खियो क दैतान से बहुत कुछ मिलता जुलता है, किन्तु है वह शुद्ध भारतीय ।

१ अणभवाणी पृ० १२६

२ माया मुकुल स्वरूप जीव मधुकर सब भूल ।

विषिया रस मोहीत होय निज घर क भूल ॥

—अणभे वाणी, पृ० १२६

३ माया कामण रूप घर बदन मोहिणी चन्द्र ।

रामा जीव चकोर चप मोहे कामी अघ ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० ११०

४ माया दीपक जलत है ईड कोस घर माय ।

मोह रूप हय पठ गया जीव पतंग जाय ॥

—वही, प० स० ११६

५ माया मोहे जगत सब भक्त किया चक्रवूर ।

—विशवासबोध—नवम प्रकरण, छ० ४१

६ ब्रह्म ज्ञान बिमराय के पसरारवे दुख धध ।

—वही, छ० १८

## काल

रामसनेही सम्प्रदाय के सत्ता की काल विषयक मान्यता परवर्ती सन्त कवियों की एतद्विषयक अवधारणा से अभिन्न है।<sup>१</sup> साम्प्रदायिक साहित्य में काल के बड़ ही प्रचण्ड और बलशाली रूप का वर्णन किया गया है। रामचरण के अनुसार रसातल, भूतल, स्वर्ग और ब्रह्मलोक में काल के समान शक्तिशाली और कोई नहीं है। सुर अमुर, नर, नाग कोई भी अपने का इसके कराल गाल में जाने से बचा नहीं पाता। जब यह अचानक जीव को पकड़ लेता है, तो किसी का कोई बचा नहीं चलता। बाहर भीतर, देश-विदेश, सर्वोन्मर्ग, बरसात, साते-भीते, सोते-जागते, बोलते चालते, जब-जहाँ और जैसी भी स्थिति में यह पाता है दबाकर मार डालता है। इसकी ठकुगई इतनी बड़ी है कि इसने यहाँ ऊच-नीचादि का कोई विचार नहीं होता।<sup>२</sup> वह सम्पूर्ण सृष्टि पर ममता और मोह का जाल फैलाये हुये है। जीव राम को विस्मरण करके उसी में उलझा हुआ है।<sup>३</sup> रामचरण के अनुसार काल सर्वव्यापी है। सम्पूर्ण सृष्टि में उसकी पहुँच है। कोई भी स्थान उससे मुक्त नहीं है।<sup>४</sup> काल के विनाशकारी रूप का वर्णन करते हुए वे कहते हैं —

१ कबीर पद्य के साम्प्रदायिक ग्रंथों में काल और निरजन का स्वरूपत एक बताया गया है। निरजन को परम पुरुष के पांच पुत्रों में से एक कहा गया है जिसने माया से प्रेम किया। दोनों के संयोग से ब्रह्मा, विष्णु और महेश—त्रिदेव उत्पन्न हुये। त्रिदेवों के माध्यम से निरजन जगत् के ऊपर शासन करता है। इसी निरजन का परवर्ती सन्तो न काल पुरुष कहा है। साथ ही इस बड़ा जालिया बताया है।

—द्रष्टव्य, शिवनारायणी सम्प्रदाय और उसका साहित्य, पृ० १६६

२ काल से और नहीं कोई सम्रप, जोर बचे नहीं तीन के माही।

ना कोई वीर रसातल भूतल स्वर्गस्थान ब्रह्मपुर माही।

आमुर रूप नरा और मरपति, सुरपति जस, सुरा अजसाही ॥

रामचरण मरण सरो सिर, होय शरणागति राम कू घ्याही।

काल अचानक आय गई तब काहू को जोर सगे नहीं बाही।

बाहिर भीतर देश विदेश ही शीत उष्ण वर्षा ऋतु माही।

बावत पीवत रैन बिहान बसत चावत आन दबाही ॥

—अणनो विलास—१६ वा प्रकरण, छंद ३६

३ काल पसारी सृष्टि पर मोह ममत की जाल।

बासैं उमभ्या जीव बुधि बिसर राम रिछपाल ॥

—समता निवास—नवम प्रकरण, छं० ३६

४ रामचरण वहाँ जाइये कीर निर्भय नहीं ठीर।

वहाँ जाय जहाँ देखिये सबे काल की दौर ॥

काल कुदान लिया कर मैं निसवासर ही गढ ढावत है ।  
 दोई खास उन्वास पढे दटवा, बसि ताहो मैं क्यूँ सुख पावत है ।  
 छिन माहि गिराय करै चक्रचूरण मूसै मज री ज्यू घ्यावत है ।  
 कहै रामचरण मिथ्या फिट जीवण राम सगो बिसरावत है ।<sup>१</sup>

दयालुदास ने काल का नयी और जन्म-मरण को भवर बताते हुए ससार को उसकी धारा में बसा हुआ माना है ।<sup>२</sup> उनके अनुसार वह घट-घट व्यापी है ।<sup>३</sup> वह इतना बलवान है कि उसको देखते ही सब लोग निर्बल हो जाते हैं ।<sup>४</sup> यह जीव को उसी प्रकार मार ले जाता है, जिस प्रकार गरुण सर्प को और बाज तीतर का<sup>५</sup> । हरिया साहब के शिष्य पूरणदास ने आकाश, पाताल और मर्त्यलोकों को काल के फटे में पहकर भटकता हुआ बताया है<sup>६</sup> ।

इस प्रकार हम देखते हैं, कि रामसनेही सम्प्रदाय के सन्तो ने काल का एक ससार व्यापी सत्ता के रूप में स्वीकार किया है, जिसका काय सम्पूर्ण सृष्टि का नाश करना है । इन सन्तो ने इससे बचने का केवल एक ही मार्ग बताया है, वह है राम-नाम । हरिराम दास कहते हैं, कि चौरासी लाख योनिया में विचरण करने वाले सभी जीव काल की श्राव सामग्री हैं । इससे केवल वही बच सकता है, जो सत् शब्द अर्थात् राम नाम की शरण लेता है<sup>७</sup> । हरिया साहब भी कहते हैं—'राम नाम बिन जीव को काल निरन्तर

१ अणुमेवाणो, पृ० ६१

२ काल नदी की धार में बसियो सब ससार ।  
 जन्म मरण की भवर रे राव रक सिरकार ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० ३४३

३ काल घटो घट बसत है ।

—वही, प० स० २५४

४ काल महा बलवान देवत निरबल हाय सब ।  
 ध्रुवत भेरो प्रान, सायक सतगुरु राम जी ॥

—वही, प० स० २५०

५ ज्यू खगपति लै सरप कू ज्यू तीतर कू बाज ।  
 रामा भसी काल तो भाज सके तो भाज ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० २६५

६ तीन लोक भटकत फिरे, बन्धो काल की फास ।

—रामसनेही सन्तवाणी, पृ० ८६

७ सब चौरासी जीवणा सबे काल की चारि ।  
 जन हरिया जब ऊबरे, सत का शब्द समारि ॥

साय<sup>१</sup> अर्थात् जो लोग राम का भजन करते हैं, वे काल कृ गूल में जाने से बच जाते हैं। रामचरण जङ्गली जीव को जगाकर उसके तन स्त्री खेत को खाने वाले बाल मृग को राम नाम स्त्री वाण से भगाने का उपदेश देते हैं —

जाग रे जङ्गली जीव भूमि निशा सोवे कहा ।

हैं रह्यो अचेत खेत काल आप सायगो ॥

यानू तन खेत खाय गाकिल बय होय जाय ।

रामबाण साधि स्याण बाल भगि जायगो<sup>२</sup> ॥

## जगत्

विश्व के समस्त काय व्यापारा का रगमञ्ज नाना रूपरामक जगत् है। इसीलिए अनानि काल से चिन्तनशील मानव मस्तिष्क में इगुकी उत्पत्ति व सम्बन्ध में विविध जिज्ञासाएँ उठती रही हैं, और विश्व की समस्त चिन्तनधाराओं में सृष्टि के स्वरूपादि की विवचना हाती आयी है। पाश्चात्य दर्शन का तो उदय ही जगत की विविध प्राकृतिक दृश्यावलिया को देखने और उसकी प्रतिक्रिया व परिणामस्वरूप उपपन्न आश्चर्य से माना जाता है। भारतीय वि ताधारा में जगत की उत्पत्ति और मिथ्यात्व या सत्य स्वरूपत्व की सम्यक् विवचना शुद्धाद्वैत, विज्ञानाद्वैत (बुद्ध), शब्दाद्वैत (भट्ट हरि) और विशेष रूप से साख्य-दर्शा में हुई है।

भारतीय सृष्टि विज्ञान की दृष्टि में रखते हुए जब हम सन्तमत का ओर दृष्टिपात करते हैं तो इसमें सृष्ट्युत्पत्ति का कोई निश्चित क्रम नहीं दिखाई पड़ता। पढ़ने कहा जा चुका है कि सन्तों का किसी विशिष्ट नार्शनिक पद्धति से कोई लगाव न था। नानार्जन में इहान प्राय मधुपवृत्ति में काम लिया है। यही कारण है कि सन्तों की जगत सम्बन्धी धारणा में साख्य वेदान्त, पौराणिक और तार्किक मतों का अद्भुत समन्वय दिखाई पड़ता है। कबीर कभी तीन गुण पञ्च भूत और पचीस तत्त्वा से सृष्टि की रचना बताते हैं, और कभी शब्द से। कभी कहते हैं कि ज्योति, प्रकृति के सयोग से सृष्टि की उत्पत्ति करती

१ रामचरणी सन्तवाणी, पृ० ३४

२ अणभवाणी पृ० ६१

३ साधो, शब्द साधना कीजे।

जही शब्द ते प्रगट भये सब साई शब्द गहि लीजे ॥

शब्द गुरु शब्द मुन सिख भये, शब्द सो बिरला वृषे।

सोई शिष्य साई गुरु महातम जेहि अतर-गति सूके ॥

शब्द वेद पुरान कहत है शब्द सब ठहराव।

शब्द सर मुनि सत कहत है, शब्द भेद, तहि पावै, ॥

शब्द मुन मुन भेप परत है शब्द, कहैं अतुरागी।

पदपशन सब शब्द कहत है शब्द कहैं वैरागी ॥

है। कभी सृष्टि विकास के एक मयया भिन्न क्रम को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि प्रारम्भ में केवल समर्थ सत्पुरुष था। उसने अपने घट में मुरति का सहज उच्चारण किया, जिससे सात तत्त्वा, सप्तधन्वो-मूलाधार, स्वायिष्ठान, भण्डिपूर, अनाहत, विशुद्ध, अज्ञा और सहधार-का विस्तार हुआ। तत्पश्चात् इच्छा और चित्त की उत्पत्ति हुई। फिर सात मानस-लोकों की सृष्टि हुई। इसके अनन्तर उमी ग पाच सूक्ष्म तत्त्वा का सृजन हुआ। जिससे क्रमशः पांच अडो (पांच विषय) का जन्म हुआ। पांच तत्त्वानुसार पांच कर्मेन्द्रियाँ और पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हुए। इसके अतिरिक्त दो ज्ञानेन्द्रियों (मन और बुद्धि) को सत्पुरुष ने अपनी योग माया के प्रभाव में गुप्त कर रखा। श्वाम की प्रगति के साथ शब्द ध्वनि की उत्पत्ति हुई जो अमृत का प्रतीक है। पांच सूक्ष्म तत्त्वों से तीन गुण और पांच भूतों का विकास हुआ। इस प्रकार सत्पुरुष ने ब्रह्मांड का विस्तार करके उसकी चारों ओर वेदों के नीचे मलयनाक की ओर देखा। उसकी दृष्टि से सार' शब्द की उत्पत्ति हुई और उसमें चार प्रकार की सृष्टि (अद्वय पिण्डज, उत्पन्न, स्वप्न) हुई। फिर दशक का विस्तार हुआ। यह ता हुआ सत्त्वगुण विशिष्ट सूक्ष्म प्रकृति का विकास। रजोगुण के समावेश से सत्यपुरुष निद्रा माह, आलस्य के बशीभूत हो गया। परिणाम यह हुआ कि उसकी शुद्ध निमाण बुद्धि ख ब गयी और एक श्याम रंग का अटा जल में तैरने लगा। अने का देकर सत्पुरुष का जगत् रूप जीवात्मा व्याकुल हुआ। उसने जिज्ञासा की कि इस अडे का किम बनना और इसका मूल क्या है? उस त्रिगुणात्मक अडे के मुख पर जब सत्पुरुष ने शब्द का मुद्रण लगाया तो वह फूट गया और उसके दस द्वारों से बाष्प निकला। जिसने आ-रति निरजन का उत्पत्ति हुई। वह निरजन अत्यन्त प्रबल काल पुरुष है। उससे ब्रह्मा त्रिपुण महेश त्रिदेवा की उत्पत्ति हुई जिन्होंने माया के निर्देश से चार प्रकार के जीवों का सृष्टि (अद्वय पिण्डज प्राणि) का विस्तार किया। जीव चारों ओर जाते जाते कि जगत् प्रकृतिक में बहने लगे। चौह भुवनों में चौह यमों की रक्षशाली शुरू हो गयी। यही चारा वेदों का मत है। वस्तुतः सुखी वही है जो स्वयं का स्वयं में विलीन कर सकता है। जो उत्पत्ति और प्रलय, मुख और दुःख के चक्र में पड़ा हुआ है वह आवागमन से मुक्त नहीं हो सकता। सान चर जो ध्यान के केन्द्र है समस्त सृष्टि के मूल है और उन्हीं में यह विलीन भी होती है।<sup>१</sup> सृष्टि विकास की यह प्रक्रिया कबीर के नाम से प्रसिद्ध 'आत्मिगल' में ली गयी है। इस सृष्टि-प्रक्रिया का अन्तिम भाग अत्यन्त पेचीला है, फिर भी वह समग्र रूप में भारतीय है इसमें किसी को

सन्ने काया जग उत्पत्ती शब्दे करि पसारा ।

कहै कबीर जह शब्द होत है, भवन भेद है न्यारा ॥

- कबीर, पृ० २६८

१ — कबीर श्यावली, पृ० १०४

२ बाजक आदि मगल—छ० ३-१६

सदह १ही होना चाहिए। इसके अनेक अर्थों को भारतीय सृष्टि विज्ञान की विभिन्न शाखाओं से सहज ही जोड़ा जा सकता है। अब प्रश्न यह है कि क्या इस विचार-प्रवृत्ति में प्रवर्तक कबीर ही थे? इस पर विद्वानों ने सन्देह प्रकट किया है<sup>१</sup>। जो भी हो, इनका तो निश्चित है कि सिद्धों, नाथों, बज्जाल के अनेक धार्मिक सम्प्रदायों तथा समस्त उत्तरार्ध की संतपरम्परा में प्रचलित सृष्टि-विकास की कथाएँ साधारण हेर-फेर के साथ प्रायः 'एक ही हैं। डा० शशिभूषण दास गुप्त ने बगान के नाथ सम्प्रदाय में कबीर के समान ही जटिल सृष्टि-विक्रम-प्रक्रिया के प्रचलित होने की कथा करने हुए अनादि पुराण, हाडामाला ग्रन्थ, अनादि चरित्र, योगितत्र कला, गोरक्षविजय, गोपीचन्दर सन्यास आदि बगला ग्रन्थों से उद्धरण देकर अपने मत की पुष्टि की है<sup>२</sup>। मनुस्मृति में भी कुछ इसी प्रकार की सृष्टि-विकास प्रक्रिया वर्णित है।<sup>३</sup> अतः सन्तमत में प्रचलित यह सृष्टिविज्ञान सर्वथा आकस्मिक और अप्रत्याशित नहीं माना जा सकता।

### रामसनेही सम्प्रदाय का सृष्टि-विक्रम सम्बन्धी मत

कबीर आदि संतों की भांति आलोक्य सम्प्रदाय के साहित्य में भी कही सृष्टि-रचना की व्यवस्थित कथा नहीं मिलती। साम्प्रदायिक स्रोतों से उपलब्ध सामग्री की परीक्षा करने पर ज्ञान होता है कि रामसनेही भक्तों ने इस विषय में संतों की परम्परागत सम-व्यात्मक प्रवृत्ति का अनुसरण किया है। नागयणदास के अनुसार समस्त सृष्टि शब्द-ग्रह का प्रसार है<sup>४</sup>। यह मत भृगु हरि के शब्दाद्वैत पर आधारित है। भृगु हरि के अनुसार विश्व शब्द-ग्रह का विवर्त है<sup>५</sup>। उनके अनुसार वेद के प्रवृत्ता मह मानते हैं कि जगत् की सम्पूर्ण प्रक्रिया और परिणति शब्द के ही कारण अथवा उससे प्रसूत होकर होती है। इसीलिए बार बार यह कहा गया है कि छंदों से ही विश्व की उत्पत्ति या गति प्रक्रिया सम्भव होती है।<sup>६</sup>

१ साहित्य सदेश (अक्टूबर, १९४६)—कबीरपथी साहित्य का अध्ययन शोषक लेख - डा० द्विवेदी।

२ देखिए अक्सक्योर रिलिजम कल्स, पृष्ठ ३६०-६५

३ मनुस्मृति, १/७-३०

४ सार शब्द का सकल पसारा

—श्री रामसनेहधर्मप्रकाश, पृ० १७३

अनादि निघन ब्रह्म शब्द तत्त्व यदक्षरम् ।

विवर्तनेऽर्प भावेन प्रक्रिया जगतो यत ॥

५ वाक्य पदीय, श्लोक १

शब्दम्य परिणामोऽयमित्याम्नाय विद्वो विदु ।

छन्दोम्य एव प्रथमेतद्विश्व व्यवर्तत ।

६ वही, श्लोक १२०

सन्त परशुराम के मतानुसार पहले ज्विचल अक्षर और अनादि ब्रह्म था। उससे दिव्य कला-समुक्त पुरुष का जन्म हुआ। पुरुष से प्रकृति उत्पन्न हुई। फिर पुरुष और प्रकृति के संयोग से महत्त्व हुआ। महत्त्व से अहंकार का विकास हुआ। अहंकार में मत् रज, तमतीन गुणा की उत्पत्ति हुई। यही तीन गुणा जगत् रूपी वृक्ष की तीन शाखाये है। इन्हीं से पञ्चभूतानि की उत्पत्ति और सृष्टि का विस्तार हुआ। कहना न होगा, यह मत माख्य ज्ञान में अत्यधिक प्रभावित है, क्योंकि पुरुष और प्रकृति के संयोग से सृष्टि की उत्पत्ति में माख्य ज्ञान भी विश्वास करता है।

सृष्टि-विकास के सम्बन्ध में रामचरण का शिष्य रामजन का विचार विशेष ध्यान देने योग्य है। उनका मतानुसार पहले केवल ब्रह्म था। तब से अक्षर रूप पुरुष की उत्पत्ति हुई। उससे एक अक्षर उत्पन्न हुआ। उस अक्षर से फूटने से अहंकार का विकास हुआ, अहंकार से सात्त्विक राजस और तामस तीनों गुणा की उत्पत्ति हुई। फिर इन तीनों गुणा को धारण करने वाले तीन देव क्रमशः विष्णु ब्रह्मा और रुद्र हुए। तामस गुण से पंच तन्वो और पंच विषयों का विकास हुआ। राजस से दस इन्द्रियो और सात्त्विक से दवनाओं की उत्पत्ति हुई। इन सब का संयोग से ब्रह्मान की रचना हुई। सृष्टि विकास में चेतना की आवश्यकता पड़ी। वह ब्रह्म में प्राप्त हुई। फिर पिंड की गजना हुई। पिंड की सर्जना के बाद लिंग भेद हुआ। तब वासना का संचार हुआ। फिर तो तीन लोक, चौदह भुवन, घर, बाहर, मुर, असुर नर नाग, जीवादि का पसार हो गया। इस विशाल सृष्टि का मूल में मायावी तिरजन व्यामदत् व्याप्त था। सृष्टि के प्रसार के

१ अविचल अक्षर अनादि है जिणका कहा परवान।

नाही है है परसराम अनभव करत बखान ॥

पुरुष प्रगट ताते भयो दिव्य कला समुक्त ।

याको परकर वरण है गुरगम ग्यान समुक्त ॥

प्रकृत प्रगट भई पुरुष ते दाय को भयो संयोग ।

यू जब उत्पत परसराम देह इंद्री गुण भोग ॥

पुरुष प्रकृत का भया संयोगा मैतत मड उपाया ।

अहंकार मैतत मधि प्रगट ताते त्रिगुण रचाया ॥

तम उपज्या रजो गुण उपज्या सतगुण फेर कहाया ।

जगत त्रिछ के तीनु सापा मुनि जन भेद बनाया ॥

तम गुण ते दस तत जपना जिन की विध बताऊ ।

महानून सो पंच कहीजे पंच विष समभाऊ ॥ आदि

अन्तर वह अपने लोक का बना गया। इस मत की समीक्षा स यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि इस पर श्रद्धाद्वय साध्य दर्शन, और पौराणिक विचारों की छाया व साथ ही उपनिषदों का भी पर्याप्त प्रभाव है। स्पष्टीकरण के लिए हम इस विकास क्रम में 'अक्षर रूप पुरुष', 'जप', अहंकार से मत रज, तम का विकास और उससे पंच तत्त्वों, दस इन्द्रियों की उपनि तथा तीन गुणों व चारक त्रिदवों की कल्पना पर थोड़ा विचार कर लेना आवश्यक समझते हैं।

भारतीय सृष्टि विज्ञान में अक्षर रूप पुरुष की कल्पना नहीं हुई है। यह अक्षर, साक्ष्य के पुरुष और भद्र हरि के शब्द ब्रह्मा का मिला जुला रूप जान पड़ता है। अड़े से सृष्टि की कल्पना मनुस्मृति में मिलती है। मनु ने कहा है—'जीवा को उत्पन्न करने की कामना में परमात्मा ने सर्वप्रथम अपने शरीर में जल उत्पन्न किया। जन में शक्ति रूप बीज उत्पन्न किया। यह बीज सूय की भाँति चमकने वाला सोन का एक अणु बन गया। उस अड़े ने सर्वलोकव्यापक ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। 'छान्दोग्योपनिषद्' में भी अड़े से सृष्टि की उत्पत्ति का उल्लेख है। अहंकार, उससे तीन गुणों का विकास, फिर पंचतत्त्व, दस इन्द्रिय आदि की उत्पत्ति साम्य दर्शन से प्रायः उगी रूप में स्वीकार कर ली गयी है।

१ मुनि सिधए पुरुष ज हुवा अठरा रूप ब्रह्म तैं जुवा ॥  
 तिनही अक्षर प्रगट कीन्ही दाऊ मभापन ऐ गति चीन्ही ॥  
 जातै भये अष्ट प्रकारा, अष्ट पूटि अहंकार विभागा ॥  
 अहंकार रूँ गुन ऐह जानू साविग राजस तामस मानू ॥  
 अक्षर धारक तीनु देवा विस्व ब्रह्मा अक्षर रुद्र देवा ॥  
 तम गुण तै पंच तत महो अक्षर पवन तेल जल महो ॥  
 सबदसपरम रूप रम गधा पाँचू विपै ए पंच समधा ॥  
 इन्द्री दस रज गुण तै जानू सतगुण व सब दत्र बन्धानू ॥  
 जैसे मिलि ब्रह्माड उपायो चेतन अक्षर ब्रह्म को आधा ॥  
 जातै पिंड मय आकारा थूल शरीर लिंग आधागा ॥  
 लिंग शरीर वासना माही कारण रूप वासना आधी ॥  
 जाग्रत प्रगट अवस्था चल लिंग मुपन है याही मूल ॥  
 सो आधार सुपोपति कारण, भूत अविद्वत माया धारण ॥  
 आप निरजण व्यापक आही ज्यू निम जानि सबल के माही ॥  
 ताही तै यह चेतन हुवा आपी बाँधि भया अब जुवा ॥  
 चौथा तीन लोक विसतारा घर अक्षर नाना विधि मारा ॥  
 मुरतर अक्षर और जगजीवा नाना भाँति पसारा कीवा ॥

—ज्ञान प्रबोध, छ० ३४ ४७

२ मनुस्मृति (१/१)

३ छान्दोग्योपनिषद्, ३/१६

पुराणों में साध्य दर्शन की धारणाओं का स्थूल रूप देखने में आता है। मान्य की प्रवृत्ति के सत, रज, तमोगुण ही पुराणों में ब्रह्मा, विष्णु और महेश के रूप में मूर्तिमान हो गये हैं। यहाँ रामचन्द्र ने तीन गुणा की धारणा करने वाले तीन देवा— ब्रह्मा, विष्णु और महेश की जो कल्पना की है, उस पौराणिक मान्यनाया का प्रभाव मानना चाहिए।

साराण यह कि रामचन्द्र ही सम्प्रदाय की सृष्टि सम्बन्धी धारणाओं पूर्णतः भारतीय हैं। इसके विभिन्न तत्वों का सम्मेलन भारतीय चिन्ताधारा के विविध स्रोतों से हुआ है। समग्र रूप में वे सतमत् के सर्वथा अनुकूल हैं।

### जगत् का स्वरूप

रामचन्द्र ही सम्प्रदाय की जगत् सम्बन्धी विचारधारा प्रधानतया शङ्कराचार्य के अद्वैतवाद से प्रभावित है। अद्वैतवाद के अनुसार जगत् माया या मिथ्या है, और इस सत्य समझना विपरीत भावना है<sup>१</sup>। आचार्य शङ्कर के अनुसार सत्य की शास्त्रीय परिभाषा त्रिकालावाध्य सत्य है। भूत, वर्तमान तथा भविष्य इन तीनों कालों में तथा जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों दशाओं में, जिसका स्वरूप बाधित न हो अर्थात् एक रूपेण अवस्थित रहे, वही सत्य है<sup>२</sup>। इस परिभाषा के अनुसार जगत् की कोई भी वस्तु सत्य नहीं है, क्योंकि जगत् नित्य परिवर्तनशील है, प्रतिक्षण परिवर्णनीय है। एक क्षण के लिए भी यह प्रवृत्तिशून्य नहीं रहता। इसीलिए उन्होंने समार को रज्जु में सर्प, और शुक्ति में रजत की भ्रांति के समान कहा है।

हिन्दी प्रदेश के सन्तों ने समार के मिथ्यात्व का विस्तार ब्रह्मण क्रिया है। कवीर ने उस सर्वत्र समार के फूल के समान सारहीन,<sup>३</sup> जल के बुदबुद के सदृश नरवर<sup>४</sup> आर स्वप्नवत्<sup>५</sup> कहा है। श्री गुरुप्रणय माह्विष में स्थान-स्थान पर समार को

१ पंचदशी—तृप्तिदाय प्रकरण, श्लोक ११२

२ भारतीय दर्शन (बलदेव उपाध्याय), पृ० ४६७

और ऐसा समार है जसा सबल फूल।

दिन दस के व्योहार को भूठ रगि न भूल ॥

३ क० प्र०, पृ० २१

ज्यों जल बूद तैसा समार।

उपजत बिनसत जगै न वार ॥

४ वही, पृ० १२१

ममक विचार जीव जब देखा।

यह संसार गुपित कर लेखा ॥

५ वही, पृ० २३३

जल का बुदबुदा,<sup>१</sup> जल का फेन<sup>२</sup>, घुए का घोरहर,<sup>३</sup> बालू की भीन<sup>४</sup> और विप के समुद्र<sup>५</sup> के सामने क्षणभंगुर बताया है। दादूदयाल<sup>६</sup>, धरणीदास<sup>७</sup>, चरनदास<sup>८</sup> आदि ने भी जगत् को असत् ही कहा है।

१. जैसे जलते बुदबुदा, उपजे बिनसै नीत ।  
जगु रचना तैसे रचो, कहू नानक भीत ॥  
—श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पृ० १३६३
२. जिउ जल ऊपरि फेन बुदबुदा तेसा यहु ससार ।  
—वही, पृ० १२५८
३. जग घुए का धवलहल  
वही, पृ० १३८
४. बालू भीति बनाई रचि पचि रहत नही दिन चारि  
—वही, पृ० ६६३
५. मन पिआरिआ जीउ दिया विखु सागर ससारे ।  
—वही, पृ० ७६
६. मन रे तू देखो सो नाही, हे सो अगम अगाचर माही । टेक ।  
निस अधियारी कछु न सूके ससै सरप दिखावा ।  
ऐसे अध जगत नहि जाने जीव जेवढी खावा ॥१॥  
मृगजल देखि तहा मन धाव दिन दिन भूठी आसा ।  
जह-जह जाइ तहा जल नाही निहचै मरे पियासा ॥२॥  
भरम विलास बहुत विधि कीन्ह्यो ज्यो सपने सुख पाव ।  
जागत भूठ तहा कुछ नाही फिरि पीछे पछितावे ॥३॥  
जब लग सूता ठबलग दखे जागत भरम विलासा ।  
'दादू अति इहा कुछ नाही है सो सोधि समाना ॥४॥  
—स० बा० स० दूसरा भाग, पृ० १००
७. ध्रुवां के घोरहरा, ओ ध्रुरी को घाम ।  
ऐसे जीवन जगत म बिनु गुरु बिन हरि नाम ॥  
—स० बा० स० प्रथम भाग, पृ० ११२
८. (क) साधो भाई यह जग यों सत नाही  
भीन पहार समुद्र विच मिरगा खेत अकासे माहीं ।  
(ख) बाम्क को पूत सींग सस्ता को मृग तृस्ता को नीर ।  
स्वप्न को भूप द्रव्य सपने को अरु जग को द्वार ।  
(ग) ऐगोही भूज जगत सच नाही भेद विधारो पायो ।  
—चरनदास की बानी, भाग दूसरा, पृ० १४१

रामसनेही सन्ता ने भी इसी प्रकार जगत् का मिथ्या प्रमाणित किया है। रामचरित ने जगत् को शीतकोट और मृगमरीचिका के तुल्य अस्थिर बताया है<sup>१</sup>। उनके शिष्य रामजन ने इसे ममर के फूल के समान अमर कहा है<sup>२</sup>। दयातुलसि भी जगत् को मिथ्या<sup>३</sup> पानी के बुदबुद के समान नाशवान<sup>४</sup> और शीत कोट<sup>५</sup> के तुल्य असत् सिद्ध करने हैं। परशुराम न ब्रह्म और जगत् के सम्बन्ध की तुलना जल तरंग से करके अद्वैत ब्रह्मनिर्णय के प्रिय सिद्धांत विवक्षित<sup>६</sup> का समर्थन किया है<sup>७</sup>। इससे यह स्पष्ट है कि अन्य पूर्ववर्ती सन्तों और हमारे अध्ययन क्षेत्र के सन्तों का जगत्-विचार प्रायः एक सा है य सभी शकर वेदान्त से प्रभावित हैं।

१ शीत कोट मसार अथि र सब बीर रे ।

माया छक मुख राज मरीची नीर रे ।

मन मृगा सत जान प्यास घर पारि है ।

परिहा देखत जाय विलाय रहै शिर फोरि है ।

—अणभै पाणी, पृ० २५०

२ उमरी सेमर फूल ज्यों

यू जगत अनया बीर ।

—सुमिरण सिद्धान्त, छ० १०१

३ मत इक ब्रह्म है, मिथ्या सब ससार

उपजे विणवै भूळ मिल रहै सांच निरधार ॥

—दयातुदास की वाणी, प० स० १५-

४ नर पाणी का बुदबुदा विनसत किनियक बार ।

काहे करे गुमान मन चल्थो जाय ससार ॥

—वही, प० स० २४४

५ शीत कोट ज्य जगत है, सूर उदे, मिटि जात ।

रामा पाला पिड गल सोत रात मिट जात ॥

—वही, प० सं० ७४

६ (क) जल-तरंग जल में उठे जल में रहे समाय ।

तरंग सतक न सत जल याको भेद बताया ॥

(ख) निराकार दरियाव है, सहैर उठे आकार ।

उसत समावे तास में द्वैत रहै न लिंगार

द्वैत रहै न लिंगार धारता को विसवासा

और अस्त सब जान उपज फिर होत विनासा

परशुराम सतगुर मिल्या इनको सहै विचार

निराकार दरियाव है सहैर उठे आकार

—वाणी गुटका, प० स० ६६८ (सूरसागर-ओषपुर की प्रति)

पूर्वमध्ययुगीन सन्तों ने जगत् को स्वप्न-वत् बताया है। असोच्य सम्प्रदाय के कथियों में दरिया साहब ने जगत् को स्वप्नवत् कहा है<sup>१</sup>। उनका अनुसार अण्डज, पिण्डज, उष्मज और स्वेदज सृष्टि तथा समस्त ब्रह्माण्ड स्वप्न-रूप है<sup>२</sup>। रामजन जगत की 'भव रचना सपना जैसी<sup>३</sup> कहते हैं। कुछ अधिकारा विद्वानों ने ऐसे स्पष्टों से जगत् का मिथ्यात्व सिद्ध करके उसे अर्द्धत वेदान्तानुबल्ल बताया है। किन्तु यह मत साधारण प्रतीत नहीं होता। जगत् को स्वप्नवत् ता विज्ञानवादी बौद्धों ने कहा था, जिसकी आचार्य शंकर ने कटु आलोचना की थी। स्वप्न आदि प्रत्यक्ष बाहरी वस्तु के बिना ही आकार वाले होते हैं, लेकिन जगत् में पदार्थों का अनुभव प्रतिक्षण होता है। इसलिए जगत् को असत्य मानकर विज्ञान मात्र का मत्त मानना प्रतिदिन के लोकानुभव व नितान्त विरुद्ध है। अनुभव के विषय होने पर भी घट-पटादि की सत्ता का तिरस्कार करना उसी प्रकार उपहास-स्पद है जिस प्रकार रस भरा मिठाइया के स्वाद का अनुभव करते हुये उन्हें मिथ्या ठहराना।<sup>४</sup> तापर्य यह कि जगत् को स्वप्न और स्वप्न की सम्पत्ति की सजा देते समय निगुणिया सन्त जाने-अनजाने बौद्धों व विज्ञानवाद व स्वर में अपना स्वर मिला जाते हैं।

माम्प्रदायिक साहित्य पर कहीं-कहीं बल्लभाचार्य के अविद्वृत परिणामवाद की भी छाया दिखाई पड़ती है। एक वस्तु से दूसरी वस्तु बनने की दो प्रक्रियाएँ देखने में आती हैं। कभी ता मूल वस्तु में विकृति आने से दूसरी वस्तु बन जाती है, जैसे—दूध में दही। कभी कभी बिना विकृति के ही दूसरी वस्तु की उत्पत्ति हो जाती है, जैसे—कनक से कुन्डल। कुन्डल बनक का अविद्वृत परिणाम है। बल्लभाचार्य जगत् का ब्रह्म का अविद्वृत परिणाम मानते हैं। रामचरण काय कारण के विषय में भूषण और कचन का उदाहरण देने समय बल्लभाचार्य से पूर्णतः प्रभावित जान पड़ते हैं। वे कहते हैं—

भूषण घटे बनाय मूल सो स्वर्ण रे।

नहीं मूल का अत घाट का मरण रे ॥<sup>५</sup>

इस विवचन में यह स्पष्ट हो गया होगा कि रामसनेही सन्तों की विचारधारा मुख्य रूप से शंकराचार्य के अर्द्धतवाद और गौण रूप से बौद्धों के विज्ञानवाद तथा बल्लभाचार्य के अविद्वृत परिणामवाद आदि विभिन्न शार्मनिक सिद्धान्तों से प्रभावित होते हुये भी बहुत कुछ स्वतन्त्र रही है।

<sup>१</sup> रामसनेही सन्तवाणी, पृ० ५७

<sup>२</sup> अनुभव गिरा, पृ० १३२

<sup>३</sup> मुमिरण सिद्धान्त, छ० १०७

<sup>४</sup> भारतीय दर्शन पृ० ४६२-६३

<sup>५</sup> अणुमे वाणी, पृ० ८३

## साधना और धर्म

### साधना

भारतीय संस्कृति में आत्मोन्नति और ब्रह्म-साक्षात्कार को मानव-जीवन का चरम पथ एवं परम काम्य माना गया है। यही कारण है कि भारतीय अध्यात्म विद्या का उदय दुःख की व्यावहारिक सता को व्याख्या तथा उससे निवारणाय साधन-माग का विवेचना से होता है। भारतीय मनोविदों एवं तत्त्ववेत्तियों ने मनुष्य की मानसिक अवस्था, संस्कार, योग्यता, दामता आदि की दृष्टि में रखते हुये दुःख और यथना से मुक्त होना के लिए तीन साधना-भागों का अन्वेषण किया है जिन्हें ज्ञानभाग, कर्मभाग और भक्तिभाग (साधना) के नाम से अभिहित किया जाता है। योग विद्या को भी भारतीय अध्यात्म-साधना में विशिष्ट स्थान दिया गया है और इसका विकास युगों से एक पृथक् साधना के रूप में होता रहा है। निगुण सम्प्रदाय में यह साधना विशेष रूप से मान्य रहा है। अब प्रस्तुत अध्ययन में इसका विवेचन परम्परागत त्रिकांड साधना के साथ एक चौथी साधना-पद्धति के रूप में किया गया है। पवित्रता, संयम एवं चित्तन की नाना तरह-बेलि सताओं की झुरमुट से होकर गुजरने वाले ये पथ यद्यपि हमें एक ही अभीष्ट स्थान तक ले जाते हैं, किंतु दिशाएँ सबकी पृथक्-पृथक् हैं। आगे इन पर अलग-अलग विचार करत हुए रामसनेही सम्प्रदाय में इनकी स्थिति पर प्रकाश डाला जायगा।

### ज्ञान-साधना और रामसनेही सम्प्रदाय

निगुण पंथी सन्तों की साधना ज्ञानमूलक है। इसीलिए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस 'ज्ञानाधारी' शाखा की सजा दी है। कुछ विद्वानों ने इसका प्रत्याख्यान करते हुए कहा है कि ज्ञान के लिए जिस सूक्ष्म बुद्धि और गहन अध्ययन की आवश्यकता होती है उनका इन सन्तों में सर्वथा अभाव है। किंतु विद्वानों की गहराई में प्रवेश करने पर हम देखते हैं कि ज्ञान के सम्प्रदाय में सन्तों की अपनी अलग धारणा है। वे वेदाध्ययन मात्र से ज्ञानी का ज्ञानी होना नहीं मानते। ज्ञान से उनका तात्पर्य वस्तुतः तत्त्वज्ञान अथवा आत्मानुभूत ज्ञान से है। कबीर का मत है कि आत्मानुभव होने पर मनुष्य हृद्य विपाद से मुक्त हो जाता है। उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है।

और वह वाद-विवाद की सीमाओं से ऊपर उठ जाता है<sup>१</sup>। उनके अनुसार अनुभव गाने वाला ही सच्चा रागी है।<sup>२</sup> सन्त सुन्दरदास ने भी 'याय', 'मीमासा' आदि पद्धतियों को वादग्रस्त बताते हुए अनुभव ज्ञान को ही सर्वोपरि माना है।

स तो ने गुरुद्वारा प्राप्त उत्सवोध को ज्ञान का पर्याय माना है। कबीर ज्ञान और बुद्धि की प्राप्ति सतगुरु का हाट में बताते हैं।<sup>३</sup> उनके अनुसार ज्ञान, समागम, प्रेम सुख, दया, भक्ति और विश्वास सब कुछ गुरु सेवा से उपलब्ध होता है।<sup>४</sup> सुन्दरदास के ज्ञान का खजाना गुरु में ही खोला था।<sup>५</sup> इसी प्रकार अय सता ने भी गुरु को ज्ञान का मूल स्रोत स्वीकार किया है।

रामसनेही सम्प्रदाय के सता की ज्ञान विषयक अवधारणा पूर्ववर्ती सता के

१ आत्म अनुभव जब भयो तब नहि हृष विपाद ।

चित्त दीप सम ह्यै रह्यो तज करि वाद-विवाद ॥

स० वा० स०, भाग १, पृ० ४४

२ जग भव का गावना क्या गावै अनुभव गावै सो रागी है ।

कबीर बचनावली (त० प्र० सभा)

३ 'याय' शास्त्र कहत है प्रगट सुरवाद ।

मीमासहि शास्त्र माहि कर्मवाद कह्यो है ॥

वैशेषिक शास्त्र पुनि कालवादी है प्रसिद्ध ।

पातजलि शास्त्र माहि योगवाद लह्यो है ॥

सांख्य शास्त्र माहि पुनि प्रकृति पुरुषवाद ।

वेदांत पु शास्त्र तिन ब्रह्मवाद गह्यो है ॥

सुंदर कहत घट शास्त्र माहि भयो वाद ।

जाक अनुभव ज्ञान वाद में न बह्यो है ।

—स० वा० स०, भाग २, पृ० ११६

४ चल सतगुरु की हाट ज्ञान बुधि लाइये ।

—वही, भाग २ पृ० १

५ ज्ञान समागम प्रेम सुख दया भक्ति विश्वास ।

गुरु सेवा ते पाइए सतगुरु चरन निवास ॥

—स० वा० स०, भाग १, पृ० २

६ सुंदर सतगुरु सारिखा कोऊ नही उदार ।

ज्ञान खजाना खोलिया सदा अद्वैत भजार ॥

—वही, पृ० १०६

समान ही है। उन्होंने ज्ञान की प्राप्ति गुरु<sup>१</sup> एवं आत्मचित्तन<sup>२</sup> से बताई है। इस सम्प्रदाय के सन्तों ने अपने पूर्वजनों मर्तों के आदर्श पर शास्त्रीय ज्ञान या कोट पुस्तक-ज्ञान को अस्वार् माना है। दरिया साहब ने शास्त्राध्ययन के माध्यम से उपनय ब्रह्म-ज्ञान की वर्षा करने वालों के हृदय में अथकारपूर्ण राज रक्षो थी<sup>३</sup>। रामचरण भी

१ (क) ज्ञान गुरु प्रकाशिया देहमा तिल दीदार ।

—श्री रामस्नेहधमप्रकाश, पृ० ५१

(ख) गुरु न सतगुरु सारिखा मुझ दीया गुम्नि ज्ञान ।

हरिया में तै मेटि के अधर धराया ध्यान ॥

—बही, पृ० ५१

(ग) ज्ञान का छुक्ति गुरु<sup>४</sup>व सू पाय है ।

गाय है वेद वेदात सारा ।

—विश्राम बोध प्रथम विश्राम, छ० ३६

(घ) गुरु बिन ज्ञान कहो किं पाया ।

—गुरु महिमा (रामचरण), छ० १-

(ङ) राम मिलावै राम निरजन गुरु निरमोही होय ।

दय ग्यान वैराग धन सिप को औगुण खोय ॥

—श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० १६३

(च) राम मिलावै रामजन गुरु निरमोही होय ।

दय ग्यान वैराग धन सिप को औगुण खोय ॥

—श्री रामस्नेही सम्प्रदाय पृ० १६३

२ (क) प्रथम ध्यान अनुभवी करै जासै उपजे ज्ञान ।

—रामस्नेही सन्त बाणी, पृ० ५४

(ख) ज्ञान भएया नहिं जपौ ज्ञान मुग्या नहिं होय ।

रामचरण अवर गुएया लछ जाती पावै सोय ॥

—विनास बोध-मधम प्रकरण, छ० १

३ सीखत जानी ज्ञान गम करै ब्रह्म की बात ।

दरिया बाहर चादनी भीतर काला रात ॥

—रामस्नेही सत बाणी, पृ० ६३

(ग) आत्म माहीं आप विचारै शब्द मुएँ मुखरासी ।

साँचा ज्ञान ध्यान धरिहुँहिरै दगन मडल मठ ध्यावै ॥

—रामस्नेहधमप्रकाश पृ० ५७

अनुभवहीन ज्ञानियों को 'ज्ञानदग्ध' की सजा देते हुए कहत हैं कि उनका साथ छोड़ दो, क्योंकि वे बात करने में तो अत्यन्त प्रवीण होते हैं, किन्तु कार्य करने में बहुत ही बच्चे। ऐसे लोग 'फाकट' बात बना-बना कर दूसरों के धन का अपहरण करने में अपनी कर्तव्यो की इतिथी मानते हैं<sup>१</sup>। ऐसे 'ज्ञानदग्ध' या 'वाचक नानी' मनुष्या को वे मूख से भी बुरा बताते हैं क्योंकि मूख तो अपनी नासमझी से कोई भूल करता है किन्तु ये जानबूझ कर भगवद्भजन नहीं करते। वे बुद्धिहीनता का कारण ठगे जाते हैं और ये बड़े बड़े बुद्धिमानों को अपन वाग्जाल में फसा कर पथ-भ्रष्ट करत हैं<sup>२</sup>।

साम्प्रदायिक साहित्य के अनुशीलन से यह विदित होता है कि रामसनेही सत्तों ने ज्ञान की चर्चा केवल परम्परा-पालन के लिए नहीं की है। उनकी साधना में ज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। ज्ञान, भक्ति और वैराग्य के प्रसंग जहाँ आ जाये हैं सत्तों ने ज्ञान का उल्लेख पहले किया है। वस्तुतः ज्ञान ही उनकी साधना का रीढ़ है। ज्ञान रूपी दीपक के प्रकाश में इन सत्तों ने अपने आत्मा के स्वरूप को पहचाना है<sup>३</sup>। ज्ञान से ही अज्ञान, दुःख, दुःखिधा, काम, क्रोध, अहंकारादि का नाश होता है<sup>४</sup>। इसी से मनुष्य कर्म-बन्धन से मुक्ति पाता है<sup>५</sup>। रामचरण ने 'प्रथम उपजे ज्ञान, तब

- १ ज्ञान दग्द्धा जीव की सगति करिये नाहि ।  
जे चर्चा में चतुर पणा काचा कतव माहि ॥  
काचा कतव माहि फूल थापा स फिरि है ।  
फोकट बात बणाय घात पर वित की करिहै ॥  
रामचरण जैसेन की कदै दुराय न जाहि ।  
ज्ञान दग्द्धी जीव की सगति करिये नाहि ॥

—विश्वास बोध-१४ वा प्रकरण, छ० ०

- २ मूख स सूही अति बुरो, ज्ञान दग्द्धी जीव ।  
मूख भूलै भूल सैं ऊ समझ न सुमरे सीव ॥

—वही, छ० २

- ३ ज्ञान दीप मिख के हृदय वदन तल अपार ।  
भरम तिमिर खडन भयो, आत्मरूप दिदार ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० १२

- ४ ज्ञान पाय अज्ञान मिटाये, उमति दुविधा दूनि गमाए ।  
काम क्रोध मारे अहंकार राम राम रसना रट प्यारा ॥

—श्री रामरत्न धर्मप्रकाश, पृ० २१२

- ५ तिमिर गया रधि तेज ते तेज गया निशि पास ।  
हरिया ज्ञान विचार ते हीय कर्म का नाश ॥

—वही, पृ० ७१

पीछे ले वैराग<sup>१</sup>” कह कर ज्ञान की महत्ता को सादर स्वीकार किया है। वे कहते हैं कि जिस प्रकार मूय के उदय होने से अधकार का नाश हो जाता है और सम्पूर्ण सृष्टि प्रकाशित हो जाती है उसी प्रकार ज्ञान के उदय से अनान का नाश हो जाता है और साधक का अतददृष्टि प्राप्त हो जाती है। उसे असल और नकल की परख हो जाती है और उनका लक्ष्य उस स्पष्ट दिखाई पड़ने लगता है<sup>२</sup>। भक्त रूपा सूर, ज्ञान के तुरग पर सवार होकर, मोह रूपी शत्रु को जिस प्रकार पराजित करता है, उसका बरण दयालुदास ने बड़े सुन्दर ढंग से किया है —

गुरु नेम किर टोन प्रेम वगतार सुपदाई  
 रामनाम तरवार ओट गुरु ढाल सदाई  
 ज्ञान तुरग पर चढे मडै चौगान विचाले ।  
 कजिया है रिएण खेत नेत हर हत सभाले ॥  
 जनम मोह जोत अवग तन मन सतगुरु वारणै ।  
 सूर भगत आकुर घुर राम मिलण वै कारणै<sup>३</sup> ॥

हरिरामदास कहते हैं कि जिस मनुष्य ने गुरु से ज्ञान नहीं लिया, और यदि लिया भी तो उसका चित्त नहीं किया, वह उस अंधे के समान है जो हाथ में दीपक लिए रहता है, फिर भी उसे अधकार ही दिखाई पड़ता है<sup>४</sup>।

इस प्रकार रामनेही सम्प्रदाय के सतों ने परम्परा की लकीर मात्र न पीट कर, ज्ञान के अनुभव पथ पर बल देते हुए उसके साधनागत महत्त्व को स्वाकार किया है।

१ जिज्ञास बोध—पंचम प्रकरण, छ० १७

२ अदीत किरण से होत है ब्रह्म ढ माहि उजाम ।

ज्ञान भांड परकाश तै हिरदे होय प्रकाश  
 हिरदे होय प्रकाश गोम चस्मा खुलि जाही  
 असलि नकल की परखि लब्ध प्रदयग दर्शाहीं  
 तिमिर हूटे ससो कटै मिटै भर्मना भास  
 अदीतकिरण से होत है ब्रह्म ढ माहि उजाम ॥

—विश्राम बोध—प्रथम विश्राम, छ० २१

१ दयालुदास की वाणी, प० स० ५६६

२ गुरु से ज्ञान न वृक्षिया वृक्ष न किया विचार ।

हरिया कर दीपक दिया अंधे को अघार ॥

—श्री रामनेहीधर्मप्रकाश, पृ० ७१

## कर्म-साधना और रामसनेही सम्प्रदाय

वैदिक साधना में कर्म को मुक्ति का साधन माना गया है। कर्म माग का विकास वैदिककालीन याज्ञिक क्रियाओं से हुआ था। इसका विस्तृत विवेचन गीता में देखने को मिलता है। यद्यपि गीताकार ने फलाकांक्षा की दृष्टि से किये गये कर्म को बंधन रूप माना है फिर भी गीता के साधन-माग का आरम्भ निष्काम कर्म से ही होना है। ज्ञान, भक्ति और कर्म का सम बंध ही गीताके मत का सार है। गीता में बहुत पहले मीमांसा कर्म के महत्त्व की स्वीकार करती है। इसके मत में वेद का कमकाण्ड ही सायक है, षानकांड निरयक है। जैमिनि ने स्पष्ट शब्दा में कहा है कि आम्नाय (वेद) का मुख्य प्रयाजन कर्म का प्रतिपालन है। अतः उससे भिन्न ज्ञान-प्रतिपालक वाक्य निरयक है<sup>१</sup>। उपर्युक्त विवेचन के प्रकाश में जब हम हिन्दू के निगुण मन्तों पर दृष्टि डालते हैं तो विदित होता है कि सतमत में कर्मकांड का विरोध किया गया है। सतों ने कर्म को बंधन का कारण माना है। कबीरदास कहते हैं कि जब वृष्णा तन रूपी तुरग पर सवार होकर, विषय वासना रूपी बाज को साथ ले जीव का शिकार करने चलती है तो मन और कर्म रूपी सिपाही मदद के लिए उसके साथ रहते हैं<sup>२</sup>। यहाँ सिपाही के रूप में कर्म जीव का घेर कर पकड़ने और मारने का काम करता है। अतः वह बंधन रूप ही है। सत शिवनारायण भी कहते हैं कि इस ससार में आशा से प्रेरित होकर लोग निदनीय कर्म करते हैं। यही उनके बंधन का हेतु होता है। सारा ससार काल और कर्म के चक्र में जकड़ा हुआ है। जब तक यह कर्म बंधन है अपना निश्चित माग नहीं प्राप्त हो सकता<sup>३</sup>। इसी प्रकार दरिया साहब (विहार वाले)<sup>४</sup> तुलसी साहब<sup>५</sup>, गुलाल साहब<sup>६</sup> आदि ने भी कर्म को बंधन तथा काल के सहयोगी रूप में वर्णित किया है।

१ भारतीय दर्शन, पृ० १०४

२ तन तुरग असवार मन कर्म पियादा साथ।

त्रिस्ता चली शिकार की विषे बाज लिए हाथ ॥

—स० वा० स०, भाग १, पृ० ५६

३ शिवनारायणी सम्प्रदाय और उसका साहित्य, पृ० २१६

४ कहै दरिया मन कैद कर, जो चाहो सत नाम।

करम काटि नर निजपुर, जाय वसे निज धाम ॥

—स० वा० स०, भाग १, पृ० १२४

५ कर्म सारनी बुधि वसी, सूरत रही अधीन।

आसा के बस में पडी बासा विपति मलीन ॥

—वही, पृ० २३४

६ कठी काठ कर्म जो डारै, अजपा जपै जोति तब बारै।

सुमिरन जोति वैश्रव होई, कहै गुलाल अतीथ है सोई ॥

—महात्माओं की वाणी पृ० २७१

संत गोविन्द साहब भी कर्म को 'वैकार' करने की बात कहते हैं<sup>१</sup> जिससे कर्म का बंधन होना ही सिद्ध होता है। कम विरोधी यह भावना भारतीय चिन्ताधारा के लिए कोई नयी वस्तु नहीं है। बौद्धों, सिद्धों और नाययोगियों ने भी कर्म को बंधन रूप बताकर उससे मुक्त होने का उपदेश दिया है। इससे पूर्व ब्राह्मणों ने वैदिक कर्मकाण्ड का विरोध किया था। पाशुरतमत में भी कर्म को पाश या बंधन कहा गया है। 'नाययोगियों के कुछ पूर्व यह मत काफी प्रबल था। हुएन्त्सांग ने अपने यात्रा-विवरण में इसका उल्लेख चारह बार किया है। नैशेपिक दर्शन के टीकाकार प्रशस्तपाद शायद पाशुपत ही थे<sup>२</sup>।' इस मत ने जन जीवन के माध्यम से सत्त मत को प्रभावित किया हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। किन्तु वास्तविकता यह है कि मुस्लिम विजय के अनन्तर इस देश में कर्मकाण्ड के लिए अनुकूल वातावरण नहीं रह गया था। सत्ता न स्थिति की गम्भीरता का भली प्रकार समझत हुए कर्मकाण्ड एवं बाह्याचार का विरोध किया।

रामस्नेही सत्ता ने सन्त मत की एतद्विषयक मायता को पूर्णरूपेण स्वीकार किया है। साम्प्रदायिक साहित्य में कम का कीचड<sup>३</sup>, जाल<sup>३</sup>, काटा<sup>४</sup>, कुआँ<sup>५</sup>, कुत्ता<sup>६</sup>, मार<sup>७</sup> आदि कहकर ससार के लिए दुःखदायी कहा गया है। कहीं-कहीं कर्म की

१ तोरि जनेऊ भ्रम को कर्म कियो खेकार ।

—गोविन्द साहब की हिंदी रचनाएँ, पृ० २२

२ नाय सम्प्रदाय, पृ० १४६

३ करम कलण में सबही कलीया  
काण्ड पकड भेरो बाहीं

—रामदास कृत हृत्विजस, प० स० ३२

३ करम जाल में रामदास बंधिया सब ही जीव ।  
आर आप में पच मुवा विसर गया निज पीव ॥

—रामदास की वाणी, प० स० ५६

४ माया भेड, कांटा कर्म, तन कू कष्ट क्षपार ।

—अणभैवाणी, पृ० ६०

५ करम रूप में छुग पड़्यो हूवा सब ससार ।  
रामदास से नीसर्वा सतगुरु सबद विचार ॥

—रामदास की वाणी, प० स० ५६

६ कूकर रूपी करम है सवै जगत के माँय ।  
रामदास पीचे नहीं सुही भूक मर जाय ॥

—वही, प० स० १०

७ करम तणा बहु भार तें गुरु उतारे पार ।

—रामस्नेही सत्त वाणी, पृ० ११७

व्यापकता का भी विशद बखान मिलता है। रामचरण कहते हैं कि कर्म-पाश में बद्ध जीव स्वभावतः चैतन्य होते हुए भी मूर्ख बना हुआ है<sup>१</sup>। दयालुदास उसकी व्यापकता का बखान करते हुए नर नारी, राजा-प्रजा, वर्णाश्रम धर्म तथा ससार के समस्त जजालो को कर्म की देन बताते हैं<sup>२</sup>।

कर्म के इस कठिन बंधन से मुक्त होने का केवल एक ही माग है, और वह है रामनाम। दरिया साहब कहते हैं कि राम का सुमिरण करने से कर्म रूपी भ्रम की समाप्ति हो जाती है<sup>३</sup>। रामचरण कहते हैं कि जिस प्रकार सूर्य के उदय होने से रात का अधकार समाप्त हो जाता है उसी प्रकार नाम के प्रकाश से कर्म और भ्रम समाप्त हो जाते हैं<sup>४</sup>। उनके अनुसार कर्म रूपी बंधन को सफाई नाम कुठार से ही हो सकती है<sup>५</sup>। रामदास के मत से जन्म-जन्म तक पुण्य करने से भी कोई मनुष्य कर्म-बंधन से मुक्त नहीं होता, किंतु रचमान नाम लेने से उसके बंधन सहज ही कट जाते हैं<sup>६</sup>। कर्म के दरवार में अज्ञान रूपी अधकार का पदा लगा हुआ है जिसमें गवार भ्रमित हो जाते हैं, किंतु भजनानंदी प्राणी देखते-देखते प्रविष्ट हो जाते हैं<sup>७</sup>। नाम या शब्द का दाता सद्गुरु है। अतः कर्म बंधन से मुक्त होने का श्रेय उसी को दिया जा सकता है। इसीलिए दरिया साहब कहते हैं —

१ कर्मों के बस जीव है जासू कछू न होय ।

चेतन देही पाय के रह्यो ज मूरख सोय ॥

—अणभैवाणी, पृ० १२०

२ पुरुष नार क्रम तै भये राव रक क्रम काल ।

चार बरख आश्रम क्रम, रामा जग जजाल ॥

—दयालुदास की वाणी प० स० २३७

३ दरिया सुमिरे राम को कर्म भम सब चूर ।

—रामस्नेही सत वाणी पृ० ३०

४ उदय भया आदित्य रैग तम होवे नाशा ।

भर्म कर्म उटि जाय नाम तव करै प्रकाश ॥

—अणभैवाणी, १०५

५ कर्म बन्न परिहार नाम रिपु बडो कुठारा ।

—वही पृ० १०५

६ अनेक जन्म ताइ पुन करै तीई बरम न जाय ।

रामदास रच नाम ले छिन माये बटि जाय ॥

—रामदास की वाणी, प० स० ५६

७ करमा का दरवार आडा परदा तम का

तामें बध्या गँवार रामा हर भज नीवरया ॥

—रामदास की वाणी, प० स० ५६

दरिया गुह गरुडा मिला कर्म किया सब रद्द ।

झूठा भ्रम खुदाय कर पकड़ाया सत शब्द<sup>१</sup> ॥

कर्म साधना का इस विवेचना से हम इस निष्कप पर पहुँचते हैं कि इन सन्तो ने कर्म के विस्तार को मायावृत्त माना है। दयालुदास कहते हैं कि माया रूपी मद्दारी जीव हृषी वन्दर को काम की रस्सी में बाधकर कम क द्वारा शासित करके नचाता है<sup>२</sup>। एसी स्थिति में कर्म से मुक्ति मिलन का तात्पर्य है, प्रकारांतर से माया से मुक्ति। इस स्थिति में पहुँचने पर साधक-साध्य में पृथक्त्व नहीं रह जाता। इसका अनुभव शरीर धारण करत हुए भी किया जा सकता है। यह जीव-मुक्तावस्था साधना की परिणति में ही प्राप्त होती है।

## भक्ति-साधना और रामस्नेही सम्प्रदाय

### भक्ति का महत्व

मानव जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति के सर्वाधिक सुगम एवं सुनिश्चित साधन के रूप में भक्ति का महत्व निर्विवाद है। भारतीय अध्यात्म-साधना में इसीलिये-इसे श्रेष्ठतम स्थान दिया गया है। गीता में इसकी महत्ता की ओर संकेत करते हुए कहा गया है कि अनन्य भक्त को ही भगवान् के दशन होने हैं, जो न वेद से, न तप से, न दान से और न यज्ञ से ही सम्भव है<sup>३</sup>। 'भागवत' में भक्ति मार्ग को विश्व कल्याण का साधक कहा गया है<sup>४</sup>। 'नारद-भक्ति-सूत्र' में भी भक्ति को कर्म, ज्ञान और योग से श्रेष्ठ कहा गया है<sup>५</sup>। कबीर ने नारद की भाँति भक्ति को कर्म, ज्ञान और योग से श्रेष्ठ मानते हुए उसे मुक्ति-प्राप्त का एक मात्र साधन स्वीकार किया है<sup>६</sup>। उन्होंने

१ रामस्नेही सतवाणी पृ० २४

२ नाच नाचायो ज्यु नखी काम डोर कपि जीव ।

चित्या लाठी सासना करम सामना सीव ॥

—दयालुदास की वाणी, प० सं० ११५

३ नाह वेदैन तपसा न दानेन न चेयया ।

शक्य एव विधो द्रष्टु हृष्यानसिमा यया ॥

भक्त्या ह्वनयया शक्य अहमेव विधो जुन ।

जात द्रष्टु च तत्त्वेन प्रवेष्टु च परतप ॥

—गीता ११।५३-५४

४ श्री मद्भागवत, ७।६।६

५ सातु कर्म ज्ञान योगोभ्योऽप्यधिकतरा ।

—नारद भक्ति सूत्र-२५

६ भाव भगति विसवास विन कटे न ससे मूल ।

कहै कबीर हरि भगति विन मुक्ति नहीं रे मूल ॥

—क० प्र०, पृ० २४५

योग-भाग को भक्ति के आश्रित कहा है। भक्ति के अभाव में योग-भाग व्यर्थ है<sup>१</sup>। रामसनेही सम्प्रदाय के सतों ने भी भक्ति को परम्परागत भारतीय साधना मार्गों में सर्वोच्च स्थान दिया है। रामचरण भक्ति को समार सागर की पार कराने वाली नौका के रूप में पुराण, पाठ, जप, तप, यज्ञ, वेद, विद्या, योग, तीर्थ, दान, स्नान एवं आदि में उत्तम बताते हैं<sup>२</sup>। वे स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि जो हरि-स्मरण करता है वही उत्तम है चाहे वह नाच हो चाहे उच्च और भक्तिहीन चाहे उच्च कुलोद्भव ही क्यों न हो स्वपक्ष तुल्य है<sup>३</sup>। दयालुदाम भक्ति-भाव को सद्गति का मूल मानते हैं<sup>४</sup>। दरिया साहब ने भी भ्रम और कम-बधन का नाश तथा ज्ञान सूय का उदय भक्ति से माना है<sup>५</sup>।

## भक्ति की परिभाषा

मनीषिया ने स्वानुभूति के आधार पर भक्ति की अनेक परिभाषाएँ की हैं।

१ हिरदै कपट हरि सू नहा साधो,  
कहा भयो जो अनहद नाच्यो ।

—क० ग्रं० पृ० १८२

२ भक्ति भव नीर पर जान ये पोन है ।  
बहुत नरनारि चढ पार हूवा ॥  
भक्ति सो धर्म तिहुँ लोक में को नही ।  
भक्ति मधि धर्म सब नाहि जूवा ॥  
अनत पुन पाठ जप तप जनादि से ।  
वेद विद्या पढ़े जोग धारा ॥  
तीरथा दान स्नान पढ़ि सखा ।  
तोलिए भक्ति सम नाहि सारा ॥

—जिज्ञास बोध तृतीय प्रकरण, छ० १

३ ऊँच नीच हरिको भजे सोही उत्तम जान ।  
रामचरण हरि भजन बिन ऊँचहि स्वपक्ष समान ॥

—ब्रह्म वाणी, पृ० १२६

४ रामा भक्ती भाव मिल यह सद्गति के मूल ।

—श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश, पृ० २३६

५ दरिया सुमिर राम को कर्म भय सब छूट ॥  
निधि तारा सहजे मिटे (नी) ऊँच निर्मल सूर ।

—रामसनेही सतवाणी, पृ० ३०

‘शाण्डिल्य भक्ति-सूत्र’ में ईश्वर के प्रति परमानुरक्ति को भक्ति कहा गया है<sup>१</sup> । व्यास जी के अनुसार पूजादि में प्रगाढ प्रेम होना ही भक्ति है<sup>२</sup> । मगाचाय न भगवान् की कथा आदि में अनुराग होने को भक्ति माना है<sup>३</sup> । श्री रूपगोस्वामी के मतानुसार ज्ञान और कर्म के प्रभाव से मुक्त होकर निष्काम भाव से निरन्तर कृष्ण का प्रेम पूर्वक ध्यान करना ही भक्ति है<sup>४</sup> । द्रवपि नारद के मत में अपन सय कर्मों को भगवान् से अलग करना और भगवान् का छोडा सा विस्मरण होने में परम आकुलता का अनुभव करना ही भक्ति है<sup>५</sup> । उपयुक्त ममस्त परिभाषाओं में भक्ति को प्रेममूलक बताया गया है । अत स्पष्ट है कि ईश्वर के प्रति अहतुक प्रेम ही भक्ति है, और यही मुक्ति का सरलतम माग है । कहना न होगा, रामसनही सम्प्रदाय की भक्ति भी प्रेमरूपा है । राम न स्नेह करने के कारण इस सम्प्रदाय का नाम रामसनेही पडा । साम्प्रदायिक माहित्य प्रेम भक्ति की चर्चा से भरा पडा है । हरिरामदाम प्रेम भक्ति की प्राप्ति ही साधना का मुख्य फल मानने हैं ।

प्रेम भक्ति मोहि आषे ।

माग माग दाता हरि आगे जपू तुम्हारा ॠजापो ॥ डेर ॥

आठ नव निधि रिधि भडारा क्या मागू विर नाही ।

द मोजू हरिनाम सज्जाना छूट कवहु नहि जाही ॥

इद्र अप्सरा सुख विलासा क्या मागू छिन मगा ।

दीजे मोहि परम सुखदाता सेवत ही रहू सगा ॥

तीन लोक राजतप तजू क्या मागू जम प्रासा ।

दीजे राज असे गुरू देवा अटल अमर पुर वासा ॥

आठ पहर औचग अणधड की ता सती निस्तारू ।

१ सापरानुरक्तिरीश्वरे ।

—शाण्डिल्य भक्ति-सूत्र—२

२ पूजादि एवानुराग इति पाराधर्म ।

—नारद भक्ति-सूत्र—१६

३ कथादिभिवति गग ।

—नारद भक्ति सूत्र—१७

४ अयामिलापिता स्यात् ज्ञान कर्माद्यनावृत्तम् ।

आनुकूल्येन कृष्णानुशीलन भक्तिरुत्तमा ॥

—भक्ति रसामृत सिंघु, पूर्व विभाग, प्रथम सहरी, श्लोक ११

५ नारदस्तु त्रदपिताखिलाचारिणा तद्विस्मरणे परम् व्याकुलतति ।

—नारदभक्ति—सूत्र—१६

जन हरिराम स्वामि अह सेयक एव मेव दीदार १ ॥

### भक्ति के कुछ प्रमुख-भेद—

नवधा भक्ति—उपासना प्रणाली को दृष्टि में रखते हुए 'भागवत' में भक्ति के नव भेद बताए गये हैं, जिस नवधा भक्ति 'या' 'तव विद्या -भक्ति' कहते हैं। नवधा-भक्ति का नव अर्थ यह है—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पदसेवा, अर्चन, वदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदा<sup>२</sup>। भक्ति के इन नव अंगों में प्रथम तीन—श्रवण, कीर्तन और स्मरण का उपासक, श्रद्धा और विश्वास से है, पद सेवा, अर्चन और वदन, रूप से सम्बद्ध है और अन्तिम तीन दास्य, सख्य एवं आत्मनिवेदान-रागात्मिका भक्ति से सम्बद्ध रहते हैं। उपर्युक्त ताना बगों में प्रथम और अन्तिम से सत्तों का सैद्धांतिक विरोध नहीं था। उन्हें आरति ही पाद सेवन, अर्चन और वदन से, क्योंकि ये अरूप के साधक थे। हमारे अध्ययन क्षेत्र के सत्ता न नवधा भक्ति के रूढ़ि रूपकी निंदा अनेक बार की है, किन्तु दयालुदाम ने नवधा भक्ति को नयी व्याख्या कर पद सेवा अर्चन और वदन का सम्बन्ध सद्गुरु और सत्त स स्थापित करके उसको सवया मतमत्तानुकूल बना लिया है।

आजवता सतोपता कद न मन अभिमान ।

श्रवण कथा रुचि राम रति पूजा साधु विधान ॥

साधु वैण साचा हृदै कदे न पलटे मन ।

करै कीर्तन एक रम राम भजत हरि जन ॥

चरण सेव पूजन जना, वदन दासा नित ।

मखा समपन भावना रामा साजे चित्त ३ ॥

कहना न होगा, परवर्ती युग के सत्तो में इस प्रकार का नवीन व्याख्या करके सगुण भक्ति के तन्त्रों को स्वीकार करने की प्रवृत्ति ही चल पडी थी। दयालुदाम से पहल निरजनी सत्त तुलसीदास ने अपनी वाणी में नवधा भक्ति की नयी व्याख्या करत हुए इसे अपनाया था। उनके अनुसार पाद-सेवन का अर्थ हृदय-कमल स्थिति ज्यातिस्वरूप ब्रह्म का ध्यान करना है। 'अर्चन' समस्त ब्रह्मांड में ओ३म् का प्रतिरूप देखना है। 'वदन' साधु, गुरु और गोविंद को एक मान कर उसकी वदना करना है। 'दास्य भक्ति' हरि, गुरु और साधु की निष्काम सेवा करना है। 'सख्य भक्ति' भगवान्

१ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० १४६

२ श्रवण कीर्तन विष्णो स्मरण पाद सेवनम् ।

अर्चन वदन दास्य सख्य आत्मनिवेदनम् ॥

३ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० २३६

से बराबरी का अभिमान करके, सब मार्गों से गोविन्द प्राप्त हो सकने के विश्वास के साथ, भगवान् को मित्र समझने की भावना है। 'आराम निवेदन' दैन्य का भाव है<sup>१</sup>। यही नहीं गुलाल पय के यशस्वी सत गोविन्द साहव ने बिना किसी प्रतिबन्ध के ही नवधा भक्ति करने की बात कही है।<sup>२</sup>

## दशधा भक्ति

साधना के विकास के साथ-साथ उसके साधनों में भी विकास का होना सबया स्वाभाविक है। भक्ति साधना के विकास में 'नवधा-भक्ति' से आगे 'दशधा' की अवधारणा इसी विकास क्रम की एक सीढ़ी माना जा सकती है। 'दशधा-भक्ति' निगुण और सगुण दोनों साधनाओं में समान रूप से प्रचलित है। नामादास ने स्वामी रामानन्द के शिष्यों प्रशिष्यों को 'दशधा भक्ति' का आगर, बताया है<sup>३</sup>। 'भक्तमाल' में ही अथर्व उद्देशेने शैल्य महाप्रभु को 'दशधा रस आक्रांत, कहा है<sup>४</sup>। इसी प्रकार अपनी दूसरी रचना 'अष्टधाम' में उन्होंने अक्षदास को दशधा संपत्ति का अधिकारी बताया है<sup>५</sup>। इन सगुण मार्गों भक्ता की भाँति निरजनी मन्त्र तुलसीदास ने भी अपनी बाणी में नवधा भक्ति की विधि के बाद अभिनव दशधा भक्ति (प्रेमाभक्ति) की प्राप्ति का उल्लेख किया है<sup>६</sup>। हमारे अध्ययन क्षेत्र के सत्ता को भक्ति का यह स्वरूप

१ योग प्रवाह, पृ० ५०-५२'

२ नवधा भक्ति करें मुनि पानी

जाहि लखत मिले सारंग पानी

—गोविन्द साहव की द्विती रचनाएँ भूमिका, पृ० १८ से उद्धृत

३ औरी शिष्य प्रशिष्य एक ते एक उजागर।

विश्व भगल आघार, सर्वानन्द दसधा के आगर ॥

—भक्तमाल (रूपकला टी०), पृ० २८८

४ गौड देस पासएड भेटि कियो भजन परायन।

बरुणा सिंधु कृतन भये अगनित गति दायन ॥

दसधा रस आक्रांत महत जन चरण उपास।

नाम सेत निह पाप दुरित तिहि नर क नासे ॥

—श्री भक्तमाल (वृंदावन), पृ० ४८३

५ तम कृपा को रूप वशी श्री गुरु अक्षपद।

जिनको मुजम अनुर दसधा संपत्ति धनद जिमि ॥

—छात्र रिपोट (१९०६ १२) भाग २, पृ० १०६६

६ दखिये योग प्रवाह, पृ० ५२

सब प्रकार से माय था। रामचरण दशधा की प्राप्ति के बिना सर कुछ असार मानते हैं —

नव अग नवधा-भक्ति के जापर दशधा मार ।  
जे दशधा प्रापति नहों तो सब ही जाण असार ॥  
तो सबही जाण अमार सार बिन कतव फीको ।  
देखो हिये विचार नाम नवधा शिर टीको ॥  
रामचरण भज राम कूँ घाटुया दृढ इक्षतार ।  
नव अग नवधा-भक्ति के जापर दशधा सार<sup>१</sup> ॥

## एकादश आसक्तिया

'नारद भक्ति-सूत्र' में भक्ति को प्रेमरूपा मानते हुए उसे ग्यारह आसक्तियों के रूप में बाँटा गया है। ये ग्यारह आसक्तिया निम्नलिखित हैं—(१) गुणमाहात्म्या-सक्ति, (२) रूपामक्ति (३) पूजासक्ति, (४) स्मरणासक्ति (५) दास्यासक्ति (६) सहयासक्ति, (७) कातासक्ति, (८) वास्त्यासक्ति, (९) आत्मनिवेदनासक्ति, (१०) त मयासक्ति (११) परम विरहासक्ति<sup>२</sup>। जिन भक्तों को प्रेमरूपा भक्ति की प्राप्ति हो जाती है उममें ये सभी आसक्तियाँ प्राप्त होती हैं। हम प्रारम्भ में ही कह आये हैं कि रामसनेही सम्प्रदाय की भक्ति प्रेमरूपा है। साम्प्रदायिक साहित्य के अनुशीलन से विदित होता है कि रामसनेही सत्ता न अपना वाणी में सहज ढग से इन एकादश आसक्तिया का समावेश कर दिया है।

## भक्ति के साधन

भक्ति विषयक सस्कृत ग्रन्थों में भक्ति के अनेक साधनों का बरान किया गया है, जिनमें सत्सग, अखण्ड भजन, गुण कीर्तनादि तथा सत कृपा महत्वपूर्ण हैं।

सत्सग भक्ति का अयतम साधन है। सत्सग की श्रेष्ठता पर प्रकाश डालते हुए भगवान् कृष्ण ने उद्धव से कहा था कि 'जगत् की विविध आसक्तिया का उन्मूलन सत्सग के द्वारा होता है। मुझे वश में करने का जैसा साधन सत्सग है, वैसा न योग है, न साख्य न धर्म-पालन और न स्वाध्याय ही। तपस्या, त्याग, इष्टापूत और

<sup>१</sup> समता निवान द्वितीय प्रकरण छ० ३६

<sup>२</sup> गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपामक्ति, पूजामक्ति, स्मरणामक्ति, दास्यासक्ति, कातासक्ति, वास्त्यासक्ति, आत्मनिवेदनासक्ति, त मयासक्ति, परमविरहासक्ति, रूपा एकादशधासक्ति ।

दक्षिणा से भी मैं वैसा प्रमान नहीं होता। यहाँ तक कि व्रत यज्ञ, वेद तीर्थ और यम नियम भी सत्सग के समान मुझे वशीभूत करने में समर्थ नहीं है<sup>१</sup>। रामसनही सतो ने सत्सग की अनेक प्रकार से महिमा गाते हुए इसका विधान किया है।

भक्त के लिए अखंड भजन का अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है। 'नारदभक्तिसूत्र' में इस भक्ति के प्रमुख साधनों में स्थान दिया गया है<sup>२</sup>। गोस्वामी तुलसीदास तो यहाँ तक कहते हैं कि जल के मयन से चाहे घी निकल आवे, धालू से चाहे तेल निकले किन्तु भगवद्भजन बिना भवसागर को कदापि नदी पार किया जा सकता<sup>३</sup>। स्वामी रामचरण भजन के माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहते हैं, कि भजन से सब प्रकार के भ्रम दूर हो जाते हैं, भजन से कर्मबंधन छूट जाता है और भजन के ही प्रताप से हृद्गत मलिनता विनष्ट हो जाती है तथा मन निर्मल हो जाता है<sup>४</sup>। इसीलिए हरिनामदास अथ देवी देवताओं को छोड़कर अर्हनिष्ठ राम भजन करने का उद्देश देते हैं<sup>५</sup>। दरिया साहब ने भी राम के स्मरण से कम, भ्रम एवं अज्ञानता की निश्चाय अवसान तथा ज्ञान सूर्य के प्रकाशित होने चर्चा की है<sup>६</sup>।

भगवान् के गुणों को सुनने एवं उनके कीर्तन में हमारे मन में भगवान् के प्रति आस्था बढ़ती है और हमारी भक्ति भावना का विकास होता है<sup>७</sup>। 'भागवत में कहा गया है कि जिसने भगवान् के नाम-गुणों की चर्चा कभी नहीं सुनी, वह मनुष्या कुत्ते, सुअर, जंत और गध से भी अधिक निन्दनीय है। जिन बातों में भगवत्काल

१ भागवत, १७ १२ १-२

२ नारद भक्ति-सूत्र, सूत्र-३५

३ चारि मथ घृत होइ बरु सिकता त बरु तेल ।

दिन हरि भजन न भव तरिज, यह सिद्धांत अपेल ॥

—मानस-उत्तरवाड, दोहा १२२ क (माता प्रस)

४ राम के भजन से मम सब भाजिया राम के भजन से कम छूटा ।

राम के भजन से मन निर्मल भया राम के भजन से मन खूटा ॥

अण भै वाणो, पृ० १६१

५ राम नाम निश्चिदिन भजो तजो विडाणो आस ।

जन हरिया नर देह सो औपर वीतो जात ।

—श्री रामसंहर्षप्रकाश, पृ० ५८

६ दरिया सुमिरे राम को कम भर्म सब चूर ।

निस तारा सहजे मिटे जो जगे निर्मल सूर ॥

—रामगनेही सत वाणो, पृ० ४४

७ नारद भक्ति-सूत्र, ३५

का गान नहीं सुना वे सर्पादि के बिल के सदृश हैं और जिस जीमने भगवान् की लीला का गान नहीं किया वह मेढक की जीभ के तुल्य है<sup>१</sup> । रामसनेही सत्त भगवान् के गुण, व्यवह और कीर्तन से पूर्ण आवश्यकता रखते हैं । वे भगवान् के गुणों का बनेक प्रकार से गान करते और गद्गद होकर सुनते हैं । महात्मा रामचरण जन्म-मरण के दुःख को दूर करने वाले निरजन राम का गुणगान करते हुए कहते हैं—

भज रे मन राम निरजन कू जन्म मरण दुःख भजन कू । टेका  
अधनाम शिल सायर पाट्यो राम चन्द दल तारण कू ॥  
जल बूडत गज के फू काटे अजामील अध जारण कू ।  
राम कहत गणिका निमतारी युग युग अधम उधारण कू ॥  
ऊच-नीच की भ्राति न राखै शरणा की प्रति पालण कू ।  
रामचरण हरि ऐस दीरघ अबगुण गुहा निवारण कू<sup>२</sup> ।

इसी प्रकार हरिरामदास ने भी गाया है—

ऐसे हँ राम गरीब निवाज । टेका  
भीर परी प्रह्लाद उवार हिरण्यकशिपु हूणताज ॥  
या उपदेश दियो ध्रुव सेती अटल बसायो राज ।  
टेर मुनत वेग हरि आये तार बियो गजराज ॥  
जन द्रोणा को चीर बघार्या भई पच भरताज ।  
देवल फेर कियो जन साम्हा भक्त नाम द काज ॥  
दास कबीर घरे लदि बालद बान उतार नाज ।  
भीरा जहर कियो चरणोदक राखि भरोसो राज ॥  
सब सतन के कारज सारे भक्त विरद की लाज ।  
जन हरिराम सदा सिधकामा राम सुमर महाराज ॥<sup>३</sup>

वरिया साहब ने भी अलख निरजन को कया मुनने के परिणामस्वरूप श्रवणो के जागृत होने की बात कही है ।

महापुरुषों एवं मत्त जना की कृपा से भी भक्ति की प्राप्ति होती है । भागवत<sup>४</sup> म कहा गया है कि भगवत्संगी पुरुषों के क्षणिक साहचर्य की तुलना, सांसारिक सुख की तो बात ही क्या, स्वर्गादि और उमस भी आगे मुक्ति से भी नहीं की जा सकती ।<sup>५</sup>

१ श्रीमद्भागवत २।३।१६-२०

२ अणभै वाणी पृ० ६६२

३ श्री रामस्मृद्धमप्रकाश पृ० १४७

४ तुल्याम् लवेनापि न स्वयं नापवगवम् ।

भगवत्सङ्घिस्य मर्याना किमुनाशिय ॥

निर्गुण सत्तों ने सत-दशन के माहात्म्य का विशद चरण किया है। हमारा 'अध्ययन युग इस सम्बन्ध में अपवाद नहीं है। रामसनेहा सम्प्रदाय के सन्तो ने साधु-दशन की महिमा का गान किया है। महाराम रामचरण भक्त-दर्शन का फल बताते हुए लिखते हैं —

सदा सतोपी दास का दशण मैं फल यह ।  
रामनाम विछणाय दे, आपण कछु न लेह ॥  
आपण कछु न लेह, बहुरि दावे नहि बोले ।  
जो जो परसन करे, उहुत विधि सासो खोल ॥  
रामचरण उनसू सदा कीजे अधिक सनेह ।  
सदा सन्तोपी दास का दशण मैं फल यह १ ॥

दयालुदास साधु दशन और मिलन का माहात्म्य अगम बताते हुए इस सबसिद्धि और सब पदार्थों का देने वाला बताया है<sup>२</sup>। दरिया साहब के अनुसार साधुसंगति से मकल विषय वासनाओं का नाश हो जाता है<sup>३</sup> और साधक का हृदय पद भक्ति के मजीठी रंग में रंग उठता है<sup>४</sup>।

## भक्ति के अन्तराय

जिस प्रकार सत्सग, ईश्वर और सन्तो की कृपा तथा अखण्ड हरि-भजन आदि से हमारा भक्ति-भावना अधिकाधिक पुष्ट होती है, उसी प्रकार दुष्टों की संगति तथा विषयान्ध भक्ति में बाधा डालती है और हम सवार में लिप्त करती है। महर्षि नारद ने कुसग को काम क्रोध, मोह, स्मृतिभ्रंश बुद्धिनाश एवं सबनाश का कारण बताते हुए उसके त्याग पर विशेष बल दिया है<sup>५</sup>। रामसनेही सम्प्रदाय के सत्तों ने भी कुसगति-त्याग का उपदेश किया है। दयालुदास ने कुसगति के परिणामस्वरूप अनेक

१ अमृत उपदेश—चतुष प्रकाश, छ० १६

२ सब पदार्थ सब सिद्धि दशण च्यार मिलाप ।

रामा महातम अगम है परसे आपो आप ॥

—श्री रामसनेह धमप्रकाश, पृ० २३८

३ दरिया संगत साधु को कल विष नासे धोय ।

—रामसनेही सत वाणी, पृ० ८०

४ दरिया संगत साध की सहजे पलटे अग ।

जेन सग मजीठ के बपडा होय सुरग ॥

—वही पृ० ८०

५ नारद भक्ति सूत्र—४३ ४४

दुःख बताते हुए इसे समस्त दोषों का द्वार और अपयश का मूल बताया है<sup>१</sup>। रामचरण ने भी कुसगति के दुर्विपाक की चर्चा की है और उससे विरत रहने की शिक्षा दी है। कुसगति में पड़े हुए मनुष्य की तुलना लोहार की 'हाट' में पड़े हुए पतंग से करते हुए वे कहते हैं —

कुसगति में रामचरण तू मति बैठे जाय ।  
जैसे हाट लोहार की कोई पड़े पतंगो आय ॥  
कोई पड़े पतंगो आय गाठ का कपड़ा जारै ।<sup>१</sup>  
यूँ कुसगी सग शोभ आगली शान विगारै ॥  
साते सगत कीजिए जो गधी गध सुभाय ।  
कुसगत में रामचरण तू मति बैठे जाय<sup>२</sup> ॥

विषय वासनाएँ भी भक्ति के बाधक तत्वों में से हैं। गीता में भगवान् कृष्ण ने मनुष्य को विषया से मुक्त होने का उपदेश देते हुये कहा है कि विषयों के चिंतन से मनुष्य की उसके प्रति आसक्ति होती है, आसक्ति से काम उत्पन्न होता है, काम से क्रोध की उत्पत्ति होती है, क्रोध से ममोह हाता है, ममोह से स्मृतिभ्रंश, स्मृतिभ्रंश से बुद्धिनाश और बुद्धिनाश में मयनाश हो जाता है<sup>३</sup>। सत्ता में विषय वासना का बड़ी निन्दा की है और उस नरक का माग बताया है। रामसनेही मत्त रामचरण कहते हैं कि जो मनुष्य विषय रूपा वेलि को उखाड़ कर उससे मुक्त हो जाता है उसे ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की प्राप्ति होती है और जो विषय की बाधा करता है वह हर समय भोग और रोग से आक्रांत रहता है। इन्द्रिय-स्वयय के कारण उसमें किसी प्रकार की अच्छाई-बुराई के निरूपण का विवेक नहीं रह जाता। अतः मनुष्य को विषय मुक्त लोगों की सगति करने चाहिए तथा विषयों जना का त्याग कर दना चाहिए<sup>४</sup>।

१ कुसगति में दुःख अनंत है सत्र दोषण की द्वार ।

राम अवजस मूल है पय काजी भिन स्वार ॥

—दयानुत्तम की वाणी प० स० १६८

२ अमृत उपदेश—चतुर्थ प्रकाश छ० ५५

३ ध्यापतो विषयान्पुंम सगस्तेषूपजायते ।

सगात्सजायत काम कामत्स्त्रीयोऽभिजायते ।

क्रोधाद्भवति समोह ममोहास्मृतविभ्रम ।

स्मृतिभ्रंशद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशा प्रणश्यति ॥

—गीता-२।६२-६३

४ विषया चर उषान भये निर्विष जन कोई ।

ज्ञान भक्ति वैराग्य प्राप्त हूँ प्राप्ति होई ॥

विषई बंधे भोग रोग अधिको उपजावै ।

इन्द्रिय स्वयय ओट छोट कोई निजर न आवै ॥

निर्विष सगति कीजिए विषई सग निवार ।

ध्यान बहो भागवत में पुरुष मासि विचार ॥

—अमृत उपदेश चतुर्थ प्रकरण, छ० ६४

दयालुदास ने भी मोह वासना रूपी पक्ष से निकल कर भगवत्प्रेम के जल में प्रवेश करके भव दुःखों से छुटकारा पाने की शिक्षा दी है।<sup>१</sup> इसी प्रकार श्रो, धन, अभिमान, दम्भ आदि की गणना भी भक्ति के अंतरांगों में करत हुए, रामसनेही सत्ता ने इनमें दूर रहने के लिए निरंतर चेतावनी दी है।

### रामसनेही सम्प्रदाय की भक्ति का स्वरूप

वैसे तो भक्ति के स्वरूप पर कई दृष्टियाँ से विचार किया जा सकता है, किंतु रामसनेही सम्प्रदाय की भक्ति का कवल दो प्रमुख दृष्टियों से ही विवेचन किया जायगा (१) शास्त्रीय दृष्टि (२) भावनागत दृष्टि।

शास्त्रीय दृष्टि-शास्त्रीय दृष्टि से भक्ति के दो प्रकार बताये गये हैं-गौडी और परा। यह विभाजन भक्ति के साधन और साध्य पक्ष पर आधारित है। इसलिए गौडी भक्ति को साधन भक्ति तथा पराभक्ति को साध्य भक्ति भी कहते हैं। गौडी भक्ति के पुनः दो भेद किये गये हैं वैधी और रागानुगा<sup>२</sup>। वैधी भक्ति शास्त्रानुमोदित है। स्वाभाविक श्व-रानुराग न होने पर भी नैतिक सध्योपासना के रूप में इसका विधान होता है<sup>३</sup>। उस मयादामधी भक्ति या मयादा-भाग भी कहते हैं<sup>४</sup>। रागानुगा भक्ति वस्तुतः परा या साध्य भक्ति के दो भेदों-भावभक्ति और प्रेमभक्ति में से भावभक्ति का अनुगमन करने की इच्छा या वृत्त्या से होती है। कहना चाह तो हम कह सकते हैं कि वैधी और रागानुगा नामक साधन भक्ति के दोनो सोपानों से होकर भक्त परा या साध्य भक्ति के क्षेत्रागत भाव-भक्ति को प्राप्त करता है। रागानुगा भक्ति के भी दो भेद बताये गये हैं-कामानुगा और सम्बधानुगा<sup>५</sup>। कामानुगा भक्ति में भक्त श्री कृष्ण के माधुर्य को देखकर या कृष्ण की मधुर लीलाओं को सुनकर कभी उनके साथ सम्भोग या रमण की इच्छा से और कभी अपने भीतर कृष्ण के पितृत्वादि के मनन या अर्पण से उनका प्रेम प्राप्त करने की इच्छा करता है। सम्बधानुगा भक्ति में वात्सल्य, सख्य जादि भावा के लोभी भक्त ब्रजराज, सुवल आदि की भाँति भाव एवं चेष्टायें करते हैं।

१ मोह वासना तोर भक्ति नर देह कदे नहि गानिए।

जन रामा हरि प्रेम विच गल्या त भव दु ख टालिए।

—रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० २८८

२ भक्ति 'रसामृत सिंधु' पूर्व विभाग द्वितीयसाधन भक्ति, श्लोक ३

३ वही, श्लोक ३, ४

४ वही, श्लोक ७६

५ वही, श्लोक ६३ ६४

परामर्शित सिद्ध दशा की भक्ति है। इसे साध्य भक्ति भी कहते हैं। इसके भी दो भेद किये गये हैं—भाव भक्ति और प्रेम भक्ति। भाव और प्रेम में कारण-कार्य सम्बन्ध है। भाव प्राथमिक अवस्था है, जिससे प्रेम की उत्पत्ति होती है। वैधी और रागानुगा साधन भक्तियोग के अन्वयास से जब साधक के विशुद्ध सत्त्व प्रधान चित्त में विशेष प्रकार का द्रवी भाव उत्पन्न हो जाता है तब उसे भाव कहते हैं। यह अवस्था आगे प्रकाशित होने वाले प्रेम सूय का उपकाल है। भावभक्ति को रागात्मिका भक्ति भी कहते हैं। इसके दो भेद किये गये हैं—काम रूपा और सम्बन्ध रूपा<sup>१</sup>। जो भक्ति सम्भोग-नृपणा को अपना अंग बना लेती है, वह कामरूपा भाव भक्ति है। यह भक्ति गोपिकाओं में पाई जाती है। कृष्ण के पितृत्व आदि के अभिमान को सम्बन्ध रूपा भाव भक्ति कहते हैं। नन्दादि अहीर सम्बन्ध रूपा भक्ति के उदाहरण हैं।

भक्ति की विविध कोटियों में प्रेम-भक्ति का सर्वोच्च स्थान है। इस भक्ति को पाकर मनुष्य सिद्ध हो जाता है अमर हो जाता है हृष्ट हो जाता है और भगवान् के अतिरिक्त उस किसी भी बात की चिन्ता नहीं रहती<sup>२</sup>। जिस सौभाग्यशाली के चित्त में यह अपूर्व प्रेम उत्पन्न होता है उसकी मुद्रा को विद्वान् लोग भी भली प्रकार समझने में असमर्थ रहते हैं<sup>३</sup>।

राम सनेही सम्प्रदाय में साधन और सिद्ध अथवा गोणी एवं परा भक्ति के दोनों प्रकार मान्य हैं। साध्य दशा की भक्ति को स्वोकार्थ करने में साधक का लक्ष्य पूर्ण प्रेम की अवस्था प्राप्त करना होता है। इससे अतन्त्र पूजा अर्चा, जप, ध्यान, आदि का विधान है। मूर्ति-पूजा का विरोधी तथा निगुणोपासक होने के नाते व्यावहारिक रूप से इनकी साधना में इन तत्वों को स्थान नहीं दिया गया है। इतना ही नहीं बरम् इनके साम्प्रदायिक साहित्य में अनेक स्थलों पर नवधा-भक्ति को ध्येय भी कहा गया है<sup>४</sup>। फिर भी अनुशीलन से विदित होता है कि वैधी साधना का अतर्मुंसी स्वरूप इन बातों को मान्य था। इस सम्बन्ध में दयालुदास की निम्नलिखित पंक्तियाँ ध्यान देने योग्य हैं —

१ भक्ति रसामृत सिधु पूर्व, विभाग, द्वितीय साधन भक्ति लहरा, श्लोक ८२

२ नारद भक्ति मूल, ४

३ भक्ति रसामृत सिधु, पूर्व विभाग, प्रेम भक्ति लहरा, श्लोक ८

४ (क) गारुड योग ओ नौधा भवती ।

गुपना में इनकी इव निरनी ॥

मन-माला मुद्द तिलक तत, सत सजम इक्तार ।  
 शील मुच्यता जानिये धोनी ध्यान अपार ॥  
 रामा काया कलस में प्रेम-नीर भरपूर ।  
 मनमा-मदिर में जाय के हावत नित हिङ्गूर ॥  
 देव निरजण पूजिये आतम-पाती आद ।  
 प्रीत पुसप चित चदन पूजा-भाव सुजाद ॥  
 नवधा अग सुनाम लै मन पातर इक् सार ।  
 सहज समपन कीजिए घटा-सबद अपार ॥  
 रामा आनद आरती दया-परम परसाद ।  
 एक दमा आनद सदा तीरय सगत साद ॥  
 दास जना उपदेश नित सिमरण पतव्रत राम ।  
 पट गुण ध्यान उचारणा अजपाजाप प्रणाम ॥  
 अनुभव जन आचार है राम रिध्या मरजाद ।<sup>१</sup>  
 फल दरमण परसण भया भेटण मजमस ब्याद ॥

सिद्ध दशा अथवा पराभक्ति प्राप्त होने पर भक्त को किसी प्रकार की कामना नहीं रह जाती। वह निष्काम हो जाता है। उसकी लव निरंतर अपने आराध्य में लगी रहती है। भगवान् न विरह में वह रात दिन तड़पता रहता है और विरह की अग्नि में उसके कर्म भोगों का नाश हो जाता है। लव 'विरह' और 'परचा' के अर्थों में रामानेही सतो ने इसी पराभक्ति की विभिन्न स्थितियाँ का निरूपण किया है। स्वामी रामचरण निष्काम भाव से आराध्य के चरण कमल की सेवा की याचना करते हुए कहते हैं —

निशिवासर हरि आगे नाचू चरण कमल की सेव जाचू ।

स्वर्ग लोक का सुख नहि जाचू जनम पाय हरिदास कहाऊ <sup>२</sup> ॥

गगाराम वृत्त 'हरिरामदास की परची' में स्पष्ट रूप से पराभक्ति का विधान किया गया है =

यह परा लु भवती धर्म सु रवती कहौ सु उक्ती सजुक्ती ।

अति आतम लुन्ती पति अनुखती निकट निरक्ती यो मुक्ता ॥

मिल एकमेक स्वामि विसक सेवल लेक सुख लहै ।

पम औ हविमेक सो दरमेक रसपीवेक भिन रहै <sup>३</sup> ॥

१ दयालुदास की वाराण ५० सू० ३१३-१४

२ श्री रामानेही सम्प्रदाय, पृ० १८६

३ श्री रामानेह धमप्रकाश, पृ० ३३०

इस सम्बन्ध में इतना स्मरण रखना चाहिए कि इन सन्तों ने भक्ति क भावपूर्ण रूप का क्रमबद्ध निरूपण नहीं किया है, फिर भी उनके स्फुट ध्यान में इसके तत्व किमी न किसी रूप में अवश्य मिल जाते हैं। शास्त्र है कि शास्त्र और शास्त्रायता का आप्रह भक्ति के क्षेत्र में अत्यन्त प्रारम्भिक स्थिति का द्योतक है। येष्ठ भक्त तो शास्त्र-बन्धन से सदैव ऊपर रहता है।

भायनागत दृष्टि—भावनागत दृष्टि से विचार करने पर हम देखते हैं कि रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में दास्य, दाम्पत्य, तथा शीत भाव की प्रधानता है। आगे इन पर पृथक् पृथक् विचार किया जायगा।

दास्य भाव की भक्ति-भक्त अपने आराध्य की वदना जब दास्य भाव से करता है तो वह उहे दीनबन्धु, दयालु, भक्त वत्सल, अधनाशक, पतितपावन आदि अनेक विशेषणों से युक्तकरते हुए अपने को दीन, हीन, अधा, पतित और सर्वथा असमर्थ बताकर प्रभु के चरणों में प्रस्तुत करता है। दास्य भाव का भक्ति से बहकार का नाश हो जाता है। परिणामस्वरूप भक्त आत्मविस्मृति का अवस्था में पहुँच जाता है और उसको पार्थिव पदार्थों की एषणा समाप्त हो जाती है। यह भाव निगुणोपासक सतो और सगुणोपासक भक्तों में समान रूप से प्रचलित है। सतमत क अग्रदूत कबीर की 'कबिर कुत्ता राम का मोतिया मेरो नाऊ' और 'मैं गुलाम मोहि बचि गुसाई' <sup>१</sup> तेरी गति तू ही जाने कबीरा तो सरना' <sup>२</sup> आदि पद्यों में जैसा दैव और समर्पण का भाव व्यक्त हुआ है वैसा अन्यत्र सहज ही सुलभ नहीं हो सकता।

अन्य पूर्ववर्ती निगुणिया सतो की भाँति रामसनेही सम्प्रदाय में भी दास्य निष्ठा को महत्त्व दिया गया है। साम्प्रदायिक साहित्य में प्राप्त विलय और दैव के पदों में यह भावना स्पष्ट भलकती है। हरिरामदास अपने का माधव का धाकर बताते हुए कहते हैं।—

माधव का चाकर मैं हूँ ही।

आदि अत मध्य नाम तुम्हारे पार उवारण तै हूँ ही। टेक।

मैं दुखिया कहि दरिद्री तरे कमी न काई।

दीन बन्धु दाता सब ही का भाग परापति पाई ॥

१ क० ग०, पृ० २०, साधो १४

२ वही, पृ० १२४ पद, ११३

३ वही, पृ० १६२ पद, २२६

लोक लोक का ठाकुर तुम हो और किनो को जाचू ।

तुमही हस्ता तुम ही करता नाच नचाओ नाचू ॥<sup>१</sup>

रामचरण श्रद्धा-सिद्धि, धन-धाम, यहा तक कि स्वर्ग सुख की कामना न करते हुए जन्मांतर में भी हरि के कमलवत् चरणों की सेवा-प्राप्ति की आकांक्षा करते हैं<sup>२</sup> । रामदास और दरिया साहब ने भी अपने को क्रमशः राम का मेहतर<sup>३</sup> और दासी<sup>४</sup> कहा है । यही नहीं इन सन्तों की बाणी में दास्य भाव की चरम परिणति हम तब देखते हैं जब ये अपने को राम का कुत्ता बताने के बजाय स्वस्तीभावेन आत्म समर्पण कर देते हैं<sup>५</sup> ।

आत्म समर्पण के क्षणा में भक्त भगवान् की दया और करुणा का पात्र बनने के लिए अपने को दुनियाँ में सबसे बड़ा नीच पतित, दीन अमहाय और अनाथ बताना है । यह आत्म समर्पण की भावना ही भक्तों का सर्वस्व है । यही वैष्णवों का प्रपत्ति मार्ग

१ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० १५४

२ निधिवासर हरि आगे नाचू चरम कमल की सेवा जाचू । टेर ।

स्वर्ग लोक का सुख नहीं जाचू जन्म पाय हरिदास कहाऊ ॥

चार पदार्थ मनां विसारू भक्ति बिना दूजो नहिं धारू ।

रिधिसिधि लक्ष्मी काम न मेरे सेऊ चरण शरण रह्ये तेरे ॥

शिव सनकादिक नारद गावै सो साहब मेरे मन भावै ।

राम राय इक अज हमारी रामचरण कू धो भक्ति तुम्हारी ॥

—अणभे वाणी, पृ० १००३

३ रामा मैतर राम का भाइदार गुलाम ।

ऐंठा दूका डारियै साइ करू सिनाम ॥

—रामदास की वाणी, पृ० स १८

४ साहब मेरे राम है मैं उनकी दासी ।

—अनुभव गिरा, पृ० १६५

५ (क) रामा कुत्ता अलेक का सदा घणी को लार ।

भावै दूका डारियै भावै गरदन मार ॥

गले तुमारी डोरही रजा पडे ज्या राख ।

रामदास की बीनती साईं सुनिये साप ॥

—रामदास की वाणी (हस्तलिखित), पृ० स० १८

(ख) तुमारे घर को रामजी मैं हूँ मोल्यो श्वान ।

रञ्छ्या करि मलि दुरि करो मैं नहीं तज्ज निधान ॥

—श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश पृ० १६०

है। रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में आरम समर्पण या आत्मनिवेदन सम्बन्धी पदों की सख्या पर्याप्त है। दयालुदास कहते हैं —

राखिये महाराज राज शरण राम तेरी ।  
कली काल जिव विहाल सार अब मेरी ॥ टेक ॥  
मन असाध पच व्याध करते हैं घरोरी ।  
भम जाल कम काल ठगा मे वसेरी ॥ १ ॥  
काम क्रोध लह न बोध चुगल एक चेरी ।  
मोह द्वार अधकार जडता जभेरी ॥ २ ॥  
वस्यो वास काल ग्राम सास लत बेरी ।  
छाल परियाद राम इच्छा आप केरी<sup>१</sup> ॥ ३ ॥

मोह-समूह में मस्त जीव की रक्षा रामचरण राम कीशरण-पाप्ति में ही बताते हैं —

मैं हूँ अनाथ नाथ साहि हाथ मेरो ।  
कीजिए सनाथ तात आप साथ तेरो ॥ टेक ॥  
जगत का जजाल जाल भम कम धेरो ।  
पान हरण भरण अशुधि जन्म मरण फेरो ॥  
काम दाम कपट ऋपट नाहि साच नेरो ।  
हाथ भाय करत जाय अवधि को निवेरो ॥  
तात मात सुतन सजन सकल स्वाद केरो ।  
भाम धाम अय भरत स्वारथी सनेरो ॥  
मोह के समूह परत करत काल हेरो ।  
रामचरण राम शरण साथ सगति सेरो<sup>२</sup> ॥

अपने अपराधों की चर्चा करते हुए वे प्रभु से अपने विरद की रक्षा के लिए प्रार्थना करते हैं —

राम तुम्हारे नाम की मैं बलि बलिहारी ।  
जीव तिरत कहा बेर सायर सिलतारी ॥ टेक ॥  
मैं अपधाती मन मुखी नहि सोच विचारी ।  
बूडो कपटी कातरी पण हीण विकारी ॥  
अजामील सू अधिक मैं अध ऊमर सारी ।  
गणिका कैसी गणति मैं ऐमी मति म्हारी ॥  
अवगुण मर्या अपूर करि मेरी बोहिय भारी ।

१. श्री रामस्नेह धर्म प्रकाश, पृ० २५०

२ अणभै वाणी, पृ० ११२

दशू निशा कोई दूसरी नहीं थोट करारी १।

खुद बड़ केवट राम जी शरणागत थारी ।

रामचरण जो बूडि है होइ हाथि तुम्हारी ॥

माधुर्य भक्ति माधुर्य भाव का भक्ति को शृ गारी अथवा भधुरा भक्ति भी कहते हैं । इस भाव की भक्ति में भक्त प्रेम को साक से हटा कर भगवान् से जोड़ता है । जिस प्रकार लौकिक प्रेम में मिलन और वियोग की अनेक स्थितियाँ आती हैं उसी प्रकार माधुर्य भाव की भक्ति में भी संयोग और वियोग की अनेक स्थितियों की कल्पना की जाती है । दोनों में अंतर आनन्दन मात्र का है । प्रथम का आलम्बन लौकिक होता है और दूसरे का अलौकिक प्रथम में मानलता अधिक होती है और दूसरे में सूक्ष्मता । निगुण सत्तों की प्रवृत्ति दाम्पत्य भाव का भक्ति में सर्वाधिक रही है । रामसनेही भक्तों को भी यह भाव अत्यन्त प्रिय रहा है । साम्प्रदायिक साहित्य में दाम्पत्य रति के संयोग और वियोग दोनों पक्षों का विशद बखान हुआ है ।

दाम्पत्य भाव वैष्णव भक्ति का एक आवश्यक अंग है । सत्तों की भक्ति में श्रद्धित दाम्पत्य भाव का मूल अर्थ वैष्णवों की प्रेमा भक्ति १ किन्तु कालांतर में सन्तों और वैष्णव भक्तों के दाम्पत्य भाव में सूक्ष्म अंतर परिलक्षित हान लगा । प्रथम तो यह कि वैष्णवों की भक्ति व्यक्त के प्रति है और निगुणोपासक होने के कारण सत्तों की भक्ति अव्यक्त के प्रति । अतः प्रथम की अभिन्यक्ति में स्थूलता और दूसरे में तद्गत सूक्ष्मता के दृश्य होते हैं । दूसरे यह कि वैष्णव भक्तों ने अपने को प्रमिका रूप में नहीं देखा है । उनकी भक्ति के आलम्बन कृष्ण और राम हैं तो आश्रय राधा गोपिया, सीता और उनकी सखिया हैं । किन्तु सत्तों ने अपने को ही निरजन राम की पत्नी मानकर आन्तरिक भावनाएँ व्यक्त की है जिसके कारण निगुणोपासक सत्तों की प्रणयानुभूति में अपेक्षाकृत आत्मपरकता अधिक मिलती है । इसके अतिरिक्त उक्त दोनों की प्रेम पद्धति में एक भेद और है वह यह कि वैष्णवों की शृ गारी भक्ति में परकीया प्रेम की प्रधानता है । सूर की गोपिया इनकी आदर्श मानी जाती हैं । उनकी भक्ति का चरमोत्कृष्ट राधाभाव में होता है । किन्तु निगुण सन्तों की भक्ति स्वकीया भाव की है । इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि निगुण भक्ति की नानाश्रयी तथा प्रमाणयो-दोनों शाखाओं में दाम्पत्य रति का यही स्वरूप अपनाया गया है । इसलिए इन सन्तों ने, अपने शरीर को पति के शव के साथ भस्म कर दूसरे लोक में उनमें संयोग की आकांक्षा करने वाली सत्तों को अपना आदर्श माना है । सत्तों के दाम्पत्य भाव का उपयुक्त वैशिष्ट्य रामसनेहा सम्प्रदाय में सत्ता की बाणी में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है ।

शान्ता भक्ति भक्ति के सभी भावों में शान्त अथवा निर्वेद अतर्भूत रहता है। संगार से बिरकिन ही आध्यात्मिक अनुरक्ति का साधन बनती है, फिर भी आचार्यों ने इसे भक्त और भगवान् के बीच स्थापित होने वाले पंचभाव-सम्बन्धों में स्थान दिया है। निर्वेद ज्ञान से उत्पन्न होता है। ज्ञान की उपलब्धि पर भक्त चित्तवृत्तियों को सासारिक विषयों से ममेद कर भगवदपित कर देता है। निगुण भक्ति में इने महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। अद्वैतवाद के प्रभाव से जगत् के मिथ्यात्व की जितनी विशद व्याख्या नानाश्रयी शाला में मिलती है उतनी अत्र नहीं। रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में वैराग्य, स पूण पदों की संख्या अपरिमित है। दरिया साहब का एक प्रबोधन सम्बन्धी पद नीचे दिया जाता है जिसमें उन्होंने पाप-पुण्य, सुख-दुख की वेदियों से जकड़े हुए, जन्म-मरण के पथ पर चलने वाले जीव को पंच इंद्रिय रूपी ठगों से बचकर राम की धरणा में जाने को कहा है —

जीव घटाऊ रे बहता मारग माई ।

आठ पहर का चालना घडी इक ठहरे नाई ॥ टेक ॥

गरभ जनम बालक भयो रे तरुनाई गरवान ।

बुद्ध मुक्तक फिर गम बसरा सरा यह मारग परमान ॥

पाप-पुण्य सुख-दुख को करनी बेडी धारे लागी पाय ।

पञ्च ठगों के बस मे पडो रे कब धर पहुँचै आय ॥

चौरासी बासो तू बस्यो रे अपना कर कर जान ।

निश्चय-निश्चय होयगो रे तू पद पहुँचै निर्बान ॥

राम! बिना तोको ठौर नही रे जह जावै तह काल ।

जन दरिया मन उलट जगत सँ अपना राम सभाल<sup>१</sup> ॥

काल के विश्वव्यापी जाल से मुक्ति का एकमात्र उपाय राम-भक्ति है। साधना एवं अनुभूति के आधार पर रामसनेही भक्तों ने अपनी वाणी में इस तथ्य को विविध रूपों में प्रस्तुत किया है।

## योग-साधना और रामसनेही सम्प्रदाय

योग-साधना विश्व की सर्वाधिक प्राचीन आध्यात्मिक साधनाओं में से है। सिन्धु तटवर्तिनी मोहजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाइयों से प्राप्त ध्यानावस्थित शिव की मूर्तिया आज भी इसकी प्राचीनता का साक्ष्य देती हैं। विक्रम सम्बत् से लगभग २,००० वर्ष पूर्व रचे गये वैदिक साहित्य से भी इसकी ४,००० वर्ष पुरानी परम्परा प्रमाणित होती है। 'शुद्ध संहिता' में योग साधना का उल्लेख करते हुए इसे यज्ञ-कर्म की सिद्धि

का साधन बताया गया है<sup>१</sup>। अथर्ववेद<sup>२</sup>, यजुर्वेद<sup>३</sup>, और सामवेद<sup>४</sup> में भी योग की चर्चा की गई है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् में ध्यानयोग, प्राणायाम और योग-सिद्धि का विस्तृत बरण मिलता है<sup>५</sup>। 'कठोपनिषद्' में 'योगमिति मयत स्थिरामिन्द्रिय धारणाम्' कह कर योग की परिभाषित किया गया है<sup>६</sup>। 'पातजलियोगसूत्र' का तो प्रतिपाद्य विषय ही योग साधना है। वैष्णवधर्म में अष्टांगयोग को भक्तियोग का आवश्यक अंग माना गया है<sup>७</sup>। कहना न होगा कि जैतियों और बौद्धों ने भी अपनी साधना में योग को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। जैनाचार्य हेमचन्द्र वृत्त 'योगशास्त्र' में धर्म-ध्यान के अन्तर्गत 'पदस्थ' नामक ध्यान में पट्चक्र-भेदन की विधि का उल्लेख है। आचार्य बुद्धधोष का 'विशुद्धिमार्ग' बौद्ध धर्म की हीनयान शाखा का योग सम्बन्धी सर्वाधिक प्रामाणिक तथा उपादेय ग्रन्थ है, जिसमें ध्यान योग का विशद विवेचन मिलता है। महायान में भी योग का महत्वपूर्ण स्थान है। योग और आचार को सर्वाधिक महत्व प्रदान करने के कारण ही विनानवाद योगाचार के नाम से अभिहित किया जाता है। 'धम्मपद' में योगाभ्यास से ज्ञान की वृद्धि और अनभ्यास से ज्ञान का क्षय बताया गया है<sup>८</sup>। पद्मासन मुद्रा में प्राप्त भगवान बुद्ध की मूर्तियों में भी यह सिद्ध होता है कि उन्होंने ज्ञान प्राप्ति के लिए यौगिक क्रियाओं का आश्रय अवश्य लिया होगा। इस प्रकार हम वहीं उपनिषदों के ज्ञान-योग के रूप में, वहीं गीता के कर्मयोग के रूप में, वहीं पातजलि के राजयोग के रूप में, वहीं नारद पुलस्त्य, गग, वाल्मीकि, भृगु, बृहस्पति आदि आचार्यों के मन्त्रयोग के रूप में, वहीं अगिरा' यान-वलक्ष्य, कपिल, दशिष्ट, कश्यप और बदव्यास आदि पट्चक्रभेदी आचार्यों के लययोग के रूप में, वहीं माकण्डेय, भरद्वाज, मरीचि, जैमिनि, परासर, भृगु विश्वामित्र एवं सिद्धों और नाथयोगियों के दृष्टयोग के रूप में, वहीं जैतियों के ध्यानयोग के रूप में और वहीं निगुण साधकों के सहज योग के रूप में योग-साधना की विस्तरी हुई कठियों को खोजकर सहज ही शुद्धलावण्य कर सकत है<sup>९</sup>।

१ ऋक् संहिता, १।१८।७

२ अथर्ववेद, ४।६७।४६

३ यजुर्वेद, १६।१।८२

४ सामवेद, १२।६८

५ श्वेताश्वतरोपनिषद्, २।८।१५

६ कठोपनिषद्, २।३।११

७ कल्याण उपासना अंक, वष ४१ अंक १, पृ० २८

८ योगा वे जायते भूरि अयोगा भूरिसखयो ।

९ निर्गुण धारा, पृ० ८१

यो तो सन्तों का निर्गुण सम्प्रदाय सहजयोग का अन्वयासी है, किन्तु सम्यक् रूप से विवेचन करने पर इस अष्टांग योग पर आधारित हठयोग, मन्त्रयोग, लययोग और राजयोग का प्रभाव भी देखा जा सकता है। आगे रामसनेही सम्प्रदाय की साधना पर उपर्युक्त विविध पद्धतियों के प्रभाव की विवेचना की जायगी।

## हठयोग

सामान्य रूप से हठयोग का अर्थ है हठ द्वारा योग की मिट्टि—हठेन बलात्कारेण योग। किन्तु सम्प्रदाय में इसका एक शास्त्रीय अर्थ भी प्रचलित है जिसके अनुसार 'ह' का अर्थ सूर्य है, जो शरीर-तन्त्रगत स्थित 'इडा' नामक नाड़ी का बोधक है। और 'ठ' का अर्थ चन्द्र है जो कि पिंगला नाड़ी की ओर सनेत करता है। कभी कभी 'ह' और 'ठ' क्रमशः 'प्राण' और 'अपान' तथा 'बिन्दु' और 'राजस्' का भी बोध कराते हैं। हठयोग-साधना का लक्ष्य है 'इडा' और पिंगला नाड़ियों का सुपुग्ना स, जीवन-शक्ति के केन्द्र में प्राण का अपान में 'बिन्दु' का राजस् से और अततोगत्वा चेतना के उच्चतम धरातल पर शक्ति का शिव स मिलन<sup>१</sup>।

हठयोग को कुडलिनी योग भी कहा जाता है। यह साधना कुडलिनी उत्थापन क्रिया के द्वारा होती है। अतः इसकी समुचित जानकारी प्राप्त करने के लिए शरीर की बनावट का परिचय आवश्यक है। पीठ की रीढ़ २५ मेरुदंड के नीचे पायु से दो अंगुल ऊपर और उपस्थ से दो अंगुल नीचे, चार अंगुल विस्तृत पंजी क अडे क आकार की एक ग्रन्थि है। यही सप्त नाड़ियों का मूल है। यही पर मूलाधार नामक एक चक्र है जिसमें चार तल हैं। उन तलों में 'ब' श' 'प' 'स' ये चार वरुण स्वर्ण के समान

१ In general way 'Hathyoga' means the accomplishment of yoga by force (Hathena Valatkaren yogah), but it has technical meaning current in the sampradaya. Ha means 'Surya' the Sun which figuratively refers to 'Ida' within the body. 'Tha' means 'Chandra' the moon which refers to 'Pingala'. Sometimes Ha' means 'Prana' and Tha' means 'Apana'. Again Ha' means 'Bindu' and 'Tha' means 'Rajas'. It aims at the union of 'Ida' and 'Pingala' with 'Shushmana', the union of 'Prana' and 'Apana' in the centre of vitality the union of 'Bindu' and 'Rajas' in the centre of Psycho-Physical energies and ultimately the union of 'Siva' and 'Sakti' in the Highest plane of consciousness

देदीप्यमान है। इस चक्र में इच्छा ज्ञान और क्रिया स्वरूप एक त्रिकोण है, जिम जिन चक्र कहते हैं। उनमें अन्त सूप की धामा स आलोकित 'स्वयम्भू लिंग' है। इस 'स्वयम्भू-लिंग' को साते तीन बलयों में घेर कर कुटिल आकृति से अपन मुख स पृथ को दवाकर कुडलिनी सुपुम्नावस्था म पधी रहती है।

शरीर मे कुल ७२००० नाडियों हैं जिनमे से १० नाडियाँ प्रमुख मानी गयी है—इडा, पिंगला, सुपुम्ना, गामापी हस्तिजिह्वा पूषा, यशस्विनी, अलबुपा, कुहू, शलिनी। इनमे भी इडा, पिंगला और सुपुम्ना सर्वाधिक प्रधान हैं। इह क्रमश गगा यमुना और सरस्वती नाम से भी अभिहित किया जाना है। 'इडा नाडी मेरुदण्ड क वाम भाग में स्थित है, और पिंगला दक्षिण भाग मे। सुपुम्ना रीड या मरुदण्ड क भीतरी भाग में रहती है। इसके मध्य में बज्रा और बज्रा के मध्य मे चित्रा होती है। चित्रा क अन्दर मूढमतम ब्रह्मरघ्न है। यही 'ब्रह्मरघ्न कुडलिनी का भाग है।

योग-साधना में सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान सुपुम्ना का है। सुपुम्ना हा शक्ति और जीवन का कोष है। इसमे छ स्नायुयिक ग्रथियाँ या चक्र हैं जिह मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर अनहद विशुद्ध, आजा नाम से पुकारा जाता है। इसक अतिरिक्त एक सातवाँ चक्र भी है, जिसे सहस्रार कहते हैं'। अब थोडा सा चक्रा का स्थिति और साधना मे उनके महत्व पर भी विचार कर लेना चाहिए।

पहला मूलाधार चक्र है। इसकी स्थिति रीट की हड्डी क नीचे। इसे गुदा का कमल भी कहा जाता है। योगी लाग इस सूर्य का स्थान बताते हैं। यह सत्-रज-तम इन तीना गुणों का मडार कहा जाता है। योगा इसी को जाबनाधार मानते हैं। यह चक्र पृथ्वी के सदृश हरे रंग का है। इसमे चार दन होते हैं। उनमे व श प, स य चारवण हैं। इस चक्र को ब्रह्मचक्र भी कहते हैं।

द्वितीय चक्र का नाम स्वाधिष्ठान कमल है। यह उपर्य इन्द्रिय के ऊपर दवाने से णो खाली स्थान पाते होता है, उसके ठीक सामने राइ की हड्डी मे है। इसमे छ दन होते हैं। इसमे व म, म, य, र, ल म छ व्यजनापर हैं। इसका रंग सपाये हुए स्वण के समान है। इसको ब्रह्मा का स्थान कहा जाता है। कुछ लोग इसे शिव का स्थान भी बताते हैं।

तीसरा मणिपूर नामक चक्र है। यह नाभि के नीचे स्थित है। इसमे दस दल का चक्र है, जिनमे ङ ङ, ए, त, थ, द, ध, न, प, फ य दस अक्षर हैं। यह विष्णु का स्थान है और नील कमल क समान धनश्याम वण का है। तात्रिक साधना म इसकी अधिष्ठानी लाकिनी देवी मानी जाती है।

चौथा अनाहत चक्र है। यह हृदय मे स्थित है। इसमे द्वादश दल का कमल है। दाहो त्यों म क्रमश फ, ख, ग घ, उं, ञ, छ ज झ, ञ, ट ठ य वारह वण है। सदा रंग उदय होत हुए सूर्य के समान अरण हाता है। इसे महान्द का स्थान कहा जाता है। कुछ लोग लाकिनी नाम की देवी को इसकी अधिष्ठानी मानते हैं।

पाँचवाँ विशुद्धि नाम का चक्र है। यह कण्ठ में स्थित है। इसमें १६ दल हैं। इनके संकेताक्षर अनुस्वारयुक्त हैं (अ, आ, इ, ई, उं, ऊ, ऋ, ॠ, ल, लृ, ए, ऐं, ओ, औं, अ, अ)। यह महत्प्रम घूर्णन वण का है। कुछ लोग इसे शुभन वण का भी बताते हैं। इसको दुर्गा का स्थान कहा जाता है। दो अ य मता म इसके अधिष्ठाता क्रमशः शक्तिनी नाम की देवी और पार्वती पति शिव मान जाते हैं।

छठा आना नाम का चक्र है। यह दोनो ध्रुवों के मध्य (त्रिकुटी) में स्थित है। इसके दो दलों में 'ह' और 'क्ष' दो अक्षरों का निवास है। इसको राधा चक्र, मन का स्थान तथा 'नूय' स्थान अथवा सरोवर भी कहते हैं। इसका स्थान करने से साधक कर्म के बंधन से मुक्त हो जाता है।

सातवाँ सहस्र दल कमल चक्र है। यह शरीर के सर्वोच्च स्थान मस्तिष्क में स्थित है। इसमें चंद्रमा का स्थान है यही सुषुम्ना की जड़ है। इसी के ऊपर ब्रह्मरक्ष है। सप्तम दल कमल एक महासागर के समान है। इसमें परमात्म तत्व का प्रकाश हो रहा है, जो नित्य, नानमय, सत्य स्वरूप और कोटि मूय व समान प्रकाशमान है। यही ब्रह्म स्थान है। इसी को परमपद कहते हैं। जो साधक इसमें पहुँच जाता है वह परमपद को प्राप्त हो जाता है। वह जन्म मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है।

पीछे हम कह आये हैं, कि कुंडलिनी शक्ति 'स्वयम्भू' लिंग को साढ़े तीन बलयों में लपेट कर सुषुम्ना भाग को अवरुद्ध करके सुषुप्तावस्था में पड़ी रहती है। हठयोगी का अंतिम लक्ष्य इसे जागृत करके सुषुम्ना भाग से पट्चक्रों का भेदन करत हुए सहस्रार तक ले जाना है। इसके लिए उस आसन और प्राणायाम का अभ्यास करना पड़ता है। यही नहीं बरन् उस 'महामुग्धा' महाबध, महाबेध खेचरी, उडयान मूलबध, जालधरबध विपरीतकरणी, वज्राली, शक्तिचालन—इन दस मुग्धाओं का भी अभ्यास करना पड़ता है।

रामसनेही सम्प्रदाय की तिहथल-खैडावा शाखा के आशाचाय हरिरामदास ने हठयोग की किन्धट काया साधना को अपनाया था। उनके 'घघर निसाणी' नामक प्रसिद्ध ग्रंथ में रेचक, पूरक कुम्भक, त्राटक<sup>१</sup>, जालधर बध, २ पटचक्र ३,

१ रेचक अरु पूरक कर बिन कुम्भक, आय उलटि पलटदा है।

त्राटक हुय ध्यानू वात विज्ञानू, आय पट खूलदा है।

घघर निसाणी, छ० ८

२ जालधर बध उरधे कथा मन अरु पवन मिलदा है।

उलट्या है आसण पलट्या वासण मुरत शब्द परसदा है।

वही, छ० १०

३ पटचक्रकर बेध्या भव दुख छैदया सासा शोक नसदा है।

गरजत है गणू वरजत वेणू सरवर शून्य बसदा है।।

वही, छ० १२

बकनाड़ी<sup>१</sup> अनहृदनाद<sup>२</sup> आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। किन्तु बाद के सन्तो ने हठयोग के जटिलतम स्वरूप का बहिष्कार कर दिया। उनका हठयोग प्रेम की डगर में चलते-चलते हठयोगियों का योग न रहकर सतो का मुरति शब्द-योग हो गया। हरिरामदास क प्रपौत्र शिष्य दयालुदास ने परा भक्ति को मुक्ति का एक मात्र साधन बताते हुए, साख्य आदि अनेक मतों के साथ हठयोग को भी व्यथ बताया है<sup>३</sup>। शाहपुरा और रैण शाखा के रानसनेही तो आरम्भ से ही जटिल हठयोगिक साधना के विरोधी रहे। रामचरण भक्ति विहीन योग की व्यर्थता पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं —

रामचरण ब्रह्मा कल्प रहे आपणो जोरु।  
तोहि राम भजन दिन जागे कू नही ब्रह्म में ठोर ॥  
नही ब्रह्म में ठोर ओर साधन जो साथे  
करे जोग अष्टांग देह मन इन्दी बाधे । ।  
प्राण वायु कू पकडि पथै निशिवामर अधा  
करि है कूडी खेद भजन बिन सबही धधा<sup>४</sup> ॥

इन सन्तों की वाणी में भी इडा पिंगला, सुपुम्ना, त्रिकुटी, अनहृद<sup>५</sup> आदि की चर्चा हुई

१ बहती बकनाड़ी खुली किवानी भवर गुफा भणक दा है ।

धधर निमाणी, छ० ११

२ अब घर आये ब्रह्म बधाय, अनहृद नाद धुरदा है ।  
नौबत नौसाणा दिल दीबाणा बाजा रि वजदा है ॥

बही, छ० १४

३ हठयोग, कहा साख्य नित नबध्या पुन कर है ।  
नाना घरम अनेक एक बिन काज न सर है ॥  
अनता मत मतत्र, धरण पट पाषड सारा ।  
परा भगति मिल मुगत एक मिभ्रण तत सारा  
सुरत वचन भगवत कहैत, राम मत्र जीवत सदा  
भय प्रसाद तारण तरण एक बिना मुगतन कदा । ।

दयालुदास की वाणी, प० स० ५६५

४ अग्रभे वाणी पृ० १२५ हठयोग को अग, छ० २  
५ (क) इडा पिंगला सुपुम्ना त्रिकुटी सधि मकार ।  
दरिया पूरन ब्रह्म के यह भी उल्की वार । ।

रामस्नेही सातवाणी पृ० ५०

(ख) दरिया मन परसन भया बैठा त्रिकुटी छाजे ।

है किन्तु इसे हठयोग का प्रभाव मात्र माना जा सकता है, जो सर्वथा स्वाभाविक भी है। वैष्णवधारा से उद्भूत होने के कारण योग रामसनेही सम्प्रदाय को उत्तराधिकार के रूप में मिला था जो भक्ति के साधन रूप में गृहीत है।

**मन्त्रयोग**—योग साधना के विभिन्न भेदों में सबसे सरल मन्त्रयोग है। मन्त्रयोग को प्रमुख विशेषता जप, साधना या नामस्मरण है। इसके अनुसार परमात्मा से भाव और भाव से नाम-रूप की उत्पत्ति होती है। यह जगत् नामरूपात्मक है। इसलिए ब्रह्म तक पहुँचने के लिए सृष्टि विकास के विपरीत क्रम को अपनाना चाहिए। तापय यह कि पहले नाम रूप का आश्रय लेना अपेक्षित है। नाम रूप से भाव में प्रवेश किया जाय। फिर भावप्राप्ति परमात्मा में चित्तवृत्तियों का विलयन कर मुक्तिनाम किया जा सकता है। इसी को 'मन्त्रयोग संहिता' में उदाहरण देकर स्पष्ट किया गया है कि जिस प्रकार भूमि पर गिरा हुआ मनुष्य उठने के लिए भूमि का ही सहारा लेता है उसी प्रकार नामरूपा के आलम्बन से वृत्तियों के चापल्य एवं विषय संयोग में फसा हुआ मनुष्य नामरूप के सहारे ही चित्त वृत्ति निरोध करके बन्धनमुक्त होता है।<sup>१</sup> कहना

अम भरे विगसे क बल अनहद धुन गाजे । ।

वही, पृ० ५५

(ग) रामचरण संसार में राग छतीस बखाण ।

सत मुणत है। गगन में अनहद वे परमाणु । ।

जणमें वाणी, पृ० १४

(घ) इगला पिगला चलत एक रस कण्ठ हिरदा विचै ध्वनि लाया ।

वही, पृ० १६२

(ङ) उलट पताल आकाश में चढ उलंधे मेरा ।

इला पिगला शुभमखा तिरवेणी में डेरा

त्रिवेणा तू आगे गया सुनके माहि समाया ।

सुख समाधि सहजा लगा निरभै पद पाया । ।

श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० २१०

१ नाम रूपात्मिकासृष्टिमस्मात् देव लम्बनात् ।

बन्धना मुच्यमानो य मुक्ति मा प्रोतिमाधक । ।

तामव भूमिमालम् य स्खलन यन जानत ।

उत्तिष्ठतिगत सर्वोऽयनेणै त समीच्यत । ।

नाम रूपात्मकेभावैव यत्त निखिलाजना ।

घ होगा मन्त्रयोग या नाम साधना का प्रचार मध्ययुगीन सन्तों में ही नहीं, सगुणोपासक भक्तों में भी मिलता है। तुलसीदास ने नाम को निगुण और सगुण दोनों से बड़ा बताया है<sup>१</sup>। नाम स्मरण की महत्ता बताते हुए वे कहते हैं कि जान अनजाने भाव-कुभाव किसी भी प्रकार नाम स्मरण करने से यमदंड से मुक्त होकर जीव परमपद का अधिकारी हो जाता है<sup>२</sup>। इसी प्रकार निगुण धारा के सन्तों ने भी नामस्मरण पर जोर दिया है। रामस्नेही सम्प्रदाय के सभी वाणीकार सन्तों ने नामस्मरण का उपदेश दिया है। दरिया साहब ने नाम को निर्मल अगाध और पूर्ण ब्रह्म बताया हुए कहा है कि इसके कथन और श्रवण मात्र से कोई लाभ नहीं, वस्तुतः स्वाद की प्राप्ति तो नामस्मरण से होता है<sup>३</sup>। अथवा उन्होंने कहा है कि 'राम का सुमिरण करने से अज्ञान तिमिर का नाश हो जाता है और घट के भीतर परम ज्योति की आभा विकीर्ण हो जाती है'<sup>४</sup>। उनकी धारणा है कि जो नाम को जहाज पर नहीं बैठा और सिर पर पापों का भार बढ़ाता जा रहा है, वह निश्चय ही चौरासी लाल योनियों की धार में

अविद्याप्रसिताश्चैव ताहवप्रकृतिवैभवात् । ।

सात्मन सूक्ष्म प्रकृति चानुसृत्य वै ।

नाम रूपा मनो शब्द भावशोख सम्भवात् ।

यो योग साध्यते सो द मन्त्रयोग प्रकीर्तित । ।

—मन्त्रयोग संहिता भारत धर्म महामण्डल काशी, पृ० ११, श्लोक २

१ अगुन सगुन दुद ब्रह्म सरूपा ।

अकथ अगाध अनादि अनूपा ।

मोर मत बड नाम दुहै त ।

मानस बालकाड दोहा २३ (गीता प्रेस)

२ (क) जानि नाम अजानि सो हें, नरक यमपुर मने ।

—विनय पत्रिका, पद १६०

(ख) भाव कुभाव अनख आलसहूँ

नाम जपत मगल दिसि दसहूँ ।

—मानस बालकाड दोहा २८ (गीताप्रेस)

३ दरिया नाम है निरमला, पूरन ब्रह्म अगाध ।

कहे सुने सुख न लहै, सुमिरै पावै ।

—रामस्नेही मन्त्रवाणी, पृ० ४३

दरिया सुमिरै राम को सहज तिमिर का नाश ।

घट भीतर होय आदना परम ज्योति परकास ॥

बहेगा<sup>१</sup>। हरिरामदास राम-नाम के अतिरिक्त मुक्ति-प्राप्ति का कोई दूसरा उपाय स्वीकार नहीं करते। इसीलिए वे अथ साधनाओं की आशा छोड़कर अहनिश राम-भजन का उपदेश देने हैं<sup>२</sup>। रामदास ने नाम-स्मरण को सारतत्व बताने हुए अथ वस्तुओं अपार कहा है<sup>३</sup>। रामचरण राम-नाम स्मरण को परम धर्म बताते हुए कहते हैं —

रामहिराम सुनै गुन श्रवण रामहिराम की कीरति गावे ।  
रामहिराम करै नित सुमरण रामहिराम स ध्यान लगावे ॥  
राम के हेत मनोतन अपण राम बिना नहिं आन सुहावे ।  
रामचरण ये निमल धम है होय पुनोत परमपद पावे<sup>४</sup> ॥

### लययोग

लय योग पिंड और ब्रह्मांड की एकता का प्रतिपादक है। इसका सिद्धांत है, कि ब्रह्मांड में व्याप्त ऋषि, देवता, पितृ, ग्रह, नक्षत्र, राशि, प्रकृति एवं पुरुष आदि सभी वस्तुएं पिंड में भी स्थित हैं। अतः पिंड के ज्ञान से ब्रह्मांड का भी ज्ञान प्राप्त हो सकता है। गुरु के आदेश से सम्पूर्ण शक्ति-सहित मानव शरीर का ज्ञान प्राप्त करके साधन-क्रिया द्वारा 'प्रकृति को पुरुष' में लय करने की क्रिया ही 'लययोग' है। पुरुष का निवास सहस्रार चक्र में है और कूडलिनी नामक प्रकृति की महाशक्ति आधारपद्म में सुप्ततावस्था में रहती है। जब तक यह सोई रहती है, तब तक बहिमुखी सृष्टि की क्रिया होती रहती है। योगी कूडलिनी नामक प्रकृति को उद्बुद्ध करके पुरुष में लय कर देता है। यही उसका परम लक्ष्य है<sup>५</sup>।

लययोग को ध्यानयोग भी कहा जाता है। लययोग प्रदीपिका के अनुसार वासना का ध्येय में विलय कर देना ही लय है<sup>६</sup>। इस दृष्टि से प्रतीत होता है। रामसनेही सम्प्रदाय के सुरति शब्द-योग पर लययोग का पर्याप्त प्रभाव है जिस प्रकार

१ नाम जहाज बैठा नहीं, आन धरे सिर भार ।  
दरिया निश्चय बहेंगे चौरासी की धार ॥

—वही, पृ० ४४

२ रामनाम बिन मुक्ति की जूति न ऐनी ओर ।  
जब हरिया निशिदिन भजो तजो दूसरी ठोर ॥

—श्री रामसनेहधर्मप्रकाश, पृ० ५७

३ मुख सेती सुमरण किवा मन आयो इतवार ।  
दूजा सज ही भूठ है रामा सुमरण सार ॥

—श्री रामसनेह धर्मप्रकाश, पृ० १६०

४ अणुभे वाणी, पृ० ८६

५ शिवनारायणी सम्प्रदाय और उसका साहित्य, पृ० २२७

६ लयो विषय विस्मृति —लययोग प्रदीपिका, ४।३४

‘लययोग’ में प्रकृति और पुरुष का मिलन होता है, उसी प्रकार ‘सुरति शब्द योग’ में ‘सुरति’ और ‘शब्द’ का संगम होता है। ऐसा सगता है कि ‘लययोग’ की ‘प्रकृति’ और ‘पुरुष’ ही ‘सुरति-शब्द-योग’ के क्रमशः ‘सुरति’ और ‘शब्द’ के पर्याय हैं।

## राजयोग

योग-चतुष्टय में राजयोग को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया जाता है। राजयोग वस्तुतः सब योगों का राजा है<sup>१</sup>। इसे समाधि, उमनी, अमरत्व, लय, तत्व, शूयाशू यपरपद, अमनस्क, अद्वैत निरालय, निरजन जीवमुक्ति, सहजा, सुरिया आदि अनेक सनायें दी गई हैं<sup>२</sup>। इसकी साधना हठयोगिक क्रियाओं पर आधारित है। हठयोग और राजयोग का अयो-याधित सम्बन्ध है। इनमें से किसी एक के बिना दूसरे की सिद्धि नहीं हो सकती<sup>३</sup>।

राजयोग के अनुसार सृष्टि की स्थिति और लय का कारण अतःकरण है। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार-य चार भेद हैं। अतःकरण दृश्य और आत्मा द्रष्टा है। अतःकरण रूपी कारण दृश्य से जगत् रूपी काय दृश्य का कारण काय सम्बन्ध है। दृश्य से द्रष्टा का सम्बन्ध स्थापित होने पर सृष्टि होती है। चित्तवृत्ति का चावत्य ही इसका कारण है। इसी चित्तवृत्ति को वशवर्तिनी कर स्व-स्वरूप की उपलब्धि राजयोग है। विचार की पूणता द्वारा राजयोग का साधन होना है। राजयोग का ध्यान ब्रह्म-ध्यान है और इसकी समाधि निर्विकल्प समाधि। इस योगिक प्रक्रिया विशेष के द्वारा सिद्धिलाभ करने वाला महात्मा जीव मुक्त कहलाता है<sup>४</sup>।

१ राजयोगो मयास्थानतः सर्वतः नेषु गापितः ।  
राजाधिराज योगो यः कथमपि समासतः ॥

—शिवसहिता, श्लोक २०३, पृ० १३४

२ राजयोगः समाधिश्च उमनी च मनो मना ।  
अमरत्व लयस्तत्त्वशूयाशू यपर पदम् ॥  
अमनस्क तथाद्वैत निरालम्बम् निरजनम् ।  
जीवमुक्तिश्च सहजातुर्या धेत्येकवाचकाः ॥

हठयोग प्रदीपिका उपदेश ४२ श्लोक ३४

३ हठं विना राजयोगो राजयोगविना हठः ।  
सस्मात् सर्वतले योगी हठे सद्गुरुमागतः ॥

शिवसहिता, श्लोक २१७ पृ० १३८

४ श्लेष कल्याण साधनाक, पृ० ४२७

रामसनेही सम्प्रदाय की सुरति-शब्द-योग, साधना में 'सुरति' क 'शब्द' म लय होने की अवधारणा राजयोग प्रणाला स श्रुति जान पठो है ।

## सुरति-शब्द-योग

निम्न लय पद्य साधना को 'सुरति शब्द-योग' की सजा दी गई है । यह विद्वानों की अश्लील एव गृह्य महाभुद्रा साधना तथा हठयोगियों की जलपट काया-साधना से पृथक् मानव स्वभाव सिद्ध भ्रमवा सहज साधना के नाम से जानी जाती है । यही उनकी लयसिद्धियोग समाधि है । इस साधना में किसी प्रकार के बाह्य विधि-विधान की आवश्यकता नहीं पडती । इसकी उपलब्धि सात्त्विक एव मरल जीवन-यापन से हो जाती है । इसका लक्ष्य जीव को साधारण बंधन मुक्त वित्त, वनिता आदि से अलग करके उसने आराध्य राम स मिलाना है । सती न 'परचा' क अग में इस समाधि की अनुभूतियों का बड़ा ही मनोरम और जीवत बखान किया है ।

इसका श्री गणेश नामस्मरण से होता है । रात दिन नाम जपते-जपत उनके प्रति हृदय में एक सहज आनंद उत्पन्न हो जाता है । फिर तो भक्त के हृदय में नाम क प्रति एक लव सी लग जाती है । परिणामस्वरूप साधक श्वास प्रश्वास के साथ नाम का जप करने लगता है । यही 'अज्ञपाज्ञाप' है । इस अवस्था में माला आदि साधना के बाह्य उपादान छूट जाते हैं । इसके अतः अनाहत चक्र का द्वार खुल जाता है, फिर सुरति और शब्द का मिलन होता है । यही है सती की सहज साधना, यही है उनका मन्त्रयोग, यही लययोग भी है और इसी को सुरति-शब्द योग भी कहा जाता है ।

रामसनेही सम्प्रदाय के सुरति-शब्द योग का विवेचन करने स पूर्व थोड़ा 'सुरति' शब्द पर भी विचार कर लेना अपेक्षित है । 'सुरति' शब्द का व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वान् एक मत नहीं है । डा० बहध्वालने सुरति को संस्कृत के 'स्मृति' शब्द से निकला हुआ बनाकर इसका प्रयोग 'वहाँ की स्मृति के अर्थ में किया है' । डा० सम्पूर्णानन्द ने सुरति को 'स्रोत' से व्युत्पन्न मानकर इसका अर्थ चित्तवृत्ति का प्रवाह किया है<sup>१</sup> । आचार्य क्षितिमोहन सेन ने सुरति का अर्थ प्रेम और निरति का वैराग्य किया है<sup>२</sup> । डा० हजारिप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में साधारणत 'रति' प्रवृत्ति का पर्याय है । निरति बाहरी प्रवृत्ति की निवृत्ति और सुरति अतमुखी वृत्ति को कहते हैं<sup>३</sup> । प० पशुराम चतुर्वेदी सुरति को जाव का निमल रूप मानते हैं, जिसमें हमारे

१ योग प्रवाह, पृ० २३-३३

२, विद्यापीठ (त्रैमासिक), भाग २, पृ० १३५

३ कवीर, पृ० २४४

४ वही, पृ० २४३

सत्य का निर्मल रूप बराबर भूषकता रहता है<sup>१</sup>। डा० रामकुमार वर्मा इसे 'सुरत इ-इलहामिया' का रूपान्तर बताते हैं<sup>२</sup>। श्री तारकनाथ सायल ने इस शब्द की व्युत्पत्ति 'श्रुति' से मानी है<sup>३</sup>। कुछ विद्वान् सुरति का सम्बन्ध 'स्वरति' से बताते हैं, जिसका तात्पर्य है अपने में लीन हो जाना अर्थात् अपने मूल स्वरूप की ओर उभूत होना। 'सुरति का अर्थ (सु + रति) खेळ रति भी किया गया है जिसस निवृष्ट लौकिक रति के विपरीत आध्यात्मिक रति का अर्थ लेते हैं<sup>४</sup>। डा० गोविन्द त्रिगुणायत ने बहुत से विद्वानों की भावनाओं का खडन करते हुए सुरति का अर्थ 'अन्तमुखी आत्मा' किया है। उनका विश्वास है कि उन्होंने वास्तविक अर्थ खोज लिया है<sup>५</sup>; वस्तुतः उनकी भी यह अटकल बाजी ही है, क्योंकि आत्मा को अन्तमुखी अथवा वहिमुखी जैसे विशेषणों से विशिष्ट करना समोचीन नहीं प्रतीत होता। श्री रामस्नेही सम्प्रदाय<sup>६</sup> के सम्पादकों ने राजस्थानी भाषा के 'सुरता' शब्द के आधार पर सुरति का अर्थ ईश्वरोमुख ध्यान लगाया है<sup>७</sup>। लोक स्वर को पकड़कर सत्य तक पहुँचने का जो प्रयास विद्वान् सम्पादकों ने किया है, वह हर प्रकार से सराहनीय है किन्तु थोड़ी सी असावधानी के कारण वे भी सत्य से दूर रह गये हैं। वास्तव में सुरता' शब्द का अर्थ ध्यान ही होता है, किन्तु विद्वान् सम्पादकों ने साधक के ईश्वरोमुख ध्यान सम्बन्धी पदों के आधार पर इसका अर्थ ईश्वरोमुख ध्यान अथवा चित्त की उर्ध्वगामिनी वृत्ति कर दिया अथवा ईश्वरोमुख ध्यान लोकोमुख ध्यान आदि तो ध्यान के भेद मात्र हैं। हमारे यहाँ गाँवों में सुरति शब्द का प्रयोग केवल ध्यान अथवा 'माद या सुधि के अर्थ में होता है। वियोगिनी नारियो के अने पति की सुरति कर-करके रोने की चर्चा से लोक-साहित्य भरा पड़ा है। अवधी प्रदेश में प्रचलित एक गीत में वन के लिए प्रस्थान करते हुए राम के सम्बन्ध में कहा गया है कि उन्होंने घर को त्याग दिया और उनको सुरति वन को लग गयी अर्थात् उनका ध्यान वन की ओर चला गया—'तजि दीनो भवन सुरति सागी वन के'। सूरदास ने भी 'सुरति' शब्द का प्रयोग सुधि या ध्यान के अर्थ में ही किया है —

(१) अर्थात् सुरति आवत वा सुखी

जिय उमगत तनु नाही<sup>१</sup>।

निगुण सत नाम के साधक ये। नाम साधना वस्तुतः शब्द साधना है, और

१ उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, पृ० २०४

२ कबीर का रहस्यवाद परिशिष्ट पृ० ८२

३ सरस्वती भवन स्टडीज, भाग ८ (श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० १०१)

४ निगुण धारा, पृ० २३७

५ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय, पृ० १०२

६ सूरसागर (ना० प्र० स०), पृ० १६४४

शब्द साधना में ध्यान को ही प्रधानता दी जाती है। अतः साधनागत दृष्टि से भी सुरति का अर्थ ध्यान ही अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

यों तो रामस्नेही सम्प्रदाय के साहित्य में 'सुरति-शब्द-योग' का उल्लेख यत्र-तत्र सर्वत्र देखने को मिल जाता है किंतु स-तो ने इस साधना का विस्तृत वर्णन 'परचा' के अग्रे में किया है। उनका 'परचा' वस्तुतः 'सुरति और 'शब्द' का परिचय है।

### साधना के चार सोपान.

स-तो ने 'सुरति शब्द-योग' को चार सोपानों में विभक्त किया है जिसे वे साधना की चार चौकियों के नाम से पुकारते हैं<sup>१</sup>। इन सोपानों के स्थान हैं कठ, हृदय, नामि और ब्रह्मांड<sup>२</sup>। साधना के प्रथम सोपान में साधक संसार की अनित्यता और मायाकृत बंधन से व्याकुल होकर परमानन्द की खोज में निकलता है। उसका सद्गुरु से भेंट होती है। गुरु उसे नाम का महत्व बताते हुए 'रामनाम' की दीक्षा देता है। गुरु से नाम का परिचय पाकर वह उस स्मरण करने लगता है। स्मरण करत करत उसके साथ साधक का रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। फिर तो वह प्रतिक्षण, प्रतिपल द्वाय-प्रश्वास के साथ तन और मन को उसी में तल्लीन करके अविच्छिन्न रूप से नाम जाप करने लगता है<sup>३</sup>। नाम जाप करने करते साधक के जिह्वाग्र पर अमृत रस का सा स्वाद आने लगता है<sup>४</sup>। इस स्थिति में साधक पानी पीने की इच्छा नहीं करता। उस इस बात का डर रहता है कि कहीं जलपान करने से यह अमृत उससे दूर न हो जाय। इस रस को पीने से साधक की क्षुधा भी समाप्त हो जाती है। उसकी नसों में आनन्द का स्रोत प्रवाहित होने लगता है।

१ चौकी मज्जत प्रताप की धन्त कह गये च्यार ।

अणुभे वाणी, पृ० १३

२ रसना कठ रस पीयके हिरदे मुख विलास ।

नामि कवल मै उलटि वे सुरति गई आकास ॥

—वही पृ० १३

३ तन मन कर हेती रहना सेती रामहि राम राम रटदा है ।

—घर निगार्णो (हरिराम), छ० २

४ (क) प्रथम शब्द रसना से रटिये, स्वासो स्वाम अमीरस गटिये ।

—रामस्नेही सतवाणी, पृ० ८४

(ख) रस अग्र खुली इक सीरा प्रथम वाको पयसो नीरा ।

रटदा रटदा भयो मिठास, हप भयो आम विश्वास ॥

—शब्द प्रकाश (रामचरण), छ० ४

उसका मन मयूर आनन्द-विभोर होकर नाचने लगता है। आनन्दानुभूति के इन क्षणों में उसके नेत्र बंद हो जाते हैं। जिह्वा वाग्यापार से विरत हो जाती है। श्वसण किसी प्रकार की बाह्य चर्चा सुनना ही नहीं चाहते। हृदय इतना गद्गद हो जाता है कि श्वास लेना भी दुष्कर हो जाता है। आँखों से आसू के निभर झरने लगने हैं<sup>१</sup>।

प्रथम सोपान को पार करके शब्द आगे बढ़ता है किन्तु कठ प्रवेश में पहुँच उससे अटक जाता है। यहीं से वियोग-दशा आरम्भ होती है, साधक विरह की आग में जलने लगता है उसका शरीर पीला पड़ जाता है, मन सूख जाता है। न तो उसे दिन म भूख लगती है और न रात में नींद<sup>२</sup>। रामचरण साधक की विरह-दशा का बखान करते हुए कहते हैं —

कठ स्थान बहुत कठिणार्थ मुख स वचन न बोल्यो जाई ।  
खान पान पै रुचि रहै थोरी भारग रुच्यों जाय कह थोरी ॥  
क्षीण शरीर स्वभा सकुचानी नीली नस दीसै भ्रनकानी ।  
पीरो बदन नेतरा लाली मुकुर ज्योति ज्यु दिये कपाली ॥  
चले कप कपी रुं धररावै छाती रुंधे श्वास न आवै ।  
ऐसा विधि विरहिनि की होई विरहिन जाणै कि सतगुरु सोई<sup>३</sup> ॥

कठ से आगे चलकर शब्द-ब्रह्म साधना के द्वितीय सोपान अर्थात् हृदय प्रदेश में प्रवेश करता है। हृदय में प्रवेश करते ही शब्द अनन्त प्रकाश से युक्त होकर

१ तब रसना सिर छूटे धारा, चले अखंड नहिं खडे लगारा ।  
जल पीवन की अट्टा नहिं मति यो अमृत दूरि होइ जाँ ॥  
रस पीवत क्षुधा सब भागी कठा शब्द टगटगी लागी ।  
नाडि नाडि में चले गिलगिली मुख धारा अति बहै लिससिली ॥  
मुख सू कछू न उचरै बेना लगया कपाट खुले नहिं नैना ।  
श्वसण चर्चा सुणै न कोई कठ ध्यान यह लक्षण होई ॥  
कठ के ध्यान कम कभी जागै रोम रोम चीतग सो लागै ।  
हियो गद्गद श्वास न आवै, नैण नौर प्रवाह चलावै ॥

—नाम प्रताप (रामचरण), छं० ४१-४८

२ दरिया विरही साधु का तन पीला मन सूख ।  
रैन न आवै नींदही दिवस न लागै भूख ॥

—रामस्नेही सतवाणी, पृ० ४६

३ शब्द प्रकाश (रामचरण) छं० ४-७

अज्ञानाधकार को दूर कर देता है । भ्रम कम और सशय का नाश हो जाता है<sup>१</sup> । भवताप से उद्धिन् साधक मानसी गंगा की हिलोरो मे वृप्त हो जाता है<sup>२</sup> ।

सुरनि-शब्द योग का तीसरा सोपान नाभि प्रदेश में है । नाभि कमल के भीतर भ्रमर गुजार किया करते हैं जिनका न कोई रूप है न वण । वह अगम और अपार है<sup>३</sup> । यहा 'भवरो की गुजार से दरिया साहब का ताराय सम्भवत शब्द की गुजार से है । रामचरण के अनुसार शब्द की गुजार से साधक की रग रग में जागृति आ जाती है । उसके रोम रोम से अनेक प्रकार की राग रागिनियाँ निकलने लगती हैं । वो सी नाडियाँ एक साथ ही मंगल माने लगती हैं । इसी स्थान पर मन भ्रमर को परमानन्द की प्राप्ति होती है<sup>४</sup> ।

नाभि के पश्चात् शब्द इडा पिगला वा सुपुम्ना के त्रिवेणी सगम पर स्थान करके निर्मल हो तीना लोको से पृथक् चौथे देश मे प्रवेश करता है<sup>५</sup> । वह मेरुदण्ड के नीचे उतरकर नाद को खिड़की खोलता है, और ब्रह्म में लीन हो जाता है<sup>६</sup> । सर्तों

१ शब्द ब्रह्म हिरदे किया वासा ।

ज्यू रैण अर्धेरी चद प्रकाशा ॥

भम कम सांशो गयो भागी ।

हिरदे ध्वनी अखड लिव लागी ॥

—नाम प्रताप (रामचरण), छ० ५०

२ जन दरिया हिरदा विचे, हुआ ज्ञान परकाश ।

हौद भरा जह प्रेम का, सह लेत हिलोरा दास ॥

—रामस्नेही सन्तवाणी पृ० ५४

३ नाभि देवन के भीतरे, भवर करत गुजार ।

रूप-न रेख न चरन है, ऐसा अगम विचार ॥

—रामस्नेही सन्तवाणी, पृ० ५४

४ शब्द गुजार नाडि सब जाने, रोम रोम मे होई रही रामे ।

नौसे नारीमगल गावै तहां मा भंवरा अति सुखपावै ।

—नाम प्रताप छ० ५२-५३

५ इडा पिगला सुपुम्ना, मिले त्रिवेणी घाट ।

जहां फांके जल भूलिके, निर्मल होय निराट ॥

सब त्रिवेणी हाइ के, किया मनन प्रदेश ।

तीन लोक सू अलख सुख यो कोई चौथा देश ॥

—अणुभै वाणी (नामप्रताप) पृ० २०७

६, नाभि क बलसे उत्तरा, मेरुदण्ड तल आय ।

खिड़की खोली नाद की, मिला ब्रह्म स जाय ॥

—रामस्नेही सन्तवाणी, पृ० ५४

ने सुरति और शब्द के अलौकिक संयोग का वडा ही विशद और हृदयग्राही बणन किया है। वडा अनन्त चन्द्रमा उदित हैं। करोड़ों सूर्य प्रकाशित हो रहे हैं। वडा झाल, बीणा, मृदंग, सहनाई, बागुरी, चग, उपग, भेरी, नरसिंह, मञ्जीर, डोलक, गिटगिटो, घुघरू आदि अनेक प्रकार के वाद्यों की मधुर ध्वनि से वातावरण मुखरित रहता है। इसी रम्य स्थलो पर सुरति और शब्द का मिलन होता है। दोनों एक दूसरे से एकमेक हो जाते हैं<sup>३</sup>। हरिरामदास ने सुरति और शब्द के इस मिलन की उपमा नीर-नीर के मिलन से दी है<sup>४</sup>। तात्पर्य यह कि दोनों इस प्रकार मिल जाते हैं कि किसी प्रकार का द्वैत नहीं रह जाता। रामचरण कहते हैं कि शब्द रूपो अमर पिय को पाकर सुरति, मुहागिनी बन गयी<sup>५</sup>। अब वह ररकार पति के साहचर्य में निवास करते हुए गगन मण्डल में केलि करती रहती है<sup>६</sup>। दोनों सुख की सज पर परस्पर

१ अनन्तहि चदा ऊगिया, सूर्य कोटि परकाश ।

बिन बादल बरसा धनी, छह ऋतु वारह मास ॥

रामस्नही सन्तवाणी, पृ० ५५

२ धार अनहृद्द की गिगन गिरणाइया होत बहु सोर नहीं कहत आवै  
झालरी वोण मिरदग सहनाईया, बागुरी ताल भुंणकार लावै ॥  
भरि रणसिग करनाल बबया बजे, चग अरु उपत गति करत यारी ॥  
एक इक नाद मै राग नाना उठै, मधुर स्वर मधुर स्वर चलत भारी ॥  
मञ्जीरा मान धधकार डोलक करै, गिटगिटो राग मोहोचग वाजे ।  
रणभूंणूं रूणभूंणूं नरुप जू घुघरूं, घण्टा टकोर ध्वनि अधिक वाजे ॥

अणभे वाणी, पृ० १६२

३ सुरति शब्द परचा भया, ब्रह्म निरन्तर बाध ।

श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० ६२

४ हरिया हरिजन एक है जीव जीव नहि दोय ।  
नीर मिलाना नीर में फिर न्यारा नहि होय ॥

वही, पृ० ६३

५ मिलके शब्द अक्ल सूं भया जीव सूं सीव ।  
सुरति मुहागणि होय रही परसि अमर बर पीव ॥

अणभे वाणी पृ० १५

६ ररकार पति परसिया सुरति मुदये नारि ।  
रामचरण केला करै मिलके गिगन मझारि ॥

वही, पृ० १४

हिलमिल कर विश्राम करते हैं और उन्हें जगत् के कार्य-व्यापार फोके दिखाई पड़ते हैं। प्रियतम को वा जागे क बाद उनकी दृष्टि में दूसरा कोई नहीं जाना। जो मुख उसे पिय की सेज पर मिलता है अथवा दुलभ है<sup>१</sup>। रसिक राम के साथ मुरनि सुदरो की बसंत लीला निरंतर चलती रहती है —

राम रमीले से रग रच्यो म्हारे आज बसंत को खेल ॥टेर॥

प्रेमनीर पिचकारी दिल से छूटत चहुँ उर भेन ॥

अथ ऊर्ध्व बिच खेल मडयो ई सुरत शब्द को भेल ॥

धुन बिच ध्यान ज्ञान जहा अनुभव जनम मरण दु ख पेल ।

धालबाल रस राम रमियो रामदास गुरु खेल २ । ।

## सूफी प्रेम-साधना और रामसनेही सम्प्रदाय

मध्ययुगीन सन्तो की प्रेमानुभूतियों पर कदाचित् सूफी प्रेम साधना का भी प्रभाव है। निष्ठासाधना के आधारभूत तत्वों की व्याख्या करते हुए आचाय शुक्ल ने लिखा है कि भारतीय भक्ति-भाग साकार और सगुण का लेकर चला है निर्गुण और निराकार ब्रह्म भक्ति और प्रेम का विषय नहीं हो सकता<sup>३</sup>। इस सम्बन्ध में उनका अभिमत है कि मुगलमानी अमलदारी में रहस्यवाद को लेकर जो निर्गुण भक्ति की बानी चली वह बाहर से—अरब और फारस की ओर से आयी थी<sup>४</sup>। प० चन्द्रबली पाण्डेय भी इसी प्रभाव की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि अध्यात्म की दृष्टि से तब्लुक में भारत के लिए कोई नई बात भले ही न रही हो पर उसमें प्रेम का प्रतिपादन और मादन भाव का प्रदर्शन कुछ नवीन अवश्य था। निम्न भारतीय भक्ति-भावना को सूफियों ने जो योग दिया उससे एक सत धारा फूट निकली<sup>५</sup>। यह कथन सर्वांग में सत्य नही है। प्रेम-प्रतिपादन और मादन भाव का प्रदर्शन भारतीय अध्यात्म-साधना

१ रिब पतनी मुख सेक पर हिलमिल करत निवास ।

रामचरण तब ही लगे फोको जगत विलास ॥

रामचरण पिव पाईया तब निजर न आवै और ।

जो मुख पिव की सेक पर सो नहीं दूसरी ठोर ॥

ब्रह्मप्रेमरसि, पृ० १५

२ निर्गुण भजन माला, पृ० ११

३ द्रष्टव्य, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ७८ ( १९९७ )

४ विनायक, द्वितीय भाग ( काव्य में रहस्यवाद ) पृ० १२५

५ तमशुक अथवा सूफी मंत्र, पृ० २२७

का सूक्तियों के आने से बहुत पहले ही मुख्य अंग बन चुका था था। उपनिषदों में आत्मा-परमात्मा की एकार्मता लौकिक दाम्पत्य मूल के दृष्टांतों से स्थापित की गई है। 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में कहा गया है कि जिस प्रकार कोई पुरुष अपनी प्रिया द्वारा आलिंगित होने पर बाहर-भीतर की सब बातों को भूल जाता है उसी प्रकार जीवात्मा परमात्मा से मिलकर सभी बाहरी व भीतर बातों के ज्ञान को विस्मृत कर देता है<sup>१</sup>।

स्मरण रखना चाहिए कि उपनिषदा का प्रतिपाद्य निर्गुण ब्रह्म है। 'श्वेताश्वतरोपनिषद्' 'भागवत', 'गीता' और बौद्धों की सहज्जयान शाखा में भी प्रेमाभक्ति के उदाहरण मिल जाते हैं। ऐसी स्थिति में यह कदापि नहीं माना जा सकता कि भारतीय साधना में प्रेम-प्रतिपादन और मादन भाव सूक्तियों को दन है। हाँ, यह अवश्य है कि हिन्दू और मुस्लिम सभ्यतियों के मिलन और उनके आदान प्रदान के परिणामस्वरूप भारतीय निर्गुण भक्ति-माग पर जान-अनजाने सूक्तियों की भावमूलक अद्वैत भावना का प्रभाव यत्र-तत्र परिलक्षित होता है। यारी साहब जैसे कतिपय सतों को अपवाद स्वरूप ही सम्मना चाहिए जिनकी वाणी में सूफी साधना का क्रमबद्ध विवेचन हुआ है।

### सूफी प्रभाव के सम्भावित स्रोत

रामसनेही सम्प्रदाय की साधना पर सूफी प्रभाव दो स्रोतों से सम्भावित था। पहला सतमत में गृहीत सूफी तरव ने रिवय रूप में और दूसरा सूक्तियों के प्रभाव क्षेत्र में प्रादुर्भूत होने के कारण प्रत्यक्ष साहचर्य से। ध्यातव्य है कि सूक्तियों का प्रभाव पञ्जाब, राजस्थान और गुजरात पर अधिक रहा है। रावलपिंडी और लाहौर में कादिरिया सम्प्रदाय की 'बहुलशाही' और 'मुकीमशाही' शाखा का प्रचार था। अलवर और गुजरात में सुहरावदिया सम्प्रदाय की रमूलशाही और 'दोलतशाही' शाखाएँ चल रही थीं। 'चिश्तिया सम्प्रदाय' के सत्पापक हवाजा मुईनुद्दीन चिश्ती (स० ११६६-१२६२) की साधना-भूमि अजमेर थी, जहाँ उनकी समाधि अब भी वर्तमान है। यह स्थान चिश्तियों के मक्का के नाम से प्रसिद्ध है और सूफी साधकों का बहुत बधा गढ़ रहा है। शेख मुहम्मद फ़ौस ग्वालियरी (मृ० १५६२) और सूफी कवि जान की साधना-भूमि भी क्रमशः ग्वालियर और फतहपुर (जयपुर) थी। अतः राजस्थान में उद्भूत होने के कारण यदि रामसनेही सम्प्रदाय सूक्तियों से प्रत्यक्ष प्रभाव ग्रहण करता तो कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। प्रस्तुत प्रसंग में विचारणीय

२ तद्यथा प्रियथा स्त्रिया सपरिव्वक्तो न बाह्य किंचन्वेद

ना तरभेद मेवायं पुरुष, प्राज्ञैनात्मनासम्परिव्वक्तो न

बाह्य किंचन वेदनावरम् । तद्धा अस्य एतदाप्रकाम आप्तकाम अकाम रूपम् ।

बृहदारण्यक उपनिषद्-अध्याय ४, ब्रह्मण २, मंत्र २१

यह है कि इस सम्प्रदाय पर सूक्तियों प्रभाव है या नहीं ? और है तो किस अंश में ? आगे की पंक्तियों में इनकी विवेचना साम्प्रदायिक साधना और अनुभूति दोनों को दृष्टि में रखने हुये की जायगी ।

## साधना पद्धति

सूक्तियों के साधना पद्धति पर हठयोग की वाया साधना और तांत्रिका का बहुत बड़ा प्रभाव है । भारत में आने के बाद सूफी सन्तों ने अपनी प्रेम-साधना में नाथ-योगियों की अनेक क्रियाओं का समावेश किया और अपनी प्रेम गाथाओं में इनका बखाना किया । उन्होंने प्रत्येक साधना के लिये ऋषय नीच से ऊपर की ओर उठते समय की विभिन्न आध्यात्मिक स्थितियों (सुकामात) को भी निर्दिष्ट किया । इसी दृष्टि से उन्होंने चार ऐसे पदों की बखाना की जिन्हें वे ऋषय 'आलमेअनामूत' (मीतिक जगत्) आलमेमलकूत (चित् जगत्), आलमे अबरूत (आनन्दमय जगत्) और आनमे नाहूत (सत्य जगत्) कहने लगे<sup>१</sup> । प्रभाव के कतिपय मुस्लिम साधक तो योग-पद्धति में बहुत ही प्रभावित थे । उन्होंने एतद्विषयक हिन्दूग्रन्थों के अनुकरण पर 'आसन षट्चक्र', 'कमलवेध' और मानव शरीर की रचना के रहस्यों की विवेचना पर विस्तृत विवचन भी लिखे<sup>२</sup> । वे तांत्रिक मतावलम्बियों की भांति चक्र में बैठकर 'बीराचार' का दर्शन करते हैं और इडा, पिंगला और मुमुक्षु के माध्यम से सह्यार में प्रवेश करके अमृत-पान करने की बात भी कहते हैं<sup>३</sup> । कहने की आवश्यकता नहीं कि हठयोगिक क्रियाओं में इस सीमा तक प्रभावित सूक्तियों की साधना-प्रणाली में भारतीय साधकों के लिए कोई आकषण नहीं था । अतः रामसनेही सम्प्रदाय की साधना पर सूक्तियों का साधना का प्रभाव कदापि नहीं प्रमाणित किया जा सकता ।

१ उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृ० ७६-८०

2, Some muslimans Sadhakas in the Punjab and elsewhere had a great fascination for the yoga system. In imitation of the Hindu works on the subjects they wrote illustrated treatises dealing with 'asanas', 'satchakra', 'Kamal Vedha' and the mysteries of the physical system

Medieval Mysticism of India p 36

3 Like the followers of the Tantrika they sit in a circle (Chakra) and observe 'virachara' or other ways of the hero and they claim to be drinking in the Tantrika fashion, the nectar of the 'Sahasrara', the thousand petalled (Lotus) after peering through the six circles (Sat chakra) via 'Ida', 'Pingala', and 'Susumna'

अनुभूति पत्र •

सूफी-साधना का केन्द्रविन्दु प्रेम है। इस प्रेम का उदय प्रायः पूवराग से होता है, जिसकी उत्पत्ति गुण-श्रवण चित्र दर्शन और स्वप्न दर्शन से होती है। प्रेम गाथाओ में इसी पद्धति का अनुसरण किया गया है। जायसी वृत्त 'पद्मावत' में रत्नसेन तोने क मुख से पद्मावती के अलौकिक रूप का बखानसुनकर उसके प्रेम में नमस्त हो उठता है<sup>१</sup>। उसमान वृत्त 'चित्रावली' में सुजान योगी के मुख से चित्रावली के रूप की प्रशंसा सुनकर मुग्ध होता है<sup>२</sup>। जान कवि वृत्त 'कामलता' में रागोद्भव का कारण चित्रदर्शन है<sup>३</sup>। रामसनेही सम्प्रदाय की साधना में भी प्रेम का बड़ा ही महत्व पूरा स्थान है और यहाँ भी उसका उद्भव पूवराग से होता है। गुरु क मुह से रमइया राम का गुण बखान सुनकर भक्त रूपी नायिक के मानस में प्रणय की उर्मियाँ तरगायित होने लगती हैं। वह रात दिन उसका स्मरण करने लगता है। स्मरण करते करते उसका पूवराग अनन्य प्रेम की अवस्था में पहुँच जाता है।

आत्मा-परमात्मा के ऐक्य का लौकिक नायक नायिका के संयोग रूप में, प्रतीक-योजना के द्वारा सूफी कवियों ने हृदयग्राही चित्र खींचा है, फिर भी सूफी-दर्शन में संयोग की अपेक्षा प्रियतमा रूपी आराध्य की प्राप्ति में वियोग को अधिक महत्व दिया गया है। जायसी के अनुसार जिस प्रकार मधुकोश में अमृत मुल्य मधु संचित रहता है उसी प्रकार प्रेम में विरह का निवास रहता है<sup>४</sup>। उनके अनुसार प्रेम पदल विरह के रूप में ही उत्पन्न होता है और जाग्रत होते होते प्रेमी को सताना आरम्भ कर देता है<sup>५</sup>। सभी सूफी गाथाकारों ने इसी से प्रेमियों को कहानी के प्राय आरम्भ में

१ हीरामन जो कबल बखाना ।  
सुनि राजा होइ भवर मुलाना ॥

—जायसी प्रयावली, पृ० ३८

२ जा तुम रूप नखाना देवा ।  
भइ मतसा होइ उडऊ परेवा ॥

—सूफी काव्यसंग्रह पृ० १४३

३ फिरि फिरि चित्रहि चितवत नारी ।  
प्रेम आइ बियुरयो तन भारी ॥

—वही, पृ० १६०

४ प्रेमहि मांह विरह रव रमा ।  
मैन के घर मधु अमृत बसा ॥

—जा० प्र० पृ० ७६

५ सूफी काव्य संग्रह पृ० १०३

ही विरहप्रस्त दिखाया है। सूफियों ने इस विरह को गुरु की देन माना है। इस सम्प्रदाय में जायसी की ये पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं —

गुरु विरह चिनगी जो मेला ।

जो सुलगाइ लेइ सो चेला<sup>१</sup> ॥

रामसनेही सम्प्रदाय की प्रेम-साधना में भी प्रेम, का विचार विरह से दृष्टा है। यही ब्रह्म-साक्षात्कार का भी कारण है। इस सम्प्रदाय के सत्तो ने भी विरह की प्राप्ति गुरु से मानी है<sup>२</sup>। इतना सब होते हुए भी सूफियो और रामसनेही सम्प्रदाय के प्रेमादर्श में कुछ मौलिक अंतर है।

प्रथम यह कि सूफी साधना का आधार लौकिक प्रणय है। सूफियों की धारणा है कि अलौकिक प्रेम की मजिल तक पहुँचने के लिए लौकिक प्रेम-पथ को अपनाना आवश्यक होता है। मीरहसन ने अपने प्रसिद्ध कृति 'मोजुल्आरफीन' में सूफी साधना के आधारभूत सिद्धांतों को समझाते हुए कहा है —

जब मजाजी का न हो यारो बया ।

फिर हकीकत किस तरह होवे अया ॥

गोमसल यह है मजाजी स अजीब ।

पर हकीकत को यही स कर तमीज<sup>३</sup> ॥

अर्थात् जब तक लौकिक प्रेम का बणन न किया जाय तब तक अलौकिक प्रेम नहीं प्रकट हो सकता। लौकिक प्रेम उपलक्षण मात्र होने हुए भी अबौकिक प्रेम-प्राप्ति का सोपान है। इसको दृष्टि में रखते हुए जब हम रामसनेही सम्प्रदाय की प्रेम-साधना पर विचार करते हैं तो देखते हैं कि इस सम्प्रदाय के सत्तो का प्रेम प्रारम्भ सहा अलौकिक रहा है। इनकी प्रेम साधना में सासारिक प्रेम मायिक होने से स्वथा त्याज्य होता है। इनके प्रेम का आरम्भ ही वैराग्योदय से होता है जब माता पिता भाई बंधु सुन-बनितादि सासारिक प्रेम के समस्त आलम्बनों से सदैव के लिए नाता टूट जाता है।

दूसरी बात यह है कि सूफी साधना में मायिक अपने का प्रेमी और परमात्मा को स्त्री रूप में मानकर साधनारत होता है, किन्तु रामसनेही सम्प्रदाय के सत्तो ने

१ जायसी प्रथावली, पृ० ५१

२ विरह आप अतर दसे सतगुरु के परताप ।

रामदास सुख ऊजजे आप मिलोगे आप ॥

विरह परगट सतगुरु करी ।

हरी की निगन हो हरी जावे ॥

३ हवायके हिंदी परिचय, पृ० १७ १८

अन्य निगुण सन्तों की भाँति भारतीय प्रेम-पद्धति के आदर्श पर परमात्मा को पुरुष और अपने को स्त्री रूप में चित्रित किया है।

सूफी प्रेम-साधना और रामसनेही सम्प्रदाय के प्रेमादर्श में लोह-दृष्टि स भी एक बहुत बड़ा अंतर है। सूफी-साधना इतनी अन्तर्मुखी है कि लोक ब्रह्माण से इसका कोई लगाव ही नहीं रह जाता। १० परशुराम धनुर्वेदी ने इस प्रश्न पर विचार करते हुए कहा है कि 'खुदा' के साथ 'बस्ल' की हालत में आ चुकने पर जब सालिक एक सच्चे सूफी का रूप ग्रहण कर लेता है और वह 'खुद' के 'बजूद' में अपने को फना कर उमक साथ 'बक्वा' के स्तर पर भी पहुँच जाता है उस समय उससे यह स्वभावतः आशा की जाती है कि वह जगत् के लिए भी ब्रह्माण द सिद्ध होगा। परन्तु सूफियों को प्रेम गाथाओं में इसके लिए न तो कोई आदर्श रखा हुआ दीख पड़ता है और न किसी प्रकार के कार्यक्रम की योजना ही प्रस्तुत की गई मिलती है<sup>१</sup>। लेकिन साध-साधना अन्तर्मुखी होने के बावजूद लोक मापेक्ष है। लोक मंगल को दृष्टि में रखने के कारण ही सन्तो का साधक और कवि के साथ ही साथ समाज सुधारक भी माना गया है। रामसनेही सन्तों ने प्रेममत्त्व को महत्त्व देते हुए भी संयोग अथवा वियोग-वर्णनों में कहीं अश्लीलता नहीं आने दी है। इस प्रकार उनकी लोक दृष्टि सचन सजग रही है।

### रामसनेही सम्प्रदाय की धार्मिक मान्यताएँ

भारतीय धर्म-साधना का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितनी यहाँ की संस्कृति। महाँ अनादि काल से धर्म के स्वरूप पर नाना प्रकार से विचार होता आया है। स्मृतिकारों ने नैतिक नियमों के पालन और सामाजिक व्यवस्थाओं के अनुसरण को धर्म माना है।<sup>२</sup> व्यास जी ने महाभारत में 'धारणाधर्म मित्याह धर्मो धारयते प्रजा'<sup>३</sup> कहकर समाज की व्यवस्था करने वाले समस्त तत्त्वा को धर्म के अंतर्गत समाहित कर लिया है। कणाद के अनुसार जिससे लौकिक एवं पारलौकिक समृद्धि तथा शांति का विधान हो वही धर्म है।<sup>४</sup> तात्पर्य यह कि धर्म शब्द इतना व्यापक और सारगर्भित है कि इसके अंतर्गत दर्शन, साधना, समाज विज्ञान, नीति आदि सभी का समावेश हो जाता है। परन्तु सामान्य रूप से इसका प्रयोग ईश्वर या सद्गति की प्राप्ति के लिए किसी महापुरुष द्वारा प्रवर्तित मत विषय या सम्प्रदाय के लिए किया जाता है। किसी सम्प्रदाय की धार्मिक स्थिति का अध्ययन करते समय हमें उन विश्वासों, आचारा तथा उपासना प्रणालियों पर विचार करना पड़ता है

१ सूफी काव्य सग्रह—भूमिका, पृ० १०८-१०९

२ मनुस्मृति १।१०२

३ महाभारत-करणपर्व ६६।५६

४ यतोऽभ्युदय निश्चयम सिद्धि सधम

जिनका प्रचलन सम्प्रदाय में सामान्य रूप से रहा है और जो ही सम्प्रदाय की रीढ़ होती है। अतः रामसनेही सम्प्रदाय की धार्मिक स्थिति का अध्ययन घम के निम्नोक्त तीन पक्षों के अंतर्गत प्रस्तुत किया जायगा—

- (१) विश्वास
- (२) आचार
- (३) उपासना प्रणाली

### रामसनेही सम्प्रदाय के सामान्य विश्वास

अवतारवाद में आस्था सैद्धांतिक रूप से सतों का निगुण सम्प्रदाय अवतारवाद का विरोधी रहा है और परब्रह्म के निरुपाधि स्वरूप को अपना परमकाम्य मानता रहा है किंतु साम्प्रदायिक साहित्य के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि ये सत न तो परमात्मा के सोपाधि रूप को पूणतया बहिष्कृत कर सके और न उसके निरुपाधि स्वरूप को अपना अंतिम आशय ही बना पाय। यहाँ तक कि 'दशरथसुत निहूँ लोक दखाना रामनाम का मर्म है आना' की चुनौती देने वाले कबीर भी नरसिंहावतार का गुणगान किये बिना नहीं रह सक। जगजावन साह्य दादयाल, पल्लू साहब और तुलसी साहब ने भी कबीर के पं चिह्नों का अनुसरण किया। पूर्ववर्ती सता में यह प्रवृत्ति अपेक्षाकृत बहुत कम दिखाई पड़ती है किन्तु पिछले श्रेय के निगुणपथी साहित्य में यह अत्यधिक मात्रा में काय करने लगी थी इसका एक मात्र कारण यह मालूम पड़ता है कि कबीर ने मुस्लिम विजय के आंतर ब्रह्म के निरुपाधि स्वरूप को अतीर्यामिन्, सूक्ष्म पूर्णवितार, अशावतार और तत्पश्चात् अर्चावतार में परिणत करने वाली सगुणोपासना की अधोगति को अपनी आँखा देखा था। इसलिए उनका हृदय अवतार पूजा के प्रति घृणाशील और आक्रोश की भावना से भर गया था। अतः उन्होंने निगुण साकार की उपासना की भर पेट नि दा की और उसके उन्मूलन के लिए एक शेषव्यापी आवाज उठायी। उनके साहित्य में यदि कहीं अवतारवाद का समर्थन दिखाई पड़ता है तो उसे सगुणोपासना के गगनचुम्बी प्रासाद का अवशेष ही मानना चाहिए। कालांतर में जब परिस्थितियाँ बदली तब अवतारवाद में पुन आस्था बढ़ने लगी और परवर्ती निगुणिया सन्तों ने घट्टक के साथ इसका समर्थन आरम्भ कर दिया। युग को ईश्वर रूप मानने की प्रवृत्ति न भी इस दिशा में पर्याप्त प्रोत्साहन दिया। परम्परा-पालन के लिए यद्यपि कहीं कहीं अवतारवाद का विरोध भी होता रहा किन्तु युग को प्रवृत्तिया उसके सबथा अनुकूल ही रहीं।

१ बीजक शब्द १०६

२ कबीर ग्रन्थवली पृ० २१४

राममनहीं सम्प्रदाय की स्थिति अपने समकालीन अथ निर्गुण सम्प्रदायो से भिन्न नहीं थी। यहाँ भी उसी प्रकार भक्ति, ज्ञान, योग, सूफी प्रेम-पद्धति, अवतारसे वाद आदि के सम्बन्ध की प्रवृत्ति काम करती रही। रामचरण ने एक ओर तो ब्रह्म को अलक्ष, अलिप्त अज्ञाना, अविनाशो, परात्पर और अवतार न लेने वाला कहा है और दूसरी ओर उसके सोपाधि रूप का गुणगान किया है<sup>१</sup>। उन्होंने यद्यपि राम पिता दशरथ कहें तो होय जनम की हाण<sup>२</sup> कहकर वैष्णव सम्प्रदायात्मक स्वीकृत सगुणावतारो का स्पष्ट प्रत्याख्यान किया है तो भी उनका राम भक्तो पर भीड़ पडने पर उसी क्षण और उमी स्थान पर प्रगट हो जाता है<sup>३</sup>। हरिरामदाम न भी उसे निरजन, निरालस, निर्विकार, निर्गुण और निगमनिरूपनम्<sup>४</sup> जयति 'नति नेति' कहते हुए प्रह्लाद, द्रुव, द्रौपदी आदि की पुकार सुनने वाले गरीबनिवाज का विरद प्रदान किया है<sup>५</sup>। दयालुदाम न तो कूटस्थ ब्रह्म<sup>६</sup> से यहाँ तक कहलवा दिया है—

१ (अ) परापरै पूरण ब्रह्म सो वरत रह्या सब ठाहि ।

नाहि लिपता छिपता नही जे उपजे विनशी नाहि ॥

—समतानिवान-द्वितीय प्रकरण, छ० ७६

(ब) राम अलक्षित अज्ञाना घरे न को अवतार ।

—अमृत उपदेश, छठा प्रकाश, छ० ४२

१ रामचरण नरहरि होय प्रगट जनको कारज सार्यो हो ।

राम विमुक्त मक्त को द्रोही राक्षस मार विडार्यो हो ॥

—अणभे वाणी, पृ० १०००

२ अणभे वाणी, पृ० ५०

३ भीड़ पड्या प्रगटे अति नरो ।

छिन भर विलम न लाहि ॥

—अणभे वाणी, पृ० १०००

४ श्री रामस्तहधर्मप्रकाश पृ० ५१

५ ऐसे हैं गरीब निवाज ।

भीर परी प्रह्लाद उवारे हिरण्यकशिपु हणताज ।

भा उपदेश दियो द्रुव सेती अटल बसायो राज ॥

टेर सुनत वेगि हरि आये तारि नियो गजराज ।

जन द्रोणा को चोर बघारयो भई पच भरताज ॥

—श्री रामस्तहधर्मप्रकाश, पृ० १४७

६ राम ब्रह्म अनाद है सरव आद का आद ।

कूटस्थ अचला अलक्ष है अकरण करण अमड ॥

—दयालुदास जी वाणी, प० स० ३२२

भक्त कहै सोई करू, यह मम टेक निधान ।

भक्त नचावै तो नाचू जाचक बलि के द्वार १ ॥

भ्यालुदास की इन पक्तियों को पढ़ने से लोला-विहारी श्रीकृष्ण के विषय में रचित भक्त कवि रसखान की निम्नलिखित पंक्तियाँ स्मरण हो आती हैं —

सैम गनेस मत्स दिनेस सुरेसह जाहि निरन्तर गावैं ।

जाहि जनादि अन त अखड अद्यद अभेद मुवेद बतावैं ॥

नारद से सुक व्यास रटै पचि हारे तऊ पुनि पार न पावैं ।

ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भरि छाद्य पै जाच नचावैं ॥

इतने स ही सन्तुष्ट न रहकर उहोने विविध अवतारों की धरना भी की है —

भगता हित अवतार घर जुग जुग स्यायक राम जी,

वारा मोन नृसिंघ कमठ जिगवहर बावन ।

कपल दत्त सिनकाद हस कीरत विघ पावन ॥

बद्री द्योवर रिपव परस रघुवर हय गोवा ।

प्रियु मनवतर व्यास घनतर ओपद सीवा ॥

कृष्ण बुध निकलक नमो कीरत जुग विसराम जी ।

भगता हित अवतार घर जुग जुग स्यायक रामजी<sup>२</sup> ॥

दरिया साहब ने ब्रह्मा, विष्णु और दसावनारों को स्वप्नवत् मिथ्या बताया<sup>४</sup> किंतु उनके शिष्य पूरणदास ने परब्रह्म के अनंत काल से भक्तों के लिए अवतरित होने की बात कही है<sup>५</sup> । परवर्ती निगुण भक्तिदर्शन में इस प्रकार के अतिविरोध का कारण सम्भवतः सगुण भक्ति की सर्वप्रियता भी रही हो जिसे मिटाने के लिए यह धारा निरन्तर प्रयत्नशील रही । इस संधप में अन्ततोगत्वा उसे स्वयं अपने कतिपय मौलिक सिद्धांतों को ढीला कर देना पड़ा । अवतारवाद की स्वीकृति इनमें से एक थी । राममनेही सम्प्रदाय के साथ ही आया य निगुण सम्प्रदायों में यह प्रवृत्ति परम्परागत वैष्णव धर्म से आयी हुयी मानी जा सकती है ।

१ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० २३४-२३५

२ रसखान और उनका काव्य, सम्पा० चंद्र शेखर पांडे, पृ० १०६, छ० १३

३ भक्तमाल, छ० ६, प० स० ३

४ ब्रह्मा विष्णु दश औतारा ।

सुपना अन्तर सब व्योहारा ॥

—अनुभव गिरा, पृ० १३२

१ सत शिरोमनि अनंत जुगे जुग भक्त हेतु अवतारा ।

जन पूरण परताप राम के मिट गया विषय विकारा ॥

—रामस्नेही सतवाणी, पृ० ८८

## सद्गुरु के व्यक्तित्व की श्र्लौकिकता :

भारतीय सस्कृति म गुरु को सर्वोच्चासन दकर उसकी गौरवगरिमा को सादर स्वीकार किया गया है । यो तो गुरु-माहात्म्य के विकास सूत्रो को मोहतजोदढो और हृडप्या की खुदाई से प्राप्त योग मुद्रा की मृतियो स जोडा जा सकता है, वयोकि योग-साधना मे गुरु का महत्वपूर्ण स्थान है, किंतु इसका प्रथम लिखित उल्लेख हम वैदिक साहित्य मे मिलता है । 'श्वेतास्वतरोनिपद्' मे 'गान की प्राप्ति के लिए परमेश्वर और गुरु के प्रति समान भक्ति रखने का निर्देश है' । 'मनुस्मृति' मे गुरु-सेवा से ब्रह्मलोक का मुख प्राप्त होना बताया गया है<sup>१</sup> । अपने यहाँ बहुत प्राचीन काल से गुरु के सम्बन्ध मे निम्नलिखित श्लोक प्रचलित है जिसमे उसे ब्रह्मा, विष्णु महेश यहाँ तक कि साक्षात् परब्रह्म का प्रतिरूप स्वीकार कर लिया गया है —

गुरुत्र ह्या गुरुविष्णु गुरुदेवो महेश्वर ।

गुरु साक्षात्पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवेनम ॥<sup>२</sup>

मध्यकालीन धार्मिक आस्था के क्रमश विकसित स्वरूप का प्रतिनिधित्व करने वाले सहजमानी बख्तियानी, नाथ, सिद्ध तथा निगुणिया सत्तो की विविध साधना-पद्धतियो मे गुरु का महत्व यहा तक दढ गया कि वह साधना का एक अनिवाय अंग माना जाने लगा ।

गोरक्षनाथ ने मानव जीवन के चरम लक्ष्य की सिद्धि सद्गुरु की प्राप्ति से बताई है<sup>४</sup> । सत्त कबीर को इससे सतोप नहीं हुआ । वे गुरु की महिमा बरणातीत बताते हैं—

सब धरती कागद करू लेखनि सब बनिराय ।

सात समुद की मति करू गुरु गुन लिखा न जाय<sup>५</sup> ।

'गुरु गोविन्द दोनो खडे काके लागू पाय<sup>६</sup> की समस्या पर बार बार विचार

१ यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।

तस्यैते कथिताह्यर्था प्रकाशते महात्मन ॥

२ गुरु शुभ्रूपयावेन ब्रह्म लोक ममश्नुते ।

—श्वेत०, ६।२३

३ पाण्डव गोता

४ गोरखवानी, पृ० १५५

५ स० बा० सं०, प्रथम भाग, पृ० २

६ स० बा० सं०, प्रथम भाग, पृ० २

—मनुस्मृति, २।३३

पञ्च बबीर इस निष्कय पर पहुँचे कि गुरु, गोविन्द से भी बड़ा है<sup>१</sup> क्योंकि 'हरि छूठे गुरु ठौर है गुरु छूटे नहीं ठौर'<sup>२</sup> ।

दादूदयाल ने भक्ति, मुक्ति और ब्रह्म-साक्षात्कार का कारण सद्गुरु को ही माना था<sup>३</sup> । सु दरदास ने परमेश्वर और गुरु को समान पाया था<sup>४</sup> । धरनीदाम को गुरु और नाम के बिना जगत् धूँये के धोरहर सहस्र लगा<sup>५</sup> । इसी प्रकार रामस्नेही सम्प्रदाय के सत्तो ने भी गुरु महिमा का विशद वर्णन किया है ।

दरिया साहब का कहना है कि उनकी मानस भूमि में पड़ा हुआ आध्यात्म-बीज गुरु की उद्देश-वृष्टि से सुकाल में अकुरित हुआ और वही यथागम्य पुष्पित एवं फलित होने के योग्य बना<sup>६</sup> । गुरु रूपी तैराक ने ही दरिया साहब को भव सिंधु में डूबने से बचाकर उस पार पहुँचाया था<sup>७</sup> । उनसे शिष्य किसमदास ने गुरु का अविगत, अगम, अनन्त और अक्ल आदि विशेषणों से युक्त भगवान् के तुल्य माना है<sup>८</sup> ।

रामचरण के अनुसार गुरु ब्रह्म २५ है<sup>९</sup> । वह समस्त कालों का काल और

१ म० बा० स० प्रथम भाग पृ० २

२ वहाँ, पृ० २

३ सत्गुरु मिले तो पाइये भक्ति मुक्ति भंडार ।

दादू सहजै देखिय साहिव का देदार ॥

—स० बा० स० पहला भाग, पृ० ८७

४ परमेश्वर अह परम गुरु दोनों एक समान ।

—वही, पृ० १०६

५ स० बा० स०, पहला भाग, पृ० ११२

६ गुरु आये घन गरज करि सबद किया परकाश ।

बीज पड़ा था भूमि में भई फूल फल आव ॥

—वही, पृ० १२६

७ डूब रहा भवसिंधु में लोभ मोह की धार ।

दरिया गुरु तैरू मिला कर दिया पैल पार ॥

—रामस्नेही स तवाणी, पृ० २३

८ वार पार गुरु गम अगम अविगत अक्ल अनन्त ।

किसनदान गुरु गम अगम गुरु जैसा भगवत ॥

—वही, पृ० ६६

९ गुरु की ब्रह्म रूप करि जानै ।

दाकी भक्ति खड़े परमानै ॥

—गुरु महिमा, पृ० १७

शिष्य-वत्सल तथा दीनदयाल है<sup>१</sup> । एक स्थान पर कबीर की भाँति उन्होंने गुरु को गोविन्द से बड़ा भी कहा है<sup>२</sup> । इन सत्तों ने गुरु को इतना उच्च स्थान अकारण ही नहीं दिया है । वे इस तथ्य से भलीभाँति अवगत हैं कि गुरु रूपी धोबी ही लोम, मोह और कर्म रूपी गाढ़ी मेल से मलिन मन रूपी वस्त्र को शब्द के साबुन और पान क जल से धोकर निर्मल, कर सकता है, अर्थात् कसी की सामर्थ्य नहीं<sup>३</sup> । हरिरामदास ने लोहा को सोना बनाने वाले पारस रूपी गुरु<sup>४</sup> की सेवा हरि से पहले करके उसके माहात्म्य को स्वीकार किया है<sup>५</sup> । रामदास ने गुरु रूपी वृक्ष की शीतल छाया में विश्राम करते हुए मुक्ति फल का लाभ किया था<sup>६</sup> ।

सन्तों ने इस प्रकार के तत्त्वज्ञानी गुरु की गरिमा का क्लृप्त करने वाले पाखण्डियों की चालों को भा देखा था । इसलिए उन्होंने सद्गुरु की शरण में जाने का उपदेश देने के साथ ही साथ ढोंगी गुरुओं से दूर रहने की भी शिक्षा दी है । उन्होंने सद्गुरु का लक्षण बताकर पाखण्डियों के फदे में न पडने का उपदेश दिया । रामसनेही सम्प्रदाय के सत्तों ने भी गुरुशरणा के अग में परीक्षा लेकर गुरु बनाने के लिए कहा है । दयालुदास ने तीन प्रकार के—उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ गुरुओं का बणन करते हुए उत्तम गुरु को ब्रह्मण-सापक बताया है —

१ सतगुरु सकल काल को काल ।

शिक्षा निवाजन दीन दयाल ॥

—गुरु महिमा, छ० २०

२ गुरु गोविन्द सू अधिक होइ ।  
या सुनि रोस करो मति कोई ॥

—वही, छ० ८

३ लोम मोह क्रम ठपजै तब मन मैला होय ।  
रामचरण दोय दाग चड सवै न कोई खोय ॥  
गुरु धोबी उस्ताद, कसणी खूब चढ़ाय ।  
ज्ञान नीर सावणु शबद, तन मन उजल याव । ।

—जसने बाणी, पृ० ४-५

४ लोह पलट कचन भया पारस का परताप ।  
— जन हरिया सतगुरु करै आप सरोपा आप ॥

—श्री रामस्तनहृदयप्रकाश, पृ० ५५

५ प्रथम सेव गुरु देव की पीछे हरि की सेव ।  
जन हरिया गुरुषेव बिन भक्ति न उपजै भेव ॥

—वही, पृ० ५१

६ सतगुरु ऐसा रामदाम जेही तखवर छाहि ।  
शीतल छाया मुक्ति फल ता बिच केलि कराहि ॥

—वही पृ० १८७

गुरु पारप कर कीजिए गुरु हैं तीन प्रकार ।  
 रामा उत्तम गुरु बिना बूढा काली धार ॥  
 माया बधत आसरे माया नाव उचार ।  
 रामा मिधम गुरु घणा हिरदै मुधन सार ॥  
 कनिष्ठ पत्रु नाम के पचदेव को जाप ।  
 रामा कैसी साप सुत पच पिता को पाप<sup>१</sup> ॥

कनिष्ठ गुरु को लोहे की नौका के समान शिष्य का सवनाशक बतात हुए वे निश्चते हैं —

‘लोह नाव उपला भर, तिरे न कोइ प्रकार ।  
 रामा कनिष्ठ गुरु त्रिधा ठिग मिजमानहू रार<sup>२</sup> ॥

रामचरण जहाँ एक ओर सद्गुरु को गिरिधर जैसा अतुल, सागर जैसा अयाह, शशि के सदृश शीतल, वसुधा के समान धैरवान्<sup>३</sup> तथा निस्पृह<sup>४</sup> कहते हैं वहीं दूसरी ओर-उन्होंने लोभी गुरु को पापाण की नौका की भाँति प्रवचन कहा है<sup>५</sup> । निर्लोभी गुरु की सगति करने वाले को सुजान और लोभी गुरु रूपी पापाण की नौका का सहारा लेने वाले को मूख बतात हुए वे कहते हैं —

समझया सोइ सुजाण निर्लोभी सगति करै ।  
 जे चढ़ै नाव पापाण सो मूरख मति जाणिये<sup>६</sup> ॥

रामचरण जी का निश्चित मत है कि इस प्रकार के पथ भ्रष्ट गुरु अपने साथ भ्रात शिष्या को भी ले हूवते हैं ।

भर्मी शिख भर्मी गुरू मिला मिली लछ एक ।  
 उन मिल कैसे पाइये भर्मा रद्द विवेक ॥

१ दयानुदास की वाणी, प० स० ६

२ वही, प० स० १०

३ गिरिधर जितना अतुल है सागर जितना अयाह ।  
 शशि समान शीतल सदा धीरज ज्यु वसुधाह ॥

—अणभे वाण, पृ० २८

४ निस्प्रेही निवछना सो गुरु भाखज व ८

—समता निवास-प्रथम प्रकरण, छ० ५४

५ निर्लोभी भदतारणा अरु लोभी बोवै सोय ।  
 अरु लोभी बोवै सोय नाव पाहण की जानी ।

—वही, छ० ५५

६ वही छ० ५६

मर्मा रद्द विवेक उसा तो अधिक मुलावे ।  
 सो गुण अपरौ होय मोही गुण शिखा सिखावे ॥  
 ज्ञान दानि दुल्लभ गुरु मर्मो सुलभ अनेक ।  
 मर्मो शिख मर्मो गुरु मिलामिली लक्ष एक<sup>१</sup> ॥

ऐसे अर्धे गुरु शिष्य भवसागर में बराबर ह्वते-उतारते रहते हैं । विषय-तृष्णा उहे कमी दम मारने तक की फुरसत नहीं लेने देती —

गुरु ही अर्धा रामदास, शिष्य ही अर्धा होय ।  
 अर्धे कू अर्धा मिल्या पार न पीता कोय<sup>२</sup> ॥

तापर्य यह कि जीवन के अर्ध क्षेत्रों की भाँति इन सन्तों की आलोचना दृष्टि गुरु तत्व की व्याख्या में अरुणत सजग री है ।

### ग्रथ-पूजा

रामसनेही सम्प्रदाय में बाणी-पूजा का भी विधान है<sup>३</sup> । सम्प्रदाय वाले गुरु बाणी को बड़े ही सम्मान के साथ सुरक्षित रखत हैं और पर्वों के शुभावसर पर उसका पाठ करते हैं । गुरु बाणी को गुरु का साक्षात् अवतार माना जाता है और गुरु की भाँति उसकी पूजा भी होती है । कहना न होगा कि कबीर पद्य, दादूपद्य शिवनारामणी सम्प्रदाय आदि प्रायः समीचे नगुण सम्प्रदायों में ग्रथ-पूजा का प्रचार है । इन सत्तों में ग्रथ पूजा की यह प्रवृत्ति सिद्धों से आयी हुई मानी जाती है । सिद्धों को यह परम्परा सम्भवतः मुसलमानों से मिली थी । ईसाईयों में भी ग्रथ-पूजा का प्रचार है किन्तु सिद्धों के ईसाईयों से प्रभावित होने की बात उतनी स्वाभाविक नहीं प्रतीत होती जितनी मुसलमानों से । इस सम्बन्ध में एक बात और ध्यान देने योग्य है । वैष्णव सम्प्रदाय में भी प्रधो के प्रति पूज्य भावना का उदय बहुत पहले हो चुका था । मेरी सम्मति में रामसनेही सम्प्रदाय में यह प्रथा वैष्णव-परम्परा से चली आ रही है ।

### श्रगम देश में विश्वास

भारतीय अध्यात्म साधना की चरमोलम्बि केवल्य, मुक्ति निर्वाण, परमपद, महामुख, नाथपद, निरजन पद, गूय पद, सहजपद आदि की प्राप्ति है । साध्य के इन विविध रूपों का कालांतर में स्थूल विकास हुआ । साधकों ने सासारिक मायाजाल से मुक्त होकर साध्य की उपलब्धि के पश्चात् शाश्वत सुख-दिलास के हेतु जगत् से पृथक्

१ समता निदर्श—प्रथम प्रकरण, छ० ६०

२ रामदास की बाणी, प० स० ३

३ चौकी पर पुस्तक पधरानो ।

निज बाणी के हेतु पूजायी ॥

एक भिन्न प्रकार के लोक की कल्पना की, जिसके परिणामस्वरूप वैकुण्ठ, स्वर्ग, गोलोक, सावेतधाम, अमरपुर, सहजलोक, अगमदेश, अमरदश जैसा साधना लोकों की अवतारणा हुई। ये साधना-बोध ही भक्तों के लीलाधाम हैं। यही उनकी सबसे ऊँची कल्पना है।

कवीर क काव्य में भी अमरदेश का वर्णन आया है। इस देश को कबीर ने देवताओं, मुनियों तथा पीर-शैलियों के लिए दुर्लभ बताया है<sup>१</sup>। यह लोक बड़ा ही विचित्र है। यहाँ धरती-आसमान, पानी पवन, सूर्य-चंद्र, रात दिन कुछ भी नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, दूद जैसा जातिभेद भी इस देश में नहीं है। आदि ज्योति गौरि, गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, महेश और शेष भी वहाँ नहीं रहते। इस अलौकिक देश का अर्थ अत नहीं है। यह काल के बधन से सर्वथा मुक्त है<sup>२</sup>। यही नहीं, इस देश की शोभा बखानानीत है। प्रियतम की इस नगरी में वारह महीने बसत रहता है। यहाँ प्रेम का निभर भरा करता है। अन्त ज्योति पूज से महाभूत बरसता रहता है। इस देश में आकाश और धरती में कोई अंतर नहीं। यहाँ जाति और वर्ण की व्यवस्था नहीं है। यहाँ अगम का दीपक बिना बाती तेल के ही जलता रहता है<sup>३</sup>। इस प्रकार कबीर का यह अमर देश जगत से पृथक् एक अलौकिक प्रेम लोक है जहाँ केवल भक्त को ही प्रवेश पाने का अधिकार है। कबीर की भाँति दादू, जगजीवन साहब, शिवनारायण आदि प्रायः सभी निर्गुण सत्ता के साहित्य में अमर देश का विशद वर्णन प्राप्त होता है।

१ सूर नर मुनि जन औलिया ए सब बेलै तीर ।

असह राम का गम नहीं तहँ घर किया कबीर ॥

सत्यकबीर की साखी, पृ० ४

२ जहवा आयो अमर यह देगवा ।

पानी न पवन धरती अकसवा, चांद न सूर न रौ दिवसवा ।

ब्राह्मन छत्री न सूत्र बैसवा, मुगल पठान न सैयद सेसवा ।

आदि जोति नहि गौर गनेसवा, ब्रह्मा विस्तु महेश न सेसवा ।

जोगी न जगम मुनि दुरखेसना आदि न अत न काल कलेसवा ।

दाम कबीर ले आये सदेगवा, सार शब्द गहि चली वहि देशवा ।

कबीर, पृ० ५२

३ हम वासी उस देश के जहाँ वारह मास विलास ।

प्रेम भरे विकसे कवल तेज पूज परकास ॥

हम वासी उम देम के जहवाँ नहि मास बसत ॥

नीभर भरै महा जमी, भोजत हैं सब स त ॥

हम वासी उम देश के जहाँ जाति बरन कुल नाहि ।

दीपक जरे अगम्य का बिना बाती बिन तेल ॥

सत्यकबीर की साखी पृ० ६४ ६५

अय निर्गुण सन्तो की तरह रामसनेही सम्प्रदाय के महारमा भी अगम देश में विश्वास करते हैं। साम्प्रदायिक साहित्य में 'परचा' के अगम में अगमदेश का बड़ा ही चित्ताकर्षक बरान प्राप्त होता है। दयालुदास के शब्दों में उस अनुपम देश की शोभा का वर्णन देखिए—

रामा देश अनूप है ब्रह्म राज महाराज ।  
 बसिया सो अवचल भया अनत सुधारण काज ॥  
 नीच ऊँच ज्या वरण नहि नारी पुरुष न भेद ।  
 रामा छुरा न भ्रित है नहि जोसत ता खेद ॥  
 बरस मास पख तिय बिना रात दिवस कोउ नाहि ।  
 सुरज मिलाया च द मैं रामा मिस भी नाहि ॥  
 बिना मेघ बिरपा बिना छै हत छम छम आहि ।  
 रामा नित बरसा लहे पडत कोऊ नाहि ।  
 बिना बूद भरणा भरे सुपमण चवै अपार ।  
 मूल बिना तरु फूलिया ता फल अगम अपार ॥  
 बिना वाग जहाँ वाग है फूले अजब अनूप ।  
 पुष्प बिना रामा सुगद आतम तत सरूप<sup>१</sup> ॥

इसी प्रकार दरिय साहब भी लिखते हैं —

- (क) अमी भरे विगसत कवल, उपजत अनुभव ज्ञान ।  
 जन दरिया उस देश का भिन भिन करन दखान<sup>२</sup> ॥  
 जहाँ जल बिन कवला बहु अनत ।
- (ख) अहें वषु बिन भौरा गोह करत ॥  
 अनहद बानी अगम खेल ।  
 अहाँ दापक जले बिन दाती-तल ॥  
 अहें जल बिन सरवर भरा पूर ।  
 जह अनत जोत बिन च<sup>३</sup> मूर  
 वारह माम जहाँ ऋतु बस त<sup>४</sup> ।

रामसनेही सम्प्रदाय के सन्तों का चरम लक्ष्य भृत्योपरान्त इसी अगम देश अथवा परमधाम तक पहुँचना है। यही उनका अपना देश है, अपना घर है जहाँ पहुँचने पर इन्हें नित्यानन्द की प्राप्ति होती है<sup>४</sup>। इसी नगरी में 'जीव-सोब' का मिलन

१ दयालुदास का वाणी, प० स० ४<sup>२</sup> ४४

२ अनुभव गिरा, पृ० १४४

३ अनुभव गिरा, पृ० १७१

४ राम दास उड दसडे छुरा जम का डड ।

परमानन्द गलतान नित्यानन्द अमड ॥

होता है। यहीं पर काम, क्रोधादि पङ्क्तिपुत्रा ने द्वारा पीडित और सत्रस्त जीव विग्राम लेते हैं।

### मध्यम मार्ग का अनुसरण

निगूण सम्प्रदाय मध्यम मार्ग का पथिक है। प्रवृत्ति निवृत्ति, राम-रहीम, हिन्दू मुसलमान आदि परस्पर विरोधी तर्कों के बीच से सतों ने एक ऐसा रास्ता निकाला जिससे होकर ये सबको समझाते-बुझाते, डाँटते-पटकारते बेलटके चले गये।

मध्यम मार्ग की शिक्षा सतों से बहुत पहले गगयाम् बुद्ध और गोरक्षनाथ भी दे चुके थे। बुद्ध ने सुख समुद्धि में जीवन यापन करने वाले विवासियो तथा घोर व्रताचरण से काया को सुखाकर काटा बना देने वाले सापसो के जीवन को निर्वाण के लिए सहायक न मानकर, इन उभय मुक्त दुख के छोरी को छोड़ कर 'मध्यम प्रतिपदा' को प्रतिष्ठा दी थी<sup>१</sup>। उनका पटिच्चममुत्पाद या प्रतीक्ष्यममुत्पाद भी मध्यम मार्ग है जिसका अनुसरण तथागत ने शाश्वतवाद और उच्छेदवाद को एकात्मिकता को छोड़कर किया था। गोरक्षनाथ ने भी मध्यम मार्ग का उन्देश दिया है। वे कहते हैं कि भोजन करने पर मृत्यु होनी है और न करने पर भी होती है। अतः मध्य का अनुसरण करके अपने मन और श्वास को नियंत्रित करो तथा समय द्वारा मुक्ति लाभ करो<sup>२</sup>। कवीर व अनुमार न तो आवश्यकता से अधिक बोलना ठीक है और न आवश्यकता से अधिक चुप रहना ही। न तो वर्षा की अधिकता लाभ कर है और न धून की<sup>३</sup>। उनकी ऐसी धारणा है कि मध्यम मार्ग पर चलने वाले को ससाट-सागर पार करने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती<sup>४</sup>। दादूदयाल

१ भारतीय दर्शन, पृ० १८२-८६

२ छाये भी मरिये अनछाये भी मरिये।

गोरख कहे पूता सजमिही तरिए ॥

मधि निरतर कीजे वास

हड ह्वे मनुवा थिग ह्वे सास ॥

—गोरख बानी, पृ० ५१

३ अति का भना न बोलना अति की भला न चूप।

अति का भना न बरसना अति की भनी न धूप ॥

—स० बा० स० पहला भाग, पृ० ३२

४ कवीर मध्य अग जे को रहे।

तौ तिरत न लागै बार।

ने भी मध्यम मार्ग की शिखा दी है<sup>१</sup>। मध्य मार्ग की सबसे बड़ी विशेषता भावना की निरपेक्षता है। रामसनेही सम्प्रदाय के सन्तों ने इसी मार्ग का अनुसरण किया है। स्वामी रामचरण निरपेक्षता पर जोर देते हुए कहते हैं कि किमी मत विशेष का पक्ष लेने में अनेक उलझने और कठिनाइयाँ आ जाती हैं। अतः निरपेक्ष हुए बिना कोई जीवन में सुख लाभ नहीं कर सकता,<sup>२</sup> क्योंकि हरि मतवाद से बहुत ही दूर और निरपेक्षता के अत्यन्त निकट है। जो लोग निरपेक्ष होकर उसका भजन करते हैं वे ही ठीक ढंग से उसे पाते हैं<sup>३</sup>। रामदास<sup>४</sup> और दयालुदास<sup>५</sup> ने भी द्वारिका मक्का और राम रहीम की खीचातानी को छोड़कर निरपेक्षता का उपदेश दिया है। दरिया साहब भां पछापछी को दुःख का कारण बताते हैं<sup>६</sup>। मध्यम मार्ग के सम्बन्ध में राम चरण का कथन है कि कोई घर छोड़कर बन में निवास करता है तो कोई घर ही पर रहकर साधना करता है। सच्चा सन्त मध्यम मार्ग ग्रहण करत हुए घर की चिन्ताओं और बन में उतरने होने वाले अभिमान से मुक्त होकर रामनाम के प्रति सबलीन रहता है<sup>७</sup>। उनके अनुसार योग और

१ ना हम छाडैना गहै ऐसा ज्ञान विचार ।

मद्वि भाइ सेवे सदा दादू मुकति दुवार ॥

—स० वा० स०, पहला भाग, पृ० ८६

२ पखा पखी उलझाड है खीचाताणी होय ।

रामचरण निरपेक्ष बिना सुखी न देख्या कोय ॥

—अणभे वाणी, पृ० ५१

३ मत की पख हरि दूरि हे हे निरपेक्ष राम नजीक ।

रामचरण निरपेक्ष बिना सुखी न देख्या कोय ॥

—अणभे वाणी, पृ० ५१

४ हिंदू खाचै किधर कू तुरक किधर कू जाय ।

रामदास दुमषा मुवा शोषा स निरपेक्ष जाय ॥

—रामदास की वाणी, प० स० ४७

५ कूण बहै द्वारा मती बूण मके असधान ।

रामा राम रहीम कुण गज मन पाचाताण ॥

—दयालुदास की वाणी प० स० २०१

६ दरिया दुखिया जब लगो, पछापछी बेकाम

—श्री रामसनेही सतवाणी पृ० ८२

७ कोई ग्रह तजि बन गया कोई रहे ग्रह माहि ।

रामचरण वै सतजन भधि के मार्ग जाहि ॥

ग्रह में तो सासो दहे बन माही अभिमान ।

रामचरण दीयू तजे सत भजन गलतान ॥

—अणभे वाणी, पृ० ५०

भोग,<sup>१</sup> साक औरपरलोक,<sup>२</sup> निगुण और सगुण<sup>३</sup> तथा हृद और बेहृद<sup>४</sup> के भगडे को छोड़कर मध्यम माग का अनुसरण ही सत<sup>५</sup> मत का परमादर्श है। मतग्रह के द्वारा इसी पथ पर चलने का उपदेश पाकर रामदास ने प्रियतम का दर्शन किया था<sup>६</sup>। दयालुदास ने भी निगुण-सगुण का पक्ष छोड़कर मध्य माग से चलते हुए परब्रह्म को प्राप्त किया था<sup>७</sup>।

### पिंड और ब्रह्मांड की एकता

पिंड में ब्रह्मांड के सतिवेश की भावना का सम्बन्ध मूलतः तांत्रिक साधना में है। इस भावना का प्रचार उपनिषत्काल में ही हो गया था। 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में अश्वमेध की व्याख्या करते हुए विश्व रूप को अथवा अरौपित किया गया है। उपा को उमका सिर सूर्य को आँख, वायु को प्राण, अग्नि को मुख और सबदसर को जात्मा कह कर सम्पूर्ण विश्व को उसके अंग-प्रत्यंग में समाविष्ट कर दिया गया है<sup>८</sup>। बौद्धों की सहजयान शाखा में इस भावना का पर्याप्त प्रचार रहा है। सहजयानी सिद्ध सरहपा पिंड के अंदर ही तीर्थ आदि कर्मकांडों की व्याख्या करते हैं --

१ जोग भोग दोइ रोग है रामचरण तबि दूर ।

मधि भारग साधू बत्या पाया सुख भरपूर ॥

—अणभे वाली, पृ० ५०

२ कोई बाध पर लोक की कोई लोक का सुबख ।

रामचरण सत राम का देखे दोयू दुख ।

—वही, पृ० ५०

३ को नबे आकार कू कोई निराकार का भाव ।

रामचरण वै सत जन मधि का करे उपाव ॥

—वही, पृ० ५०

४ काई सुमरै हृद में कोई बेहृद जाय ।

रामचरण जग राम का मधि में रहे समाय ॥

—वही, पृ० ५१

५ रामदास सतगुर मिन्मा मध कु द्रिया बतयाय ।

नरक कु ड सू काढ कर साइ दिया मिलाय ॥

—रामदास की वाली प० ११० १७

६ नुरगण तै सरगुण भया सिगुण निरगुण माय ।

रामदास पय छाडिया मध पराब्रह्म पाय ॥

—दयालुदास की वाली, प० सं० २०४

७ बृहदारण्यक० १।१।२

एतु से सुरसरि उतु से गगा साग्र ।

एतु पत्राग वलारसि एतु से चन्द्र त्रिवाग्र ॥

एतु पीठ-उरपीठ, एतु इई ममद परिट्ठओ ।

देहा सरसिअ तित्त, मई सुहअएण ए दिट्ठआ<sup>१</sup> ॥

गोरक्षनाथ ने भी घट के भीतर ही अठसठ तीर्थ होने की चर्चा की है<sup>२</sup> । नाथ सिद्ध अज्ञेयान 'पिठ ब्रह्मण्ड दोऊ एककर पिठ ब्रह्मण्ड समाई<sup>३</sup> कह कर पिठ और ब्रह्मांड की एकता बताने हैं । यही नहीं, गोरक्षमत का मूल सिद्धांत ही यह है कि जो कुछ ब्रह्मांड में है सभी पिठ में है । गोरक्षनाथ का योग माग साधनामूलक है, इसलिये उसमें केवल व्यावहारिक बातों को ही विस्तार दिया गया है । यहाँ मनुष्य शरीर को ही प्रधान पिठ मानकर इसकी व्याख्या की गई है और बताया गया है कि मनुष्य के किम किम अंग में ब्रह्मांड का कौन कौन सा अंग है । पातान कहाँ है, श्वग कहाँ है । साधना माग के तीर्थ स्थान कहाँ है गणव, यग, उरग, किन्नर, तूत, विष्णु आदि के स्थान कहाँ है<sup>४</sup> । सूफी-साधना में भी यह भावना पूरुत स्वीकृत हो गयी थी । मलिक मुहम्मद जायसी ने घट ही में तीन सौ चौरह भुवन की कल्पना की है<sup>५</sup> । निगुणोपामक शर्तों में यह विश्वास प्रारम्भ में बड़मूल रहा है । कबीर कहते हैं कि मन ही मपुरा है, त्रिं द्वारिका है, काया काया है और श्वा द्वा मन्दिर है जिसमें ज्योति जल रही है<sup>६</sup> । दादूदयाल की वाणी में यह भावना और भी अधिक सुगरित्त जान पड़ती है । उनका अनुगार शरीर में ही आकाश है, इसी में पृथ्वी है, धारों के भी इसी में है, जीवन और मृत्यु का पत्र भी शरीर में ही है । आत्मा और अन्त का भीमान्त रसायें भी इसी में है । परमात्मा का निवास यहीं है । गण समुत् और नदियों का जल सब कुछ इसी में है । शारवत स्य का शनिवश इसी में है इसी में जीवन शक्ति है, इसी में निवास है । इसी में सेवा है, अमृतपूण शीत का शर प्रवाह इसी के अन्तगत है । यही ब्रह्म का निवास स्थान है । शरी में प्रेम

१ हिन्दी काव्य धारा पृ० ८

२ गोरक्षनाथ पृ० ५५

३ नाथ सिद्धों की वाणी पृ० ८

४ नाथ सम्प्रदाय, पृ० ११०

५ शीशु भुवन की तर उरराहो ।

त गन मातुर व घट माही ॥

—जायसी दस वला, भावय मुत्त ३०१

६ मन मपुरा त्रिं द्वारिका काया काया जान ।

एग द्वार का दरवा काम शीवि सिद्धान ॥

की ज्योति है, इसी में प्रभु का सहवास है, इसी में कमल विकसित होता है और इसी में भवरे गुजार करते हैं। अथवा व कहते हैं कि काया में ही गङ्गा, यमुना, सरस्वती तीनो नदियों का सगम है। काया में ही काशी, द्वारिका तीर्थ हैं। इसी में स्नान और पूजा होता है। इसी में परब्रह्म का निवास है। अतः वे इस काया में ही जप करने की सलाह दते हैं<sup>१</sup>। इसी प्रकार परवर्ती सत्तो में भी इस भावना के प्रति आस्था दिखाई पड़ती है। रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में घट और ब्रह्मांड की एकता पर प्रकाश डाला गया है। हरिरामदास कहते हैं कि घट में मूर्य, चंद्र और तारे भी हैं। इसी में ब्रह्मांड है। इसी घट में अखंड ज्योति के पुत्र राम निवास करते हैं<sup>२</sup>। दयालुदास न गङ्गा, जमुना, सरस्वती तथा नव तीर्थों को इसी में बताया है<sup>३</sup>। रामदास मन को मथुरा, दिल को द्वारिका और काया को काशी कहकर आठो याम इसी में स्नान करने का उपदेश देते हैं<sup>४</sup>। दरिया साहब के शिष्य किशनदास घट को घर की संज्ञा दते हुए कहते हैं कि घट ही में अविनाशी राम हैं, घट में गुरु और शिष्य हैं। इसी घट में अनहद की गजना होती है। इसी में तत्त्वज्ञानी हैं। घट ही में देवल, देव, सेवा और पूजा है। इसी में अमर राग का स्वर उठता है। इसी में कथा, भागवत और उसका अर्थ-विवेचन होता है। इसी में भक्ति और मुक्ति है। इसी में हवन और यज्ञ होता है। अडसठ तीर्थ मथुरा, काशी, ब्रह्मा, विष्णु और महेश इसी घट में हैं<sup>५</sup>। सम्प्रदाय में आज भी यह भावना पूणतया माय है।

१ श्री दादूदयाल की बाणी मग्गा० मंगलदास, (बायाउली ग्रंथ), पृ० ६३८ ६४८

२ घट में तारा चंद्र रवि, घट माही ब्रह्माण्ड ।  
हरिया घट में राम है जाकी ज्योति अखंड ॥

—श्री रामसनेहधर्मप्रकाश, पृ० ७५

३ गगन सुरमती जमन सरव तारथ या माही ।

—दयालुदास की बाणी, प० स० ६४०

४ मन माही मथुरा बसे दिलहि द्वारिका जान ।  
काया काशी हाय लै, आठो पहर विनान ॥

—रामसनेहधर्मप्रकाश, पृ० २१८

५ नाघो घर ही में घर पाया

पर ही बीच मिरुया अविनाशी, मिल घर भरम मिटाया । टेर ।

घर में सतगुरु घर में चेला, घर में सुमिरण ध्यानी ।

घर में नाद अनाहद गरजे, घर में है तत्व गानी ।

घर में देवल घर में दवा घर में सेवा-पूजा ।

घर में राग अमर घर मेरा, और न कोई दूजा ॥

## आचार

सामान्य रूप से किसी विचार अथवा सिद्धांत को व्यावहारिक जीवन में उतारने की क्रिया को आचरण और उसके भाव को आचार कहते हैं। आचार और विचार का समन्वय भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है। तत्त्वचिंतन से पूरा उपनिषदों में आचार-पक्ष का विधान किया गया है। 'छांदोग्योपनिषद्' में तपस्या दान, अहिंसा, सत्य वचन को आध्यात्मिक उन्नति का साधन माना गया है<sup>१</sup>। 'बृहदारण्यकोपनिषद्' में शम दम, उपरति एवं तितिक्षा की प्राप्ति आवश्यक बड़ी गई है<sup>२</sup>। 'मनुस्मृति' में आचार को समस्त उपासना का मूल तत्व बताया गया है<sup>३</sup>। मनु के अनुसार आचार के बिना कोई द्विज वेद पल नहीं प्राप्त कर सकता<sup>४</sup>। जैन एवं बौद्ध धर्मों में भी आचार पर विशेष ध्यान दिया गया है। बहने की आवश्यकता नहीं कि वैष्णव भक्ति भी आचार प्रवण है। कालांतर में कुछ तो तांत्रिक प्रभाव के कारण और कुछ रूढ़ि रूप में गृहीत होने के कारण बौद्ध सिद्धों और वैष्णवों के आचार-पक्ष में कुछ दोष आ गया था जिसकी प्रतिक्रियास्वरूप नाथपथ और सन्तमत का उदय हुआ। इन सम्प्रदायों में आचार को साधना की रीढ़ के रूप में स्वीकार किया गया है। निगुण सत्ता ने सामाजिक वातावरण को विपाक्त करने वाले रूढ़िप्रस्त आचारा को जड़ से उखाड़ फेंकने का प्रयत्न किया। इसके साथ ही उन्होंने रचनात्मक दृष्टि से आचारगत शुद्धता का भी उपदेश दिया। इस प्रकार सत्ता के आचार-पक्ष के दो रूप हमारे सामने आते हैं—ध्वसात्मक एवं सृजनात्मक।

निगुण पथ से सम्बद्ध होने के कारण रामसनेही सम्प्रदाय में आचार-प्रतिष्ठा के उनपुक्त दोनों रूपों के दर्शन होते हैं। यद्यपि इस सम्प्रदाय के सत्ता की बाणी में सृजन का स्वर अपेक्षाकृत ऊँचा है, फिर भी दरिया साहब को छाड़कर इस सम्प्रदाय के सत्ता में कबीर जैसी लापरवाही, उन्ही जैसा फक्कड़पन और उनका सा ही विश्वास

घर में कथा भागवत घर में, घर में अथ विचारा।

घर में भक्ति मुक्ति पुनि घर में ऐसा गृह हगारा

घर में हवन यज्ञ भी घर में, घर में है व्रत वासी

अहस्त तीरथ सो भी घर में घर में मथुरा काशी

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर घर में, निरगुण माया तेरी।

—अनुभव गिरा, पृ० २४०-४१

१ छांदोग्योपनिषद्, ३।१।८।४

२ बृहदा०, २।१।६

३ मनुस्मृति १।१०

४ वही, १।१०६

हमें सर्वत्र दिखाई पड़ता है। उनकी पैनी दृष्टि हिंदू मुसलमान दोनों की कुरीतियाँ और पाखंडों पर पड़ी और दोनों ही उनके व्यर्थ बाण के लक्ष्य बने।

### ध्वसात्मक रूप

पुस्तक ज्ञान की आधारता—स त मत में पुस्तक-ज्ञान को आधार माना गया है। 'कागद की सेखी' को वे इसलिए नहीं स्वीकार करते कि सब कुछ उ होने पान की आँखों से देखा या। मात्र दो अक्षर के अनन्त प्रकाश में इन सतों ने सवार के वास्तविक रूप को पहचाना था। फिर पोथी पढ़ने की उनके लिए आवश्यकता ही क्या थी? इसीलिए तो रामदास ने कहा है—

विद्वत् पढ़कर रामदास बोला करै गुमान ।

दोय अक्षर पढ़ीया बिना अत हुबेगो हान<sup>१</sup> ॥

उनका दृढ़ विश्वास है कि चार वेद, छ शास्त्र और अठारह पुराणों को कितना ही क्यों न पढ़ा जाय किन्तु एक राम के बिना कोई काम नहीं बन सकता<sup>२</sup>। हरिरामदास के अनुसार ग्रंथादि का अनुशीलन ससार में लिप्त पंडितों का काम है। स ता के हृदय में तो रामनाम का निवास रहता है<sup>३</sup>। रामचरण ने पढ़ने लिखने का 'कागद बाला करना'<sup>४</sup> अर्थात् व्यर्थ का काम माना है। दरिया साहब ने भी पढ़ सीखकर ज्ञान चचा करने वालों का हृदय अधकाराच्छन्न माना है<sup>५</sup>।

इस शास्त्र विरोधी भावना के बावजूद जब हम देखते हैं कि इन सतों ने पदे पदे वेद पुराणादि की साक्षी भी दी है<sup>६</sup> तो हमारे मन में यह प्रश्न उठता है कि

१ रामदास की बाणी प० स० २०

२ चार वेद पठ सासतर पुराण अठारै जोय ।

रामदास एक राम बिन कारज सरै न कोय ॥

—वही, प० स० ३०

३ पोथी पुस्तक टीपणो जग पंडित को काम ।

हरिया ठिरवै संत के रामनाम विधाम ॥

—श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० ५७

४ नय कागद काले करै इन बाता क्या होद ।

रामचरण भजि राम को तिल का दमता खोद ॥

—अणुमे बाणी, पृ० ७३

५ सीतल जानी ज्ञान गम करै ब्रह्म की बात ॥

दरिया बाहूर चादना भीतर काली रात ॥

—रामस्नेहो सतवाणी पृ० ६२

६ (क) कहैं वेद अरु पुराण सत सब कहैं विस्थाता ।

—अणुमे बिलास सतम प्रकरण, छ० २

(ख) नाम की समर्या अगम अगाध है ।

वेद अरु साध सत्र कहत माई ।

—वही, छ० ६

सत शिरोमणि शास्त्र सबही निदे खोट ।

—जिनास बोध—१८ वा प्रकरण, छ० ६

सन्तो ने इस प्रकार की परस्पर विरोधी भावों एक साथ क्यों कही प्रतीत होता है कि इनका पुस्तक-ज्ञान से उतना विरोध नहीं था जितना पाखाड़ी प्रथ काटो से, जो साधनाजय आत्मानुभूति प्राप्त किये बिना ही दर्शन-प्रथो को उलट कर जानी बनने का ढोंग रचत हैं। अतः पुस्तक पान स उनका तात्पर्य अनुभवपूर्ण पान से था।

**मूर्ति-पूजा का खण्डन**—सन्ता की स्वानुभूतिमूलक साधना में मूर्ति-पूजा के लिए कोई स्थान नहीं है। यही कारण है कि सम्पूर्ण सत साहित्य मूर्ति-पूजा की महत्तना से भरा पडा है। कबीरदास ने पत्थर पूजने से अच्छी शक्की की पूजा बताया है, जिसके द्वारा पीले गये आँटि से ससार का भरण पोषण होता है<sup>१</sup>। महात्मा बनादास ने मूर्ति-पूजा को गुडिया के खेल के सदृश माना है। उनके अनुसार जिस प्रकार पति मिल जाने पर गुडिया खेल का महत्व नहीं रह जाता उसी प्रकार मूर्ति-पूजा का महत्व केवल उर्हीं के लिए है जिन्हें परमतत्व का बोध नहीं हुआ है<sup>२</sup>।

रामसनेही सम्प्रदाय के सन्तो ने मूर्ति-पूजा का घट कर खण्डन किया है। दरिया साहब इस विश्व-व्यापी रोग से स्त्रीक उठे थे। परिणामस्वरूप उनकी यह परेशानी उदासीनता में परिणत हो गई थी—

दरिया गैला जगत को क्या कीजे समभाय ।

रोग नीसरै देह से पत्थर पूजन जाय<sup>३</sup> ॥

रामदास ने भी कहा है कि यह दुनिया इतनी अधी है कि अपने ही घट में निवास करने वाले ब्रह्म को नहीं देख पाती और जल, पाषाण आदि का पूजन करती है<sup>४</sup>। रामचरण ने तो गोबर, पाषाण तथा मिट्टी निर्मित देवताओं की बड़ी खिल्ली उड़ाई है —

देवत गोबर मार का करि अपणे हाथ सवारि ।

जा सनमुख कर जोड के हृपत बैठी नारि ॥

१ पाहन पूज हरि मिले तो में पूजी पहार ।

ताते वे चाकी भनी पीसि खाय ससार ॥

—स० बा० समूह—पहला भाग, पृ० ६२

२ साँवो पिय जवही मिले गुडिया खेलव जाय ।

बनादाम जेहि ना मिले मूर्ति पूजा ताहि ॥

—विस्मरण समूह—उपासना अग, पृ० ४६

३ अनुभव गिरा, पृ० १४०

४ के तो पूजे पत्थर कू के जल पूजण जाय ।

रामा साई घट में ताकू लये न काय ॥

—रामदास की बाणी प० स० ३८

हथंत बैठी नारि मिठाया आगे धरि है ।  
 कोई देखो हिये विचार आश कुण पुरी करिहै ॥  
 सरजिव पासी फूल हत निजिव पूजणहारि ।  
 पुनि राम कह्युं सै खिज मरे ये बड़ा मोन संसार<sup>१</sup> ॥

जड के आगे चेत प को नाचते देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ था —

हार डारि अपणा पहराया सकती करि करि पूजे ।  
 जड के आगे चेतन नाचे देयो साचन भू<sup>२</sup> ॥

इसीलिए उन्होंने माफ-साफ कह दिया कि पापाण को नौका पर चढ़कर भव-सागर पार करने का मनसूबा बांधने वाले अवश्य डूब जायेंगे —

रामधरण पापाण की प्रीति न पहुँचे पार ।  
 ज्यूँ पाहण की नाव चढ़ि बूढे बहसी धार<sup>३</sup> ॥

वर्ण व्यवस्था का विरोध—निगुणिया मत जाति भेद क धोर विरोधी थे । वर्ण व्यवस्था का विरोध इन्हें परम्परा से प्राप्त हुआ था । इनके पूर्व सिद्ध और नाथ योगी जातिवाद की कटु आलोचना कर चुके थे । बौद्ध सिद्ध सरहपा ने जाति-व्यवस्था की भत्सना करते हुए कहा है कि ब्राह्मण ब्रह्म के मुख से उत्पन्न हुये थे, जब हुये थे सब हुये थे । इस समय तो वे भी दूसरे लोग जिस प्रकार पैदा होते हैं वैसे ही पैदा होते हैं<sup>४</sup> । वैष्णव धर्म में भी वर्ण व्यवस्था का समय समय पर विरोध हुआ था । रामानुजाचार्य ने जाति बंधन को ढीला किया था । रामानंद ने 'जात-पात पूछै नहि कोई, हरि को भजे सो हरि को होई' कहकर जाति प्रथा का विरोध किया था । इसी परम्परा में कबीरदास भी जाति-व्यवस्था क विरोधी रहे हैं । उनका कथन है —

नहीं को ऊँचा नहीं को नीचा ।  
 जाका प्यड तही का सीचा ॥  
 जे तूँ बामन बसनी जाया,  
 तो आन बाट ह्वै काहे न आया ॥  
 जे तूँ तुरक तुम्कनी जाया,  
 तो भीतरि खतना क्यूँ न कराया<sup>५</sup> ॥

१ विश्वास बोध—१७वाँ प्रकरण, पृ० १५

२ अणभे वाणी, पृ० ६५

३ वही, पृ० ६७

४ हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ० ३२

५ कबीर प्रभावली, पृ० १०२

रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य से यह प्रकट होता है कि इस सम्प्रदाय के भी जातिगत उच्चता एवं नीचता के विरोधी थे। उनके यहाँ श्रेष्ठता की बसोटी बना की दरिद्रता है। रामचरण के अनुसार भक्तिहीन मनुष्य जातीय दृष्टि से है कितना ही श्रेष्ठ क्यों न हो, भंगी के तुल्य है<sup>१</sup>। हरिरामदाम परिहृत को आवनी देते हुए कहते हैं —

पाएते देख पाखि मति भूलि आयो ओसर दूतो । टेक।

एक पिढ एक है पाणी एक जोणि में आया ॥

यामें ऊँच कौन है नीचा सब अविगत की माया ।

कुल आचार करी कठिणार्ई ज्ञान विचार न पाया ।

वेद पुराणा पढ़ि पढ़ि परिहृत थापा जग भरमाया ॥२॥

चारो धरण चार आसरमा यामें आतम एक ।

जन हरिराम राम सुमरीजे या सन्तन की टेक<sup>२</sup> ॥३॥

यह उल्लेखनीय है कि इन पूर्ववर्ती सन्तों की सामाजिक भेदभाव विरोधी प्रवृत्ति पारिवर्त नहीं पा सकी। हिन्दू धर्म की बद्धमूच वर्ण-व्यवस्था से संघष करते-करते यह त्यत क्षीण हो गई। अब अछूत जातियों के लिए इस सम्प्रदाय में कोई स्थान नहीं है। सम्प्रदाय के पीठों में अब केवल सबण हिन्दू ही शिष्य-रूप में स्वीकार किये जाते हैं।

बहुदेवोपासना की भर्त्सना—सन्तों ने केवल ब्रह्म की उपासना की है। वे ईश्वरवादी थे। उनकी साधना का आदर्श सती है। जिस प्रकार सती अपने पति के तिरिक्त किसी दूसरे पुरुष की ओर दृष्टि नहीं डालती उसी प्रकार निर्गुण पथी सन्त का के अतिरिक्त किसी दूसरे देवता की आराधना नहीं करता। बहुदेवोपासकों को सन्तो 'ब्यभिचारिणी स्त्री के सदृश माना है जो अपने पति को छोड़ कर परपुरुष से प्रेम करती। रामसनेही सम्प्रदाय के सन्तों ने 'ब्यभिचारिणी को अग' में प्रकारान्तर से बहुदेवोपासना की बही निन्दा की है। रामचरण कहते हैं कि एक पति से निश्चल भाव, से म करने वाली पतिव्रता नारी हर समय आनन्दपूर्वक रहती है, किंतु ब्याभिचारिणी, उसे अनेक पुरुषों से आशा रहती है आठो याम विह्वल रहती है<sup>३</sup>। दयानुदास लिखते कि पर पुरुष के प्रेम में उमत्त रहने वाली ब्यभिचारिणी का जीवन व्यथ है। जब

रामचरण हरि भजन विन ऊँचहि स्वपच समान ।

—अणभे वाणी, पृ० १२६

श्री रामस्नेहधमप्रकाश, पृ० १४६

पतिव्रता नहचल रहै पति को धर विश्वास ।

रामचरण ब्यभिचारिणी धण पुरुषा की आस ॥

—अणभे वाणी, पृ० १६

तक जवानी है तभी तक उसे मुक्त है। अतः मैं उसका साथो कोई नहीं रहेगा<sup>१</sup>। दरिया साहब के अनुसार अथ देवों की उपासना करने वाला जीव अधोगति को प्राप्त होता है<sup>२</sup>। वैक्टन वेस्काट महोदय की व्यक्तिगत भेंट में बहुदेवोपासना की चर्चा करते हुए शाहपुरा पीठ के महन्त नारायणदास ने कहा था कि जिस प्रकार सागर में स्नान कर लेने के उपरांत विश्व की समस्त सरिताओं में स्नान करने की आवश्यकता नहीं रह जाती, (क्योंकि सागर में सब का जल आकर मिलता है), जिस प्रकार वृक्ष को हरा-भरा रखने के लिए उसकी जड़ में पानी देना चाहिए, पत्तियों, फूलों और फलों को सींचना व्यर्थ है, उसी प्रकार सबव्यापी और सबशक्तिमान परमेश्वर की उपासना अन्यान्य देवी-देवताओं की पूजा के महत्त्व को समाप्त कर देती है<sup>३</sup>। नारामणदास जी का यह कथन गोस्वामी जी की इन पक्तियों को हमारे स्मृति-पटल पर अंकित कर देता है —

पात पात की सींचियो बरी-बरी के लोन ।

तुलसी छोटे चतुरपन कलि बहने कहू कोन<sup>४</sup> ॥

जीव हिंसा का विरोध—सन्त सदैव स हिंसा-वृत्ति के विरोधी रहे हैं ।

कबीर<sup>५</sup>, दादूदयाल<sup>६</sup>, भमूकदास<sup>७</sup>, धरनीदास<sup>८</sup> आदि निर्गुणिया सत्तों न भी मांसा-

१ रामों विरया जीवणों आन पुरस मतवाल ।

ध्यार दिनां मुख देखलौ अन्त कुण करै सभाल ।

—अनुभव गिरा, पृ० २११

२ आन देव को फिर फिर ध्यावै ।

साते जीव अधोगति पावै ॥

अनुभव गिरा, पृ० २१६

३ "As to have the body in the ocean is equivalent to bathing in all the rivers of earth, since they flow in to the great deep and to irrigate the roots of a tree is sufficient without further waste to nourish and bring forth its leaves, its flowers and its fruits, so to worship the omnipotent God does away the necessity of addressing all inferior deities."

Journal of the Royal Asiatic Society (Feb 1835) p 67

४ दोहावनी, छं० ५४६

५ मांस अहारी मानवा परवद्य खाएन अग ।

साकी सगति मति करी परत भजन र्भ भग ॥

—ग० बा० ग०—पहला भाग, पृ० ६१

६ काना मुंह करि बरद का निच में दूरि निवार ।

सब गुरति मुखान का मुस्ता मुख न मार ॥

—पद्यो, पृ० ६१

७ पार सवा की एक सी मत कोई पतियाय ।

कांटा पूभे पीर है मला काट बोउ साय ॥

—पद्यो, पृ० १०३

८ धरनी जिव त्रिनि मारियो मानहि नाहीं पाटु ।

नंगे पाव बपुर बन होइ नाहि निरपाटु ॥

—पद्यो, पृ० ११६

हार और 'हिंसावृत्ति' की बड़ी निन्दा की है। रामस्नेही सम्प्रदाय का हिंसावृत्ति से बड़ा विरोध है। इस सम्प्रदाय के सन्तों की अहिंसाक वृत्ति का परिचय इसी से मिल जाता है कि वे जीवों पर दया करने के अभिप्राय से जल छान कर पीते हैं। यह नियम जैनियों को छोड़कर अन्य किसी मध्ययुगान् आध्यात्मिक मत में नहीं है। साम्प्रदायिक साहित्य हिंसा तथा मांस भक्षण के निन्दा सम्बन्धी छन्दों से मरा पड़ा है। रामचरण कहते हैं कि मनुष्य का भोजन अनाज है और पशुओं का भोजन घास। मनुष्य अपना भोजन न करके मांस-भक्षण करता है यह बहुत बड़ी अनैतिक है<sup>१</sup>। हरिरामदास ने भी हिन्दू-मुसलमान दोनों की हिंसावृत्ति को, ऋट्ट आलोचना की है। निम्नलिखित पद में उनका एतद्विषयक उद्गार देखने योग्य है,—

सतो दोनू राह हरामो खून करे त्रिन खायो ॥ टेक ॥  
 हिन्दू घात करे अजया का हरि सू बेकरमाणी ।  
 मुख सू स्वाद करे मन सेती जीव दया नहिं जाणी ॥  
 पहली तरपण करे गऊ को पुण्य दे पान नसाई ।  
 पीछे घन घावों करि लावे दुष्ट दया नहिं आई ॥  
 सहजे जीव जिद कृ छाटे ताकू कहत हरामा ।  
 काजी करद गऊ सिर सारे विना दोष विसरामा ॥  
 मुद्द हराम कहै हक भारी, पसुवो करत पुकारा ।  
 काजी जवाब कौनसा देसी साई के दरबारा ॥  
 मुहम्मद पीर जहू गऊ कीही वा फिर मारि जिवाई ।  
 होनहार मिटे नहिं जिव की तू सिर ले क्यों भाई ॥  
 मुई मटिया मुरदार कहत है मारै हक निवाला ।  
 देख देख दुनिया कर भूली काजी कौन हवाला ॥  
 हिन्दू के पण जाणि गऊ को सो मूघर तुरकाणे ।  
 दोऊ मारि भखै मुख मांसा घट-बघ कोन बखाने ॥  
 विषय कर्म कू सब नोइ आगा हरि धर्म सेती पाछा ।  
 जन हरिराम राम रस पीजे छाडि सुबर गड वाछा ॥

वाह्याचार रण्डन—धार्मिक संस्कारों और आचारों को निगूण सन्तों ने अधविश्वाम पाछड़ तथा बाह्याडंबर का प्रतीक माना है। इसीलिए सत्-साहित्य में इनका कड़ा विरोध किया गया है। रामस्नेही सम्प्रदाय के साहित्य में भी उन्हें रसाग्ण

१ नर का जीवन नाश है अरु पशुवा जीवण घास ।

अव मुणियो बडी अनैति य कोइ मिनस आवरे माम ॥

—विश्वास बोध—१७ वा प्रकरण, छ० ३७

२ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० १४२

ठहराया गया है। रामचरण कहते हैं कि। तुम जप, तप, योग, व्रत, नियमसमय मे मत भूलो क्योंकि य सब ओस के पानी के तुल्य हैं। इनसे प्यास नहीं जा सकती। ये सब साधन 'नाम' के अभाव मे ठीक वैसे ही हैं जैसे नीर के बिना सरिता और बीज के बिना खेत<sup>१</sup>। पुन वे इन साधनों को नाम क अभाव में, अक विहीन छूय जैसा बताते हैं<sup>२</sup>। हरिराम दास ने इ-हे व्यर्थ की 'आशाबधी' [कहा है<sup>३</sup>। यही नहीं वरन् इन सन्तो ने तीर्थ-व्रत<sup>४</sup> और घेप-भूषा<sup>५</sup>, के साथ साथ ही माला और

१ जप तप जोग नेम व्रत सजम मति भूलै इन माहि रे।

ये सब जाण ओस का पाणी, तिरखा भागे नाहि रे ॥

जैसे सरिता नीर विहूणी बीज बिना यू खेत रे।

नाम बिना औसै सब साधन कहो कहा फल देत रे ॥

—अणभे वाणी, पृ० ६६६

२ जोग जिग तीरथ वरत जप तप साधन पुनि।

रामचरण इक राम बिन ज्यू अक विहूनी सुनि ॥

—वही, पृ० ६७

३ जोग जज्ञ जप तप अस्नाना ये मब आशाबधी।

पूरण ब्रह्म सकल ते मारा दुनों न जानै अधी ॥

—श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० १३४

४ क्या देवल क्या द्वारिका क्या मक्का महजीद।

क्या रोजा एकादशी क्या कर्म ईद बक्रीद ॥

क्या कर्म ईद बक्रीद भर्म में मूल्यादोई।

अतह इलम भरपूर राम सुमर्या सुख होई ॥

—अणभे वाणी, पृ० १७८

५ (क) क्या जामा क्या पागडी क्या तूँधी लंगोट।

राम बिना उतरे नहीं सिर पापा की पोटा।

—रामस्नेही सत वाणी पृ० १४७

(ख) भेप रता अधा सबे अधाई का राज।

—वही, पृ० १४६

(ग) अटा छूट गूदड भया चकर गुदडी सोम।

रामा भेप मगरूर मन तपे छाप की रोम ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० १६३

(घ) केसा में दोसग नहीं भूडो केती बार।

मन मूड्या जिन रामदास, मिलै न सिरजणहार ॥

—वही, प० स० १६३

तिलक की भी खबर ली है। उन्होंने मुसलमानों में प्रचलित बाह्याचार पर भी कठोर प्रहार किये हैं। रामचरण और रामदास ने नमाज<sup>३</sup> और सुन्नत<sup>४</sup> की बड़ी निन्दा की है। इनके अतिरिक्त अन्ध समकालीन सम्प्रदायों में व्याप्त हृद्दिवादिता एवं अंध विश्वास की खुलकर निन्दा करने में इन्होंने कोई कसर बाकी नहीं रखी है। रामचरण कल्पियुग के तथाकथित योगियों की पोल खोलते हुए कहते हैं —

(६) सरिता सागर जल बिना यूँ राम भजन बिन भेल ।

—रामरसायन बोध—तृतीय प्रकरण, छ० ८७

१ (क) माला फेरे गया भया मन फाटे कर मार ।

दरिया मन को फेरिये जायै बसै विकार ॥

—अनुभव गिरा, पृ० १४६

(ख) कठी माला काठ की तिलक मार का होय ।

जनु दरिया निजनाम बिन पार न पहुँचै कोय ॥

—वही, पृ० १४६

(ग) बिन कठी माला बिना जल तार्यो गजराज ।

किसनदास निज सत की अवगत सुणी अवाज ॥

रामस्नेही सतवाणी, पृ० ११४

(घ) माला कठ तिलक घर जे कोई मिल करतार ।

भाड भवइया ऊपरै रीभावण ससार ॥

—दयालुदास की वाणी, प० स० १६५

(ङ) शीशतिलक गलमाल दसा धर्याई साध के ।

कोडया किया कगाल, बिना भरोसै राम के ॥

—कणभे वाणी, पृ० ७०

२ (क) सकल जहान मे रमि रह्या मुला एक रहीम ।

बागि सुखावे कूण कू बहरा नाहि करीम ॥

—अणभे वाणी, पृ० ६४

(ख) घालि कान में आगुली मुला करत पुकार ।

बाग देइ सो कूण है जाकर करो विचार ॥

—वही पृ० ६४

मुल्ला रोजा क्या करे चुप रै बाग पुकार ।

रामा साई साच बिन रीभे नहीं लिगार ॥

—रामदास की वाणी, प० स० ३७

३ भीया सु नत तै करी खलडी काटी काय ।

साइ रीभे साच सू साच बिना कुछ नाय ॥

—वही, प० स० ३७

काना मुद्रा भगवा भेस, जगत ऋहे जोगी आदेस ।  
 आदि पुरुष का लखे न भेद, भोख उधावे लिया लवेद ॥  
 अग भमूति नाना भोग, सुरति शब्द का मिस्या न जोग ।  
 गावे गीत भडाई करे, नाथ कहावे घर घर फिरै ॥  
 पांचू छूटी सके न साथ बहुरि निसरडी जोगणि साय ।  
 छन्ला मूदडी गल रुद्राल फेरी देवे निपनी साख ॥  
 खेती भाडा बहुत कुमावे, सौदा करे भोख भी खावे ॥  
 भेरू पूजे चांगिड सेवे जगत बहोडे, आपण लेवे ॥  
 आसण बांधे आशा धार लछ बिन गया जमारो हार ।  
 जीवता एता कर्म कुमावे, मूवा पीछे पीर कहावे ॥ ।  
 जीवत जोगी करे विषाद, मुई घोर वे बाजे नाद ।

करणी अष्ट पचरस भोगी, रामचरण कलियुग का जोगी<sup>१</sup> ।

इसी प्रकार नागा, खाकी, गूदठपथी, निम्बाक गौडीय, पुष्टिभार्गी,

निरजनी तथा दादूपथी सतों की भी खबर ली गई है<sup>२</sup> । वैरागी<sup>३</sup>,

<sup>१</sup> शब्द (रामचरण), स० ४

२ नागा की फौज बखाणू, में भाति भाति परमाणू ।  
 कटक काल को आवे नगरी दुनिया घडकावे ॥  
 मिरालम्ब निर्वाणी, ये सन्तोपी अगिवाणी ।  
 खाखी धूल्या आया, निर्मोहा मूड बणायी ॥  
 बीच-बीच गूदडिया, ये कोई विरकत खडिया ।  
 करि परभात मपाडा सब मिल मिल खडा उधाडा ॥  
 खाखी खाख चडावे वे धूल्या भस्म खगावे ।  
 ये चोडा टीका साजे, गुरु रामानन्द का बाजे ॥  
 निम्बावत मध्वाचारो, ये विष्णु स्वामि जटधारी ।  
 बोइ निरजन मत का बिन टीका दादू पथ का ॥  
 सब आप-आप की टोली ये ठट्टा ठोंगा ठोली ।  
 ये आम्हां साम्हां जूमे कोई साध मतो नही सूमे ॥  
 कुस्ती करि पूजा मोडे, कर सू कर मिल मिल जोडे ।  
 गुरु भाई कह-कह बोलै ये बाहा पकड मकमोलै ॥  
 ये नहीं साध का कामा भज लीजे केवल रामा ।

—लच्छअलच्छ जोग (अणभै वाणी, पृ० ६२६)

३ मद्र भेप नारी सू सग, बिना मूख दोयू इक रंग ।  
 मूछ बिना पुरुष नहि दीसे जैसे रडि-रडि मिल वीसे ॥  
 बार बार बाकू फिरकार विरक्त होइ भुगतै भगद्वार ॥

— वे जक्ति तिरस्कार, छ० २६

जैनमतवलंबी<sup>१</sup> और दिगम्बर<sup>२</sup> भी उनका चपेट से निकल न सके ।

इन तथ्यों के प्रकाश में हम यह नहीं कह सकते कि इनका विरोध केवल परम्परा पालन के लिये है । यद्यपि कबीर के बाद दादूदयाल, सुन्दरदास, धरनीदास आदि सन्तो में इस विरोध-भावना का स्वर प्रमथ शोण होता गया है किन्तु इस सम्प्रदाय के सन्तो में वही पक्कटपन, वही मस्ती, वही सापरवाही और बाह्याचारों पर आघात करने की वही धुन है, जो कबीर में थी ।

### सृजनात्मक रूप

निगुणिया सत यदि एक हाथ में असत् के सहार का खड्ग लेकर अवतरित हुए थे तो उनके दूसरे हाथ में सत् के निर्माण का वरदान भी था । उनकी बाणी में प्रेम, दया, अहिंसा, सत्य, सदाचार जैसे उदात्त भाव भी मुखरित हुये हैं जिनका अनुसरण कर आज की भ्रान्त मानवता अपने विस्मृत स्वरूप को पुनः प्राप्त कर सकती है ।

सरसग—मानव जीवन में सगति का बड़ा महत्त्व है । मनुष्य का चरित्र-निर्माण उसकी सगति के अनुसार ही होता है । अच्छे लोगों के साहचर्य में रहने वाले मनुष्य में सद्वृत्तियों का विकास होता है और निम्नकोटि के लोगों की सगति में निवास करने वाला माना प्रकार की बुराइयों में फँस जाता है । आलोच्य सम्प्रदाय के सन्तो ने सरसग की प्रशंसा करते हुए जहाँ एक ओर अच्छी सगति में रहने की शिक्षा दी है, वहीं दूसरी ओर कुसग से सावधान रहने की चेतावनी भी दी है । सत रामदास सगति के प्रभाव पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि आकाश से पृथ्वी पर गिरती हुई पानी की एक ही बूद कदली, सीप, एव सप के मुख में पडकर क्रमशः कपूर, मोती और विष के रूप में परिवर्तित हो जाती है<sup>३</sup> । एक दूसरा उदाहरण देते हुए वे फिर कहते हैं कि आकाश से गिरने वाला स्वच्छ जल कुसगति में पडकर अर्थात् गंदे स्थान पर एकत्र होकर सड़ जाता है किन्तु जब वह गङ्गा में मिल जाता है तब लोग उस

१ माये ओढ सेवठा फिरें, शीश धकी नारी चित धरे ।

शील दया को बाच बखान मन मनसा विषया गलतान ॥

बार-बार वाक् धिरकार, जती जैन भुगतै भगद्वार ।

—वही, छ० ६

२ काध्या कपठा पहर मटरग कर कमडल ले सग मरावग ॥

नगन होइ कर अजली खाय, काम विषय विषया विलसाय ।

बार-बार वाक् धिरकार दिग अम्बर भेटै भगद्वार ॥

—वही, छ० ८

३ बूद एक ही रामदास फाट हुई तिहूँ भाग ।

क्यु कदली, क्यु सीप में क्यु सरपे मुख लाग ॥

—रामदास की बाणी, प० स० २६

गङ्गाजल के रूप में शिरोधाय करते हैं<sup>१</sup>। रामचरण जी ने भी सत्साग की अनेक प्रकार से महिमा गाई है। सत्साग को समस्त कल्याण का कारण बताते हुए वे कहते हैं —

सत सागति की धारणा सब शुभ को कारण जोय ।

शुभ सातोप उदै करै अशुभ कामना खोय ॥

अशुभ कामना खोय नको टोटो दशादि ।

टोटो सै टलवाय नफा को धर्म दिड़ावे ॥

निज बोहिष निज नाम दे जन भवजल तारण सोय ।

सत सागति की धारणा सब शुभ को कारण जोय<sup>२</sup> ।

इसी प्रकार दरिया साहब ने भी साधु-सागति का महत्व प्रतिपादित किया है —

दरिया सांगत साध की सहजै पलटै अग ।

जैसे साग मजीठ के कपडा होय सु रग<sup>३</sup> ॥

सत्य — रामसनेही सम्प्रदाय<sup>४</sup> के सातो ने सत्य की भूरि भूरि महिमा गाई है। इनकी धारणा है कि सत्य के भाग पर चलने से सत्य की प्राप्ति होती है। सत्य की प्राप्ति से सुख की उपलब्धि और धर्म का उदय होता है। मनुष्य भूठ और पाप से मुक्त होकर बाद विवाद से ऊपर उठ जाता है। उसे ज्ञान प्राप्त हो जाता और वह अहर्निश नाम-स्मरण करने लगता है<sup>५</sup>। स्वामी रामचरण ने उस मानव को जिसके घट में सत्य का निवास नहीं रहता, पशु से भी नीच बताते हुये बहुत धिक्कारा है —

ज्या घट साच न साचरे भूठ तयो विस्तार ।

साँतो तो पशुवा भला वा नरतन कू धिरकार<sup>६</sup> ॥

१ उजल पानी रामदास कुसांगत विगढाय ।

निकस मिल्यो जाय गग में सदै गगोदिक धाय ॥

—रामदास की वाणी, प० सं० ४०

२ विभ्रामबोध—चतुर्थ विधाम, छं० ३

३ रामसनेही स तवाणी, पृ० ८०

४ ताते समझि विचार के साँचो सांगति जोय ।

साँचा को साधन किया साच परापति होय ॥

साच परापति होय सुख उदे धर्म मर्जादि ।

भूठ पाप छूटे जितो छूटे बाद विदार ॥

छूटे बाद विदार रहे घाता सुख दानी ।

साँच राम को नाम सदा सुमिरे सोइ जानी ॥

—त्रिणास बोध—एकोनविंशो प्रकरण, छं० ६२

५ त्रिणास-बोध—एकोनविंशो प्रकरण, छं० ५८

समता भाव—धेष्ठ मनुष्य वह है जो सुखदुख, हानि लाभ, जय पराजय सबको एक भाव से देखता है। शणिक सुख के आह्लाद में आत्मविमोह हो जाना या दुःख की एक घूर्मल छाया पडते ही अत्यंत उद्विग्न हो उठना अच्छे मनुष्यों का लक्षण नहीं है। इसलिए रामचरण जी ने समता-भाव धारण करने वालों को बड़ा ही सीमागम्यपाली बताया है। वे कहते हैं कि समता-भाव 'से चित्त भजन में एकाग्र रहता है, ज्ञान वैराग्य की प्राप्ति होती है और हृदय-कमल सुख-दुख के दिवा-रात्रि में समान रूप से प्रफुल्लित रहता है —

समता मांही सुख घणां ज्यां पाई सो बड भाग ।

जे बधे भजन मे भावना, सधे ज्ञान-वैराग ॥

सधे ज्ञान वैराग राम लिपतां दुख नाहीं ।

उर आनंद इक सार सदा परिफुल्लित मांही ॥

रामचरण भज राम कू तजि ममत आश की लाग ।

समता माही सुख घणा ज्या पाई सो बड भाग<sup>१</sup> ॥

सन्तोष—सन्तोष परम सुख का मूल है। असन्तुष्ट मनुष्य को सुख की प्राप्ति कदापि नहीं हो सकती। लोभियों की दशा शूकर-स्वान जैसी होती है जिनका जीवन उदर-पूर्ति के लिए यहाँ वहाँ दौडने में व्यतीत हो जाता है। रामचरण के अनुसार सन्तोष ही आनंद का मूल है<sup>२</sup>। उनकी धारणा है कि परमुखापेक्षी बनकर पीछे पीछे घूमने वाले को कभी सुख नहीं प्राप्त हो सकता<sup>३</sup>। इसीलिए दयालुदास कहते हैं कि जो कुछ ईश्वर से मनुष्य को इसी में सन्तोष करना चाहिए। अधिक की कामना करने वाले को निरन्तर दुःख ही मिलते हैं<sup>४</sup>।

सहनशीलता—सहनशीलता सन्तों का आभूषण है। रामसनेही भक्तों ने सहनशीलता को सन्त का एक प्रमुख लक्षण माना है। रामदास इस गुण को इतना

१ विश्राम बोध—द्वितीय विश्राम छ० ३८

२ सन्तोष पोष तिरपतिं करे

—समता निवास-छठां प्रकरण, छ० १८

३ कोई आश पराई करत है सो वे सुखिया नाहि ।

बहुविधि नाच नचाय है, आश वसे उर माहि ॥

—वही, छ० ३२

४ आधी देवे राम जी, याही में सन्तोष ।

रामा सारी चाहिया उपजे पत्रे दोष ॥

—दयालुदास की बाणी, प० स०

उच्च स्थान देते हैं कि उन्होंने स्वयं को सहनशील पुरुष का सेवक कहा है<sup>१</sup> । दयालु-  
दास ने धैर्य और क्षमा को दुर्जनों के वचन बाण से मर्तों की रक्षा करने वाली ढाल  
कहा है —

रामा दुरजन वचन सर लागे नाहीं एक ।

धोरज पिम्मा ढाल कर हरजन सुधी बसेक<sup>२</sup> ॥

सारप्राहिता—सच्चा साधु सारप्राही होता है । आलोच्य घारा के कवियों ने  
सारप्राहिता पर बहुत बल दिया है । रामचरण कहते हैं कि खेत में अन्न और  
भूसा दोनों होता है । किसान अन्न को ग्रहण कर लेता है और भूसे को पशुओं के  
लिए छोड़ देता है । ठीक इसी प्रकार सारप्राही मनुष्य गुणों को ग्रहण कर लेता है  
और दुगुणों को भूखों के लिए छोड़ देता है<sup>३</sup> । उन्होंने मधु की, मन्धी<sup>४</sup> और हस<sup>५</sup>  
की सारप्राहिणी प्रवृत्तियों को आदर्श माना है । उनका मत है कि वेदों में 'वर्मकांड'  
और 'नाम' दोनों बतमान है । सारप्राही सन्त नाम का वरण करता है और शेष  
ससार कर्मकांड के जगल को अपनाता है<sup>६</sup> । दयालुदास ने भी सच्चे सन्त को सार-  
प्राही बताया है —

सागिराही स त है घट विच अघटा पाय ।

रामा ताटी भरम की दूर किया दरसाय<sup>७</sup> ॥

१- सार सबद भं गरव ह्वे सिवरे सास उसास ।

रामदास कुबचन सहै ताहि तणी में दास ॥

—रामदास की वाणी, प० स० ५५

२ दयालुदास की वाणी, प० स० २१३

३ कण कूकस भेवा नीपजे, रामचरण इक खेत ।

कण अधिकारा मानवी भूकन पसबा हेत ॥

—अरुभे वाणी, पृ० २६

४ यू विप इभूत दोन्यु बसे, अठार भार के माहि ।

सहत सोधि से मक्षिका विपकू छवे नाहि ॥

—वही, पृ० २६

५ मोती नामे एक है काच सीर का होय ।

रामचरण हमा धुगै वे मान सरोवर जोय ॥

—वही, पृ० २६

६ रामचरण यू वेद में करम काड अह नाम ।

करम काँ ससार से, साधु सुमरे राम ॥

—अरुभे वाणी, पृ० २६

७ दयालुदास की वाणी, प० स० २०६

**अहिंसा और दया**—भारतीय धर्म साधना में अहिंसा और दया को मानव का परम धर्म माना गया है। रामधनेही सम्प्रदाय के सतों ने जीवों पर दया करने और अहिंसा का द्रव लेने की शिक्षा दी है। हिंसा करने वाले की आलोचना करते हुये रामचरण ने कहा है कि दयाहीन मनुष्य मयदूत के तुल्य है। ऐसे मनुष्य का मुख नहीं देखना चाहिए<sup>१</sup>। उनकी धारणा है कि जो लोग जीव हत्या करते हैं उन्हें परमात्मा स्वनिर्मित वस्तु को विगाड़ने के अपराध में दंडित करता है अतः वे शिक्षा देते हैं कि जिह्वा व स्वाद के लिए जीव हत्या नहीं करना चाहिए<sup>२</sup>। इतना ही नहीं रामधनेही सत जीव-हिंसा के भय से जल ध्यान कर पीते हैं, रात में दीपक नहीं जलाते, मूर्धास्त के पूर्व भोजन कर लेते हैं और वर्षा ऋतु के चार मास एक स्थान पर स्थित करते हैं।

**कथनी और करनी की एकता**—कथनी और करनी की एकता मानव-जीवन की सुफलता की कुंजी है। उच्चादर्शों का राग अलापना व्यर्थ है जब तक कि उन्हें जीवन में उतार न लिया जाय। रामचरण जी का मत है कि जिस प्रकार पक्ष-वान का गीत गाने से तृप्ति नहीं हो सकती, कागज में लिखी हुई अग्नि वन को नहीं जला सकती<sup>३</sup>, उसी प्रकार किसी भी बात का कहना या सुनना तब तक धोषा और निःसार है जब तक कि उसे कार्मरूप में परिणत न कर दिया जाय<sup>४</sup>। इसीलिए उन्होंने कहुणी-रहुणी<sup>५</sup> की एकता को सतों का एकमात्र सक्षर माना है<sup>६</sup>।

१ दया विह्वला मानवी जाका भुवख न देख ।  
दयाहीण जमदूत है कहा अगत कहा भेष ॥

—अणभे वाणी पृ० ५

२ घात करै हरिदृत्य की आरण स्वादा काज ।  
दया न उपजै जीव मे भूरख करै अकाज ।  
भूरख करै अकाज, पाप सागर म गलि है  
बदलो देखी खरो नेक भी नाहीं दर है ।  
ताते जीव न मारिये पान दृष्टि करि जीव ।  
सू ही मास न होय है प्राण हृत्पास होय ॥

—जिनास बोध—३६ वा प्रकरण, छं० ५३

३ गीता मे पकवात्र गाय, कुण तिरपत होई ।  
कागद निखी ज आगि वृक्ष वन जले न कोई ॥

—अणभे वाणी, पृ० ११५

४ रामचरण करतव बिना सीखी सुणी निश्चक ।  
बुद्ध हासिल प्रापति नही जैसे लहरी शय ॥

—वही पृ० २२

५ कहुणी रहणी एक है सोही सत सुजान ।

दयालुदास कहनी ओर रहनी की समानता में ही सन्त-जीवन की सफलता बताते हैं<sup>१</sup>। दरिया साहब ने भी 'तन मन एकहि रंग' को भला बताते हुए इसकी पुष्टि की है<sup>२</sup>।

### उपासना-प्रणाली

उपासना का शाब्दिक अर्थ आराधना, पूजा अथवा सेवा है। इस शब्द की निष्पत्ति 'उप' और 'आसना' शब्दों के संयोग से हुई है।<sup>३</sup> 'उप' का अर्थ होता है सन्निकट और 'आसना' का तात्पर्य बैठने से है। इस प्रकार उपासना शब्द से उपासक और उपास्य दो व्यक्तियों का घटित होता है। उपासक की अन्तिम इच्छा उपास्य की कृपा-प्राप्ति होती है। नाना प्रकार से व्रत, नियम, जप, तप, पूजा अर्चा आदि के द्वारा साधक अपने साध्य को प्रसन्न करने का प्रयास करता है। पूजा, अर्चा आदि अनेक विधि विधान के साथ की जाने वाली यह उपासना केवल उसी दशा में सम्भव है जब उपास्य व्यक्त अथवा साकार हो। निर्गुण मार्गी होने से रामसनेही सन्तों का उपास्य निराकार है। अतः इसकी उपासना पद्धति सगुणोपासकों से सर्वथा भिन्न है। यहाँ अष्टमाम सेवा का विधान नहीं है। इन सन्तों की उपासना का सार नामजप है। पिंड में ही ब्रह्मांड की स्थिति मानने से इन सन्तों को उपासना अतमुंखी होती है। इनके यहाँ आरती तो होती है किंतु उसका स्वरूप सामान्य रूप सज्जोने वाला आरती में पृथक् होता है। यह आरती भी घटस्य ब्रह्म की होती है। हरि-रामदास की आरती का एक नमूना देखिये —

ऐसी आरती घट ही में कीजे । राम रसायन निशि दिन पीजे ।टेरा  
घट ही में देवल घट ही में देवा । घट ही में सहज करै मन सेवा ।  
घट ही में पाँच पचीसों पडा । घट ही में जागे जोति अखण्डा ।  
घट ही में पाती फूल चढावे । घट ही में आतम देव मनावे ।  
घट ही में शख शब्द धन तुरा । घट ही में प्रेम परस निज तुरा ।  
घट ही में गावे हरि का दासा घट ही में पावे पद परकासा ।  
जन हरिराम राम घट माहीं । बिन खोज्या कोइ पावे नाहीं<sup>४</sup> ॥

१ दयालुदास की बाली, प० स० १३२

२ बाहर से उजल दशा, भीतर मैना अग ।

ता से तो कौवा भला, तन मन एकहि रंग ॥

— अनुभव गिरा, पृ० १२७

३ 'उप' उपसगपूवक 'प्रास्' उपवेशा' धातु से 'युच्' प्रत्यय कटुने पर 'टाप्' प्रत्ययात् 'उपासना' शब्द बनता है ।

४ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० ३२२

दरिया साहब की आरती का स्वरूप भी देखने योग्य है —

ऐसी आरती निश दिन करिये,  
 राम सुमिर भवसागर तरिये ॥टेक ॥  
 तन मन अरप चरण चित दीजे,  
 सदगुरु शब्द हृदय घर लीजे ॥१॥  
 तन देवल विच आतम पूजा,  
 देव निरजन और न दूजा ।  
 दीपक पान पाँच कर बाती,  
 घूरा ध्यान खेवों दिन राती ॥२॥  
 अनहद झालर शब्द अलखडा,  
 निश दिन सेव करै मन पराडा ।  
 आनन्द आरती आतम देवा  
 जन दरियाव, करै जहँ सेवा १ ॥३॥

रामचरण ने अविनाशी पुरुष की पाँच आरतियों का उल्लेख करते हुए क्रमशः मन-मन्दिर को स्वच्छ करने, हृदय में प्रेम का प्रकाश होने, शब्द के नाभि कमल से सहस्र दल कमल की ओर बढ़ने, अनहद की चौकी पर बैठने और अतत्त्वत्वा आराध्य मे ऐव्य स्थापित कर अमरत्व लाभ की करने चर्चा को है ।

आरति अचलपुरुष अविनाशी, घट घट व्यापक सकल प्रकाशी ।टेक।  
 प्रथम आरति मंदिर बृहार्द्या राम-राम रति कर्म निसार्द्या ॥१॥  
 दूसरी आरति दीपक जोया हिरदे प्रेम चाँदणा होया ॥२॥  
 तीसरी आरति कुम्भ भराया नील कमल सू गगन चढाया ॥३॥  
 चौथी आरति चौकी विराजे जहाँ अनहद का बाजा बाजे ॥४॥  
 पाँचई आरति पूरण कामा सुरति परसिया केवल रामा ॥५॥  
 सेवक स्वामी मया समाना रामहि राम और नहि आना ॥६॥  
 रामचरण ऐसी आरति कीजे परसि अमर पद जुग-जुग जीजे २ ॥७॥

आरती के ये पद सायकाल की पूजा के समय सम्प्रदाय के रामद्वारी मे गाये जाते हैं और इसमे सत और श्रुत्य दोनो वर्गों के लोग सम्मिलित रूप से भाग लेते हैं । सगुणोपासना के प्रभाव से निगुण आरती के साथ ही इधर सगुण साकार की आरती की प्रथा प्रकारांतर से चल पड़ी है । खंडापा मे आचार्यों की समाधि की आरती इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है ।

१ रामस्नेही सन्तवाणी, पृ० १६३ ६४

२ रामस्नेही घर्मदपण, पृ० १०२

## उपासना मे मन्त्रो का प्रयोग

वैदिक उपासना-पद्धति मन्त्रो पर आधारित है । अपने उद्भव-काल मे निगुण सम्प्रदायो मे मन्त्रो का प्रयोग नहीं होता था किन्तु कालांतर मे अधिकांश निगुण सम्प्रदायो मे निय तथा नैमित्तिक कर्मो म मन्त्रो को अत्यधिक महत्व दिया जाने लगा । वैष्णव मत मे इसका प्रचार तांत्रिक प्रभाव के कारण हुआ । यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि रामसनेही सम्प्रदाय की शाहपुरा और रेण शाखाओ मे मन्त्रो का प्रयोग अब भी नहीं होता, किन्तु सिंहवल-खैडावा शाखा के सत वैष्णव मन्त्रो मे विश्वास करते हैं । सत्तो के व्यावहारिक जीवन मे इन मन्त्रो का प्रयोग देखने मे नहीं आता किन्तु सम्प्रदाय द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ 'श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश' मे कुछ मन्त्र दिये गये है और पूजने पर इस शाखा के महात्मा इन मन्त्रो के प्रति बड़ी श्रद्धा प्रकट करते हैं । साम्प्रदायिक उपासना पद्धति में मायता प्राप्त कुछ मन्त्र नीचे दिये जाते हैं<sup>१</sup> —

### यज्ञोपवीत धारण मन्त्र

ॐ यज्ञोपवीत परम पवित्र प्रजापतेर्यत् सहज पुरस्तात्  
आयुष्यमग्र प्रतिपुञ्ज शुभ्र, यनोपवीत बलमस्तुतेज ॥

### कठी माला धारण मन्त्र —

१ तुलसी काष्ठ समूते माले विष्णु जनप्रिये ।  
त्वा धारयाम्यह कण्ठे कुरुनां राम बल्लभम् ॥  
= यज्ञोपवीतवद्धार्या सदा तुलसि मालिका ।  
क्षण मात्र परित्यागाद्विष्णुद्रोही भवेत्तर ॥ २ ॥

### चरणामृत-मन्त्र

अकाल मृत्युहरण सर्व-याधिविनाशनम् ।  
विष्णुपादोदक पीत्वा, शिरसा धारयाम्यहम् ॥ १ ॥  
एकादशी व्रत गीता गगाम्बु तुलसी दलम् ।  
विष्णो पदाम्बु नामानि मरणे मुक्तिदानि च ॥ २ ॥  
तीर्थे प्रसाद स्वीकारान्तर वैष्णवो द्विज ।  
न हस्तक्षालन कुर्यात् न तत्राचमन क्रिया ॥ ३ ॥

### तु बिकाशमण्डलु शुद्धि-मन्त्र

ओ जल दहति पापानि कमण्डलुगत तु यत् ।  
गगातोय सम नित्य जल पात्र च शुद्धयति ॥

१ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० ३८६ ६०

## कठारी-शुद्धि-मन्त्र

जो जले चाम्नि स्थले चमिनरमिष्व वायुमण्डले ।  
त्रिमिरनि प्रकाशीष्व काष्ठ पात्र च शुद्ध्यति ॥१॥

## दीक्षा-मन्त्र

राममन्त्री सम्प्रदाय के उपास्य निगुण राम हैं। इसका दीक्षा-मन्त्र भी 'राम' है। यह सगुणोपासना के 'राम' मन्त्र न सवया मन्त्र है। शाहपुरा शाखा में इस 'राम' मन्त्र का उपदेश दो साखियों के माध्यम से होता है और उन्हें ही दीक्षा-मन्त्र के नाम से अभिहित किया जाता है। यह मन्त्र इस प्रकार है —

राम नाम तारक मन्त्र सुमिरे शकर शेष ।  
रामचरण भावा गुर दत्र यो उपदेश ॥  
सत्रगुरु वरुणी राम नाम शिष्व वारे विश्वाम ।  
रामचरण निशि दिन रटे निश्चय होय प्रकास ॥

माध्यमिक उपासना क ये तन्व निश्चय ही निगुण तथा सगुणमार्गी साधना को एक दूसरे के निकट लाने हैं। परवर्ती सतकाव्य की यह प्रवृत्ति अय पथों के मान्य म भा परिलक्षित होती है।

## साहित्यिक मूल्यांकन

भाषा सौष्ठव और अलंकार विधान को काव्य का सर्वस्व समझने वाले समानोचको न सन्तो की रचनाओं के काव्यत्व पर प्रश्न-चिह्न लगा दिया है। व सन्तो की वाणी को काव्य की कोटि में इसलिये नहीं रखना चाहने कि उसमें कहीं-कहीं पर सही भाषा का प्रयोग नहीं किया गया है, पग-पग पर छंदशास्त्र के नियमों का उल्लंघन किया गया है, और कभी कभी भाषा से जबरदस्ती अपनी बात कहलवा ली गयी है। उपयुक्त कारणों से ही किसी रचना के काव्यत्व को अस्वीकार करना समीचीन नहीं प्रतीत होता। यदि काव्य की कसौटी केवल भाषा, छंद और अलंकार ही हों तो विश्व का सर्वश्रेष्ठ कवि कोई भाषाशास्त्री अथवा वाक्यशास्त्री होता और वेशव का काव्य हिन्दी जगत् में श्रेष्ठ काव्य का मानदण्ड माना जाता। तात्पर्य यह कि भाषा, छंद, अलंकार आदि शरीरी तत्वों के अतिरिक्त काव्य में एक ऐसा तत्व भी है जो देह में चेतना और पुष्प में गन्ध की भाँति व्याप्त रहता है और जो ही काव्य का जीवन है। अनन्वयन ने इसी अनिर्वचनीय तत्व की ओर संकेत करते हुए कहा है कि जिस प्रकार युवती के रूप में उसके जगत्प्रत्यग की शोभा के अतिरिक्त लावण्य नाम का एक अनिर्वचनीय तत्व होता है, उसी प्रकार महाकवियों के काव्य में भी एक प्रतापमान् अनिर्वचनीय सौंदर्य होता है।<sup>१</sup> अब प्रश्न यह है कि वह अनिर्वचनीय सौंदर्य क्या है और वहाँ से आता है? काव्य आत्मा की अभिव्यक्ति है। महाकवि भवभूति ने भी काव्य को अमूर्तरूपा महान् दुष्ट आत्मा की कला माना है।<sup>२</sup> आत्मा मच्चिदानन्दरूपिणी और अनिर्वचनीय है। अन काव्य का सौंदर्य उसमें निहित आत्म तत्व की अभिव्यक्ति पर निर्भर होता है। इस दृष्टि से विचार करने पर सता की वाणी उद्बुद्ध काव्य की कोटि में आती है क्योंकि उसमें आत्मतत्व की जैसी अभिव्यजना हुई है वैसी अयत्त दुलभ है। आत्मभिव्यक्ति के नाते से सता की

१ प्रतीयमान पुनरयदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीना ।  
एनन् प्रसिद्धाय वातिरिक्त भ्राभाति लावण्यानि युवायनासु ॥

— वायालोक, ११४

२ उतर रामचरित, १११

सुलना में सूर और तुलसी तो कथमपि नहीं ठहरते हैं, मीरा का नाम अवश्य उभर कर सामने आता है किन्तु उनका आग्रह अपेक्षाकृत बहुत ही सीमित है।

सतों की रचनाओं को यदि सहृदयतापूर्वक शास्त्रीय परिभाषा का बन्दोबस्त परखा जाय तो भी उन्हें काव्य के सिंहासन से च्युत नहीं किया जा सकता। काव्य को परिभाषित करते हुए भारतीय आचार्यों ने शब्द और अर्थ की सम्मृक्ति का अन्वयित किया है। प्रश्न यह है कि शब्द और अर्थ की कितनी सम्मृक्ति कविता है? शब्द और अर्थ का व्यापार मनुष्य सुबह से शाम तक, साग-भाजों के सौदे से लेकर अध्यात्म, दशन और विज्ञान विषयक गोष्ठियों तक में करता है। क्या ये सब कविता के अन्तर्गत आये? प्रकट है कि शब्द और अर्थ का प्रत्येक व्यापार कविता नहीं है। दस्तुत किसी प्रसंग में शब्द और अर्थ की सम्मृक्ति जब अथ-बोध से ऊपर उठकर सम्वेदना के घरातल पर विद्या अनुभूति का सहृदय तर्क सम्प्रपण करता है तब काव्य का सृजन होता है। इसी विन्दु पर पहुँचकर इतिहास, दशन, नीतिशास्त्रादि विचारित सुम्य विषय तरलित होकर काव्योपयोगी बन जाते हैं।

आचार्य विश्वनाथ ने 'वाग्य रमारमक कायम् और पंडितराज जगन्नाथ ने रमणीयार्थ प्रतिपादक शब्द काव्यम्' जैसे कथन के माध्यम से जिस रमामकता और रमणीयता की बात कही थी उससे उनका तात्पर्य हृदय को रससिक्त करने एवं रमाने वाली उक्ति से ही था। कल्पे की आवश्यकता नहीं कि हृदय का रससिक्त होना या रमना सम्वेदना के स्तर पर होना है। उदाहरणार्थ नारद, शुकदेव और व्यास जैसे ऋषि जिगका पार नहीं पाए और वेदादि जिसे अत्रेद एव अमेद बताते हैं वही ब्रह्म जब रसवान को वाणी में 'बहीर की छोकरिया' के 'दृष्टिया भर छाछ के लिए' उचिता हुआ लिखाई पढ़ता है तब बात सुन्दर (सु+उद = गीला करना) + अर = हृदय को गीला करने वाली) एवं रमणीय (मन के रमण करने योग्य) या रसगुण बन जाती है और भावक उस कविता मानने के लिए विवश हो जाते हैं।

इसी प्रकार जब सत कव मन और वाणी की गति के परे अविगत अलक्ष और अनिर्वचनीय परम तत्त्व की 'नेना बेन अगोचरी' मुद्रा के प्रति 'जब लगाकर, न कथल 'राम रमावन' का पन करता है वरु कभा जनम-जनम का नाना मानकर

- १ भामहने 'शब्दार्थो संहितो काव्यम्' कहकर शब्दाय संयोग को काव्य बताया है। आचार्य कुत्तक काव्य में शब्द और अर्थ के आह्लावकारी पाणिग्रहण पर बल देते हैं—शब्दार्थो संहितो वक्रकविव्यापारशालिनि। बंधे व्यवस्थितौ काव्य तद्विदाह्लावकारिणौ। राजशेखर के अनुसार शब्द और अर्थ के यथोचित सहभाव वाली विद्या साहित्य विद्या है। इस प्रकार बालिदास के 'वाग्य विवि सम्मृत्ती' कथन में काव्य के लिये शब्दार्थ की सम्मृक्ति का स्पष्ट उल्लेख है।

राजाराम 'भरभार' के आगमन पर 'मंगलवार' माना है और उससे साय ब्याट रवाने हुए अपने को बड़ भागी समझता है, कभी प्रियतम के विरह में आठ-पाठ आसू बहाने हुए अहनिश उसका 'पय-निहान्ता' है, और कभी 'ताम की जेबड़ी' से बधा 'मोतिया' श्याम बनकर अपने को स्वामी की इच्छा पर सर्वतोभावेन समर्पित कर देता है तब वात सवेदनशील व्यक्ति के मर्म को छू जाती है और रसानुभूति होने लगती है। यी बड्सर्वर्य के शब्दों में सशक्त अनुभूति का सहज उद्रेक ( Spontaneous overflow of powerful feelings ) है। इसी को एवरक्राम्ही शुद्ध अनुभूति ( Pure experience ) कहता है और इसी स्थिति को हृदयगत करान के लिये भोजपुरी का एक लोक कवि कहता है कि विरहा की खेती नहीं होता, विरहा डाल पर नहीं पनता, दह तो हृदय में उत्पन्न होता है और उमग आने पर गपा जाता है।<sup>१</sup>

अब प्रश्न यह है कि यह 'तो सन्तो की बाली का एर पय हुआ। उनकी रचनाशा के दूसरे पं का क्या होगा, जिसमें वे समाज के कनुन से गपप करने के सण सडगहस्त दिखार्ई पडने हैं और जहाँ अनेक प्रमा को लेकर वे बहुत ही कटु हो गय हैं। कतिपय 'रसिक' पाठक कह सकते हैं कि रात काव्य का यह अज्ञ अनुदर और काव्य के लिए सर्वथा अनुपयोगी है। इस सम्बन्ध में प्रस्तुत लेखक की निरिक्त धारण है कि काव्य के लिए कोई भी विषय अनुदर और अनुपयोगी नहीं है। कीड़े-मकोड़े में लकर अतुल काम-विपसा तक और रोटी-दाल के नैरिक्त प्रश्नों से लकर अध्यात्म-दर्शन तक कुछ भी काव्य के लिए अनुपयोगी नहीं होता। जिन्हें समग्र जीवन का बोध नहीं है वे सौन्दर्य और अभीष्ट का भेद क्या समझेंगे? जिन्हें केवल पुत्र-मृतक प्रिय है वे उस माली की मनोभूमि को कैसे समझ सकते हैं जो फूल धुवन में पहल कटकों को भेजता है। यस्तुन स्वल्प सादर्य-बोध के लिए भावुक और भावक दोनों में समग्र जीवन दृष्टि की सहजी आवश्यकता है। सुधी महादेवा क्या न काव्य में तो रस की खर्चा करते हुए ठीक हो जाता है कि आवा का जो सार्थ विकास के लिए आगत है उसी पाने के चररात ध्योग, बदा, सधु, गुह गुनर विरूप, आरपण, भयानक, कुछ भी कला जगत् में बहिष्कृत नहीं किया जा सकता।"<sup>२</sup>

१—नाहीं विरहा के गती ए भइया,  
नाहीं विरहा परे दारि  
विरहात उरमा न हिरदयमा में  
बड उमगी तब गपव ।

२ 'अहिंसाचार की आस्था और अय निवप, पृ० ३५

काव्य में सौन्दर्य असौन्दर्य की मीमांसा करत हुए आचाय द्विवेदी ने भी कहा है कि बाह्य अमुन्दरता के दूह पर खडे होकर आ तरिक सौन्दर्य की उपामना नही हो सकती । हमे उस बाह्य असौन्दर्य को देखना ही पडेगा । निरन्न, निर्वसन जनता क बीच पडे होकर आ परिषो के सौन्दर्य लोक की कल्पना ही कर सकत । साहित्य सुन्दर का उपासक है इसलिए साहित्य को असामजस्य को दूर करने का प्रयत्न पहले करना होगा अशिखा और कुशि ना स सड .ा होगा, भय और श्वाभि स लटना होगा ।<sup>१</sup> स त कवि परम सौन्दर्य क उपासक थे, जिसन सामने करोडों सूर्य का तज और करोडो कामदेव का सौन्दर्य बुध भी नही था । उनक 'अगमदेश न पटशतु का शोभा सरसती रहती है, छतीस रागिनियाँ बना करता ह और साधक अनुभव के गीत गाया करता है । ऐसे सौन्दर्य दश का बासी कभी भी भौतिक जीवा की दिसगतिषो को दबकर मोन नही रह सकता था । अन उ'होने जीवन की बुरूपता से लडकर सम्पूर्ण नमाम को सौन्दर्य मय बन न का प्रयत्न करते हुए सत्य, अहिंसा, दया, करुणा आदि सात्विक वृत्तिया को प्रतिष्ठित किया । ऐन शशन्त सौन्दर्य के उपासका को रससिद्ध कवीश्वर मानना हमारा परम कतव्य ह ।

रहा भासा और जमि यक्ति के अय साधना की बात, जिनको लेकर सता की वाणी के का उत्तर पर अर्गुि निर्देश किया गया है । इस विषय म निवेदन यह है नि सन्तो की रचनाओं को वाणी-विलास की सना नही जा सकती । कवि-कम उनका साध्य नही साधन था ।<sup>२</sup> उ'होने स्वयं भी कहा कि उनकी वाणी को गीत अर्थात् काव्य न माना जाय बर्दोकि वह ब्रह्म विचार है, आत्म-साधना का सार है । सुतोवी भाषा सहज साधना की भाषा है । जत वह भी सज है । सहज भाषा चमत्कार की भाषा नही है, वह याकरण और भाषाशास्त्र के बल पर बनाई हुई भाषा नही है, बोपा में प्रयुक्त शब्दो के अनुपात पर गी हुई भाषा नही है । वह साधना को भाषा है । उसमें टेढ़ी से टेढ़ी बात भी सहज ही कने की शक्ति है ।<sup>३</sup> सोलिए सहज भाषा क धनी कशीर को, प्रहारातर मे सतो को, आचाय हजारीप्रसाद द्विवेदी ने वाणी का डिक्टेट करताने हुए लिखा है कि वाणी के ऐस वादशाह को साहित्य-रसिक काव्या नद का आस्वाद कराने वाला समझे तो उन्हें दोष नही दिया जा सकता ।<sup>४</sup>

१ अशोक क फूल पृ० १८९

२ काय-रचना उनका साध्य नही था तो भी उ'होने कवि-कम किया । इसम तनिक भी सदेह नही है । उनकी वाणी में रस है, छ द है, अलंकार है, कवि समय है, विविध राग-रागिनियाँ है और है एक विशय काव्य-गली जिसकी दाघ परम्परा उ'ह रत्नरूप म प्राप्त हुई थी ।

३ द्रष्टव्य, अशोक क फूल, पृ० १८३ ८४

४ कबीर, पृ० २१६

अस्तु, सन्त-साहित्य के काव्यरस का समग्र रूप में भावावन करत हुए आचार्य परशुराम चन्द्रवैरी के शब्दों में हम यह सकते हैं कि कबीर साहित्य (प्रकारांतर म सा साहित्य) उन रस-विरले पुंनों में नहीं जो मजे सजाये उदानों को बसादिना में दिनी प्रम-विशेष के अनुसार उगाये गये रहते हैं और जिनी छाया एवम् सौन्दर्य का अधि-कांश योग्य मालिया के बसा मधुमय पर अश्रित रहा करता है। यह एव व प्र कुमुम है जो अपने स्थल पर जनन आन उगा है और जिसका विकास बदल प्राकृतिक नियमों पर ही निर्भर रहा है। इसके आकार प्रकार अथवा रूप रंग पर कभी किसी उचित वातावरण का प्रभाव नहीं पडा और यह इमका पोषा तक कभी किसी निश्चित प्रम व वाता छोट का अभ्यस्त रहा। इसका जगना निजी मधुम है और निजी सौन्दर्य है और इसकी विशेषता का साहस्य केवल उहाँ का प्र कुमुमों में मिल सकता है जिन्का विकास ही भी वाजबदा में ही हुआ है।<sup>१</sup> सत काव्य की समस्त विशेषता का से मण्डित होने के कारण राममनेही सम्प्रदाय का साहित्य भा रमणीय और सब प्रकार से अभिनदनीय है।

### भावानुभूति

प्रथम बोध, अनुभूति और वेगवृत्त प्रवृत्ति इन तीनों के गूढ सञ्चय का नाम भाव है।<sup>२</sup> भाव ही रस का प्रवृत्त मूल है। राममनेही सम्प्रदाय के सत प्रमुख रूप से मधुर्य एव शात भाव के बवि हैं, तथापि उनके वाणी-साहित्य में बीर बीमत्स और अद्भुत रस के भी उदाहरण मिल जाते हैं। करण, हान्म, रोद्र और भयानक रस का भी प्रायः जभाव ही दिखाई पडता है। वास्तविकता यह है कि सत कवि भक्ति रस-रसिक हैं। भक्ति रस में माधुर्य, दाम्ब शात, वात्सल्य और सख्य भावा को मुख्य भक्ति रस माना गया है। बीर बीमत्स, अद्भुत, कर्षण, हान्म, रोद्र और भयानक जादि रसा को भक्ति म रस व नहीं प्राप्त है। इह भक्ति रसातगत गौण भक्ति रस बताया गया है। कवि विद् इमीनिए गोस्वामी तुलसादास ने भी भक्तिरस के जन से पूरा मानस में अय रसों को जलवर के रूप में देता है।<sup>३</sup>

### माधुर्यभाव

माधुर्यभाव मूलतः शृंगार रस के अतपत जाने वाला भाव है। शृंगार रस का स्वामी भाव गति है। रति या प्रीति जब लौकिक अलम्बन के प्रति होनी है तो शृंगार की कोटि में जाती है और जब अलम्बन अलौकिक

१ कबीर साहित्य की परख, प्रस्तावना पृ० ३

२ रस मामासा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० १६८

३ नव स जा तय जोा बिरागा

ते सब जलवर चाह तडाया

—मानव, बालकाठ, दोहा ३६ चौपाई १०

होना है तो उसे माधुर्य भाव के नाम से अभिहित किया जाता है। आवायों ने इन दो भागों में विभाजित किया है—सयोग और वियोग। कवि परिजाटी व अनुमार १ गार रम का निरूपण करते हुए सयोग के पश्चात् ही वियोग-वर्णन किया जाता है क्योंकि लौकिक जीवन में इन दोनों दशाओं की स्थिति इसी क्रम में होती है। किन्तु निगुण साधना में इनका क्रम सर्वथा विपरीत होता है। वहाँ प्रियतम के प्रति उदात्त वियोग भावना ही सयोग का साधन बनती है। जत प्रस्तुत अध्ययन में पहल वियाग पण का विवचन किया जायगा।

## वियोग

वियोग ४ गार का तीन स्थितियाँ होती हैं—पूर्वराग, मान और प्रवास। पूर्व-राग में नायक और नायिका के मिलन से पूर्व विव-दशन, स्वप्नदशन तथा रूप-गुण श्रवण से उत्पन्न आवरण और प्रेम प्राप्ति की वचनों का वर्णन होता है। मान प्रेमी से प्रेमिका के स्तन की स्थिति है, और प्रवास में सयोगोपराज प्रेमी और प्रेमिका में किरि क प्रवामी होने का वर्णन होता है। प्रेमास्वद निगन्कार होने से निगुणसता की विरहानुभूति में प्रवास और मान के लिए स्थान ही नहीं है। उनक विरह का आरम्भ पूर्वराग से होता है। साधक रूपी प्रेमिका गुरु से प्रियतम राम का गुणश्रवण करके उन पर राग जाती है। उसके दृश्य से प्रेमात्मवृत्ति जाता है। धीर-धीरे मिनन की उत्कठा बढ़ने लगती है। परिणामस्वरूप वियाग-शत का आरम्भ हो जाता है। साधक को धन, धाम तथा मनार के स्नेह मन्वध भूटे लगन लगत है। प्रियतम के बिना उस विषय की समस्त भोग्य विभूतियाँ 'छार के सदृश प्रतीत होने लगती है —

भू लगे धन धाम जग नाता नह निवार।

पीव बिना परलोच में जायो सब सुख छार ॥<sup>१</sup>

शन शने प्रेमानुभूति प्रगाढ़ होती जाती है। प्रेमिका का हृदय पिय से मिलने के लिए तड़पने लगता है। पपीह का भाँति उन प्राणाधार के नाम की धुन सी लग जाती है। प्रिय-दशन के लिए उसके नेत्र और 'वतरम के लिए उसकी जिह्वा लालायित हो उठती है। दशन की आशा में उसके नेत्र 'अर्हनिश प्रियतम की वाट जोहन रत्न है। एक क्षण के लिए भी उसे नींद नहीं आती—

रमइया म्हरी पलक न लागी हो।

तर दरशन कारण निशिवासर जागो हो ॥टका॥

वमो निशा आतुर करो तेरा पथ निहाल हो।

राम नाम की टेर दे दिन रात पुकाह हो ॥

नेण दुखी दीदार बिन रमना रस भासे हो ।  
हिवडो हुलस हेत सो हरि कद परकासे हो ॥<sup>१</sup>

सावन और भादो की सुहावनी राता म जब मुखिया प्रियतम क साथ सयोग  
सुग्य लूटती है, राम के विरह बाण से बिद्ध विरहिणी सज पर अकेला पडी छटपटाती  
हुई रात बिताता है—

सावन सखियाँ सवे हिडोलै भूल है ।  
पति प्रीतम छवि देख हिरदा म फूल है ।  
गाव मगलचार पिया सग हैं मुखी ।  
परिहा, प्होकर विरहन नार राम वर बिन दुखी ॥  
भादो बरने मेह अंधेरी रात नी  
बीज चमक धन गरज येह डरपात री  
परी अकेली सेज पीर अति जीव को  
पारहा प्होकर कोउ जाय बहै दु ख पाव को ॥<sup>२</sup>

दीर्घयापी विरह-ज्वर उस पागल बना देता है । इस दशा म वह शरीर क  
समस्त वस्त्राभूषण तोड फेंकती है —

विरहिनि मारी विरह की मुधि बुधि बिमरो सार ।  
हरिया सिर म डारिया हीर चार सिंगार ॥

विरह-व्रण म इस सम्प्रदाय के सत्ता ने कही कही रीतिकालीन कवियों की  
उहामन पदार्थ का भी अगुसरण किया है । दयालुदास चन्दन और केसर जमे शीतल  
पदार्थों व अग्नि के समान तप्त होने का व्रण करते हुए लिखत हैं —

चन्दन लाग अग्नि सग कमर अग्नि समान ।  
जजू न आय राम जा केहि विध रैसा प्रान ॥<sup>३</sup>

यह उल्लेखनीय है कि आलवन अव्यक्त होने से इन सत्ता की विरहानुभूति  
मे मानसिक पक्ष को प्रधानता होती चाहिए थी किन्तु इनकी विरहानुभूति प्राय  
स्थूल प्रतीका क द्वारा हुई है । इसका कारण है इस सम्प्रदाय के सत्ता पर  
पूर्ववर्ती सगुण भक्ति धारा का प्रभाव । इस रीतिकालीन प्रभाव भी स्वीकार किया  
जा सकता है ।

१ अणभे वाणी, पृ० १००६

२ पाहकर दास की वाणी, वारहमासा, पृ० १२८

३ श्री रामस्नेहधर्मप्रकाश, पृ० २९

४ दयालुदास की वाणी, प० स० ३४

## सयोग

राममनेही सम्प्रदाय क सत्ता ने सयोग के भी बड़े मधुर चित्र प्रस्तुत किये हैं। जन्म जन्म की बिलुडी हुड सुरति-मुदरी और ररकार प्रियतम के सयोग-बणन मे इनकी असाधारण काय प्रतिभा का परिचय मिलता है। ध्याना के मानस म जिस प्रियतम की मोहिना मूर्ति समाई हुई थी उसी से मिलने क लिए उमके तन मन सब व्यग्र थ। सौभाग्यवश सतगुरु की मध्यस्थता म दोनों की मगाई हो गयी। अतत दोनों का प्रणय परिणय म परिवर्तित हो गया। दरिया साहब न म प्रेम मगाई का बडा ही सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है —

कहा कहें मेर पिउ की बात, जोर कहें सो अग मुहात ॥१६॥  
जब मैं रहा थी कया बवारी तज मेर करम हुता सिर भारी ॥  
जब मेरी पिउ से मनसा दौडा सतगुरु आन सभाई जोडी ।  
तब मैं पिउ का मगल गाया अर मेरा स्वामी व्याहन आया ॥  
हथलवा द बैठा सगा तज मोहि लानो बायें जगा ।  
जन दरिया कहे मिटि गई दूतो जापो अरप पाव सग मूती ॥<sup>१</sup>

सम्बन्ध स्थापित हो जाने क उपरा त गगन मटल मे दोनों का प्रथम मिलन होता है। सुरति मुदरी सुख की सज पर शजन करती है। जब उसे जगत् बिलास फीका निस्साई पढन लगता ह। रामचरण न सुरति शब्द का केलि बणन बडे मर्यान्ति और मुदर ढग स किया है —

पिव पतना सुख सेज पर हिल मिल करत निवास ।  
रामचरण तज ही लगे फीको जगत बिलास ॥  
रामचरण पिव पाह्या तव नजर न आवै और ।  
जो सुख पिव की मज पर सो नही दूसरी ठौर ॥  
आठ पहर चौमठ घडी सुख बिलसत दिन जाय ।  
पिव अविनामी सग सुरति नाव कदे नही थाय ॥<sup>२</sup>

‘रामरसाले’ क साथ फाग खेलने म ये स त सगुणोपासक भक्तो से पीछे नही रह है। दोनों मे भद केवल इतना है कि इनकी वसन्त सीला स्थूल न होकर अत्यन्त रहस्यमयी तथा आत्सरिक अनुभव पर आधुत है —

राम रसाले रग रच्यो म्हारै आज बसत को खेल ॥१७॥  
प्रेम नीर पिचकारी दिल से छूटत चहुँ उर भेल ॥

१ अनुभव गिरा, पृ० १९२-१९३

२ अणभे वाणी, पृ० १४

अथ ऊर्ध्व बिच खेल मङ्ग्यो है सुरत शब्द को मल ।  
धुन बिच धान नान जहाँ अनुभव जनम-मरण दुख पेल ।  
छाल बाल रस राम रमैयो रामदास गुरु खेल ॥<sup>१</sup>

इस लिव्य काग-नीला मे स्थापित प्रिया जोर प्रियतम के शारीरिक एव मानसिक  
सेव्य के अनिर्वचनीय मुख का वणन करने हुए सत प्रवर रामचरण लिखने हैं —

पिया सग प्यारा ऐसे निव ही खलन पाग ढटेक।  
रमना राम उबार सुहाणिणि पिव सों प्रीति बधावै ।  
काम कसट परना करि प्यारा अस परस गुण गावै ॥  
बित चदन समना मिल विमके पिव के अग च्चावै ।  
चचन मगन भई महासुन्दरि सागोनाग लगावै ॥  
पाग गुलान अधीर अर्थ बरि भोरी भरि भरि ल्यावै ।  
हमि-हसि हस्य-हरप पति सनमुख प्रेम सहित परवावै ॥  
कन कामना रसरि गारी ताको रग चड़ावै ।  
पाँचू ठाँव रगे रग नीती दूजो रग न भावै ॥  
सन मन अप मिला पिव पतनी प्यारी नहु न जावै ।  
रामचरण शरणे सुख पायो ताकी बहन न आवै ॥<sup>२</sup>

### रसानुभूति का प्रश्न

रसानुभूति की कमीठी साधरणीकरण है। दूसरे शब्दों में कवि की हृदयत  
भावनाओं के साथ श्रोता अथवा पाठक की अनुभूति का तादात्म्य रसानुभूति की  
अनिवार्य शत है। सत कवि जब जाका ओर जाऊँ को तस्करता का यत्न करत हूये  
राम से रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करने का मान बहूँ है तब पाठक का हृदय प्रभावित  
हूये बिना नहीं रहता। जब वह किरहानुभूति की व्यक्तता करता है और प्रियतम का  
एक-एक भाग का विरोग उबक निय अस्य होता है या जब पर आने प्रियतम के साथ  
द्विमिल कर केसि करता है तब प्रवर पाठक आने अपने स्तर में उगता आम्वादा  
करता है। हाँ, कुछ स्थान पर अवश्य है वही सत कवि अपनी गूँ आम्वात्मिक  
अनुभूति का यत्न किये हुए प्रीति के माध्यम से करता है। एक स्थान पर  
अभिप्रेत भावों में श्रोता या पाठक पूर्णतया विम्व ग्रहण नहीं कर पाता है। वस्तुतः  
विम्व आम्वात्मिक ध्यान पर पहुँचने के उद्योग में इन पाठकों का स्थिति हूँ है वही  
एक पक्षे विम्व आम्वात्मिक रसानुभूति नहीं हो सकता। सत कवि जब तब गुरुति-  
निरति की होना का विषय करता है तब तब तो कोई बात नहीं किन्तु जब वह

१ निगुण भजन माना, पृ० १४

२ अन्तर्गत भागा, पृ० १००६

ज्ञान का गुलाल घोनकर प्रेम की पिचकारी चलाना है और धामा का अबीर तथा चित्त का श्वदन बिसने लगता है तब बात कुछ उलझ सी जाती है और साधारण पाठक की समझ से बाहर हो जाती है। इनसे रसानुभूति में बाधा अवश्य पड़ती है। इस सम्बन्ध में श्याम दत्त की बात यह है कि इस प्रकार की कठिनाई केवल राममनेही सम्प्रदाय के साहित्य या मन्त्र काव्य के साथ ही नहीं प्रत्युत् प्रत्येक युग के प्रत्येक कवि की कविता के साथ युनाधिष्ठान माना में आती है। फिर भी कवीर आदि सत्तों के प्रेममूलक पदा की तो बात ही क्या, उलटवौंसीमूलक पद्यों का रसास्वादन गाँव की साधारण जनता अधिकांश साहित्यकारों के काव्य की अपेक्षा कहीं अधिक करती है।

### शान्त रस

शान्त रस एक प्रकार से सत्त काव्य का प्रधान रस है। इसका स्थायी भाव निर्वेद है, जिसके मूल में ससार में विरक्ति की भावना काय करती है। ससार की अनिश्चयता, आत्मदोष-ज्ञान, अपने कुतृत्यों पर पश्चात्ताप आदि अनुभाव तथा आत्मग्लानि, स्मरण, बोध आदि इनके संचारी भाव हैं। साम्प्रदायिक साहित्य से शान्त रस के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं —

(क) जागि जागि-जागि जीव राम राम लीजे ।

सुपन में ससार सार साच नहीं कीज ॥टेक॥

काम दाम सुत बाम धाम नेह न काने ।

याने सगि लागि-लागि अनत जीव छोजे ॥

बडे-बडे राव राजा सुप भोग रीजे ।

जाग न जप्यो है राम माया रस भीजे ॥

जालस निवारि दूरि, भरम छाडि दीजे ।

राम जन राम याइ राम सरण जाजे ॥२

(ख) समझि रे समझि मन मूढ़ मेरा कहा कुटुम्ब परिवार यह कौन केरा ।

सकल ससार सराय का सोवती एक पल माहि होइ बूच डेरा ॥

एक मन बित निव नाम निरभ भजो सुकि सिरकाल नहि करत जोरा ॥

बद कतेव सब जाति काधी कवा देखि भूल मते मद्र मोरा ॥

तप्य तीय धन समझि एकादशी, सात ही द्वीप नव खस टोले ।

जोग जिग जाप पटकम खाली रह्या वाप कू उलटि आपा न खोले ॥

आदि अरु जत सत शब्द कू ध्याय ल पाय ल दशम द्वार सोई ।

दास हरिराम तहाँ मुक्ति सपा नहीं जीव अरु तीव मिल एक होई ॥३

१ राम जन का सबद, पद ३ (गान समुद्र-हस्तनिर्घित)

२ श्री रामस्नेह धर्म प्रकाश, पृ० १३८

(ग) जीव बटाऊ रे बहता मारग माह ।  
 जाऊ पहर का चामना घड़ी इव ठहरे नाह ॥१॥  
 गरम जनम बालक भयो रे तम्नाई गरवान ।  
 वृद्ध मृतक फिर गभ वसरा तरा यह मारग परमान ॥१॥  
 पाप-पुण्य सुख दुख को करनी बची धारे लागी पाय ।  
 पञ्च ठगो के बस म पक्षो र कब घर पहुँचे जाय ॥२॥  
 चौरासी बासो तू बस्या रे अपना कर-वर जान ।  
 निश्चय-निश्चय होयगो र तू पद पहुँचे निर्दान ॥३॥  
 राम बिना तोकी ठौर नही र, जहँ जावै तहँ काल ।  
 जन दरिया मन उलट जगत सू अपना राम सँभाल ॥४॥<sup>१</sup>

## वीर रस

रामसनेही सम्प्रदाय का उद्भव और विकास वीरभूमि राजस्थान में हुआ । इन सतों की साधना का आदेश सती और गुर हैं । अतः वीतराग होने लिये भी इस शाखा के सतों की वाणी में प्रकारान्तर से वीर रस-युक्त चित्र यत्र-तत्र मिल जाते हैं । सामान्य रूप से वीर काव्य श्लोकों से इनकी विशेषता यह है कि इन्होंने स्थूल वीरत्व की अपेक्षा आन्तरिक गुरता का प्रधानता दी है । इनकी उत्साह व्यञ्जक उक्तिया मानसिक दृढ़ता से सम्बन्ध रखती है—

(क) गुरु नेम सिर टो प्रेम बगनर सुखदाई  
 राम नाम तखार ओट गुर ढाल सदाई  
 जान सुरग पर चो भडे चौगान विवाल  
 बजिया है रिण पेत नत हर हत सँभाने  
 जनम मोह जाते अवस तन मन सगुर वारसी  
 मूर भगत आकूर घुर राम मिलण के कारण<sup>२</sup> ।

(ख) भम जरु कम कू जान मिह भानिया  
 लोभ कू शीछि मतोप मर्या  
 काम कू बतल वरि शील सँठा भया  
 बाण वैराम्य के मोह हारया  
 गर्व गुम्मान विचार दाई ढाइया  
 क्रोध कू खोदि क्षमा उढाया

१ रामसनेही मतवाली, पृ० २१५-१६

२ दयानुदास की वाणी, प० सं० ५६६

मूरिवा जोध परबोध भान ली  
 अमल करि आपणे अरि उडाया  
 आन धक्कावता राम वू गानता  
 श्याम मन भावता चरण लागा  
 राम ही चरण अद नगर नौका बस्या  
 धम्या शिर काल का चोर भागा ।<sup>१</sup>

(ग) सूर चढ़े सग्राम को मा भ शक न बोय ।  
 आग अरुपे राम को होरी होय सो होय ॥<sup>२</sup>

प्रथम छंद में सूर लक्ष्मी भक्त द्वारा मोह रूपी शत्रु पर विजय प्राप्त करने के हेतु की जाने वाली तैयारी का वर्णन किया गया है, दूसरे में काया के भीतर सद्गुणों और दुग्ुणों के घमासान युद्ध का वर्णन है और अंतिम छंद में सूर के माहस और आत्मोत्सर्ग की प्रवृत्ति का परिचय मिलता है। इन छंदों में विभाव, अनुभाव और सवारी से पुष्ट वीर रस की निष्पत्ति भले न होती हो किंतु वीर रस-व्यञ्जक शब्दावली का सफल प्रयोग हुआ है। निगुणिया भक्ता से कम अधिक की आशा भी नहीं की जा सकती।

### वीभत्स रस

सांसारिक जीवन से घृणा उत्पन्न कर जीव को ईश्वरो-मुख करने के लिए इन सतों में रोग-शोक-जर्जर मनुष्य-जीवन के नाना जुगुप्सा-व्यञ्जक चित्र प्रस्तुत किये हैं —

(क) काया जाह्यू जो जरी रोग व्याधि भरपूर ।  
 नाना भांति क्लेष दुष तिर्पा भूष हज़ूर ॥  
 तिर्पा भूष हज़ूर रहे निद्रा जलसानी ।  
 भरे द्वार नव नरक सदा दुगधि की खानी ॥  
 रामचरण हरि भजन बिन पाई शिर पर धूर ।  
 काया जाह्यू जो जरी रोग व्याधि भरपूर ॥<sup>३</sup>

(ख) हाड नाम अरु रक्त मास की पोट र ।  
 भ्रात ओझ मल मूत्र भट्या मन खोट रे ॥  
 उपर किया स्नान धुपे नहि कम रे ।  
 परिहा रामचरण भज राम और तज भर्म रे ॥<sup>४</sup>

१ अणभेवाणी, पृ० १९३

२ रामस्नेही सतवाणी, पृ० ४३

३ अणभो विलास, उन्नीसवा प्रकरण छंद ४५

४ अणभेवाणी, पृ० ८४

- (ग) जीव बटाऊ रे बहता मारग माइ ।  
 आठ पहर का चलिना घडी इक् ठहरै नाइ ॥८॥  
 गरम जनम बालक भयो र तम्नाई गरवान ।  
 वृद्ध मृतक फिर गभ बसेरा तरा यह मारग परमान ॥१॥  
 पाप-पुण्य सुख दुख की करनी वेडी थार लागी पाय ।  
 पञ्च ठगा के बस मे पडो र कब घर पहुँचे जाय ॥२॥  
 चौरासी वासो तू बस्यो रे अपना कर-कर जान ।  
 निश्चय निश्चय होयगो र तू पद पहुँचे निर्वान ॥३॥  
 राम जिना तोको ठौर नही रे, जहँ जावै तहँ काल ।  
 जन दरिया मन उलट जगत सू अपना राम सँभाल ॥४॥<sup>१</sup>

## वीर रस

राममनेही सम्प्रदाय का उद्भव और विकास वीरभूमि राजस्थान में हुआ । इन सतों की साधना का आदर्श सती जीव दूर हैं । अतः वीतराग होते हुए भी इस शाखा के सन्तों की वाणी में प्रवारांतर से वीर रस-युक्त चित्र यत्र-तत्र मिल जाते हैं । सामान्य रूप से वीर का य लक्ष्यको से इनकी विशेषता यह है कि इन्होंने स्थूल वीरत्व की अपेक्षा आन्तरिक गूरीना की प्रधानता दी है । इनकी उस्ताह व्यञ्जक उक्तिया मानसिक दृष्टों से सम्बन्ध रखती है—

- (क) गुरु नम सिर टोर प्रेम बगनर सुखदाई  
 राम नाम तम्वार जोट गुर डाल मदाई  
 पान तुरग पर चढे मडे चौगान विवाल  
 कजिया है रिण पेत नत हर हेत सँभाने  
 जनम मोह जीत अबस तन मन सनगुर धारणै  
 मूर भगत आकूर घुर राम मिनण के कारणै<sup>२</sup> ।

- (ख) भम अरु कर्म कू जाल निह भानिया  
 सोम कू खोडि सतोप मार्या  
 काम कू कतल करि शील सँडा भया  
 बाण वैराग्य के मोह हार्या  
 गर्व गुम्मान विचार दोई डाइया  
 क्रोध कू खोदि क्षमा उढाया

१ राममनेही मतवाणी, पृ० २१५-१६

२ दयानुजाम की वाणी, प० स० ५६६

सूरिवा जोर परबोध मानै लहो  
अमल करि आपणे अरि उडाया  
आन धक्कावता राम कू गानना  
श्याम मन भावता चरण लागा  
राम ही चरण अब नगर नोका बस्या  
घस्या शिर काल का चोर भागा ।<sup>१</sup>

(ग) सूर चढे मगाम को मन मे शक न बाय ।  
आता अरु राम को होनी होन सो होय ॥<sup>२</sup>

प्रथम छ " मे गूर रानी भक्त द्वारा मोह रूपा घन पर विजय प्राप्त करने के हेतु की जाने वाली वैशारी का बणन किया गया है, दूसरे म बाया के भीतर सद्गुणों और दुगुणा के घमासान युद्ध का बणन है और अंतिम छन्द मे गूर के साहस और आत्मोत्साह की प्रवृत्ति का परिचय मिलता है। इन छन्दों में विभाव, अनुभाव और सवारी स पुष्ट वीर रस की निष्पत्ति मले न होता हो किंतु वीर रस-व्यजक शब्दावली का सफल प्रयोग हुआ है। दिगु गिया भक्ता स डगम अधिक को आसा भी नहीं की जा सकती।

### वीभत्स रस

सासारिक जीवन से घृणा उत्पन्न कर जीव को ईश्वरोमुख बनने के लिए इन सती ने रोग-शोक-जर्जर मनुष्य-जीवन का गाना बुगुप्सा-यजक चित्र प्रस्तुत किये हैं —

(क) काया जाखू जो जरी रोग व्याधि भरपूर ।  
नाना मांति क्लेष टुप तिपा भूप हज़ूर ॥  
तिपा भूप हज़ूर रहै निद्रा अलमानी ॥  
भरै द्वार नव नरक सदा दुगधि की स्वानी ॥  
रामचरण हरि भजन बिन पाइ शिर पर घूर ।  
काया जाखू जो जरी रोग याधि भरपूर ॥<sup>३</sup>

(ख) हाड चाम जरुस्त मास की पोट र ।  
घ्रात ओज मल मूत्र भट्या मन खोट र ॥  
उपर किया स्नान धुपै नहि कम र ।  
परिहा रामचरण भज राम और तज भर्म रे ॥<sup>४</sup>

१ अणभे वाणी, पृ० १९३

२ रामस्नेही सतवाणी, पृ० ४३

३ अणमो विलास, उन्नीसवा प्रकरण छन्द ४५

४ अणभेवाणी, पृ० ८४

(ग) देह भरी दुर्गंध बहै नव द्वार रे ।  
 चौको चूहो पोत कहे आवार रे ।  
 नर नारी का मास मदन मद पीवणा ।  
 परिहा, राम बिसार वृथा जग जीवणा ॥<sup>१</sup>

### अद्भुत रस

अद्भुत रस की अभिव्यक्ति साम्प्रदायिक साहित्य में वर्णित 'अगमदेश' तथा 'अगम पुरुष' के परिचय सम्बन्धी प्रसंगों में हुई है। दरिया साहब और रामचरण जी के निम्नांकित छंद उदाहरण रूप में प्रस्तुत किये जा सकत हैं —

(ग) बिन रसना गुण गाँधे बिन करि वाचे तूर ।  
 बिन श्रवणा अनहद सुणे जहाँ ब्रह्म सभा भरि पूरि ॥  
 जहाँ ब्रह्म सभा भरि पूरि और कोई नजरि न आवे ।  
 सुरत रही मठ छात्र दह तहाँ जाण न पावे ॥  
 रामचरण वा देस में बहुत प्रकासे सूर ।  
 बिन रसना गुण गाँधे बिन करि वाचे तूर ॥<sup>२</sup>

(ख) बिन पावन-गावन जने बिन मूरत परकान ।  
 चाँद बिना जहँ चदिना जन दरिया का वाम ॥  
 नौवत घाजे गगन म बिन वासन घन गाज ।  
 महल विराजे परम गुफ दरिया के महाराज ॥<sup>३</sup>

(ग) गान ही मङ्गल म एक अचरज भया ।  
 वपु पिना पुरुष इव रमत देखा ॥  
 पाँच ही लख सू रहित धो पुरुष है ।  
 गाँधि कोइ साँधि के रूप रमा ॥  
 अगम अगाध अनोल अम्मार है ।  
 धार नहि पार नहि गम्म लेखा ।  
 राम ही चरण वा देस म रम रह ।  
 उलटि नहि बहुर कोइ धरत भेला ॥<sup>४</sup>

इन छंदों में अगम देश और परम पुरुष के अद्भुत रसहय का जो वर्णन किया गया है वह रस के सभी उपादानों में समुत्तम न होने पर भी प्रस्तुत शतों की साधना

१ बहो, पृ० ८४

२ अणभेवाणी, पृ० १४१

३ अनुभवगिरा, पृ० ११४

४ अणभेवाणी, पृ० १९३

साय और की अनुभूति समग्र रूप में अद्भुत है। अतः इसका कहीं से कोई बणन किया जायगा तो वह अद्भुत होगा ही।

### प्रकृति-वर्णन

निगुणिया सन्तो की साधना पूरुत अतर्मुखी थी। उनकी वाणी में साधना-गत अनुभूति का ही विशद वर्णन प्राप्त होता है। प्राकृतिक सौन्दर्य को दसहर उष पर रामना और उस आलम्बन मान कर उसके सम्बन्ध में कुछ लिखना सन्तों की प्रकृति क मर्वया प्रतिबून था। उनकी वाणी में प्राकृतिक दृश्या के प्रसंग क्वल प्रह्य-निरूपण, उादेश और निरह वर्णन ने अवसर पर ही आय ह। कहीं-कहीं प्रकृति क स्वतन्त्र चित्र भी मिल जाने हैं। रामसनेही सन्तो के प्रकृति वर्णन का अध्ययन निम्नांकित चार शोधका में किया जा सकना है—आलम्बन रूप, उदीपन रूप, उादेश रूप तथा अप्रस्तुत-विधान रूप।

आलम्बन रूप में अभी हम कह चुके हैं कि साम्प्रदायिक साहित्य में प्रकृति क आलम्बन रूप का वर्णन प्राय नहीं के बराबर है। किन्तु इतने बड़े सम्प्रदाय और उसकी इतनी विशाल साहित्य परम्परा में दो चार छंदों का मिल जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। दरिया साहब द्वारा बणित मरभूमि का एक चित्र प्रस्तुत किया जाता ह —

जहा निजल धरता बहुत घूर।  
जहा सांकत बस्ती दूर दूर ॥  
प्रीम ऋतु में तपे भोम।  
जहा आतम दुखिया रोम रोम ॥१

वर्तमान समय के कवि प्रकृति के स्वनत्र रूप का वर्णन उक्त रूप से करके लगते हैं। पं० जसाहराम नलहस ने निम्नांकित पंक्तियों में वर्णन का वर्ण ही सजीव वर्णन किया है —

तरु तरु लगी बेल नवेली बधू यो सोढे,  
फूल हैं पुहप भृग भीर भननाटो है।  
जम्बरू कदम्ब फूल केवुक बगोक बन्द,  
शीतल मुग्ध मद वायु सननागे है ॥  
सर सरितान तार चातक चकोर मोर,  
शोर को मचावै मार चाप तननागे है ।

- (ग) देह भरा दुगन्ध बहै नव द्वार रे ।  
 चौको चूहो पोत कहै आवार रे ।  
 नर नारी का माम मदन मद पीवणा ।  
 परिहा, राम विसार वृथा जग जीवणा ॥<sup>१</sup>

### अद्भुत रस

अद्भुत रस की अभिव्यक्ति साम्प्रदायिक साहित्य में वर्णित 'अगमदेश' तथा 'अगम पुरुष' के परिवचय सम्बन्धी प्रसंगों में हुई है। दरिया साहब और रामचरण जी के निम्नांकित छंद उदाहरण रूप में प्रस्तुत किये जा सकते हैं —

- (क) बिन रसना गुण गार्हए बिन करि बाने तूर ।  
 बिन खवणा अनन्द सुणो जहाँ ब्रह्म सभा भरि पूरि ॥  
 जहाँ ब्रह्म सभा भरि पूरि और कोई नजरि न आवे ।  
 सुरत री मठ छाड़ देह तहाँ जाण न पावे ॥  
 रामचरण वा देव में बहुत प्रकासे सूर ।  
 बिन रसना गुण गाइये बिन कर वाजे तूर ॥<sup>२</sup>

- (ख) बिन पावन-गानरु जने बिन सूरज परवान ।  
 चान बिना जहें खादिना जन दरिया का बास ॥  
 नौवन बाजे गगन में गिन वासन घन गाज ।  
 महस विराजे परम गुरु दरिया क महाराज ॥<sup>३</sup>

- (ग) गान ही महल में एक अवरज भया ।  
 वपु बिना पुरुष दव रमत देसा ॥  
 पाँच ही तत्त्व सँ रहित वो पुरुष है ।  
 नाहि काइ साहि के रूप देना ॥  
 अगम अगाप अगोल अम्मान है ।  
 वार नाहि पार नाहि गम्म लसा ।  
 राम हाचरण वा दस म रम रट ।  
 उन्टि नाहि महुर कोइ धरत भवा ॥<sup>४</sup>

इन छंदों में अगम देश और परम पुरुष के अद्भुत स्वरूप का जो वर्णन किया गया है वह रस के सभी उपादानों में उद्युक्त न होने पर भी वस्तुतः छंदों की साधना

१ वही, पृ० ८४

२ अणभेवागी, पृ० १८१

३ अनुभवगिरा, पृ० ११४

४ अणभेवागी, पृ० १०३

साम्प्रदाय और की अनुभूति, समग्र रूप में अद्भुत है। अतः इसका कहीं से कोई बणन किया जायगा तो वह अद्भुत होगा ही।

### प्रकृति-वर्णन

निगुणिया सन्तो की साधना पूरुत अनसुखी थी। उनकी वाणी में साधनागत अनुभूतिया का ही विशद बणन प्राप्त होता है। प्राकृतिक सौन्दर्य को देखकर उस पर राम्यता और उस आलम्बन मान कर उसके सम्बन्ध में कुछ लिखना सन्तो की प्रकृति के सर्वथा प्रतिबूल था। उनकी वाणी में प्राकृतिक दृश्या के प्रसंग क्वल ग्रन्थ-निरूपण, उपदेश और विरह-वणन के अवसर पर ही आये हैं। कहीं-कहीं प्रकृति के स्वतंत्र चित्र भी मिल जाते हैं। रामसनेही सन्तो के प्रकृति वणन का अध्ययन निम्नांकित चार शीपको में किया जा सकता है—आलम्बन रूप, उद्दीपन रूप, उपदेश रूप तथा अप्रस्तुत-विधान रूप।

आलम्बन रूप में अभी हम कह चुके हैं कि साम्प्रदायिक साहित्य में प्रकृति के आलम्बन रूप का बणन प्रायः नहीं के बराबर है। किन्तु इतने बड़े सम्प्रदाय और उमका इतनी विशाल साहित्य-परम्परा में दो चार छंदा का मिल जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। दक्षिण साह्य द्वारा वर्णित मरुभूमि का एक चित्र प्रस्तुत किया जाता है—

जहाँ निजल धरती बहुत धूर।  
जहाँ साकिन बस्ती दूर दूर ॥  
श्रीष्म ऋतु में तपे भोम।  
जहाँ आतम दुखिया रोम रोम ॥<sup>१</sup>

वर्तमान समय के कवि प्रकृति के स्वतंत्र रूप का बणन उक्त रूप से करना लगभग ३। ५० उत्साहराम बसहस ने निम्नांकित पृष्ठिया में बसन्त का वणन ही सजीव वर्णन किया है—

तब तब लगी बेल नवेली बधू-या सो<sup>३</sup>,  
फूल हैं पृथ्वी भूग भीर भननागे है।  
अम्बुद बदम्ब फूले केवुक यशोक बन्,  
शीतल मुगध मन्द वायु सननाटो है ॥  
सर सरितान तार खतव खबोर मोर,  
शोर को मचावै मार चाप सननागे ३।

देखो चूँ और छाल जोर यो बसत जू को,  
गायक छतीम राग छायो धननाटो है ॥<sup>१</sup>

उद्दीपन रूप में शृंगार की संयोग और वियोग दोनों दशाओं में मानव-मन पर प्रकृति का बहुत प्रभाव पड़ता है। संयोग के क्षण प्रकृति के साहचर्य से मधुर हो जाते हैं। मलय समीर, शीतल चंद्रिका, वर्षा ऋतु, बस तागम के समय प्राकृतिक सौंदर्य में मंडित वनस्थली आदि प्रकृति में विविध उपादान गायक और नायिका के आकर्षण को द्विगुणित कर देते हैं किंतु वियोग की घड़ियों में सारा प्राकृतिक वातावरण विरही जन के वियोग जय दुःख को और भी उद्दीप्त करना है और वह उन्मत्त हो जाता है। रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में प्रकृति के भावोद्दीप्त वर्णन की-कही मिल जाने हैं। भक्त रूपी विरहिणी की विरह-भावना को वर्षा ऋतु की प्रकृति किस प्रकार उद्दीप्त कर देती है, पोद्दारदास वृत्त 'वारहमासे' की निम्नलिखित पक्तियों में देखिये—

आया माम असा अगम धन घोर की  
उपज्यो हरष हुलास पवइया मोर की  
कोयल मगनानंद बाग में सुप करे  
परिहा, फोकर नार राम बर बिन झुरे ।  
भादो वरमै मेह अघेरी रात रो  
बोज चमक धन गरज मोह बर पात रा  
परो अक्ली सेज पीर बति जावकी  
परिहा, फोकर को जाय कहै दुप पीव को ॥<sup>२</sup>

उपदेश रूप में हमारे अध्ययन युग के सत्ता को प्रकृति के मायम से उपदेश देने में पूर्ण सफलता मिली है। इन सत्ता को जब कोई उपदेश देना होता है तो वे परिस्थितियों के अनुकूल प्राकृतिक व्यापारों का उदाहरण कहकर बात को इस ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि वह सीधे हृदय तक पहुँच जाय। महाराम रामदास सरसग का उपदेश देने के लिए जल का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार निर्मल जल गंदे स्थान पर रहने से खराब हो जाता है और वहाँ से निकल कर गंगा में मिल जाने पर वह गंगाजल कहलाने लगता है, उसी प्रकार मनुष्य बुरे लोगों की संगति में बुरा और अच्छे लोगों के साथ रहकर अच्छा बन जाता है—

१ श्री दयानु दिव्य चरित, पृ० ४६-४७

२ पोद्दारदास की वाणी, पत्र, १२८

उजल पाती रामदास कुसगत विगडाय ।

निकस मिल्यो जाय गगा मे सवे गंगोदिक थाय ॥<sup>१</sup>

अलकार रूप में रामसनेही सता न अप्रस्तुत अथवा अलवार-विधान क माध्यम से भी प्रकृति-चित्रण का प्रयास किया है। विशेष रूप से सागर रूपक के उदाहरणों में इन सतों की मूक्षम निरोक्षण शक्ति का परिचय मिलता है। स्वामी रामचरण का एक दोहा देखिये—

काया तरुवर मन पथी लिया वसेरा आय ।

रामचरण वधे नही निसि बीता उडि जाय<sup>२</sup> ॥

इसी शैली में लिखा गया दयालुदास का एक छंद है—

माया नदी अयाह है आसा तिसन तरग ।

भरम भवर वेला विधन कामख गोह अनग<sup>३</sup> ॥

रामसनेही मना में अपना कृतिना में अनेक स्थलों पर उपमा<sup>४</sup> उदाहरण<sup>५</sup>, विभावना<sup>६</sup> आदि अलंकारों की योजना में भी प्रकृति को माध्यम बनाया है।

### समाज-वर्णन

सत साहित्य अन्तमूर्खी साधनागत अनुभूतियों का अक्षय कोष है। इस धारा के कवियों ने प्रबंध रचना के माध्यम से समकालीन जीवन की भांकी प्रस्तुत करने की चेष्टा कभी नहीं की। इसलिए उनकी कृतियों में तत्कालीन समाज के आचार-विचार, रीति रिवाज, रहन सहन और वेप-भूषण का क्रमबद्ध बखान नहीं प्राप्त होता, फिर भी लेखक जिस समाज में पैदा होता है, जिसकी मिट्टी में खेल-बूढ़ कर बड़ा होता है, जिसके अन्न जल से उसका पालन-पोषण होता है और उठन-बैठने, सोने जागते जिसकी बहुरंगी भांकी उसका आँखों के सामने अहर्निश उपस्थित रहती है, उसके हृदय पटल पर, उसकी एक अमिट छाप पड़े बिना नहीं रह सकता। ऐसी स्थिति में साहित्यकार समाज से कितना ही उदासीन क्यों न हो किन्तु

१ रामदास की वाणी, पृ० स० ३९

२ अणभेवाणी, पृ० २५

३ दयालुदास की वाणी, प० स ११२

४ जीव ब्रह्म का जस है -या रवि का प्रतिबिम्ब ।

— अणभेवाणी, पृ० ८

५ जैसे जब तजि कीचमै मोटक बैठे जाय ।

सूँ हरि सुख सागर छाडि के मन माया हूँ जाय ॥ — अणभेवाणी, पृ० ३०

६ बिना पेड तरुवर बिना पात छाया, बिना चत्रु मूवे जगम फल खाया ।

बिना पानि सरवर बिना नीर भरिया बिना भेष वर्षा अलट उदरिया ॥

बिना वाग बाडो फुल्या बन सरा, बिना घाट नदिमा बहै डारमारा ॥

— श्री रामसनेही धर्मप्रकाश, पृ० २११

उसकी रचनाओं पर उन युग की छाप अवश्य पढ़ जाती है। रामसनेही सम्प्रदाय का साहित्य अथ निगुण सम्प्रदायों की भांति समकालीन स्थिति के चित्रण से प्रायः विलत ही रहा है फिर भी वहीं-वही, विशेष करते 'परिचयो' साहित्य में, तत्कालीन लोक-जीवन की एक घु घली छाया अंकित हो गई है।

पौराणिक कथाएँ भारतीय सभ्यता के निर्माण में पौराणिक कथाओं का बहुत बड़ा योग रहा है। रामसनेही सत्ता ने गणिका, अजामिल, गज द्रोणी, द्रुव, प्रह्लाद आदि की पौराणिक कथाओं का वर्णन करते हुए भगवान की भक्तवत्सलता का गुणगान किया है।<sup>१</sup> कथाएँ ईश्वर व अवतार अथवा सगुण लीला से सम्प्रदाय रखती हैं। इसमें प्रगट होता है कि तत्कालीन लोक-मानस में सगुण भक्ति के लिए अयोग्यत अधिक स्थान था और शायद इसीलिए निगुण भक्ति के भीतर भी उनकी मापता बड़ जमाये हुई थी। दयानुदास विरचित 'कृष्णा सागर' नामक ग्रंथ में कदाचि ही कोई ऐसा प्रचलित पौराणिक कथा हो जिसका उल्लेख न हुआ हो।

पर्वोत्सव रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में पर्वोत्सवों का वर्णन अत्यन्त सूत्र मात्रा में हुआ है। इन सत्तों का एकमात्र साम्प्रदायिक पर्व 'फूलडोल' है। साधना में निगुण होनी का भी विधान किया गया है। उन साम्प्रदायिक साहित्य में जहाँ-तहाँ फूलडोल और होनी की चर्चा हुई है।

फूलडोल की विस्तृत चर्चा साम्प्रदायिक इतिहास के अध्याय में की जा चुकी है। यह रामसनेही सम्प्रदाय का एकमात्र त्योहार है। इस अवसर पर सम्प्रदाय के

१ (अ) विरटा निधान बहिया निज विरदा आप कर। टेक ।

अजामेल से अघ मारे अत पुत्र हत पुकार ।

सद गुण सुण ध्याय जमद्वता मारि छुडाये ॥

गजराज की सुणी वाणी सो ध्याये सारगपाणी ।

निज आगे चक्र चलाय गज ग्रह के दुख मिटाये ॥

आगे अघम अपारै सो अघ टर मुण्डि तारे ।

—श्री रामसनेह धर्मप्रकाश, पृ० १८४

(ब) राम बहुत गणिका निमतारी युग युग अघम उधारण कू ।

ऊच नीच की भ्राति न राखै शरणा की प्रति पानख कू ॥

—अणभैवाणी, पृ० ९९७

(स) भीर परी प्रह्लाद उत्रारे हिरण्यकशिपु हणताज ।

मा उपनश दिया ध्र व सेती अटल बसायो राज ।

टेर सुनत वेग हरि जाये तार लियो गजराज ।

जद द्रोणा का चीर बधारयो भई पचभरताज ॥

—रामसनेहधर्मप्रकाश, पृ० १४०

प्रधान पीठो पर सन्तो और श्रद्धालुआ की अपार भीड होती है और कई दिनों तक बडा आमोद-प्रमोद रहता है। भजन, कीर्तन और प्रवचन से सम्पूर्ण वातावरण मुखरित रहता है। सतदयालुदास इसने साम्प्रदायिक महत्त्व पर प्रकाश डालते हुये लिखते हैं—

फूलडोल भल समो जु आयो रामदास मन अति हर्षायो ।

नती उत्तमदास जिताई चार दरण भर भीर भराई ।

श्री गुरु दशन अति अधिकारी भोजन सद पकवान मिठाई ।<sup>१</sup>

होली रामसनही सौ ने निगुण होली का बडा सुंदर बखान किया है ।

यद्यपि यह होली घट के भीतर होना है और इसमें भाव के रग, सुमति को पिचकारी, सुबुद्धि के गुलाल, युक्ति की कशर तथा ध्यान के चग, मनसा के मृदग आदि वाद्यो का प्रयोग होना है फिर भी इसमें यह विदित होता है कि तत्कालीन समाज में स्त्री पुरुष दोनों बनी स्वच्छन्दतापूर्वक हो ही चलते थे। दोनों एक-दूसरे के ऊपर रग, अवीर, गुलाल, केशर आदि डालते थे। मृदग, चग आदि वाद्यो पर सामूहिक गान भी होता था।<sup>२</sup>

१ गुरु प्रकरण परची, पृ० ४४

२ (क) मन भावन आयो आमे रसियो राम रिझायो ।टेरा।

या तन की मटका दणाऊँ भावसो रग भरायो ।

सुमता की कर ल पिचकारी ज्ञान अवीर उढायो ।

प्रेम को रग बरसायो ॥१॥

मुरत निरत की ताल दजत है ध्यान को चग मढायो

मनसा की मृदग मनबो बजावे गुरु के बचन सोई गायो

मगुप्य तन मौसर पायो ॥२॥

सुबुद्धि गुलाल जुगत की केसर शील बदन छिटकायो ।

मृगमन् धोरि सत्तोप कटारी पियाजा सू खेल मचायो ।

दामा को चकर डुलायो ॥३॥

भक्ति मुक्ति का फगवा बटत है बिरले हरिजन पायो ।

जाके चरण की रज धर मस्तक सेवा दान जस गायो ।

रामजी को शरण सुहायो ॥४॥ ।

—निगुण भजनमाला, पृ० १३, छंद २१

(ख) मैं तो राम पिया मग खेलूगी होरी

साधु सगत मिल फागण आयो ज्ञान गुलाल उढोरी ॥टेरा॥

पाच सखी मिल खेलन निकसी आज बसत उढोरी ।

प्रेमनीर पिचकारी दिस सू छटत अमिट सजोरी ।

सूधो प्रीति बित्त को चदन केसर महिमा घोरी ।

तन बुदावन गोप ग्वाल मिल दशयो द्वार खुलोरी ॥

—निगुण भजनमाला, पृ० १०, छंद १२

विविध सस्कार रामछनेही सर्जों ने किसी लौकिक आयम्बन का आधार मान कर काव्य सजना नहीं की थी और यदि सद्गुरु-सत्त को परिचयी लिखने के माध्यम से उन्होंने व्यक्ति को महत्त्व भी दिया तो उनके जीवन की स्थूल परिस्थितियों की प्रायः उल्लेखा थी। इसलिए पर्वोत्सवों का भाँति इस सम्प्रदाय के साहित्य में सस्कारों का भी बहुत ही कम वर्णन हुआ है। जन्म नामकरण, विवाह और अर्घ्योत्सव जैसे कुछ प्रमुख सस्कारों के सम्बन्ध में कुछ बातें स्वाभाविक ढंग से यत्र आ गयी हैं।

**जन्म सस्कार** तत्कालीन समाज में जन्मोत्सव बड़ी धूम धाम और उल्लास से मनाया जाता था। पुत्रजन्मों के अवसर पर दाजे बजते थे। स्त्रियाँ मंगल गान करती थीं और नेगियों का अनेक प्रकार की धस्तुएँ पुरस्कार रूप में बाँटी जाती थीं।<sup>१</sup> किन्तु कन्या का जन्म तत्कालीन समाज में अभिशाप माना जाता था। लोग पैदा होते ही उसे मार डालते थे।<sup>२</sup>

**नामकरण सस्कार** आत्र की भाँति आलोक्य युग में भी ग्रह-नक्षत्र देखकर शिशु का नामकरण किया जाता था। यह काव्य परम्परा संचला जाता हुआ परिवार का ज्योतिषी, गुरु अथवा पंडित की सम्मति से सम्पन्न होता था।<sup>३</sup>

**विवाह सस्कार** विवाह सस्कार की बबल कुछ मोटी माटी बातों का उल्लेख मिलता है। इनमें सगाई, विवाह के अवसर पर होंगे वाले मंगल गान, पाणि-प्रक्षालन और दूल्हन को अर्घ्याङ्गिनी रूप में वाम भाग में बैठाने की क्रिया का नाम लिया जा सकता है।<sup>४</sup>

१ तहाँ आय लीहा अवनारा, प्रिया इकोतर किया उधारा ।  
मात रिता कू आनद पूरन, उनके कर्म किये सब चूरन ।  
गाजा बाजा द्वारे बाजे, घर मंगल बहु उत्सव साजे ॥  
नेगी नेग लेहि अधिकारि सब परिवार भई हवाई ।

—ब्रह्म संगाधि तीन योग, छन्द ९-११

२ जन्म कन्या मार दे चाहत मुत्त कुसलात ।

—दयालुदास की वाणी, उपदेश चैतावना को अंग (कुठलिया), छन्द १२

३ वष गुरु ने भटित आकर जन्म पत्र बना दिया ।

ग्रह योग विधि स दयानिधि शुभ नाम निश्चय कर दिया ॥

—दुल्हैचरितामृतम्, पृ० १२

४ जब मैं रही थी कन्या क्वारी तब मेरे करम हता फिर भारी ।

जब मेरी पिंड से मनसा दोड़ी सतगुरु आन सगाई जोड़ी ॥

सब मैं पिव वा मंगल गाया, जन्म मेरा स्वामी ब्याहन आया ।

हपलेवा दे बैठी सगा तब मोहि लीनी बामें अगा ॥

—अनुभव गिरा, पृ० १९२-९३

अन्त्येष्टि सस्कार साम्प्रदायिक साहित्य में अन्त्येष्टि सस्कार का भी वर्णन है। चिता तैयार करने में इधन, चदन, नारियल, मेवा, घी, खोपरा, पिस्ता आदि पदार्थों का प्रयोग किया जाता था।<sup>१</sup> श्मशान पर डोम को कर स्वरूप शव का कपन देने की प्रथा इस काल में भी प्रचलित थी।<sup>२</sup>

स्नान-पान रामस्नेही सता ने अपनी बाणी में राजस्थान में प्रचलित नाना प्रकार के खाद्य पदार्थों का उल्लेख किया है। साम्प्रदायिक साहित्य में दूध, मिठाई, लड्डू, सीरा, पकवान, पूरी, रोटी, दाल, चावल, मूग, घृत, आम, दही, मावा, लूदा, लपसी आदि का नाम अनेक बार आया है।<sup>३</sup>

१ इधन चदन अरु नारेला, चिता रचानी भारी।

मेवा घिरत खोपरा पिस्ता उत्तम जुगत्या सारा ॥

ऐसी विधि सू सिधि तन किरिया आप सदा तन पारी।

सहत बिमान अचभी वाता अग्नि धारणा धारी ॥

—राम पद्धति, छंद ३२

२ तब वहाँ के नेगी महतर बोले आशा धारी मनसा डोले।

ये मुर्जा हमारी सारी सो पोसाल तुम क्यू न उतारी ॥

—ब्रह्म समाधि लीनयोग, छंद १८७

३ (अ) क्षीर हूँ मिठाई लाहू सीरो पकवान पूरी,

चावर शकर मूग घृत करि चाव से।

जैसा विधि बहूत रसाल गुरु देव जूकू,

सुन्दर परोमे प्रीति भाव के प्रभाव से ॥

—श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश, पृ० ३६०

(ख) दही दूधपीवे आय लाहू चूर माहीं खाय।

—वही पृ० १६५

(ग) अमल कटोरा गालते मावा भरि-भरि लेह।

—वही पृ० ६५

(द) खावै लूदा लपसी करे आन कू भीत।

—रामदास की वाणी, पृ० ६५

(य) बड़ो घिरत रोटी खाय, सोवै नोद हौ अष्वाय।

चावल खाय चगा माल साईं बिना भूढो ह्वाल ॥

—श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश पृ० १६६

(र) गाहूँ दाल घिरत सब लाये।

—गुरु प्रकारण परची, पृ० २८

तरकालीन समाज में मान, मदिरा, अफीम, भाग और तमाखू का भी प्रयोग किया जाता था ।<sup>१</sup>

धर्म रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में वर्णित समाज की धार्मिक स्थिति यही ही शोचनीय थी । समाज नाओं, बनफटा, शाक्तो, चौवा, सरावगिया, वैरागियों, कापानिकों, अवधूतो, जगमो तथा दिग्भरों द्वारा प्रचारित बाह्याचारो में बुरो तरह फँसा हुआ था ।<sup>२</sup> कहने के लिए रामानंद, निंबाक, महावाचय, विष्णुस्वामी और दादूदयाल के अनुयायी पृथक्-पृथक् थे किन्तु मूलतः सब पथ भ्रष्ट होकर एक ही मार्ग पर चल रहे थे ।<sup>३</sup> अपने दैनिक जीवन में वे गाने बजाने, नाचने-झूमने, कुश्ती लड़ने, हुस्का और गाजा पाने, अफीम खाने, चिमटा, छुरा, कुल्हाड़ी लेकर नगरो में भीख माँगने तथा वेश्या गमन में जाकूठ मगन थे ।<sup>४</sup>

देवी देवता और धार्मिक विश्वास साम्प्रदायिक साहित्य में वर्णित समाज में बहुदेवोपासना अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी । निगुण राम के अनिरिक्त दशरथ राम<sup>५</sup>, द्रष्ट<sup>६</sup>, गोरी<sup>७</sup>, भेत्तान<sup>८</sup>,

- १ मास हू खाय पीवै मद्य ह्वैगो मरद ही गरद ।  
पीवै पोस्त ही को लाय, पीत मिद ही को खाय ॥  
पीवै तमाखू अरु भग जावै नाच जूणा सग ।

—श्री रामसनेह धर्मप्रकाश पृ० १६६

- २ द्रष्टय, अणभेवाणी, पृ० ६८६-७ (लच्छ अलच्छ योग)
- ३ चोडा टीका साजै गुरु रामानंद का बाजै ।  
निम्बावत महावाचारा ये विष्णु स्वामि जटारागी ।  
कोई निरजन मत का गिन टीका दादूपय का ।  
सब आर आर को टोलो ये ठठग ठीगा ठोली ।  
य आम्हा साम्हा जूके कोइ साब मनो नहिं सुके ॥

—लच्छ अलच्छ योग, छंद ४-६

- ४ द्रष्टव्य अणभेवाणी, पृ० ९८६-८७ (लच्छ अलच्छ योग)
- ५ रामपिता दशरथ न्है तो होय जगम का हाणि ।

—अणभेवाणी, पृ० ५०

- ६ राधा देखै नाचकी कृत देखे काह ।  
रामचरण ताहि दान दे अथा इसू अगान ॥

—अणभेवाणी, पृ० ६५

- ७ गोरि पूजि अरु तीज मनावै ।

—वही, पृ० ६६

- ८ सपने ईं शिव ना मिले पूजे खेतराल ।

—दयालुदास की वाणी, प० ४० ६६

शक्ति<sup>१</sup>, ब्रह्मा, विष्णु, महेश<sup>२</sup> आदि अनेक देवी-देवताओं में लोग सामान्य रूप से विश्वास करते थे। 'दुइज' पूर्णिमा के दिन तथा माघ और कार्तिक मसान में भी लोग पूजा आस्था रखते थे।<sup>३</sup> भूत-प्रेत, यक्ष-रक्ष, डाकिनी शाकिनी की पूजा गढी यद्धा से की जाती थी।<sup>४</sup>

हस्तरेखा में विश्वास सामुद्रिक शास्त्र में लोगों की अगाध आस्था था। आज की भांति उस समय भी हस्तरेखा विचार करने वाले जहाँ-तहाँ घूमन रखते थे<sup>५</sup> और लोगों को भाग्य पत्र बताकर अपनी जोबिका चलाने थे।

वेप-भूषा और शृंगार-प्रसाधन इस सम्प्रदाय के सतों में तत्कालीन समाज में प्रचलित वेप भूषा, आभूषण और नाना प्रकार के शृंगार प्रसाधनों की भी चर्चा की है। दयालुदास ने स्त्रियों के द्वारा अंग-प्रयोग में धारण किये जाने वाले रत्न जटित आभूषण तथा बहुमूल्य वस्त्रों का उल्लेख करते हुए पोडस शृंगार का उल्लेख किया है।<sup>६</sup> उस समय राजस्थानी स्त्रियाँ जगतियों में मुद्रिका, हाथ में बगल, कान में कुडल और कण्ठ, नाक में रत्न जटित बेसर और नथुनी तथा गले में हारों की माना पहना करती थी।<sup>७</sup> वे वाला की सदा कर आनन्दक बनानी थीं।

१ मेरी मूँ मेरी मिली माता पूजण हार। —बही, पृ० ६७

२ विष्णु ब्रह्मा शिव आदि पारंपद पोडस वस्त्र। —सतमाल (दयालुदास), पृ० २

३ पुन चरत तीरथ देव पूजा पुन स दुज कू पूजई।

अरु मान काती मास हावत समे पुन गत मूँ अई ॥

—गुरु प्रकरण (दयालुदास), छंद २०१

४ भूत प्रेत को जावन हार। जतर मतर भ्रष्ट बुहारा।

डाकिनि शाकिनि वीर जगती एसी सिद्ध जगत पूजावै ॥

—गुरु प्रकरण परची, पृ० ७७

५ ऊर्ध्व रेख जो चत्र दवाई ये कुण है ग्रह में बयु भाई।

इनके ग्रहनिर्वेद करारो राम भजन करि होइहै पारो ॥

—ब्रह्म समाधि लीन योग, छंद १५-१६

६ भूषण वन अंग-जा हीर चीर राजही।

पोडस सिंगार सवन कू रख पाजही ॥

—गुरु प्रकरण, छंद ४११

७ (क) नरु बेमर शोभा नासिका अर कुण्डल शोभा कान।

—रामरसायण बोध पाचवा प्रकरण, छंद ५८

(ख) पलव पच मुद्रिका सदक लाल सोवरो

ककन बधचूर सा मनोज पासा देपरा

करनकुल वृत्त ग्राह जोय ताम दपरो

नासक नथ छवि गत जयैनी दिखावही

कठहार माल जर तरणी तरसहीक

—गुरु प्रकरण परची, छंद १२६ २७

और माग को मोनिया से सजाती थी ।<sup>१</sup> लखाट पर (लान और काले) रग की बँदी देन की प्रथा थी ।<sup>२</sup> इसके अतिरिक्त सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में कुकुम, कपूर, चोवा चन्दन जैसे सुगन्धित पदार्थों का भी प्रयोग किया जाता था ।<sup>३</sup>

पुरपा की वेप-भूषा का विस्तृत वर्णन तो इस सम्प्रदाय के साहित्य में नहीं मिलता किन्तु कहीं कहीं उनके द्वारा पहने जाने वाले कुछ वस्त्रों का नाम अवश्य आ गया है । इनमें जामा, पगड़ी और लगेट प्रमुख हैं ।<sup>४</sup>

वाद्य एवं नृत्य राजस्थानी समाज में विवाह, जम, पव, त्योहार आदि मांगलिक अवसर पर विविध प्रकार के वाजों का प्रयोग किया जाता था जिनमें झालर, बीणा, मृदंग, सहनाई, बासुरी, भेरी रणसिंगा करनाल, चग, उपग, मजोर, ढोल, मोहचक्र, घु घरू, दमामा और नौदत विशेष उल्लेखनीय हैं ।<sup>५</sup>

गुरु का आतिथ्य मध्ययुगीन समाज गुरु से अपार श्रद्धा रखता था । गुरु का ईश्वर रूप माना जाता था । गुरु के आतिथ्य की तैयारियाँ बड़े धूमधाम से की जाती थी । घर की सफाई, पग-पग पर चौर पूरना घर में रग विरपी चित्रकारी

- १ पाटी अक्षित शीश श्याम नागणी पमोनद ।  
माग स्वार भुगताज बेस रस यो सद ॥  
ता विचे कुकुम राज त्रिवेणी सगम ॥

—वही, छंद ४२३ २८

- २ सोभिषत विद का बुदन रग ईस एक ।

—वही, छंद ४२४

- ३ (ज) करै सिनान मजन सुगद जग रच एक ।

—वही छंद ४२२

(ब) श्रान्ती सुगन्धि वरतु अनूप मृग मद हरि च दन पोत रूप ।

कुकुम कपूर मुकाशमीर चोवा चंदन कबीर ॥

—श्री रामस्नेहधम-काश, पृ० ३५९

- ४ रामस्नेहा नृतवाणी, पृ० १४७

- ५ धार अनहद की गगन गिरणाइया होत बहू सोर नहि कहत आवै ।  
झालरो बीण मरदंग सहनाईया बासुरी तान झणकार लावै ॥  
भेरी रणसिंग करनाल बबया बजे चग अरु उपग गति करत यारी ।  
एक इक नाद भ राग नाना उठै मधुर स्वर मधुर स्वर चलत भारी ॥  
मजोरा मान धधकार घोलक करै गिहगिडी राग माह चग बाज ।  
रुण म्रुण रुणम्रुण नृत्य ज्यु घुघरु घटा टकोर ध्वनि अधिक गाजै ॥

—अणभैवाणी, पृ० १६२

तथा कलश सजाना जादि तैयारी के आवश्यक अग ये । आने पर उहे परिक्रमा देकर प्रणाम किया जाता था ।' आरती की जाती थी, पद पखार कर चरणोदक भी लेने की प्रथा थी ।<sup>१</sup> गुरु का सोने के लिए रेशमी गद्दा, तकिया, चद्दर आदि से सजे हुए मुद्दर पत्रग दिये जाने थे ।<sup>२</sup>

### कला पक्ष

सत कवि 'कला कला के लिए' क भिन्नात म विश्वास करने वाले नहीं थे । काव्य रचना उनका साध्य नहीं, साधन मात्र था । अपना सर्वस्व गँवाकर जिस तरह का अवेपण उन्होंने किया था, जिस सत्य की अनुभूति उन्हें हुई थी, उसी को चिरतनता प्रदान करने के अभिप्राय से उन्होंने काव्य का सहारा लिया, किन्तु उसे सुन्दर और सुगन्धिपूर्ण बनाकर अपन कला-नपुण्य का परिचय देने की चेष्टा उन्होंने स्वप्न में भी नहीं की । वस्तुतः शाब्दिक चमत्कार प्रदर्शन उनकी प्रकृति के प्रतिकूल था । रामसनेही सम्प्रदाय में भी अनेकानेक 'विद्वान् और सशक्त वाणीकार सत हो चुके हैं किन्तु प्रकृत्या वे वाणी के शृङ्गार और अलंकरण क प्रति सदा उदासता से । फिर भी यत्र-तत्र अनुभूतियों की सघनता की स्थिति में इनकी वाणी अलंकारों की नैसर्गिक छटा में स्वतः विभूषित हो गई है। मुहावरा और लोकोत्तियों के सहज प्रयोग से भाषा में एक चमक आ गयी है और प्रतीकों, दृष्टिदृष्टा एवं उलटवासियों के कारण पास्क का मान इसकी ओर आकृष्ट हो जाता है ।

### अप्रस्तुत-विधान

अप्रस्तुत विधान अभिव्यक्ति का बड़ा ही सशक्त माध्यम है । यह कविता की कोई आवश्यक शत नहीं बरन् सम्प्रेषणीयता के लिए उपयोगी है । अपनी धारणा है कि समथ कवि भावा का विम्ब ग्रहण कराने के लिए प्रथमतः अभिधारक भाषा का प्रयोग करता है कि तु जब उसका काम नहीं बनता तब उसे लक्षणा, व्यञ्जना शब्द-शक्तियों के साथ ही अप्रस्तुत विधान की आवश्यकता पड़ती है । यह स्थिति काव्य-

- १ पुन दे प्रकमा चल सिर घर वीनती मुख उचर ।  
धिन भूर भावन सरव पावन आसन विध अनुसरे ।  
पधराय छूप सदीप बहुविध आरती विधविध करे ।  
मव चरवि चदन अग लपत तिलक सिर मस्तक धरे ।  
कर अष्ट पुयक सकल शोभन कर रज परसन भये ।

—गुरु प्रकरण, छं ६७१-७२

- २ द्रष्टव्य, गुरुप्रकरण परची, पृ० ४१ ४२ ।

रचना और व्यावहारिक जीवन दोनों में एक जैसे है। हम बातचीत में भी अप्रमत्त विधान करते हैं और अनेक बार वह किसी महाकवि से कम प्रभावशाली नहीं होती है।

रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में भी अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में अप्रमत्त विधान हुआ है। साम्प्रदायिक साहित्य में नीचे कुछ नमूने उद्धृत किये जाते हैं।

### उपमा

- (क) सब घट व्यापक राम है ज्युं अपनी मे नार<sup>१</sup> ।  
 (ग) जन हरिया सनगुरु इमा जैसा होय सोहार ।  
 सन जोहा ज्युं ताव दे काट न रागण हार<sup>२</sup> ॥  
 (घ) सनगुरु एगा रामदास जैगा मूर प्रकाश ।  
 रास अज्ञान मिटाइ कर अंतर करे उजाण<sup>३</sup> ॥  
 (ङ) शब्द प्रह्लाद द्विरे किया बाण ज्युं रण अरि प<sup>४</sup> प्रकाश<sup>५</sup> ।

उपर साम्प्रदायिक साहित्य में उपमा अंतर्कार के कृतिये उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। इनमें स्वल्प पर विचार करने से यह प्रतीत होता है कि इनका प्रयोग अंतर्कार प्रशसन के उद्देश्य में नहीं बरन् अभिव्यक्ति को अधिक-धिक स्पष्ट और घोषणमय बनाने के लिए किया गया है। मानसोपमा को एक उदाहरण दिये —

भासकद विधान न राजक पूरण वस्य रह्यो भरपूर ।  
 मूर्धर मार, भरुयो गृधर हा दारक मूर्धि पावक पूरा ॥  
 है न प गुहुर जिमी मपि सन गुह मग हाप महे सन पूरा ।  
 रामपरण नरे गहरी विह नू बरणा प्रकाश मूरा<sup>६</sup> ॥

सपके गुहा का गर्मत्रिय अंतर्कार अर्थ है। उनमें अधिकांश अर्थों में उदाहरण गुहुर जिमी, पारमपति या पितृ वगैरे में प्रस्तुत किये गये हैं। दूसरे उदाहरण

- १ अन्धशाली, पृ० ७
- २ श्री रामनेही सम्प्रदाय, पृ० २६
- ३ कही, पृ० १८७
- ४ राम प्रदाय (रामचरण), पृ० २०
- ५ रामचरण, पृ० ८७

मे हम कह सकते हैं कि सन्तो के रूपक प्रायः सावयव है। इनके द्वारा आयोजित रूपको की दूसरी विशेषता यह है कि कवि प्रसिद्धियों का सहारा न लेकर इन्होंने बहुधा उपमानों का चुनाव लोक-जीवन से किया है। नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं —

(क) दिल सागर दरियाव है हुसा मेरा जोव ।

मोती निरमल नाव है चुग वैठा निज थीव<sup>१</sup> ॥

(ख) तन दीपक मन तेल भरि जीव पतगा जेम ।

पावक रूपी राम है हरिय लाया प्रम<sup>२</sup> ॥

(ग) काया तख्तर मन पछी निया बसरा आय ।

रामचरण बधे नहीं निवि बीता उडि जाय<sup>३</sup> ॥

(घ) नारि नदी अरु रूप जल जो बहै अपरबल धार ।

सो निरखि-निरखि पडि-पडि बटै जे विपई ससार ।

जे विपई ससार मोह की भवर दवावै ।

दब्या उकसै नाहि दुखित नर देह गुमाव ॥

कोई राम भजन बल उबरै दूरा पकड करार ।

नारि नदी अरु रूप जल बहै अरबल धार<sup>४</sup>

च—जान का बचव वैराग की खाग कर टोप गुरुदेव शिर दस्त मेल्है ।

उसो सो राति सूं जीति जग दूखा राम ही चरण सुख माहि खेले<sup>५</sup> ॥

सतों ने कभी-बभी अध्यवसित रूपक की भा योजना की है। इस प्रकार के रूपकों में रूपातिशयोक्ति की भाति केवल उपमाना का ही कथन किया जाता है। दरिया साहब का इसी प्रकार का एक योग परक रूपक नाचे दिया जाता है।

मुरली कौन वजावै हो गगन मटल के बीच ।टेक।

त्रिकुटो सगम होयकर गग जमुन के घाट ।

या मुरली क शब्द से सहज रचा वैराट ॥

गग-जमुन विच मुरली बाजे उत्तरदिनि मुन होहि ।

वा मुरली की टरहि सुन-मुा रही गोविदा मोहि ॥

१ रामदान की बाणी, पृ० १६

२ श्री रामःनेह धर्मप्रकाश, पृ० ५८

३ अणभे बाणी, पृ० २५

४ समता निवास पृष्ठ प्रकरण, छन्द ८२

५ रामरसायण बोध, पंचम प्रकरण, छन्द ६२

जहा अपर डाली हसा ध्रुगत मुक्ता हीर ।

बानद चकवा केल करत है मान सरोवर तोर<sup>१</sup> ॥

विभावना जब कारण के बिना ही कार्य हो जाता है तो विभावना अलकार होना है । रामस्नेही-साहित्य में अगम-देश वगुण प्रसंग में प्रयुक्त विभावना अलकार के कुछ उदाहरण लीजिये—

(क) बिना पह नखर बिना पात छाया ।

बिना चन्द्र सूवे अगम फल्ल खाया

बिना पात सरवर बिना नीर भरिया

बिना मध बवा अपड इन्द्र भरिया<sup>२</sup>

(ख) जह जल बिन कबला ब<sup>३</sup> अन त जह बपु विनु भौरा गुज करत ।

अनहद बानी जह अगम खेल, जह दीपक जरे बिन बाती तेल<sup>४</sup> ॥

विरोधामास जब दो विरोधी पदार्थों का समोच एक साथ दिखाया जाता है अथवा जाति, द्रव्य, गुण और क्रिया के द्वारा उनका समोच में परस्पर विरोधी काय होता है तो विरोधामास अलकार होता है । साम्प्रदायिक साहित्य में एक उदाहरण नीचे दिया जाता है —

माया जिसकू मारिया से माया क मित<sup>५</sup> ।

उदाहरण

दरिया सगत साध को सहजै पालै भृङ्ग ।

जैसे सग मजोठ के कपडा होय मुरङ्ग<sup>६</sup> ॥

तद्गुण

लोह काना भीतर कठिन पारन परसे घोय ।

उर नरमी अति निरमला बाहर पीला होय<sup>७</sup> ॥

अन्योक्ति

दरिया छुरी कमाव की पारन परसे आय ।

लोह पलट कवन भया आमिष भखा न जाय<sup>८</sup> ॥

१ रामस्नेही सतवाणी एव भजन संग्रह, पृ० २१७

२ श्री रामस्नेह धर्म प्रकाश, पृ० २११

३ रामस्नेही सतवाणी, पृ० २०७

४ रामदानकी वाणी, पृ० स० २८

५ श्री रामस्नेही सतवाणी, पृ०

६ वही, पृ०

७ वही, पृ०

## स्वभावोक्ति

सूर न जाने कामरी सूरतन स हत ।  
पुरजा पुरजा ह्वै पडै तू न छाडै धेत<sup>१</sup> ॥

यत्र-तत्र उदाहरण, दृष्टांत, काव्यलिङ्ग, अप्रस्तुत प्रशंसा आदि जलकारों के उदाहरण भी मिल जाते हैं ।

शब्दालंकार शब्दालंकारा म केवल अनुप्रास ही ऐसा है जो सन्त साहित्य में सर्वाधिक प्रयुक्त हुआ है । काव्य में शब्दालंकार वस्तुतः शब्द-चमत्कार के उद्देश्य से प्रेरित समझा जाता है किन्तु रामसनेही सन्तो ने इसका प्रयोग चमत्कार की दृष्टि से नहीं वरन् सगीत और लय का विधान करने के लिए किया है । इसीलिए उन्होंने केवल अनुप्रास की योजना की । कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

### छैकानुप्रास—

(क) सुरराज जहा बज आसन जो ।

जन जानत ताहि विनाशन जो ॥

निधि बाठ निराटन चाहि क्यू ।

नव निद्धि सुनिद्धि हू त्याग सबू<sup>२</sup> ॥

(ख) धरिया नहि धारूँ अपर अधारूँ ।

महजा रोव करदा है<sup>३</sup> ॥

(ग) हृष्ट न मुष्ट न अगम है अति ही करडा काम<sup>४</sup> ।

(घ) मुत्त निरत परचा भया अरख परस मिल एक ।

जन दरिया बानक बना, मिट गया ज-म अनेक<sup>५</sup> ॥

### चतुर्त्यनुप्रास

(क) धीर धीर गम्भीर भीर हूर राम है ।

निराकार निरधार सार नहकाम है<sup>६</sup> ॥

१ यही, पृ०

२ अणभो विला, नवम् प्रकरण, छंद २७

३ धपर निताणी, छ० १६

४ अनुभव गिरा, पृ० १६३

५ वहाँ, पृ० १२०

६ अणभोविलास, चतुर्थ प्रकरण, छ० २८

(ख) मात न तान न भ्रात सुत स्या न गुदरि साय ।

हरिया जाती एकलो करि बोनाऊ हाथ<sup>१</sup> ॥

(ग) दयाल ठपान समान करे, जिय भाल कराल विचाल रहे ।

जठराल उचाल गुणान मरे नम नामि न भाल रसाल भवे<sup>२</sup> ॥

रामस्नेही सम्प्रदाय के वाणिकार सन्तों की अप्रस्तुत योजना की समीक्षा करते हुये हम यह निवेदन करना है कि उनके उपमान प्रायः सौं जीवन से ग्रहीत हैं। अपनी अपरोक्षानुभूति को जन जन तक पहुँचाने के लिये लोक भाषा और लोकानुभूति पर आधारित अप्रस्तुत योजना से अधिक कारणर साधन दूसरा हो ही नहीं सकता था। सन्ता की वाणी लोक-वाग्म के निकट है इसलिये इसका मूल्यांकन करते समय इस बात को दृष्टि में रखना आवश्यक है। सत भावनादाय और १० उत्साहराम की वाणी में काव्य शास्त्रीयता का निर्वाह और कवि परिपाटी का पालन हुआ है किन्तु इन्हे अपवाद स्वरूप मानना चाहिये।

### प्रतीक योजना

किसी गुह्य अथवा दार्शनिक विषय का विवचना करने समय जब मनुष्य का भावा अपने सहज रूप में विषय को पूर्णतया नहीं समेट पाती और उस अभिव्यक्त करने में अयमर्थ हो जाती है तब उस विवश होकर विषय में प्रवृत्तिगत साम्य रखने वाले लोक प्रचलित रूपा का सहारा लेना पड़ता है। अभिव्यक्ति के इन्हीं प्रयोगों को साहित्यिक भाषा में प्रतीक कहते हैं। प्रतीकों के माध्यम से विषय को सर्वग्राह्य बनाने की प्रणाली का प्रचलन भारत में बहुत प्राचीन काल से रहा है। 'बृहदारण्यकोपनिषद्' में ब्रह्म का निरूपण सूर्य, चंद्र आदि प्रतीकों से किया गया है।<sup>१</sup> एक स्थान पर उसमें परमात्मा की रहस्यमयी अनुभूति को प्रियतमा के गाढालिगन के प्रतीक से समझाया गया है। उसमें कहा गया है कि जिन प्रकार गाहस्थ्य जीवन में अपनी प्रिया द्वारा गाढालिगित पुष्य को बाहर भीतर का कुछ जान नहीं रह जाता, उसी प्रकार परमात्मा द्वारा आलिगित साधक को भी बाहर भीतर का कुछ ज्ञान नहीं रह जाता।<sup>२</sup> हमारा अध्ययन युग के सन्तों ने इसी पद्धति पर आत्मा परमात्मा के सम्बन्ध को वास्तव्य और दाम्पत्य भाव के प्रतीकों में समझाने का प्रयत्न किया है।

वास्तव्य भाव के प्रतीक में भक्त भगवान् के गम्भुष उसके पुत्र के रूप में उपस्थित होता है। वह अपने को हर प्रकार से अलग रखने हुए आत्ममर्षण कर

१ श्री रामस्नेही धर्मप्रकाश, पृ० ६६

२ कवणासागर (श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश, पृ० ३०५)

३ बृहदारण्यकोपनिषद्, २।१

४ वही ४।३।२१

दता है। इस समर्पण क मूल मे भक्त का उपास्य की शरणागत-वत्सलता म हृद विपवास निहित रहता है। महात्मा हरिदेवदास जगद्गिता राम के चरणा म अपने को अर्पित करते हुय कहते हैं —

राम राम मैं हूँ बालक तेरा पिता ज तुम ही मोरा। टेका  
मैं बालक मति भोर रहे सर बह मही जानू काई।  
दीन बंधु देव हम शिशु मति आन विरद निरव। ई।  
सेवा साज न जानू साहिव है मति हीन हमारी।  
करिहो अबे मुझे माहि करता सो हूँ रजा तुमारी।  
मैं तो बान बेलि सग राता का तो मन गृह मोहा।  
कातो असन वार वस्त्रादिक य उर सदा ममोहा ॥  
तुम भो पिता मुझे हरिनीका मैं मति भोर अजाना।  
जानू नही बछू हम काई तुम ही श्याम सुजाना ॥  
मैं मति हीन किया अति औगुण तुम ना गिनो दयाला।  
कह हरिदेव पिता हरि सुनि-यो बाल करो प्रतिपाला ॥<sup>१</sup>

इसी प्रकार एक पद मे हरिरामदास ने 'चाकर और 'ठाकुर' क प्रतीक स दाम्य भाव की व्यञ्जना की है और अपने को सर्वतोभावेन भगवान की इच्छा पर छोड़ दिया है। उन्हें पूण विश्वास है कि 'हरितस्वर की छाई प्राप्त कर लेने पर वे भवात्प से बच जायेंगे —

भाघव वा चाकर मैं हूँ हो।  
आदि अत मधि नाम तुम्हारी, पार उतारण ते हूँ हो। टेका।  
मैं दुनिया काटे दारिद्री तरे कमो न काई।  
दीन बंधु दाता सब ही का भाग पारपति पाई ॥  
तीन लोक का ठाकुर तुम ही और किसी को जानू।  
तुम हरता तुम ही करता नाव नचावो नाहूँ ॥  
का तो देश दिशतर डोनु का बैहूँ घर माही।  
डिगमिग मिटे नही अब जिव की कारज सरे न काही ॥  
जो मैं वास करूँ बन-वन म मनबो रहण न पावै।  
घर मे धका धूम बहुतेरी कहुँ कैने वनि आवे ॥  
मुक्ति औगुण का छेह न काई मुक्ति गुणवता साई।  
जन हरिराम कहे जहा राखी, हरितस्वर की छाई ॥<sup>२</sup>

१ श्री रामस्नेह धमप्रवाण, पृ० १८३

२ वनी, पृ० १५५



इन सयोग चित्रों की ही भाँति वियोग की अनेक स्थितियाँ के अंकन में भी प्रतीकों की सहायता ली गई है। दयालुदास का विरह-निवेदन इसी पद्धति पर हुआ है।

विरहिनि कू दरशन दीजे साहिव अपनी कर लीजे ॥टेर॥  
 मैं राम पिया बलिहारी प्रभु भेटो तपन हमारी ।  
 दुक दया दृष्टि भर देखो जीवा ने तारन लेखो ॥  
 जिय जम-जम को भूरे, आशावत आशा पूरे ।  
 हरि आइ विरद विचारो, अब पलका पलक पधारो ।  
 मोहि श्वास कल्प मम जाये कब प्रीतम दरघ दिखावे ।  
 जन छाल बाल बलि जावे, कब राम पिया घर आवे<sup>१</sup> ॥

सम्बन्ध मूलक प्रतीकों के अतिरिक्त रामसनेही साहित्य में इडा, पिंगना, सुपम्ना, मूलाधार, सहस्रार, ब्रह्म रज आदि के लिए प्रयुक्त गंगा, यमुना, सरस्वती, सूर्य, चंद्र, गगनमण्डल आदि पारिभाषिक तथा गुण, तत्त्व और प्रकृति के लिए 'तीन', 'पाँच' और 'पचीस' जैसे मर्यादाचक प्रतीकों का प्रयोग भी हुआ है। काव्यशास्त्र से पूणतया अभिनव होने के कारण इन सतों की प्रतीक-योजना कहीं-कहीं त्रुटिपूर्ण हो गयी है, किंतु ऐसे स्थल बहुत कम हैं। प्रतीक अधिकतर लोक जीवन से संचित किये गये हैं इसलिए शास्त्रीय दृष्टि से दोषपूर्ण दिखाई पढ़ने पर भी जहाँ तक साधारणीकरण अथवा रस निष्पत्ति का सम्बन्ध है उनकी योजना असंगत नहीं कही जा सकती।

### उलटवासी

उलटवासीयों की परम्परा कितनी प्राचीन है निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। ग्रन्थ-साधक के आधार पर हम इस परम्परा को ऋग्वेद से जोड़ सकते हैं। ऋग्वेद में उलटवासी का पद्धति पर आधारित एक रहस्यरमक कथन इस प्रकार है —

चत्वारि ऋ गा त्रयोऽम्यपादा द्वे शार्पे सप्त हस्तासो अस्य  
 निष्ठा बद्धो नृपभोरोरुवीति महादेवो मय आविदेश<sup>२</sup> ।

(अर्थात् इस बैन के चार सींग तीन पैर, दो निर और सात हाथ हैं। यह तीन प्रकार से बंधा हुआ अत्यंत शक्ति करता है। इस महान् देव ने मत्स्यों के बीच प्रवेश किया।)

लोक जीवन में भी इस प्रकार की रहस्यमूलक उलटवासीया प्रचलित हैं। गाँव के लोग आज भी सायंकाल में दिन भर का थकान से विराम लेते समय बच्चों के

१ श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश, पृ० २३२

२ ऋग्वेद, ४।५।८३

साय अनेक उलटवासियां जिन्हें वे 'बुझीबल या बुझनी' कहते हैं, बूझते और बुझाते हैं। इस प्रकार की एक बुझनी है —

हम हम हमहीं जुवाठी वाय परहीं।

याप पूत पटे में नानी गयल गवहीं॥

उलटवागियों के ऐतिहासिक विकासक्रम के अनुशीलन से विदित होता है कि बौद्ध सिद्धो, नाथ योगियों और सात्विकों द्वारा विरचित साहित्य में यह ऐसी व्यापक रूप में धरनाई गई थी और इन्हीं से यह निर्गुण मन्तों की रचय रूप में प्राप्त हुई है। अब प्रश्न यह है कि यह परम्परा वेदों से अनुस्यूत होकर आगे बनी अथवा लोक-जीवन से? कुछ विद्वानों ने इसका सम्बन्ध वेदों से बताया है। इस मत की समीचीनता पर सहृष्टा विषयान नहीं किया जा सकता क्योंकि विद्वो, योगियों और सत्तो पर लोक-जीवन का जितना प्रभाव है, वे लोक परम्पराओं के जितने निवृत्त पद्धत हैं, उतने वेद उपनिषद्दि के नहीं। ससृष्ट भाषा और साहित्य के प्रबल विरोधी सिद्धा के सम्बन्ध में, जिन्होंने अपने सिद्धांतों की विवेचना के लिए भी ससृष्ट को नहीं अपनाया, इस प्रकार की बात निराधार जान पड़ती है। मेरी समझ में वेदां और सिद्धांतों द्वारा सृष्टित उलटवासियों का मूल स्रोत एक ही है और वह है लोक जीवन में प्रचलित पहेलियों अथवा बुझीबल की अनादिकाल से चली आती हुई परम्परा।

कबीर आदि पूर्ववर्ती निर्गुण सन्तों के नाम से अनेक उलटवासियां प्रचलित हैं। परवर्ती सत्ता में यह प्रवृत्ति बहुत कुछ दब सी गई थी। पराम्परा पालन के लिए जहाँ-तहाँ इस प्रकार के एकाध पदों की रचना कभी कभी होती रही। रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में भी इस प्रकार के पद यत्र-तत्र मिल जाते हैं।

कुछ विद्वानों की धारणा है कि योग-साधनातगत प्रत्याहार की स्थिति में साधक ससार से परवर्तित हो जाता है। अतः उसे ससार के सारे काय व्यापार उलटे दिखायी पड़ने लगते हैं। आध्यात्मिक चेतना के इस धरातल पर पहुँचने के बाद साधक के काश्य-व्यापार लोकदृष्टि से उलटे हो जाते हैं। इसीलिये जब वह अपनी साधनानुभूति को शब्दों में बाँधता है तब लोग उसे उलटवासी कहने लगते हैं। उनकी धारणा है कि उलटवासी के प्रतीकों की समझ सेने के बाद पाठक को ब्रह्मानन्द सटोत्र की प्राप्ति होती है। किन्तु अधिकांश विद्वानों ने उलटवासियों को वाय सौ दय के नाम से कना का निवृष्टतम विलास माना है, क्योंकि इनकी सजना अभियक्ति को रहस्यमय बनाने के बौद्धिक प्रयास स हुई है और बौद्धिक प्रयास जय कला उच्च कोटि की नहीं हो सकती। दूसरी बात यह है कि यदि हम उलटवासियों के प्रतीकों पर विचार करें तो यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि वे अधिकतर परम्पराभुक्त और प्रायः एक से हैं। अतः उनमें सौ दय बूझना व्यर्थ ही। हमारे अध्ययन क्षेत्र

के साहित्य में इस प्रकार के पद अधिक नहीं हैं। दरिया साहज की एक उलटवासी लीजिये—

साधो एव अचभा दीठा ।  
 कडुवा नाम कहै सब कोइ, पीवै जाको मीठा ॥ टेक ॥  
 बूँद के माही समुंद समाना राई मे परबत डोलै ।  
 चीटी के माही हस्ती बैठा घट मे अवटा ओलै ॥  
 कूडा माही सूर समाना चंद उलट गया राह ।  
 रास उलट कर तार समाना भ्राम मे गगन समाऊ ॥  
 जिन के भीतर अग्नि समाना राव रक बम बोने ।  
 उलट कपाल तिल माहि समाना नाऊ तराजू तोलै ॥  
 सतगुरु मिले तो अथ बतावै जीव ब्रह्म का मेना ।  
 जन दरियाव जो पद को परसै सो है गुरु में चेला<sup>१</sup> ॥

### दृष्टिकूट

उलटवासियों में कुछ मिलती-जुलती एक शैली और है जिसे दृष्टिकूट कहते हैं। कुछ विद्वानों ने दृष्टिकूट और उलटवासियों को एक ही माना है। या तो उलटवासी और दृष्टिकूट दोनों का सम्बन्ध भाषा-चमत्कार से है किन्तु दोनों में कुछ मौलिक अंतर है। उलटवासियों में अर्थ-विपर्यय आवश्यक रूप से होता है जबकि दृष्टिकूट में अर्थ सम्बन्धी विपरीतता कहीं नहीं देखी जाती। कबीरदास की उलटवासी और मूरदास के दृष्टिकूट विपर्यय दो पद नीचे दिये जाते हैं जिनकी तुलना से उलटवासी और दृष्टिकूट का अंतर स्वतः स्पष्ट हो जायगा।

उलटवासी—एक अचभा दखा रे भाई, ठाढ़ा सिंह चरावै गाई ॥ टेक ॥  
 पहले पूत पीछे भई माड चेला के गुर लागे पाई ॥  
 जल की मछली तरवर ब्याई पकडि बिलाई मुरगे खाई ॥  
 बैलहि डावि घूनि धरि आई कुत्ता कुं ले गई बिलाई ।  
 तलि करि सापा ऊपरि करि मूल बहुत मांति लागे जड फूल ।  
 कहै कबीर या पद को बूझै ताकूँ तीयूँ त्रिभुवन मूर्खे<sup>१</sup> ॥

दृष्टिकूट—बहन कत परदेसी की बान

मन्दिर अरध आवन हरि बदि गये हरि अहार चलि जात ।  
 सनि रिपु बरप सूर रिपु जुग बर हर रिपु की हो घात ।  
 मय पचक लै गयो साबरी जान अति अनुलान ॥

१ अनुभवगिरा पृ० १८९-९०

२ कबीर प्रभावली, पृ० ६१-६२

नखत वेद ग्रह जोरि अर्घ करि सोई बनत अय खान ।

सूरदास यस भई विरह के कर मीने पछितात<sup>१</sup> ॥

राममनेही सम्प्रदाय के सन्तों में स्वामी रामचरण ने अपने 'दृष्टांत सागर' नामक ग्रन्थ में महात्मा सूरदास की भाँति दृष्टिकूट शैली का अनुसरण किया है। इससे यह प्रकट होता है कि इस ग्रन्थ का प्रणयन करने समय स्वामी जी के मस्तिष्क में पारिष्ठत्य प्रदर्शन की भावना कार्य कर रही थी, क्योंकि कूट शैली कवि के भाषा-धिकार और वाग्विदग्धता का परिचायक है। कथन की पुष्टि के लिए कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं —

भूमि डसन रिपु तास रिपु ता सिल पर असवार ।

ता सुत वाहन ज्यूँ किरै काछ लपट ससार<sup>२</sup> ॥

( भूमि डसन = उदेई । रिपु = मुर्गा । तासु रिपु = दिल्ली । सिल = सिंह । असवार = भवानी । तामुत = भैरव । वाहन = कुत्ता । अर्थात् कामी ससार कुत्ते की भाँति भटकता है । )

मान सुता सुत तास रिपु ता पतिसुत आधार ।

हेम सुता पति भावतो सो तजिये नईं लगार<sup>३</sup> ॥

( मान सुता = मानमरोवर की मुता अर्थात् सीप । सुत = मानी । रिपु = हृष । पति = ब्रह्मा । सुत = नारद । आधार = राम । हेम सुता = पार्वती । पति = शंकर । भावन = राम । अर्थात् नारद और शिव के आराध्य राम को एक क्षण के लिए भी मत भूलो । )

### भाषा

संत कवियों की भाषा को विद्वानों ने सघुवाड़ी हिन्दी के नाम से अभिहित किया है। पूर्ववर्ती सन्तों के लिये यह बात कुछ हद तक सत्य है क्योंकि कबीर आदि अम्युदय कालीन सन्तों की भाषा हिन्दी, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं के साथ ही खड़ी बोली, अवधी, भोजपुरी, पंजाबी, मारवाड़ी आदि अनेक बोलियों का मिश्रित रूप है। राममनेही सन्तों की भाषा के सम्बन्ध में हम ऐसा नहीं कह सकते। साम्प्रदायिक साहित्य राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात और दिल्ली के विभिन्न भागों तथा ब्रजभूमि के आस-पास निर्मित हुआ। जत हिन्दी प्रदेश के इन विभिन्न क्षेत्रों के भाषाओं का उस पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। इस सम्प्रदाय के वाणी साहित्य में प्रयुक्त भाषाओं की विवेचना आगे की पक्तियों में की जायगी।

१ सूरसागर—दूसरा खंड, (ना० प्र० सभा), पृ० १५८५

२ दृष्टांत सागर, छंद १५

३ वही, छंद ८०

संस्कृत अपनी व्याकरणगत दुरुहता और लोक-जीवन से दूर होने के कारण इसकी सन् क बाद का संस्कृत साहित्य केवल परिणतों के शास्त्राय का विषय रह गया था। उसका पढ़ना-पढ़ाना द्विजातियों में भी इन-गिने लोग तक सीमित रह गया। उच्च वर्ग की भाषा होने के कारण इसमें शनै-शनै निम्न जातियों के प्रति अनुदार भावनाओं का सन्निवेश हो गया। इसकी प्रतिप्रिया स्वरूप सत्तो ने जिनमें अशिक्षित निम्न जाति के थे संस्कृत का घोर विरोध किया। किन्तु सत्त साहित्य के अनुशीलन से विदित होता है कि बाद में इन सत्तो में भी एक विशेष प्रकार की संस्कृत भाषा का प्रचार हुआ जिसे न तो शुद्ध संस्कृत कह सकते हैं और न हिन्दी ही। यह अनुस्वारात्त होती है। विद्वानों ने इसे सधुक्कड़ी संस्कृत कहा है। इसका प्रयोग केवल मात्र और स्तुति की रचना में किया गया है। कहना न होगा कि इस प्रकार की सधुक्कड़ी संस्कृत का प्रयोग 'रासो और 'गोरखवानी' में भी हुआ है। अतः निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इसकी परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। हमारे अध्ययन युग के साहित्य में इस सधुक्कड़ी संस्कृत का बहुत प्रयोग हुआ है। रामसन्ही सम्प्रदाय में मात्रों का प्रचार तो नहीं है किन्तु यज्ञ स्तुति, गुरु महिमा तथा गुरु वन्दना के प्रसङ्ग में भाषा का प्रयोग किया गया है। हरिरामदास की 'वधर निसाणी' इसी भाषा में लिखी गई है। नीचे सत्त दयालुदास विरचित 'हरिरामदास के महिमाष्टक' में इस भाषा के दो छन्द उदाहरणार्थ दिये जाते हैं—

सतन सब गाय एक बतार्य धिन सो ध्याय पद पाय ।  
 उलट न आय जुरा न खाय गभ न जाय मिट काय ॥  
 साहित्य तुम साय मिले वषाय धिन-धिन धाय विस्तार ।  
 गुरु हमार रत ररकार निरकार जिय निरकार ।  
 एक तत्र अष्ट मिटे दुल्लष्ट सोई स्पष्ट सब सष्ट ।  
 अष्ट पुनि दृष्ट गावत नष्ट कहे घट तष्ट एकष्टम् ॥  
 वेद पति रष्ट मुरता चष्ट अत एकष्ट सिचकारम् ।  
 गुरु हमार रत ररकार निरकार जिय निरकारम् ॥

साधना और धर्म के अध्याय में हम कह चुके हैं कि इस सम्प्रदाय में अब उच्च वर्ग वालों का बोल-बाला हो गया है। निम्न जाति के लोगों को अब इसमें शिष्य रूप में स्वीकार नहीं किया जाता। द्विजातियों की प्रेषानता होने से सम्प्रदाय में अब संस्कृत के भी अच्छे जानकार और उच्च कोटि के विद्वान् होने लगे हैं। अतः जहाँ-तहाँ गुरु वन्दना आदि के कुछ श्लोक विशुद्ध संस्कृत में भी मिल जाते हैं। नमूने के लिए एक श्लोक नीचे दिया जाता है —



अभिव्यक्ति में तो इसका निखरा हुआ साहित्यिक रूप भी मिल जाता है। भावनादास विरचित निम्नलिखित कवित में ब्रजभाषा की छटा देखने योग्य है —

कासी सुखरासी ढिग देव तटिनी के तीर,  
वसत निगसी माया पासी न परू गौ में,  
वसन कोपीन ओर विभव विहीन सब,  
जोरि कर दोनो सीस घरनी धरू गौ में,  
आये त्रिपुरारि गौरानाय ह त्रिनैन हर,  
हृजिए प्रसन्न ऐसी बानी उचरू गौ में,  
काहू से न लेन देन आनन्द के ऐन ऐसे,  
कबै दिन रैन को निमेष से करू गौ में ॥१॥

गुजराती गुजरात भी रामस्नेही सम्प्रदाय के प्रभाव-क्षेत्र में पड़ता है। इसके फलस्वरूप साम्प्रदायिक साहित्य पर गुजराती का पर्याप्त प्रभाव परिलक्षित होता है। माधवदास नामक शाहपुरा शाखा के एक सन्त ने तो रामचरण का जीवन वृत्त विशुद्ध गुजराती भाषा में लिख डाला है। इस ग्रंथ से कुछ पंक्तियाँ नीचे दी जाती हैं —

आज कलियुग मा परचा दीया स्वामी जी शाहपुरा वैकुंठ धाम छे ।  
रामस्नेही नु पवित्र धाम स्वामी शाहपुरा वैकुंठ धाम छे ।टेर ।  
सत्तर स मे छोहत्तर नी साले महासुदि चौदस ने शनिवार ।  
सोडा नगर देश हू दार स्वामी जी ये लीधो अवतार ॥२॥

अवधी यो तो हमारे अध्ययन युग के सन्तों का अवधी से कोई लगाव न था किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि 'मानस' और 'पद्मावत' के देशव्यापी प्रचार ने राजस्थान में विकसित इस निगुण मत के अनुयायियों को भी आकृष्ट किया। महात्मा भाषानाथ अवधी को भाषानिबन्धना का साधन बनाने का लोभ स्वरण न कर सके। उन्होंने भागवत एकादश स्कंध की छद्मद्वय टीका इसी (अवधी) भाषा में 'रामचरित' 'मानस' की भाँति दोहा-चौपाई आदि छन्दों में लिखी है। नीचे उनके कुछ छन्द दिये जात हैं। इनमें ठेठ अवधी का रूप दर्शनीय है —

करहू बहुरि आनन्द छुत बदन साधु समाज ।  
जेहि प्रसाद बति अगम छोउ सुगम होन सब काज ॥  
में मलीन कलि मल प्रसित प्रवृत्ति मूढ़ मति हीन ।  
एकाग्र भाषा मनित विवरन चाहट कीन ॥

१ भट्टहरि शतक (अनुवादित), पृ० ९९

२ श्री फूलडोल उत्सव, पृ० ४० ४१

सुर वानी नर वानि मैं जदपि करन नहिं जोग ।  
तदपि सबन सुख बोध हित प्रावृत्त रचहिं प्रयोग ॥  
जान सिधु यह गहन गति अति दुस्तर अवगाह ।  
करहु किमपि एहि अर्थ तोउ निज मति सब निर्वाह ॥<sup>१</sup>

खड़ी बोली रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में खड़ी बोली के स्फुट प्रयोग भी यत्र-तत्र देखने को मिल जाते हैं। उदाहरणार्थ कुछ पंक्तियाँ नीचे उद्धृत की जाती हैं —

सतगुरु होय दयाल दया मोहिं कीजिये ।  
जीव पलट होइ हस सोही बुधि दीजिये ॥टेक॥  
काम क्रोध मद लोभ मोह ममता तजो ।  
पच्छिर विषै विकार राम रमता भजो ॥  
राग दोष अहकार कि दुबध्या त्यागिये ।  
साच शील सतोष दया दिशि जागिये ॥<sup>२</sup>

कहना न होगा कि उपर्युक्त पद में 'कीजिये' दीजिए' 'तजो' भजो' 'त्यागिये' और 'जागिये' क्रिया पद खड़ी बोली के हैं। हमारे अध्ययन-युग में खड़ी बोली धीरे-धीरे सास लेने लगी थी। उद्भू साहित्य के विकास के साथ साथ इसकी स्थिति भी प्रौढ हो चली थी। अतएव रामचरण ऐसे सिद्धहस्त सत कवियों की वाणी में खड़ी बोली के प्रचलित शब्द रूपों का पाया जाना सर्वथा स्वाभाविक है।

## रेखता

यह खड़ी बोली के साथ फारसी शब्दों के मेल से निर्मित एक भाषा है। इसने साहित्य की नाँव मुहम्मदशाह रवीले (१७१६-१७४८) के दरबार में पड़ी थी। बली की लोकप्रिय गजलों की भाषा दकनी को लचर बताकर दिल्ली के फारसी कवियों ने एक नवीन शैली के रूप में इसका प्रवर्तन किया था। हमारे अध्ययन युग का प्रारम्भ मुहम्मदशाह और बली के समय में ही होता है। दिल्ली इस सम्प्रदाय के प्रचार-क्षेत्र में पड़ता है, यह भी सर्वविदित है। इसीलिए रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य पर इस भाषा का बहुत प्रभाव है। रामचरण के शिष्य पोहकरदास तो रेखता के पूर्ण ज्ञाता थे। नीचे उनके द्वारा लिखी गई कुछ पंक्तियाँ दी जाती हैं —

रहम रव दिल रहम रव दिल रहम रख दिल मार रे ।  
कहर मत कर कहर मत कर कहर है बदकार रे ॥टेक॥

१ श्री मद्भागवत एकादश स्कंध भाषा टीका, पृ० १

२ अणभेवाणी, पृ० १००४-५

होवेगा इनकाफ तेरा साई के दरवार रे ।  
रहम सँ ख दाद देी कहूर वे काहार रे ॥<sup>१</sup>

महात्मा रामचरण ने रखता भापा का व्यवहार उदू के रखता छद म  
किनती सफलतापूर्वक किया है यह इन पक्तियों में देखा जा सकता है —

वैराम की चाल का स्थाल वारीक है एक फारक फक्कीर बाहूँ ।  
मबर की जिकर सब फिकर पैसन करे कहूर तज महर दिल मोम सा हूँ ॥  
रैण दिन आपणे ह्वाल मस्तक रहे खलक सँ पलक नहि प्रीति धारे ।  
अकल इवतार विस्तार करि बदगी होय निस्तार ससार पारे ॥  
छाडि घरवार ये धार सो फकर है और कटि फटक फज्जीत होई ।  
राम ही चरण इक उदर के वास्ते आगली पादमी दोम खोई ॥<sup>२</sup>

## मुहावरे

मुहावरा किसी बोली या भाषा में प्रयुक्त होने वाला वह अरूण वाक्य-खण्ड है जो अपनी उदात्तता से समस्त वाक्य को सबल मजबूत, रोचक और सुस्त बना देता है । ससार में मनुष्य ने अपने लोक व्यवहार में जिन-जिन वस्तुओं और विचारों को बड़े कौतूहल से देखा, समझा और बराबर उसका अनुभव किया उन्हीं को अपने शब्दों में बाँध दिया है । वे ही मुहावरे कहलाते हैं ।<sup>३</sup> वस्तुतः भाषा को यो<sup>४</sup> शान्ता में प्रवृत्त करना मुहावरों का काम है ।

इस प्रकार भाषा को मजबूती शक्ति प्रदान करना और अभिव्यक्ति को मर्म-स्पर्शी बनाना मुहावरों का एकमात्र धर्म है । राममनेही सम्प्रदाय का साहित्यिक मुहावरों की नैसर्गिक सुपमा से मण्डित है । उदाहरण के लिए कुछ मुहावरों नीचे दिये जाते हैं —

- (१) सरपा दूध पिलाइयो पीया टूवा जेर ।<sup>५</sup>
- (२) किरपा कीजे बाप जी पकड हमारी बाप ।<sup>६</sup>
- (३) रानी रही मुसकाय याल छत्रु दर गहेण गत ।<sup>७</sup>
- (४) रेत की भीत से हूँ दिन दोयक ।<sup>८</sup>

१ पोहकरदास की बाणी (गुटका), पृ० सं० १२०

२ अणभैवाणी, पृ० २००

३ त्रिपथगा, अक्ष ६ (माच १९५६) पृ० ३०-राममनेश त्रिपाठी का निरघ

४ रामदास की बाणी पृ० सं० ७२

५ वही, पृ० सं० ७२

६ गुरु प्रकरण (दयानुदास), छद ८१५

७ अणभैवाणी, पृ० ६४

- (५) मुल मल मूँ भर जाय ।<sup>१</sup>  
 (६) मन कू पूठा केरिये ।<sup>२</sup>  
 (७) रामदास घोषी कुत्ता भटक भटक दुख पाय ।  
 (८) कागद केरी नाव चढ कैसे समद तिराय ।<sup>३</sup>

### लोकोक्ति

लोकोक्तियाँ अनुभव सिद्ध ज्ञान की निधि हैं । मानव ने युग-युग से जिन तथ्यों का साक्षात्कार किया है उनका प्रकाशन इनके माध्यम से होता है । ये चिरकालीन अनुभूत ज्ञान के सूत्र हैं । समाग रूप में चिरसाक्षित अनुभूत ज्ञान राशि का प्रकाशन इनका प्रधान उद्देश्य है ।<sup>४</sup> आलोच्य सम्प्रदाय के साहित्य में कहीं कहीं पर लोकोक्ति की छटा भी दशनीय हो गयी है । उदाहरणार्थ कुछ लोकोक्तियाँ नीचे दी जाती हैं —

- (१) जाके उर उपजी नहि भाई सो का जाने पीर पराई ।<sup>५</sup>  
 (२) मल सेती जो मल को घोवै सो मल कैसे छूटे ।<sup>६</sup>  
 (३) आवा गाम बबूल लगावै सो नर आब कहो बपूँ खावै ।<sup>७</sup>  
 (४) ऊँधी है दुकान जामे फीके पकवान भरे ।<sup>८</sup>

### सगीत-योजना

भारतीय सस्कृति में नाद को ब्रह्म रूप माना गया है इसीलिए समस्त भक्ति-साहित्य में सगीत को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । जयदेव कृत 'गीत गोविन्द' के पद विभिन्न राग रागिनियों में विभक्त हैं । बौद्ध सिद्धों की चर्चागीतिकाओं में भी अनेक रागों का समावेश हुआ है । नामदेव, कवीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि सभी भक्त कविता की रचनाएँ राग एव ताल के आधार पर वर्गीकृत दिखाई पड़ती हैं । कहने की आवश्यकता नहीं कि सगीत में मन को रमाने की अभूतपूर्व शक्ति है । मनुष्य तो चेतन प्राणी है जब पदार्थ भी सगीत के प्रभाव से द्रवीभूत हो जाते हैं । कहा जाता है कि भैरव राग के प्रभाव से कोल्हू स्वयं चलने लगता है, श्री राग के प्रभाव से सूखा

१ मुखविवास, तृतीय प्रकरण, छंद ७०

२ रामदास की वाणी, पत्र २५

३ रामदास की वाणी, प० पृ० ४१

४ लोक साहित्य की भूमिका डा० उपा याय, पृ० १८५

५ अनुभव गिरा, पृ० १६७

६ रामस्नेही सतवाणी, पृ० २१३

७ समता निवास, अष्टम प्रकरण छंद ८२

८ अणभै वाणी, पृ० १००

चुग हरा हो जाता है, हिंडोल राग के कारण भूला स्वयमेव भूजने लगता है, मेघराग से अचानक वृष्टि होने लगती है और मालकोप राग पत्थर को भी मोम की भाँति पिघना देता है ।<sup>१</sup>

रामसनेही सम्प्रदाय के वाणी-साहित्य में पदा का विभाजन राग आशा, राग पीलू, राग कालिगडा, राग विहाग, राग दस, राग दरवारो, राग काफी, राग विभास राग सावनी कल्याण, राग रामकली राग भूपानी, राग भैरवी, राग त्रिवेनी, राग केदारा, राग नट विलावल, राग गौड डारग, राग ललित, राग काफी, राग बधावा, राग सोरठ, राग गरवी, राग प्रभाती, राग मगल, राग काहूडा, राग हेली, राग गवडी, राग महार, राग गौडी, राग घनाश्री, राग बडहन, राग जैतश्री आदि न जाने कितने रागों में किया गया है । इन रागों में विभिन्न प्रकार के ताल भी निर्दिष्ट हैं जैसे ताल तीन ताल, ताल दीपचंदी, ताल कहरवा, ताल तिताला गुड़, ताल चचरी गूड, ताल चचरो विलावल, ताल तिनाल सोरठ, ताल तिताल पचम, ताल तिनाल भैरव आदि ।

उपयुक्त विवेचन से यह प्रकट होता है कि इन सतों को संगीत के शास्त्रीय पक्ष की विधिवत् जानकारी थी । इस कथन की पुष्टि उन समय स्वयमेव हो जाती है जब हम देखते हैं कि अनेक सतों ने अपने पदों में जिस राग का प्रयोग किया है, उस राग की प्रकृति और उसके गाये जाने के समय की दृष्टि में रखते हुए विषय का प्रतिपादन किया है । उदाहरणार्थ भैरवी, ललित, विभास, रामकली जैसे रागों में सरगम का आरोह-अवरोह उह गभीरता प्रदान करता है । ये राग दिन के प्रथम प्रहार में गाये जाते हैं अतः मजन के लिए बहुत ही उपयुक्त प्रमाणित होते हैं । इसी प्रकार केदारा और सोरठ की प्रकृति हल्की सी करुणा और दद से युक्त है । मलार और गौरी की प्रकृति शृङ्गार के लिए उपयुक्त है । मारु ओज प्रधान राग है । कल्याण राग आत्म निवेदनार्थक प्रसंगा के लिए ठीक है । प्रभाती जागरण बेला का राग है ।

ध्यातव्य है कि बहुत से सतों की वाणी में उपयुक्त वाता का ध्यान रखा गया है । उदाहरणार्थ दो पद नीचे दिये जाने हैं जिनमें क्रमशः माधुय भाव के वियोग पक्ष और निद्रा त्याग कर जागने का घणन किया गया है—

### सोरठ

विरहिनि कूँ दरसन दीजे साहित्य अपनी कर लीजे । टेक।

मैं राम पिया बलिहारी प्रभु भेटो तपन हमारी ।

दुःख दशा दृष्टि भर देखो जीवाने तारन लेखो ॥

- (५) मुख बल मूर् भन जाय ।<sup>१</sup>  
 (६) मन कू पूठा केरिये ।<sup>२</sup>  
 (७) रामदास धोबी कुत्ता भटक भटक दुल पाय ।  
 (८) कागद केरी नाव चढ़ केसे समद तिराय ।<sup>३</sup>

## लोकोक्ति

लोकोक्तियाँ अनुभव सिद्ध ज्ञान की निधि हैं । मानव ने युग युग से जिन तथ्यों का साक्षात्कार किया है उनका प्रकाशन इनके माध्यम से होता है । य चिरकालीन अनुभूत ज्ञान के सूत्र हैं । समास रूप में चिरसावित अनुभूत ज्ञान राशि का प्रकाशन इनका प्रधान उद्देश्य है ।<sup>४</sup> आलोच्य सम्प्रदाय के साहित्य में कहीं कहीं पर लोकोक्ति की छटा भी दशनीय हो गयी है । उदाहरणार्थ कुछ लोकोक्तियाँ नीचे दी जाती हैं —

- (१) जाके उर उपजी नहि भाई सो का जाने पीर पराई ।<sup>५</sup>  
 (२) मल सेती जो मल को धोवे सो मल कैसे छूटे ।<sup>६</sup>  
 (३) आवा गाम बबूल लगावे सो नर आव कहो बधूँ खावे ।<sup>७</sup>  
 (४) जँची है दुकान जामे फीके पकवान भरे ।<sup>८</sup>

## संगीत-योजना

भारतीय सस्कृति में नाद को ब्रह्म रूप माना गया है इसीलिए समस्त भक्ति-साहित्य में संगीत को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । जपदेव वृत 'गीत गोविन्द' के पद विभिन्न राग-रागिनियों में विभक्त हैं । बौद्ध सिद्धों की चर्यागीतिकाओं में भी अनेक रागों का समावेश हुआ है । नामदेव, कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि सभी भक्त कवियों की रचनाएँ राग एवं ताल के आधार पर वर्गीकृत दिखाई पड़ती हैं । कहने की आवश्यकता नहीं कि संगीत में मन को रमाने की अभूतपूर्व शक्ति है । मनुष्य तो चेतन प्राणी है जड़ पदार्थ भी संगीत के प्रभाव से द्रवीभूत हो जाते हैं । कहा जाता है कि भैरव राग के प्रभाव से कोल्हू स्वयं चलने लगता है, श्री राग के प्रभाव से मूला

- १ मुखविनास, तृतीय प्रकरण, छंद ७०  
 २ रामदास की वाणी, पत्र २५  
 ३ रामदास की वाणी, प० स० ८१  
 ४ लोक साहित्य की भूमिका डा० उपा याय, पृ० १८५  
 ५ अनुभव गिरा, पृ० १६७  
 ६ रामस्नेही मतवाणी, पृ० २१३  
 ७ समता निवास, अष्टम प्रकरण छंद ८२  
 ८ अणभे वाणी पृ० १००

श्रुण हरा हो जाता है, हिंडोल राग के कारण भूला स्वयमेव भूलने लगता है, मेघराग से अचानक वृष्टि होने लगती है और मालकोप राग पत्थर को भी मोम की भांति पिघना देता है ।<sup>१</sup>

रामसनेही सम्प्रदाय के वाणी-साहित्य में पदों का विभाजन राग आशा, राग पीतू, राग कालिंगदा, राग विहाग, राग देव, राग दरबारा, राग काफ़ी, राग विभान, राग सावनी कन्याण, राग रामकली राग भूपाली, राग भैरवी, राग त्रिवेनी, राग केदारा, राग नट विलावल, राग गौड़ छारग, राग ललित, राग काफ़ी, राग दधावा, राग सोरठ, राग गरवी, राग प्रभाती, राग मगल, राग काहड़ा, राग हेली, राग गवड़ी, राग मल्हार, राग गौड़ी राग धनाश्री, राग बडहम, राग जैतथी आदि न जाने कितने रागों में किया गया है । इन रागों में विभिन्न प्रकार के ताल भी निर्दिष्ट हैं जैसे ताल तीन ताल, ताल दीपवदी, ताल कहरवा, ताल तिताला गुड, ताल चचरी गूढ, ताल चचरी विलावल, ताल तिताल सोरठ, ताल तिताल पचम, ताल तिताल भैरव आदि ।

उपयुक्त विवेचन से यह प्रकट होता है कि इन सन्तों की सगीत के शास्त्रीय पक्ष की विधिवत जानकारी थी । इस कथन की पुष्टि उस समय स्वयमेव ही आती है जब हम देखते हैं कि अनेक सन्तों ने अपने पदों में जिस राग का प्रयोग किया है, उस राग की प्रकृति और उसके गाये जाने के समय को दृष्टि में रखते हुए विषय का प्रतिपादन किया है । उदाहरणार्थ भैरवी, ललित, विभास, रामकली जैसे रागों में सरगम का आरोह-अवरोह उन्हें गभीरता प्रदान करता है । ये राग दिन के प्रथम प्रहार में गाये जाते हैं अतः मजन के लिए बहुत ही उपयुक्त प्रमाणित होते हैं । इसी प्रकार केदारा और सोरठ की प्रकृति हल्की सी कछुआ और दर्द से युक्त है । मलार और गौरी की प्रकृति शृङ्गार के लिए उपयुक्त है । मारू ओम प्रधान राग है । कन्याण राग आरम निवेदनारमक प्रसंगों के लिए ठीक है । प्रभाती जागरण बेल का राग है ।

ध्यातय है कि बहुत से सन्तों की वाणी में उपयुक्त वातों का ध्यान रखा गया है । उदाहरणार्थ दो पद नीचे दिये जाते हैं जिनमें क्रमशः मानुष भाव के विधोष पक्ष और निद्रा त्याग कर जागने का वचन किया गया है—

### सोरठ

विरहनि कूँ दरसन दीजे साहित्य अपनी कर लीजे । टेक।

मैं गम पिघा बलिहारी प्रभु भेटो तपन हमारी ।

दुक दया दृष्टि भर देखो जीवाने ताल लेखो ॥

जिय जम जम को भूरे भाशायत व्यासा पूरे ।  
हरि आद्रु विरद विरारो अत्र पलना पलक पपारो ॥  
मोहि श्वाभ कप सम जाने कव श्रीनम दरण दिखाने ।  
जन छान बाल बलि जाने कव राम विद्या पर आने ॥<sup>१</sup>

### प्रमाती

जाग-जाग नर जीव अभागो राम मुमिर कयो भूतो रे ।  
विषय मोठ ममता र कारण वेतो बार विभूतो र ॥टेका॥  
जावत क्या ले जागी साथे आवत पुछ नहिं लता रे ।  
कर्म करे कर बोध उठायो हाथ चन्पो अथ वेतो रे ॥  
भक्ति न भावै कम कमावे जीवन ही कयो भूतो रे ।  
जननी जम र नूर गमायो रहियो कयो न अऊतो रे ॥  
जे तन पर ही सो जन मरही कोई न रहत अछूतो रे ।  
तीन लोभ म किर किर छूटे जोरावर जम दूतो रे ॥  
छार सभार सन शत्रु मुमिरले तन मन सेती रूतो रे ।  
जन सहजराम सतगुरु समभावे राम मुमिर ले तूतो र ॥<sup>२</sup>

### छन्द-विधान

कविता जीर छन्द का बडा ही घनिष्ट सम्बन्ध है । 'कविता का स्वभाव ही छन्द में लयमान होना है । जिम प्रकार नदी के तट अपने बन्धन से धारा की गति को सुरक्षित रखत हैं जिनके नियन्त्रण के अभाव में वह अपना प्रवाह खा बैठती है उसी प्रकार छन्द भी अपने नियन्त्रण से राग को स्पन्दन कपन तथा वेग प्रदान कर निर्जीव शब्दों के रोडों में एक कोमल सजल कलरव भर उठे सजीव दगा देता है<sup>३</sup> । यद्यपि आज का प्रगतिशील साहित्यकार कविता में छन्दों की उपयोगिता पर विश्वास नहीं करता किन्तु काव्य प्रवाह की गतिमयता के लिए उसे भी कायम छन्द विधान की महत्ता किसी न किसी रूप में स्वीकार करनी ही पड़ती है ।

'ऋग्वेद' के 'पुरुषसूक्त' के नवम मात्र के अनुसार छन्दों की उत्पत्ति आदि पुरुष ब्रह्म से हुई है । 'सामवेद' में अनेक छन्दों का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है । वेद के छन्द अग्रा में प्रथम स्थान छन्द का है । छन्द वेद रूपी पुरुष का पैर है—छन्द पादो तु वदस्य । यह तो हुई छन्द की अलौकिक उत्पत्ति की बात । लौकिक दृष्टि से इसके विकास का इतिहास इतना लम्बा है कि उसकी विवेचना करते हुए

१ श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश, पृ० २५२-५३

२ रामस्नेह सप्त वाणी, पृ० २४०-४१

३ पल्लव ( भूमिका भाग ), पृ० ३

मात्र इतना बहना पर्याप्त है कि यदि कवि की वाणी का प्रथम स्वर छन्द के माध्यम से ही फूटा था।

भारतीय काव्यशास्त्रियों ने क्रमशः मात्राओं एवं ध्वनि समूह से सम्बद्ध होने के कारण स्वर और व्यंजन के आधार पर छन्द के दो भेद—वर्णिक और मात्रिक किये हैं। सस्त्रुत जैसी संयोगात्मक या सन्नेपणात्मक भाषाओं में समान बहुलता के कारण वर्णिक छन्द अनुकूल पड़ते हैं जबकि वियोगात्मक या विश्लेषणात्मक होने के कारण हिंदी में मात्रिक छन्दों की अधिकता है।

### सन्तों के प्रिय छन्द और रामसनेही साहित्य

पूर्व मध्यकालीन संत साहित्य का अनुशीलन करने से विदित होता है कि पहले सेवक संत कवियों के प्रिय छन्द 'साखी और 'शब्द' है। संत परम्परा में प्रयुक्त ये छन्द छन्दशास्त्रीय कसौटी पर खर नहीं उतरते। कभी-कभी तो एक ही 'शब्द' में एक से अधिक छन्दा का समावेश भी देखा जाता है। ऐतियुगीन काव्य के प्रभाव से परवर्ती संत कविता का ध्यान अथवा छन्दा के प्रयोग का ओर गया। परिणाम-स्वरूप संत काव्य में भी साखियों एवं रमैतियों के साथ-साथ अथवा बहुत से छन्दों का समावेश हुआ। रामसनेही सम्प्रदाय के साहित्य में छन्दा का बहुविध प्रयोग हुआ है। इस सम्प्रदाय के वाणीकार संतों ने दोहा, सोरठा चौपाई, भूलना, छापय, अरिल, चन्द्रायण, कुण्डलिया, सबैया, कवित्त, भुजग प्रपात, इदव चम्पक चामर, नाराच तोमर, त्रोटक, पदरा, गीतिका, मुक्तादाम, रेखता और गजल आदि अनेक छन्दा का विधान किया है।

रामसनेही सम्प्रदाय के संतों के छन्द-विधान पर विचार करने के उपरान्त कोई यह नहीं कह सकता कि ये संत छन्दशास्त्र से अनभिज्ञ थे। यह बात ठीक है कि इनके छन्दों में यत्र-तत्र मात्रा सम्बंधी घट-बढ़ और कहीं-कहीं नामों का हेर-फेर है किंतु जितने छन्दों का उल्लेख अभी हम कर आये हैं उनमें सम्बंध में यह कहकर कदापि नहीं टाला जा सकता कि इनके सफल प्रयोग का कारण शास्त्रीय ज्ञान नहीं बल्कि इनका लोक प्रचलन था। सच बात यह है कि अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक आते-आते संत कवि सातकालीन काव्य-पारा से प्रभावित हो चले थे। उन्होंने लक्षण प्रथा की रचना नहीं की यह बात दूसरी है किन्तु इतना निश्चित है कि छन्द बहुल वाणी की रचना करने से पूर्व वे छन्दा के शास्त्रीय रूप से पूणतया परिचित थे।

## उपसंहार

इस विवेचन से यह प्रकट हो गया होगा कि पन्द्रहवीं शताब्दी की जिस सक्रमणशील स्थिति ने सतमत के अग्रदूत कबीर को परम्परागत सगुणमार्गी वैष्णव धर्म से पृथक् निगुणमन का प्रवर्तन करने के लिए प्रेरित किया था, राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सभी दृष्टियों ने ठीक उसी इतिहास की पुनरावृत्ति के परिणामस्वरूप अठारहवीं शताब्दी में रामसनेही सम्प्रदाय का जाविभाव हुआ। यह सम्प्रदाय समय की माँग का प्रतिफल था, अतः ब्राह्मणों एवं सगुणोपासक वैष्णवों के लालच विरोध करने पर भी द्रुतगति से विकसित होता रहा और थोड़े ही समय में राजस्थान के विभिन्न भागों में ही नहीं, मध्यप्रदेश, गुजरात, दिल्ली तथा देश के अन्य बहुत से स्थानों पर इसकी शाखाएँ स्थापित हो गईं। सम्प्रदाय के यशस्वी महात्माओं के भाविक जीवन एवं चरित्र से प्रभावित होकर सामान्य जनता के साथ ही अनेक राजे-महाराजे भी इस सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये। जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, शाहपुरा, कोटा, रतलाम नागौर आदि प्रदेशों के नरेश सपरिवार इनके शरणागत हुए। उनके वंशज आज तक इस सम्प्रदाय के महात्माओं को अपनी श्रद्धा के पुष्प चढ़ाते चले आ रहे हैं।

रामसनेही सन्तों की अध्यात्म-साधना विरक्तिपूर्ण एवं निस्पृह जीवन-दशन पर आधारित है। लोचैपणा से दूर रहने हुए भी इन सन्तों ने समसामयिक समाज की दुष्प्रवृत्तियों को दूर कर लोकजीवन में शांति और सुव्यवस्था स्थापित करने का भरपूर प्रयत्न किया। अपना सन्देश जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए इन उदारराशय महात्माओं ने परम्परा से सतमत द्वारा पृथीत वाणी रचना का माध्यम अपनाया। आध्यात्मिक अनुभूतियों को सम्प्रेष्य बनाने के लिए काव्य से अधिक मर्मस्पर्शी साधन ही ही क्या सकता था? इस प्रकार साधना, समाज-सुधार तथा काय-सजना इन तीनों दृष्टियों से रामसनेही सन्तों का व्यक्तित्व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आगे इहाँ दृष्टि विदुओं से सम्प्रदाय की विशिष्ट उपसन्धियाँ की विवेचना की जायगी जिससे न केवल उत्तर मयकालीन राजस्थानी समाज लामावित हुआ वरन् युग-युग तक मानवता का मार्ग दर्शन होता रहेगा।

मध्यकालीन भारत के इतिहास में अठारहवीं शताब्दी धार्मिक उपकरण का युग था। इस काल में एक ओर तो सगुण भक्ति नाना प्रकार के पाखण्डों और अध-विश्वासा से जजर हो रही थी और दूसरी ओर कबीर द्वारा प्रवर्तित निगुणमार्गी साधना सबुद्धित व्यक्तिवाद पर आधारित नये-नये पथों के दलदल में फन कर सत्त्वहीन हो चुकी थी। ऐसी स्थिति में रामसनेही सन्तो ने भक्ति-आन्दोलन को एक नयी दिशा दी। इन सम्प्रदायों के अनुयायियों ने सगुणोपासना के क्षेत्र में बन्द हुए अधविश्वास का प्रबल उक्तियों से खण्डन करने के साथ ही निगुण सन्तमत के मूल सिद्धान्तों का पुनरुद्धार किया और उन्हें अपने साधनात्मक जीवन में व्यवहृत कर सन्तमत की प्रतिष्ठा बढ़ाई। साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह से मुक्त होने के कारण इन सन्तों ने सगुणोपासना के लोकोपयोगी तरिका को ग्रहण कर अपनी असाधारण उत्तारता का परिचय दिया।

रामसनेही सन्त व्यक्तिगत साधना के प्रचारक थे। इनका आध्यात्मिक दृष्टिकोण पूर्णतः व्यक्तिवादी था किन्तु उनका व्यक्तिवाद अन्तस्साधना के क्षेत्र तक ही सीमित था। व्यावहारिक जीवन में वे सार्वजनिक उत्थान के समर्थक थे। जातिगत, कुलगत तथा वैयक्तिक आचारगत श्रेष्ठता की निन्दा, मास, मदिरा, जुआ भूठ आदि की मत्सना तथा दया, शील, प्रेम आदि सद्गुणों की प्रतिष्ठा से सामाजिक कुरीतियों को दूर करके जन-जीवन में सुख-शांति की स्थापना करने में ये निरन्तर प्रयत्नशील रहें। सती और पतिव्रता नारी की बार-बार सराहना तथा 'अभिचारिणी' की निन्दा में भी उनका उद्देश्य सामाजिक मर्यादा और नैतिकता की रक्षा करना ही था। इन सन्तों ने समकालीन लोक-जीवन की कुछ ऐसी समस्याओं पर भी दृष्टिपात किया है जो विचार-शील व्यक्तियों के लिए उस समय सिरन्द का कारण बनी हुई थीं। हिन्दू समाज में विधवाओं की स्थिति एक ऐसी ही समस्या थी। परमहंस सेवकराम ने इस पर 'विधवा-विचार' नामक एक पृथक ग्रन्थ की रचना कर डाली थी। इसी प्रकार कन्या-वध भी मध्यकालीन राजस्थानी समाज के लिए एक कलक था। दयालुदास ने अपनी 'बाणी' में इसका विस्तार से वर्णन किया है। इन कुरीतियों के उल्लेख मात्र से सन्तुष्ट न होकर रामसनेहिया ने उन्हें दूर करने के लिए सुधारवादी आन्दोलन के रूप में कुछ प्रयोग भी किये थे। होली के अवसर पर गाय जाने वाले कुत्तों की भीता और कीचड़ फेंकने की कुप्रथा के स्थान पर लोकरजक 'फूलडोल' उत्सव के आयोजन की परम्परा इन्हीं विचारों में स्थापित की गई है।

रामसनेही सन्तों की साहित्य सेवा भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। इस विषय पर काय करत हुए प्रस्तुत लेखक को अब तक लगभग साठे तीन सौ हस्तलिखित ग्रन्थों का पता चला है और उसका यह विश्वास है कि छानबीन करने पर अभी सैकड़ों ग्रन्थ

## उपसंहार

इस विवेचन से यह प्रकट हो गया होगा कि पन्द्रहवीं शताब्दी की जिस सभ्रमणशील स्थिति ने सतमत के अप्रदूत कबीर को परम्परागत सगुणमार्गी वैष्णव धर्म से पृथक् निगुणमन का प्रवर्तन करने के लिए प्रेरित किया था, राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सभी दृष्टियों में ठीक उसी इतिहास की पुनरावृत्ति के परिणामस्वरूप अठारहवीं शताब्दी में रामसनेही सम्प्रदाय का आविर्भाव हुआ। यह सम्प्रदाय समय की माँग का प्रतिफल था, अतः ब्राह्मणों एवं सगुणोपासक वैष्णवों के साथ विरोध करने पर भी द्रुतगति से विकसित होता रहा और थोड़े ही समय में राजस्थान के विभिन्न भागों में ही नहीं, मध्यप्रदेश, गुजरात, दिल्ली तथा देश के अन्य बहुत से स्थानों पर इसकी शाखाएँ स्थापित हो गईं। सम्प्रदाय के यशस्वी महात्माओं के सात्विक जीवन एवं चरित्र से प्रभावित होकर सामान्य जनता के साथ ही अनेक राजे-महाराजे भी इस सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये। जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, शाहपुरा, कोटा, रतलाम नागौर आदि प्रदेशों के नरेश सपरिवार इनके शरणगत हुए। उनके वंशज आज तक इस सम्प्रदाय के महात्माओं को अपनी श्रद्धा के पुष्प चढ़ाते चले आ रहे हैं।

रामसनेही सन्तो की अध्यात्म साधना विरक्तिपूष्ण एवं निस्पृह जीवन दशन पर आधारित है। लोचैषणा से दूर रहते हुए भी इन सन्तों ने समसामयिक समाज की दुष्प्रवृत्तियों को दूर कर लोकजीवन में शान्ति और सुखवस्था स्थापित करने का भरपूर प्रयत्न किया। अपना सन्देश जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए इन उदारशाय महात्माओं ने परम्परा से सतमत द्वारा गृहीत वाणी-रचना का माध्यम अपनाया। आध्यात्मिक अनुभूतियों को सम्प्रेष्य बनाने के लिए काव्य से अधिक मर्मस्पर्शी साधन हो ही क्या सकता था? इस प्रकार साधना, समाज-सुधार तथा काव्य-रचना इन तानों दृष्टियों से रामसनेही सन्तों का व्यक्तित्व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आगे इसी दृष्टि विदुओं से सम्प्रदाय की विशिष्ट उपलब्धियों की विवेचना की जायगी जिससे न केवल उत्तर मयकालीन राजस्थानी समाज सामाजिक रूप से प्रभावित हुआ वरन् युग-युग तक मानवता का मार्ग दर्शन होता रहेगा।

मध्यकालीन भारत के इतिहास में अठारहवीं शताब्दी धार्मिक अपकर्ष का युग था। इस काल में एक ओर तो सगुण-भक्ति नाना प्रकार के पाखण्डों और अध-विश्वासा से जजर हो रही थी और दूसरा जोर कबीर द्वारा प्रवर्तित निगुणमार्गी साधना सबुद्धित व्यक्तिवाद पर आधारित नये-नये पथा के दलदल में फन कर मत्त्वहीन हो चुकी थी। ऐसी स्थिति में रामसनेही सन्ता ने भक्ति-आन्दोलन को एक नयी दिशा दी। इन सम्प्रदाय के अनुयायियों ने सगुणोपासना के क्षेत्र में वदत हुए अधविश्वाम का प्रल उक्तिर्यों से खण्डन करने के साथ ही निगुण सतमत के मूल सिद्धांतों का पुनरुद्धार किया और उन्हें अपने साधनामय जीवन में व्यवहृत कर सतमत की प्रतिष्ठा बढ़ाई। साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह से मुक्त होने के कारण इन सन्तों ने सगुणोपासना व लोकोपयोगी तत्वों को ग्रहण कर अपनी असाधारण उदारता का परिचय दिया।

रामसनेही सन्त व्यक्तिगत साधना के प्रचारक थे। इनका आध्यात्मिक दृष्टिकोण पूणत व्यक्तिवादी था, किन्तु उनका व्यक्तिवाद अन्तस्साधना के क्षेत्र तक ही सीमित था। व्यावहारिक जीवन में वे सार्वजनिक उत्थान के समर्थक थे। जातिगत, कुलगत तथा वैयक्तिक आचारगत श्रेष्ठता की निंदा, मास, मदिरा, जुआ, भ्रूठ आदि की मत्सना तथा दया, शील, प्रेम आदि सदगुणों की प्रतिष्ठा से सामाजिक कुरीतियों को दूर करके जन-जीवन में सुख-शान्ति की स्थापना करने में ये निरन्तर प्रयत्नशील रहे। सती और पतिव्रता नारी की बार-बार सराहना तथा 'यभिचारिणी' की निंदा में भी उनका उद्देश्य सामाजिक मर्यादा और नैतिकता की रक्षा करना ही था। इन सन्तों ने समकालीन लोक-जीवन की कुछ ऐसी समस्याओं पर भी दृष्टिपात किया है जो विचार-शील 'यक्तियों' के लिए उस समय खिर-दद का कारण बनी हुई थीं। हिन्दू समाज में विधवाओं की स्थिति एक ऐसी ही समस्या थी। परमहंस सेवकराम ने इस पर 'विधवा-विचार' नामक एक पृथक् ग्रंथ की रचना कर डाली थी। इसी प्रकार कथा-बध भी मध्यकालीन राजस्थानी समाज के लिए एक बलक था। दयातुदाय ने अपनी 'बाणी' में इसका विस्तार से बणन किया है। इन कुरीतियों के उल्लेख मात्र से सन्तुष्ट न होकर रामसनेहियों ने उन्हें दूर करने के लिए सुधारवादी आन्दोलन के रूप में कृष्ट प्रयोग भी किये थे। होनों के अवसर पर गाय जाने वान कुत्सित गीतों और कीचड फेंकने की कुप्रथा के स्थान पर लौकरजक 'फूलदोल' उत्सव व आयोत्रन का परम्परा इनी विचार से स्थापित की गई है।

रामसनेही सन्तों की साहित्य सेवा भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। 'स विना पर काय करते हुए प्रस्तुत लेखक को अन तक लगभग साइं वान सी हस्तनिष्ठ ग्रंथों का पता चला है और उसका यह विश्वास है कि ध्यानवान बन पर अमा सेवर्दा ग्रंथ

और मिल सकत है। इन ग्रन्थों के अनुशीलन से अठारहवीं शताब्दी में निर्मित निर्गुण पद्य साहित्य की ऐसी अनक लुप्तप्राय अन्तधारा का पता लग सकता है जिनके बिना हिन्दी-साहित्य का इतिहास अधूरा ही रहेगा।

बिन्ही महामा अथवा घमाचाय के विचार जब तक सिद्धांत रूप में रहते हैं तब तक वे शुद्ध वैचारिक जगत् की वस्तु रहते हैं किन्तु जब उन्हें एक स्थिर मतवाद का रूप देना होता है तब सामान्य लोगों के सहज आस्थामय हृदय की तुष्टि के लिए मूल विचारों की दार्शनिक और तात्त्विक व्याख्या के साथ ही उनके प्रवक्तृ के व्यक्तित्व के चतुर्दिक अलौकिक तरबो का घना आवरण डाल दिया जाता है। इसी को सम्प्रदायवाद की मोव समझना चाहिये। इस दृष्टि में विचार करने पर ज्ञात होता है कि रामसनेही सम्प्रदाय के भी अधिकांश परवर्ती सत साम्प्रदायिकता के संकुचित घेरे में आ गये थे और आज भी कुछ ऐसे लोग मिल सकते हैं जो उससे ऊपर नहीं उठ सकत हैं। यह सतोप का विषय है कि इस वैज्ञानिक युग में आलोच्य सम्प्रदाय के अधिकांश अनुयायी शनै शनै रुढ़िवादी प्रवृत्तियों का त्याग कर प्रगतिशील विचारों को अपनाते जा रहे हैं। विद्यालयों एवं औपधालयों की स्थापना, रामद्वारा म साधकों के जीवन यापन का प्रबन्ध, साम्प्रदायिक साहित्य के प्रकाशन एवं अनुशीलन की व्यवस्था आदि कार्यों में उनकी उत्कट लोक हितैषणा लक्षित होती है।



## सहायक ग्रन्थ

### अप्रकाशित हिन्दी ग्रन्थ

- १ अवतार चरित्र—मुत्तराम /
- २ अचल बोध—किसनदास
- ३ अथ सिद्धाज—परमुराम
- ४ अजु नदास की वाणी
- ५ आदिबोध—रामदास
- ६ किमनदास की वाणी
- ७ छागटे का बडा वाणी संग्रह
- ८ गुरुनीला विनाय—जगन्नाथ
- ९ गुरु परुक्षा—हरिराम दास
- १० गुरु महिमा—आभा वाई
- ११ गुरु प्रकरण—दयालु दास
- १२ गुरु प्रणालिका—मोतीराम
- १३ ग्यान प्रबोध—रामजन
- १४ चिन्तावणी बोध—सूरत राम
- १५ चौरासी बोल—जगन्नाथ
- १६ जम लीला—अजु न दास
- १७ जम लीला—हरलाल दास
- १८ जम लीला—पदुमदास
- १९ जयारव बोध—जगन्नाथ
- २० ज्ञान समुद्र—(डा० भगवतीप्रसाद सिंह के सप्रहालय की प्रति)
- २१ ज्ञान समाधि—मनोरथ राम
- २२ दरिया साहब की परची—मदाराम
- २३ दयालु दास की वाणी—(मूरसागर, जोधपुर की प्रति) :

- २४ देवारास की महिमा के शब्द—हरीराम  
 २५ देवादास की वाणी  
 २६ नवल नागर—नवल राम  
 २७ नाम परचा—हरिराम दास  
 २८ निरासम्ब—रामदास  
 २९ निगु ण साहित्य की सांस्कृतिक सृष्टिभूमि—डा० मोतीसिंह (शोध प्रबन्ध)  
 ३० पोहकरदास की वाणी  
 ३१ परची—बालक दास  
 ३२ परशुराम की वाणी  
 ३३ परशुराम की परची—सेवकराम  
 ३४ पूरणदास की वाणी  
 ३५ फूल डोल समाधि—जगन्नाथ  
 ३६ बारह मासा—पोहकर दास  
 ३७ भक्त माल—दयालु दाम  
 ३८ भक्तमाल—रामदाम  
 ३९ भक्तमाल—किसन दास  
 ४० भक्तमाल—मदाराम  
 ४१ भक्तमाल—प्रेमदास  
 ४२ भक्त प्रभाव—सेवक राम  
 ४३ भगवानदास की वाणी  
 ४४ मनोरथराम की वाणी  
 ४५ मनीराम की वाणी  
 ४६ मुरलीराम की वाणी  
 ४७ राजयोग—श्री वृष्णादास पयहारी  
 ४८ रामचरण की परची—लालदास  
 ४९ रामजन की महिमा के शब्द—जगन्नाथ  
 ५० रामदास की वाणी  
 ५१ राम पद्धति—रामजन  
 ५२ राम प्रताप की महिमा के शब्द—गिरधर दास  
 ५३ राम बल्लभ की वाणी  
 ५४ रामवल्लभ की महिमा के शब्द—तुलाराम  
 ५५ रेखता—रामदास  
 ५६ शब्द—रामजन

- ५७ शिवा बत्तीसी—पूरण दास  
 ५८ श्रवणमार—नवलराम  
 ५९ सद्द—मनोरथराम  
 ६० सेवकराम की बाणी  
 ६१ मूरतराम की बाणी  
 ६२ सुमिरण सिद्धान्त—रामजन  
 ६३ हरजन—रामदाम  
 ६४ हरजस—पूरणराम  
 ६५ हरलालदाम की बाणी  
 ६६ हरवाराम का बाणी  
 ६७ हरिरामदास का परचा—गगाराम

### प्रकाशित हिन्दी ग्रंथ

- १ अनुभवगिरा—सतदास  
 २ अणभैवाणी—रामचरण  
 ३ अणभो विनाय—रामचरण  
 ४ जमून उपदेश—रामचरण  
 ५ अमरकोश टीका—भावनादास  
 ६ जशोक कं फल—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी  
 ७ जाचान चरितामृत—हरिदाम शास्त्री  
 ८ आधुनिक हिन्दी साहित्य का भूमिका—डा० लक्ष्मी सागर बाष्ण्य  
 ९ आधुनिक हिन्दी साहित्य—डा० लक्ष्मी सागर बाष्ण्य  
 १० दम्तवार द ला नितरात्पूर इन्दुई ए ऐन्दुस्तानी—अनु० डा० बाष्ण्य  
 ११ उत्तर मध्यकालीन भारत—अवध बिहारी पाण्डेय  
 १२ उत्तरी भारत का सत परम्परा—प० परशुराम चतुर्वेदी  
 १३ उमर का य  
 १४ उर्दू साहित्य का इतिहास—डा० रामबानू सक्तना  
 १५ जीरगजेव—सर यदुनाथ सरकार  
 १६ कबीर—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी  
 १७ कबीर प्रभावनी—सम्पादक बानू श्याम सुन्दर दास  
 १८ कबीर की विचार-धारा—डा० गोविंद त्रिगुणासन  
 १९ कबीर साहित्य की परच—प० परशुराम चतुर्वेदी  
 २० कबीर का रहस्यवाद—डा० रामकुमार वर्मा

- २४ देवादास की महिमा के शब्द—हरीराम  
 २५ देवादास की वाणी  
 २६ नवल सागर—नवल राम  
 २७ नाम परचा—हरिराम दास  
 २८ निरालम्ब—रामदास  
 २९ निगुण साहित्य की सांस्तिक कृष्णभूमि—डा० मोतीसिंह (शोध प्रवच)  
 ३० पोहकरदास की वाणी  
 ३१ परची—बालक दास  
 ३२ परशुराम की वाणी  
 ३३ परशुराम की परची—सेवकराम  
 ३४ पूरणदास की वाणी  
 ३५ फूल डोल समाधि—जगन्नाथ  
 ३६ बारह मासा—पोहकर दास  
 ३७ भक्तमाल—दयालु दास  
 ३८ भक्तमाल—रामदास  
 ३९ भक्तमाल—किसन दास  
 ४० भक्तमाल—मदाराम  
 ४१ भक्तमाल—प्रेमदास  
 ४२ भक्त प्रभाव—सेवक राम  
 ४३ भगवानदास की वाणी  
 ४४ मनोरथराम की वाणी  
 ४५ मनोराम की वाणी  
 ४६ मुरलीराम की वाणी  
 ४७ राजयोग—श्री कृष्णादास पपहारी  
 ४८ रामचरण की परची—लालदास  
 ४९ रामजन की महिमा के शब्द—जगन्नाथ  
 ५० रामदास की वाणी  
 ५१ राम पद्धति—रामजन  
 ५२ राम प्रताप की महिमा के शब्द—गिरधर दास  
 ५३ राम बल्लभ की वाणी  
 ५४ रामबल्लभ की महिमा के शब्द—तुलाराम  
 ५५ रेखता—रामदास  
 ५६ शब्द—रामजन

- १४ नाथ सम्प्रदाय—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी  
 १५ नाम परचा—हरिराम दाम  
 १६ नाथ सिद्धो का बानी—स० छद्मकाशिकेय  
 १७ निवृत्य स्वाध्याय—रामस्नेही धर्ममण्डल, दिल्ली  
 १८ पञ्चरत्न स्तोत्र—स० नैतुराम रामनिवास शास्त्री  
 १९ परगत्तीसी—हरिराम दास  
 २० परचीमार—अनु न दास  
 २१ पल्लव—मुमिजान दत्त प त  
 २२ पलडोल उ सव—रामनिवास  
 २३ ब्रह्म समाधि त्रीन योग—जगन्नाथ  
 २४ बीजक—कबीर (नवल किशोर प्रेस)  
 २५ वेमुक्ति तिरस्कार—रामचरण  
 २६ भृगु हरि शतकवय—भावनादास  
 २७ भ्रमतीड—मुखराम दाम  
 २८ भक्तमान (नाभादास) भक्ति-मुधा विन्दु तिलक—हृषिकेशजी  
 २९ भक्तमाल (नाभादास) भक्ति रस बोधिनी टीका, याख्याकार, रामऽपणदेव गर्ग  
 ३० भक्तमाल (नाभादास) रसिक प्रकाश टीका, प्रियानाथ  
 ३१ भागवत एकादश स्वध भाषा टीका—भावनादास  
 ३२ भारतीय दर्शन—प० बलदेव उपाध्याय  
 ३३ भारतीय दर्शन—ग० उमेश मिश्र  
 ३४ भावन भजन रत्नावली—भावनानाथ  
 ३५ मध्यकालीन धर्म साधना—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी  
 ३६ मध्यकालीन भारत—डा० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव  
 ३७ महात्माओं की वाणी—म० रामवरन दास  
 ३८ माड १ वनविप्लवर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान—अनु० डा० किशोरीलाल गुप्त  
 ३९ मिथिला महात्म्य—सूर किशोर  
 ४० मीरा पदावली—प० परशुराम चतुर्वेदी  
 ४१ मीरा स्मृति ग्रन्थ—त्रिगोय हिन्दी परिषद्, बलकला  
 ४२ मुगल कालीन भारत—डा० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव  
 ४३ मुरलीराम का जीवन चरित्र  
 ४४ योग प्रवाह—डा० बडय्याल  
 ४५ रघुनाथ और उनका काव्य—चन्द्रशेखर पाण्डेय  
 ४६ रघुनीमाता—प० रामचन्द्र शुक्ल

- २१ करुणा सागर—दयानुदास  
 २२ काफर बोध—रामचरण  
 २३ गीता रहस्य—वान गगाधर निलक  
 २४ गुरु प्रकरण परची—दयानुदास  
 २५ गुरु महिमा—रामचरण  
 २६ गोरलवानी—सम्पा० डा० पीताम्बरदत्त ब्रह्मवान  
 २७ गोविन्द साहब की हिन्दी रचनाएँ—सम्पा० डा० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी  
 २८ गधर निसाणी—हरिराम दास  
 २९ घरनदास की वानी—बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद  
 ३० चिन्तामणि—द्वितीय भाग—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल  
 ३१ चिन्तावणी—रामचरण  
 ३२ छन्द प्रभाकर—जगन्नाथ प्रसाद 'भानु'  
 ३३ छत्र प्रकाश—लालकवि  
 ३४ जगन्नामा—श्रीधर  
 ३५ जगद्विनोद—पद्माकर  
 ३६ जिज्ञास बोध—रामचरण  
 ३७ जन्म लीला—पूरण दास  
 ३८ जायसी प्रयावली—स० रामचन्द्र शुक्ल  
 ३९ जाति भास्कर—स० प० ज्वाला प्रसाद मिश्र  
 ४० ज्ञान बत्तीसी—हिम्मत राम  
 ४१ तस-नुफ अथवा सूफीमत—प० चन्द्रबली पारण्डेय  
 ४२ तुलसी प्रयावली—स० रामचन्द्र शुक्ल  
 ४३ दादू की वाणी—स० मंगलदास  
 ४४ दूल्हेचरितामृतम्  
 ४५ दोहावली (तुलसीदास) गीता प्रेस  
 ४६ दयानुदिव्य चरित्र—प० उत्साहराम 'कलहस'  
 ४७ दरिया साहब (मारावाड वाले) की वानी—बेलवेडियर प्रेस  
 ४८ दृष्टान्त सागर—रामचरण  
 ४९ ध्यान मञ्जरी—अग्रदास  
 ५० निर्गुण भजनमाला—प्रका० चौबसराम, बीकानेर  
 ५१ नृपबोध—सुगराम  
 ५२ निर्गुणधारा—वैजनाथ, विश्वनाथ  
 ५३ नाम प्रताप—रामचरण

- ४ नाथ सम्प्रदाय—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी
- ५ नाम परचा—हरिराम दास
- ६ नाथ विद्वों का बानी—स० छद्रकाशिकेय
- ७ निबन्ध स्वध्याय—रामम्नेही धर्ममण्डल, दिल्ली
- ८ पञ्चरत्न स्तोत्र—स० नैतूराम रामनिवास शास्त्री
- ९ पदगत्तीसी—हरिराम दास
- १० परचीमार—अजु न दास
- ११ पल्लव—मुमिनादन पंत
- १२ फूलचौन उषव—रामनिवास
- १३ ब्रह्म ममाधि लीन योग—जगन्नाथ
- १४ बीजक—कवीर (गवल किशोर प्रंस)
- १५ वेद्युक्ति तिरस्कार—रामचरण
- १६ मनु हरि शतकनय—भावनानास
- १७ भ्रमतोट—मुखराम दास
- १८ भक्तमाल (नामादास) भक्ति-मुधा विन्दु तिलक—रूपकलाजी
- १९ भक्तमाल (नामादास) भक्ति रस बोधिनी टीका, याख्याकार, रामकृष्णदेव गर्ग
- २० भक्तमाल नामानास) रसिक प्रकाश टीका, प्रियादास
- २१ भागवत एकांश स्वध भाषा टीका—भावनानास
- २२ भारतीय दर्शन—प० बलदेव उपाध्याय
- २३ भारतीय दर्शन—डा० उमेश मिश्र
- २४ भावन भजन रत्नावली—भावनानास
- २५ मध्यकालीन धर्म साधना—डा० हजारा प्रसाद द्विवेदी
- २६ मध्यकालीन भारत—डा० आशीवाणी लाल श्रीवास्तव
- २७ महारमात्रो का वाणी—स० रामचरण दास
- २८ मार्गी बनविपूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान—अनु० डा० किशोरीलाल गुप्त
- २९ मिथिला महाम्य—सूर किशोर
- ३० मारा पदावली—प० परशुराम चतुर्वेदी
- ३१ मीरा स्मृति ग्रन्थ—त्रगोय द्विरी परिपद्, कलकत्ता
- ३२ मुगल कालीन भारत—डा० आणीर्वादी लाल श्रीवास्तव
- ३३ मुरलीराम का जीवन परिच
- ३४ योग प्रवाह—डा० बह्यवाल
- ३५ रमलान और उनका काव्य—चंद्रशेखर पांडेय
- ३६ रसमीमासा—प० जगन्नाथ शरण

- ८७ रामानन्द की हिन्दी रचनाएँ—स० डा० हजारी प्रसाद द्विवेदा  
 ८८ रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय—१० भगवती प्रसाद सिंह  
 ८९ रामस्नेही सत्तवाणी—स० आनन्दराम रामस्नेही  
 ९० रामस्नेही सत्तवाणी और भजन संग्रह—स० आनन्दराम रामस्नेही  
 ९१ राजपूताने का इतिहास भाग ३ प० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा  
 ९२ राजपूताने का इतिहास—प्रथम भाग—जगदीश सिंह गहलौन  
 ९३ रामरसाम्बुधि—भाग २—बैकटेश्वर प्रेस  
 ९४ राजस्थानी भाषा और साहित्य—प० मोतीलाल मेनारिया  
 ९५ राजस्थान का विगल साहित्य—प० मोतीलाल मेनारिया  
 ९६ राजस्थानी जातियों की खोज—रमेशचन्द्र गुणार्थी  
 ९७ राम रक्षापण बोध—रामचरण  
 ९८ राजस्थान की जातियाँ—बजरगलाल लोहिया  
 ९९ राजस्थान में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज—भाग ३, ४  
 १०० रामचरित मानस (गीता प्रेस)  
 १०१ रामजन के शब्द  
 १०२ रामस्नेही धर्मदण्ड—मनोहरदास  
 १०३ सञ्ज्ञ अलच्छ योग—रामचरण  
 १०४ लोक साहित्य की भूमिका—डा० कृष्णादेव उपाध्याय  
 १०५ विनय पत्रिका—तुलसीदास (गीता प्रेस)  
 १०६ विश्वास बोध—रामचरण  
 १०७ विश्राम बोध—रामचरण  
 १०८ विस्मरण सम्हार—अनादास  
 १०९ वीर वावनी—प० उत्साहराम 'कलहस'  
 ११० शब्द प्रकाश—रामचरण  
 १११ शब्द—रामचरण  
 ११२ शिवनारायणी सम्प्रदाय और उसका साहित्य—१० रामचन्द्र तिवारी  
 ११३ शिष्य सम्प्रदाय—आनाबाई  
 ११४ श्री रामस्नेह धर्मप्रकाश—स० चौकसराम जी  
 ११५ श्री रामस्नेही सम्प्रदाय—सं० वैद्य केवलराम स्वामी  
 ११६ श्री गुरु ग्रन्थ साहित्य  
 ११७ श्री पाठ पुस्तक—स० स्वामी घनाराम  
 ११८ श्री हरिदेवदासजी महाराज की बाणी—सम्पा० भगवानदास शास्त्री  
 ११९ षोडश चाणक्य नीति—अनु० भावनादास

- १२० सतकाव्य—स०-५० परशुराम चतुर्वेदी  
 १२१ सतार्थ प्रकाश—दयानन्द सरस्वती  
 १२२ सग्रामास की कुरानलिया  
 १२३ समता निवाम—रामचरण  
 १२४ सतबानी सग्रह—भाग १ (वेलवेडियर प्रेस)  
 १२५ सतबानी सग्रह—भाग २ (वेलवेडियर प्रेस)  
 १२६ साहित्यकार की आस्था और अर्थ निबंध—महादवी वर्मा  
 १२७ मूफा काव्य-सग्रह—स०-५० परशुराम चतुर्वेदी  
 १२८ सत्यकवीर की साक्षी (वैकटेश्वर प्रेस)  
 १२९ मूरनागर—स०-न द हुलारे बाजपेयी (ना० प्र० समा, काशी)  
 १३० सुख विलास—रामचरण  
 १३१ हकायके हिंदी—स०-२२ काशिक्य  
 १३२ हरिमश मजूपा—प्रकाशक लक्ष्यराम, ज्यवन राम (बीकानेर)  
 १३३ हरिमश मणि मजूपा—प्रकाशक वैद्य रामनारायण जो  
 १३४ हिंदी साहित्य का इतिहास—५० रामचन्द्र शुक्ल  
 १३५ हिन्दी साहित्य की भूमिका—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी  
 १३६ हिंदी कायधारा—स०-राहुल साहय्यायन  
 १३७ हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा० रामकुमार वर्मा  
 १३८ हिंदी काय मे निगुण सङ्गदाय—डा० पीताम्बर दत्त बड्डवाल  
 १३९ हिंदुत्व—रामदास गौड  
 १४० हिन्दी को मराठी सतो की देन—डा० विनय मोहन शर्मा  
 १४१ हिंदी हस्तलिखित पुस्तकों का खोज का वार्षिक विवरण (सन् १९०१)  
 १४२ हिन्दी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का सातवा विवरण  
 १४३ हिन्दी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का बारहवा विवरण  
 १४४ हिंदी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का तरहवा विवरण  
 १४५ हिंदी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का चौदहवा विवरण  
 १४६ हिंदी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का पंद्रहवा विवरण  
 १४७ हिन्दी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का सोलहवा विवरण  
 १४८ हिन्दी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का सत्रहवा विवरण

## हिन्दी पत्रिकाएँ

- १ कल्याण-उमासना अक
- २ कल्याण-सन्त-अक

- ३ कल्याण—साधनाक
- ४ भारतीय साहित्य, वर्ष ५, अंक २ ३
- ५ मधुकर (जून-जुलाई १९५६)
- ६ विद्यापीठ—त्रैमासिक, भाग २
- ७ हिन्दुस्तानी अंक १, भाग ४ (१९३१)
- ८ त्रिपथगा, अंक ६ (माच १९५६)
- ९ सगीत, अगस्त १९५६

### संस्कृत ग्रन्थ

- १ अथर्ववेद
- २ अध्यात्म रामायण
- ३ उत्तर रामचरित—भवभूति
- ४ ऋग्वेद
- ५ ऋक संहिता
- ६ कठोपनिषद्
- ७ गरुड पुराण
- ८ गोरख संहिता
- ९ धेरण्ड संहिता
- १० छांदोग्योपनिषद्
- ११ तैत्तरीयोपनिषद्
- १२ दयालु पंचकम्—विगम्बरानन्द
- १३ ध्वन्यालोक—आनन्दवर्धन
- १४ नारद पाचरात्र
- १५ नारद भक्ति सूत्र
- १६ पंचदशी
- १७ पद्य पुराण
- १८ पातञ्जलि योग सूत्र
- १९ पाण्डव गीता
- २० भविष्य पुराण
- २१ भक्ति रसामृत सिन्धु—रूप गोस्वामी
- २२ महानारत
- २३ मनुस्मृति
- २४ मन्त्रयोग संहिता

- २५ मुग्धकारनिपद्  
 २६ यदुव द  
 २७ रामाचन पद्धति—स्वामी रामानन्द  
 २८ द्रव्यामन त्तस  
 २९ सपयोग प्रत्नापिका  
 ३० वाक्यपणीयम्  
 ३१ विभ्रमोर्वचाम—कालिदास  
 ३२ वृद्धारण्यकोपनिपद्  
 ३३ वैशपिक सूत्र—वणाद  
 ३४ शाण्डिल्य नात्त सूत्र  
 ३५ शिव संहिता  
 ३६ श्वेताश्वतरोपनिपद्  
 ३७ श्रीमद्भागवत पुराण  
 ३८ श्रीमद्भागवद्गीता  
 ३९ सामवेद  
 ४० हठयोग प्रदीपिका  
 ४१ हठयोग महिता

### पालि ग्रन्थ

१ धम्मपण

### उर्दू ग्रन्थ

१ सम्प्रदाय—वी० वी० राय (मिशन प्रेस लुधियाना, १९०६)

### अंग्रेजी ग्रन्थ

- 1 An Advanced History of India—Dr R C Mazumdar
- 2 Ain i Akbari—Abul Fazal
- 3 An Outline of Religious literature of India J N Farquhar
- 4 Annals & Antiquities of Rajasthan Vol II Col J Tod
- 5 Fall of the Mughal Empire Vol I Sir J N Sarkar
- 6 Hymns of the Alwars - J S M Hooper
- 7 Hath Yoga—Akchhaya Kumar Banerjee
- 8 Hindu castes and Sects—Jogendra Nath Bhattacharya
- 9 Introduction to the Panchratra—F O Shrader

- 10 Influence of Islam on Indian Culture—Dr Tarachand
- 11 Kabir and his Followers—F E Keay
- 12 Later Mughals—W Irwin
- 13 Life and Teachings of Ramanuja—Rangacharya
- 14 Mediaeval Mysticism of India—K M Sen
- 15 Obscure Religious Cults—Dr S B Da Gupta
- 16 Ramanuja—K S Aiyangar
- 17 Ramanuja—Rajagopalachariar
- 18 Rajputana Gazeteer (The W R S Residency & Bikaner Agency 1909,
- 19 Religious Sects of Hindus—Dr H H Wilson
- 20 The Religious Policy of the Mughal Emperors—S R Sharma
- 21 *The Chamars*—W Briggs
- 22 The Sikh Religion—M A Macauliffe
- 23 The World's Living Religions—R E Hume Ph D
- 24 The Mystics Ascetics and Saints of India—J C Oman
- 25 Vaisnavism Saivism and other minor Religious systems  
Dr R G Bandarkar

### अंग्रेजी पत्रिकाएँ

- 1 Journal of the Royal Asiatic Society of Bengal (Feb 1835)
- 2 Journal of the Royal Asiatic Society (1920)
- 3 Saraswati Bhawan Studies Vol 8

## नामानुक्रमिका

अ	आ
अगिरा २५१	आभाबाई १७४, १८३, १८४
अकबर ४८	आरमाराम (खेडापा) १४८
अक्षय कुमार बनर्जी २५२	आरमाराम (खवाणपुरा मारवाड) ८०
अक्षय राम ७४	आरमाराम (रतलाम) ७६
अखैराम ७०	आरमाराम (रेग-शावा) १६०
अप्रदाम ३३, ३४, ६८, ७२, ८४	आदवराम ६९, ८८, १८५
अचलानन्द ६७	आनन्दवर्धन ३०६
अणमी बाई १३१	आन दराम (अमेट) ७१, ८३
अनलानन्द ३१, ३३, ६८, ७२, ८४	आनन्दराम (जोधपुर) ८३
अमय राम ७९, १३९	आन दराम (मोकर) १६४, १७२
अमरदास ७४	आरतराम ७०
अमरदास (गुह) ८२	आशाराम (वालीसर) ७५
अमर सिंह ४५	आशाराम (मोती चौक जोधपुर) ८०
अमीराम १७४	आसफजाह ४५
अमोलक राम १४८, १८५	
अमृत राम ७१, ७४, ७७	इ
अर्जुन दास (खेडापा) १३, ७३, ८८, १३१, १४४, १४६- १४९	इन्दाराम ११६
अजु नदास (गुलाब सागर) ८३	इच्छाशूष ६६
अजु नदास (मोटाबद) ७७	
अजीवर्दी खाँ ४५	ई
	ईश्वरदास ७३

## उ

उजासप्रति ६६	
उत्साहराम 'कलहस'	८८, ९२, १५८,
"	३१६, ३३४
उदय चन्द १०१	
उदयराम (ईडर) ७८	
उदयराम (रतलाम)	७१, ७४, ७६,
	१५२
उदयराम (रामसर) १३०	
उदोतराम (मोती चौक-जोधपुर)	८०
उमाबाई ६, १८५	
उम्मेदराम ८०	
उसमान २६६	

## ए

एफ० ई० की ८, ६७
एवरक्रांती ३०८

## औ

औरगजेब ४२-४५, ४८, ५०, ५१
--------------------------

## क

कणाद २७१	
कदमाचार्य ६६	
कनीराम (चाँद पोल) ७०	
कन्होरीराम (मानारावास) ७६	
कहीराम (रतलाम) ७६, १५२, १५३	
कपिल २५१	
कबीर ८, ९, २०, २२, २५, २७, ३१	
	३२, ३७, ६८, ४६, ५२, ५५,

८५, ८६, ८९, १६२, १९३,
१६७, २०१, २०८, २०९, २१६-
२१८, २२१, २२६, २३०, २३३,
२४६, २७५, २८०, २८२, २८७
२८९, २९०, २९२, २६७, ३०९
३३६, ३४६, ३५०

कमीस १६४	
कर्मचूद ७२, ८४	
कल्याण दास ७५	
कश्यप २५१	
का हडदास ११, ६५	
कान्हडदास (पलाना) ७४	
का हडदास (वालीसर) ७५, १८६	
का हडदास (जालावार) १८५	
कालिदास ३०७	
कालूराम (मकली) ७८	
काशीराम ७८	
किन्मतराम ७०	
किशोरी लाल गुप्त ५	
किसनदास १२, ८२, ८३, १८७, ८८,	
	१६८ १७२, १७५ १८१,
	१८८, २७६, २८६, २६५
कील्हास २४, ३४	
कुतक ३०७	
कुसला ११८	
कुरेश ६५	
क० आर० संहता १२५८	
क० यश०/अयगर ६८, ८४	
कवलराम १६, ७१	
कवलराम स्वामी ६७	
केशवदास, आवाय ३०६	
केशवदास (तियाणा) ८०	
केशवराम (बडीदा) ७८	

केशवराम १८५  
 केप्टन जी० ई० वेस्काट २, ३, ४ २६२  
 कृपाराम ७, ६८, ८४, ९४  
 कृपाराम (बडलू) १४५  
 कृपालाचाय ६६  
 कृष्णदास (कालाचना) ७६  
 कृष्णदास पयहारी २४ ३३, ३४, ४०,  
 ६८, ८४  
 क्षमाराम ८३, १६०  
 क्षितिमोहन सेन ८, १६०, १६२ २६०

ख

खेताराम १५७  
 खेम जी १७५  
 खाजासुइनुदीन २६७

ग

गगाचाय ६६  
 गगादेवी १११  
 गगाधर ६५  
 गगाराम २४५  
 गगाराम (बडलू) ७५  
 गगाराम (पाली) ७६  
 गगाराम (बडी बाठा) ७७  
 गगाराम (बोयल) ७९  
 गगाराम (रामगढ़ी जोधपुर) ८०  
 गगाराम (गुरु रामदास) १४०  
 गगाराम (गुरु मनीराम) १४५  
 गगा विष्णु (सीवरी) ७६  
 गभीर मुनि ६६  
 गजाराम ७३, ७४

गणेश दाम (आचोण) १८०  
 गरकराम ६६  
 गलतानदास (रामसर) ८१  
 गर्गाचाय २३५, २५१  
 गार्सा -द-तासी ३, ५, ६७  
 गिरधरदाम ७०  
 गिरधारी दाम ७३, ७५  
 गुप्तराम (जोधपुर) ७६, ८०,  
 १८६

गुमानीराम ८१, १५१  
 गुरु अजु न देव ५०, ८९  
 गुरु गोविंद ९१  
 गुरु-नानक ४६, ८५, ८९  
 गुरु रामदास ८९  
 गुलाबीदास १७१  
 गुलाल साहब ८९, २३०  
 गुलाबदास (ईंठर) ७७, ७८  
 गुह्याराम ७०  
 गोकुल ४३  
 गोकुल नाथ ४८  
 गोपाल दास ७७, १८१  
 गोरखनाथ ८७, ११७, २७५, २८२,  
 २८५

गोविंद त्रिगुणायत २६१  
 गोविंद साहब ८९, २३१, २३७  
 गोविंदराम (चतरखेडे) १८५  
 गोविन्द राम (बडोदा) ७८  
 गोविंद राम (कालू) ७४  
 गोविंद राम (बडलू) ७५  
 गोस्वामी विठ्ठलनाथ ४८  
 गोडपालाचाय २०८  
 गोतम बुद्ध २८२

## च

- चतुरदास मा चन्द्रदास (साहपुरा) ३, ११,  
१०४, ११७, ११८, १८५  
चतुरदास (रेणु) १७३  
चन्द्रदास (गुरु भगवान दास) ७०  
चन्द्रवली पाण्डेय २६६  
चरणदास (रामानन्दी) ३६, ८४, ९१  
चरणदास (चरणदासी पय) २२२  
चरणदान (जोधपुर) ७७  
चरणदास (गुरु कनीराम) ७०, ७३, ६५  
चरणदास (वानागावास) ७६  
चाँपा वाई १८९  
चेतनदान (गुरु रामचरण) ६५, १८५  
चेतनदास (सिंहपल शाखा) ७३, १४८  
चैनराम ७५, ७७  
चौकसराम ७३, ७७, ६२

## ज

- जगजीवन साहब १८८, २७२, २८०  
जगजीवनदास (सैहापा) १४८  
जगजीवनदास (सियाणा) ८०  
जगन्नीच सिंह गहलोत ९, ५१  
जगन्नाथ (साहपुरा शाखा) ६, ११, ५८  
८८, ९०, ११७, ११८  
जगरामनाथ १८५, ११९  
जनगोपाल १४  
जयचन्द १७८  
जयदेव २७, ३४६  
जयमलदास ११, २०, ३६, ५३, ८४,  
१३०  
जयरामदास (रेणु शाखा) १६०  
जहाँगीर ५०

## जहादरशाह ४४

- जाम्हराम १८५  
जान कवि २६७ २६९  
जायसी ८९, २६९, २८५  
जाज प्रियर्सन ५  
जासाराम १४८  
जीवणदास ७८  
जुक्ति राम ७८  
जेठाराम ८१  
जे० यन० फर्कूहर ७, ६७  
जे० सी० ओमन ७, १०  
जैतराम १४८  
जैमिनि २३०, २५१

## ट

- टेमदास ८३, १७५, १८३

## ड

- डब्बू सिन्ध १३२

## त

- तारकनाथ सायाल २६१  
ताराचन्द ९, १०  
विश्वनाथ मालवार २५  
तुलसीदास गोस्वामी २८, ४०, ५५,  
१६३, ११९८, २११  
२३९, २५७, ३०७  
३१०, ३४६  
तुलसीदास (वीश्या) १४  
तुलसीदास (वीवरी) १०९

तुलसीदास (राममर) ८१	२४०, २४१, २५०, २५७,
तुलसीदास (भेदता) ८३	२७४, २७६, २८१, २८३
तुलसीदाम (तुलसीराम) ९५, १८५	२८६, २८८, २८९, २९२,
तुलसीदास निरजनी २३७	२९५, २९८, ३०२, ३०३,
तुलसी साहब २३०, २७२	३१३, ३१८, ३१९, ३३१- ३३३, ३३९, ३४२

## द

दयानन्द सरस्वती ४, १३२	दरिया साहब (बिहारी) १८९, २३०
दयाराम (बडोदा) ७८	दातू दयाल ४४, ४९, ५२, ८५ ८६, १८८, १९३, २२२, २७६, २८०, २८२, २८५, २९२, २९७, ३२६
दयाराम (साधीण) १४५	
दयाराम (शाहपुरा) १८५	

दयालुदास १०, ११, १५, ५७, ७५, ८०, ८७, ८८, ९०, ९१, १३२ १३६, १३७, १४३, १४४, १४७, १६९, १७२, १७६, १९७, २००, २०९, २१२, २१५, २२३, २२९, २३२, २३३, २३४, २३६, २४१, २४३, २४४, २४५, २४८, २५५, २७२, २७४, २७७, २८१, २८३, २८४, २९०, २९४, २९९, ३००, ३१२, ३२२, ३२३, ३२७, ३३७, ३४१, ३५१	दामोदर १०४ दामोदरदाम ८४ दामोदरदास (गुरु पूरणदास) १५५ दारासिकोह ४२ दासोजी १६८ दिगम्बरानन्द १८६ दिलगुदराम (शाहपुरा) २८५ दिवाकर ८४ दीन दरवेश १८९ दूल्हेराम ३, ५, ११, ६८, १००, १०१, १०२, ११८, १८५, १८९
---	--

दरिया साहब ८, १०-१५ ३५ ३६ ५३, ८१, ८३, ८४, ८७, ८८, ९० १६०, १६१, १६४-१६६, १६८, १६९ १६९, १७१-१८१ १८३, ८४, १८९, १९३, १९५, १०७, २१० २११, २१५, २२४, २२७, २३२, २३४,	देऊ जी ९३ दवकरण ११८, ११९ देवादास ८७, ९०, ९१, ९५, १०७, १०८ १०९ ११०, १४५ दौलतराम ७९ १८६ द्वारकाणाम ९५
---	--

## घ

घना २५, ३१
घण्टीदास ८९, २२७, २६२, २९७

धर्मदास (शाहपुरा) १८५

धीरमदास ७९, १८६

न

नवलराम ६, ८५, ९५ १११, ११२,  
११८ ११९, १२०, १२५,  
१०७

नागादास (खैडापा) १४८

नाथमुनि ६५

नादिरशाह ४५

नानकदास (कुचेरा) ८३

नानकदास (धीकानेर) ८१

नानकदास (गुह भगवानदास) १०४

नानकदास (रेण) १५, ८८, १७१,  
१७२, १७३

नात्रुबाई १४०

नाभादास ३४, ८७, १९६, २३७

नामदेव २७, ५५, ३४६

नामाल्लवार (शठकोपाचार्य) २५

नारद महर्षि २२, २३३, २३५, २५१

नारायणास (गुह अग्राम) ३, ४, ११,  
८४, २१८

नारायणदास (द्वितीय) ८४

नारायणदास (गुहदामोदरदास) ८४

नारायणदास (शाहपुरा) १२०, १८५

नारायणास (सिंहवल) १८५, १९७

निम्बाक ३२६

निभयराम (शाहपुरा) १८५

निमल दास (पाली) १५४

निहचलराम (निश्चलराम) १२७, १२८

प

पडितराज जगन्नाथ ३०७

पतञ्जलि २५१

पद्मदास १२, ८८, १६१, १७१,  
१७५

पद्याकर ४६

परमलदास ८०

परवतसिंह (रतलाम नरेश) १४१

परशुराम ६१, ६२, ७९, ८९, ९०,  
१३८, १३९, २१८, २२३परशुराम चतुर्वेदी ९, १४, २८, ९०,  
९८, १६०, १६२, १८७,  
२६०, २७१, ३१०

पल्लु शाहव २७३

पारासर २५१

पोताम्बरदास, बडधवास ९, १८७-१८९,  
२६०

पीथोदाम ८८, ९०, १४०, १४३

पीपा ३१

पुण्डरीकाम ६५

पुल्लस्त्य २५१

पुष्पदास ३०

पूरणदास (गुह दरियासाहब) ६, ११,  
१२, ८१, ८३, ८७,  
१६६-१६८, १७१पूरणदास (खैडापा) ८८, १४३, १४६,  
१४७, १५४

पूरणमालवी ८४

पोद्करदास ११४, ११५, ११७, ३२०,  
३४४

प्रतीतराम (जोषपुर) ८०

प्रधानाई ८३

परिचिष्ट-२

प्रशस्तपाद २३१  
 प्रह्लाददास १४८  
 प्राणनाथ १८९  
 प्रेमदास ३६  
 प्रेमदास (खवासपुरा मारवाड़) ८०  
 प्रेमदास (गुरु बालकदास) ८१, ८२, ८४  
 प्रेमदास (गुरु हमदास) ८२, ८७, ८८,  
 ९१, १८६  
 प्रेम पठा ८८  
 प्रेम भूरा ८४

फ

फत्तू बाई १५१  
 फरु खशियर ४४

व

बखतराम ६३  
 बरुत सिंह १७६  
 बजरग साल लोहिया १६  
 बदरीदास ७८  
 बनादास १८७, २८६  
 बप्पारावल ४५  
 बल्लभराम ९५  
 बाबर ४६  
 बालकदास १८६  
 बालकदास (गुरु सतदास) ८१, ८२, ८४  
 बालकदास (बडौदा) ७८  
 बालकराम ८२, ९०  
 बालानन्द ४२  
 बालाभाई १७८  
 बुद्धचोप २५१

बुधाराम (बुधसागर) १८१, १८६  
 ब्रह्मदास १४८

भ

भक्तिराम (जोधपुर) ८०  
 भक्तिराम (खवासपुरा मारवाड़) ८०  
 भक्तिराम (सियाणा) ८०  
 भगवदास (सिंहवल) ६२  
 भगवदास (रेणु) ८१, ८३  
 भगवानदान (पीपाठ) ९५, १०३-१०५,  
 १२३

भगवानदास (ईडर) ७८

भरतदान ८३  
 भरद्वाज २५१  
 भट्ट हरि १६६, २१८, २२०  
 भवभूति ३०६

भाऊदाम ७८

भाय्यचन्द्र १२९

भामह ३०७

भावनदास ९१, १५५, १५६, १८६,  
 ३३४, ३४३

भीखा साहब ८६, १८८

भीमसिंह १०१

भूधरदास १८५

भृगु २५१

म

मगलदान ७८

मदाराम १२, ८२, ८८, ९०, १८१,  
 १८२

मध्वाशाय ३२६

मनसाराम ८३, १७४, १७५  
 मनमुलराम ७८  
 मनीराम ९०, ९१, १४५  
 मनोरथराम (दिन्ली) १८५  
 मनोरथराम (राजगढ़) १२७, १२८  
 मनोहरदास ९२  
 मनोहरदान (बीकानेर) १५०, १८६  
 मनोहरदान (रामनगर) ८१  
 मराचि २५१  
 मत्रुकदास १८८  
 मत्रुकदास (सिंहपस) ९१, १८६  
 महादेवी वर्मा ३०८  
 महापूर्णाबाय ६५  
 माधवदास (साहपुरा शाखा) ३४३  
 माधोदास (रामानदी) ८४  
 मानक राम ८३  
 माणव य २५१  
 मालदास १६  
 माया बा १४०  
 मीर यात्री ४९  
 मीर हुसैन २-०  
 मीरा ३०, १०६, ३०७, ३४६  
 मुक्त राम (मितीत्र) ७८  
 मुक्त राम (बानरबाग) ७१  
 मुक्त राम (भैरव) ८३-८०, १०४, १२१  
 १२६  
 मुन्धाराम ६०, १५, १११ ११३, १२६  
 मुन्धार ४७  
 मुहम्मदशाह रं ले ३१४  
 मुहम्मद शाह ६८  
 मयूर १८२  
 मन्दाग (गुल्दग) १८१  
 मन्दीग (मेहता गंग) १४७

मोतीराम (सियाला) ८०  
 मोतीराम (मठवा) ८३  
 मोतीराम १८६  
 मोतीलान मेनारिया ११, १४, १३२,  
 १६०, १६३  
 मोरतराम ७९  
 मोहनदास ८६

### य

यशोदासाई १३७  
 याज्ञवल्क्य २५१  
 यामुनमुनि २१  
 यामुनाबाय ६५  
 यासाहाब ८९  
 युगमान म शरण ८७  
 योने इनाय भट्टायाय ५, १०

### र

रमाबाय ६७  
 रघुनाथराय ७  
 रघुनाथराय (गुनाथ गागर) ८३  
 रघुवरराय ७६  
 रघुवं ८६, ८७  
 रत्न गिह ८४  
 रमणुनेगर ६६  
 रघुवान ३०७  
 रामबान ६४ ६७  
 रामोदास (नीमात्र) १७ १८४  
 रामोदास (काठ) ७६  
 रामोदासबायी ६७  
 रामोदास ३०७

राणा प्रताप ४५	९०, ९२, ९५, ९७ ९९,
राणा राजसिंह ५१	१८५, २१९, २२१, २२३,
रामकरण ८१	२२५ ।
रामकिशोर ६८, ११६	रामदास १०, ११, १६, ५८, ६८,
राम किसन ८०	७०, ७३ ७५, ७६, ८०,
रामकुमार वमा ६, १६, १६२, २६१	८४, ८७, ८८, ६०, १०४,
रामकृष्ण (रामधरणाका पूवनाम) ६३	१३० १३२, १३४, १३६,
रामगोपाल ८३	१३६, १४०, १४५, १८७,
रामचंद्र (बादि वैष्णवाचार्य) ६५	१६८, २३२ २६७, २५८,
रामचंद्र (ईंठर) ७८	२७७, २८३ २८६, २८८,
रामचन्द्र शुक्ल २६, २६६	२८६ २९४, २६५, २६७,
	२९८, ३०० ३०२, ३२०,
रामधरण १, ३, ६—११, १४, १५	३२१
३५, ५३, ५४, ६८, ७०	
७१, ८२ ८४, ८६, ८८,	रामदाम (गुरु भगवानदास) ७०, १०४
९०, ९२-९७ १००-१०२,	रामदास (वैष्णव) ८५
१०४, १०५, १०७, ११०-	रामनाथ १११
११२ ११४-११९, १२३-	रामनारायण (गुरु सुखरामदाम) ६९
१२८, १८५, १९२, १९३,	रामनारायण (विहयल) ३, ७४
१६७, १९८, २००, २०२	रामनारायण (मुंडवा) १८५
२०४, २०६, २०६, २११-	रामनारायणदास ७७
२१६, २२३, २२४, २२७,	रामनिवास (ईंठर) ११६
२२८, २३२, २३४, २३८	रामनिवास (लाहून) ६९, १८५
२४२, २४५, २४७-२४९,	रामनिवास (पोकरण) ७०
२५५, २५८, २६३ २६५,	राम प्रताप (विहयल) ७३, ८९
२७३, २७६, २७८ २८३,	रामप्रताप (देवानडा) ७६
२८८, २८६, २६१, २६३	रामप्रताप (डोगियास) ७७
२६६, २६८ ३०१, ३०३,	रामप्रताप (माधोपुर) ६ ९५ १०५
३१३, ३१४, ३१८, ३२१,	१०६, १०७
३३०, ३३१, ३३६, ३४०,	
३४३—३४५ ।	रामबगस ६९, ७०
	रामवल्लभ (सीजाबाई की पराराम)
रामजतन ७१	७७
रामजन ३, ६, ११, ६८, ८६ ८८	रामवल्लभ (मूरसागर जोधपुर) ७

रामवल्लभ (कनकपुर) ११०, १११

रामरज ७१

रामरत्न (खैडापा) १४८

रामरत्न (तीतरी) ७९

रामरत्न (रामगढी जोधपुर) ८०

रामरत्न बाई ७७

रामलगन (आमेट) ७१

रामलगन (जोधपुर) ७७

रामलाल (मूरत) ७८

रामलाल (खवासपुरा मारवाड) ८०

रामलाल (दुहराम के समुर) १००

रामविलास १८६

रामसेवक ९५

रामस्वरूप १८६

रामानन्द २०, २४, २७, २८, ३१-  
३३, ४०, ६२, ६५, ६८,  
७, ८१, ८४, २३७,  
२६०, २६६, ३२६

रामनुज २०, २१, २५, ६१, ६५-  
६७, ११४, २६०

रामाबाई ८३

रामीबाई ७४

रामश्वराचार्य ६५, ६७

रायचन्द चौधरी १५१

रियावाय ६६

रूपकला ६६

रूपगोस्वामी २२, २३५

रूपदास ७५

रूपराम (ईडर) ७८

रूपराम (तीतरी) ७६

रूपराम (ब्रह्मीबाडा) ७७

स

सम्भणदास ६४

सक्ष्मीचन्द १७८

सक्ष्मीसागर बाण्येय ३

सक्ष्मराम ८१, १८६

सन्धीराम ८०

साजारास ७८

साधुराम ८०

सालदास (खैडापा) १४९, १५०

सालदास (शाहपुरा शाखा) ८८, १८५

व

वक्तराम ८०

वक्ताराम ७९

वडू सवर्थ ३०८

वली ३४४

वशिष्ठ २५१

वाल्मीकि २५१

विजयराम १७३, १७८, १७९

विजयसिंह १-३

विलासीराम ८३

विश्वकसेन ६५

विश्वामित्र २५१

विष्णुकाता १००

विष्णुदास ८०

विष्णुराम ७८

विष्णु म्वामी ३२६

विहारीदास १४१, १८५

वीरमदास १८६

वी० वी० राय ७

वदान्तदेशिक २१

वेदी १६८

वाम २३५, २५१, २७१

वहस्पति २५१

श

शकगवाय २०१, २११, २२१  
 शठकार ६५  
 शम्भूराम ८३  
 शनिभूपदास गुप्त २१८  
 शालिग्राम १८६  
 शाहब्रह्मी ४१, ८२, ४५, ४६, ५०  
 शिवनारायण २३०, २८०  
 शिवरामदास ८३  
 शीतलदास ७९  
 शुक्लदत्त २२  
 शुजा ४२  
 शब मुहम्मद गौस खालिगी २६७  
 शेखाह ४९  
 श्यामनाथ ८०  
 श्रीचन्द्र १७८  
 श्रीधर ४४  
 श्रीराम (भास्कर) १८६  
 श्रीराम (रामगढ़ी) ८०  
 श्रीराम (सियाणा) ८०

स

सगराम नाथ ७६  
 सग्रामदास (जोधपुर) ८३  
 मद्रामदास (इडर) १८१  
 मद्रामनाथ (गुरु मुरलीराम) १२४, १२५  
 सआदत खान ४५  
 सादाराम (जाधपुर) ८०  
 सादाराम (दाहूपथी) १२७  
 सतदास ७, २०, ३५, ८१, ८४  
 समथराम ७८

सम्पतिराम ७६  
 सम्पूर्णानन्द २६०  
 सरहपाद २९०  
 सहजगम (चाडा) १८२, १८३  
 सहजराम (वीकानर) १३९, १८५  
 सहजोगई ८७  
 साईदास ८०  
 सवितराम ७९  
 सानू (सानू ल) १३१, १३२  
 साहिवराम (सियाणा) ८०  
 साहिवराम (आचीणा) ८०  
 सीताजा ६५  
 सुन्दर ९७  
 सुषधाम १८५  
 सुखराम १८२  
 सुखराम दास ८३, ८७, ९०, ९१, १७१  
 १७२ १७५, १७६, १७७  
 १६५, ३४२  
 सुखसारण १८६  
 मुजान ५४  
 मुदरनाथ (गुरु माधोदास) ८४  
 मुदरदास (दाहूपथी) ८९, १८८, २२६,  
 २६७  
 मुदरबाई १३२, १३३  
 मुमद्र राम ७६  
 मूरकिशोर ५१  
 मूरतराम (खीगटा) १४५  
 मूरतराम (जधपुर) ६, १०२, १०३  
 मूरत सिंह १२३, १३३  
 मूरदास १७, १६६, ३०७, ३३९, ३४०,  
 ३४६  
 सन २५, ३१

सबकराम ११, ७९, ८८, ८९, १५३  
 स्वयम्भू ३०  
 स्वरूपदाम (खैडापा) १४८  
 स्वरूपदास (मुरत) ७८  
 स्वरूपामाई १२५-१२७

ह

हजारी प्रसाद द्विवेदी २६, २६०,  
 २०६  
 हरखाराम ८१, ८३, ८८, ९०, ९१,  
 १७७, १७६, १८०  
 हरदेव (साँझ) ८३  
 हरलालदास १४८, १४९, १५७  
 हरमुखदास ७९  
 हरिदास निरजनी ८७  
 हरिदेव दास ९०, १४१, ३३५  
 हरिदास शास्त्री ६२  
 हरिदास (शाहपुरा) १२०, १२१  
 हरिराम (बालभ सम्प्रदाय) ४८

हरिरामदास १०, ११, १५, ३६, ५२,  
 ६८, ७३, ७५, ८८, ८७-  
 ६२, १२६-१३१, १३३,  
 १४१ १४२, १८५, १६७,  
 २००, २०२, २०६ २११,  
 २१२, २१५, २२६, २३५  
 २३६, २४०, २४६, २५४,  
 २५५, २५८, २६५, २७३,  
 २७७, २८६, २८८, २६१  
 २६३, २९४ ३०२, ३२०,  
 ३३४, ३४५, ३४१, ३४६

हरिश्चन्द्र दास ८०

हिम्मतराम (ईडर) ७८

हिम्मतराम (शाहपुरा) १२१, १२२  
 १५८,

हुणसंग २३१

हुमायूँ ४९

हमचन्द्र २५१

हमदास ६२, १८६

